भूमिका

मेरे पहले दो उपन्यास, 'स्वाधीनता के पथ पर' और 'पथिक,' जिस चाव से हिन्दी जगत् ने अपनाये हैं, उससे उत्साहित होकर ही यह तीसरी कृति पाठकों की सेवा में उपस्थित कर रहा हूँ। यह तो मैं नहीं कह सकता कि इसको पाठक कितना पसन्द करेंगे। केवल इतना निवेदन करना चाहता हूँ कि पुस्तक में प्रतिपादित विषय पर मतभेद होने पर भी एकदम आवेश में आकर तिरस्कार कर देना उचित नहीं। विषय की गम्भीरता और आवश्यकता के अनुसार ही इस पर विपक्ष के मत को पढ़ना और मनन करना चाहिये। लेखक अपने विचार किसी पर थोपना नहीं चाहता। साथ ही यदि वह अपने विचारों को बलपूर्वक पाठकों के सम्मुख न रखे तो वह पुस्तक लिखने के प्रयोजन को ही खो बैठेगा। मनोरञ्जन के साथ-साथ मानव समाज के विकास-चक्र की धुरी में तेल लगाना भी उपन्यास का प्रमुख लक्ष्य है, यह तो मानना ही पड़ेगा।

प्रेम और स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध अमर विषय हैं। इन पर आदि सृष्टि से आज तक विचार-विनिमय होता रहा है और मनुष्य-समाज इस में भिन्न-भिन्न परीक्षण करता रहा है। कई परीक्षण तो अनिश्चित, अनियमित और अव्यवस्थित ढंग पर हुए हैं और उनका परिणाम मनुष्य-समाज को किसी ओर भी ले जाने में असफल रहा है। कुछ परीक्षण नियमपूर्वक समाज की आवश्यकताओं और परिस्थितियों का ध्यान रखकर किये गये हैं। ये परीक्षण निश्चय ही मानव-समाज के विकास में उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इन परीक्षणों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना उचित है।

निम्न लिखित मुख्य प्रश्नों पर इस पुस्तक में प्रकाश डालने का यत्न

किया गया है, (१) क्या पुरुषस्त्री में सम्भोग प्रेम का अनिवार्य परिणाम है ? (२) क्या सम्भोग मनुष्य की निज की बात (३) क्या समाज पुरुषस्त्री के सम्भोग को नियमाधीन करने का अधिकार न रखे ?

इन प्रश्नों का उत्तर देने का यत्न लेखक ने किया है। यह उत्तर सब लोगों के मतानुकूल नहीं। यदि ऐसा होता तो पुस्तक लिखने आवश्यकता ही न होती। कई लोग इन उत्तरों में कोई नवीनता नहीं पायेंगे। लेखक समझता है कि नवीनता को केवल नवीनता के लिये अपनाना लक्ष्य नहीं होना चाहिये। जहां हित प्रतीत हो वही बात करणीय है।

संसार भर में व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिये प्रबल संघर्ष हो रहा है। इस संघर्ष से प्रेरित होकर ही मानव-समाज में यह भावना दिन प्रतिदिन दृढ़ होती जाती है कि सम्भोग करने की स्वतन्त्रता भी उसका जन्म सिद्ध अधिकार है। वह सम्भोग में आयु, काल, साथी, स्थान इत्यादि प्रत्येक प्रतिबन्ध को तोड़ डालना चाहता है। उसका कहना है कि जैसे एक मनुष्य में क्या खाया जाय, अथवा कब खाया जाय और कहां बैठकर खाया जाय उसके निज के विचार करने की बात है; उसी प्रकार सम्भोग किससे किया जाय, कहां किया जाय और किस आयु अथवा काल में किया जाय, उसके अपने सोचने की बात है। इसमें न तो समाज को नियम बनाने की आवश्यकता है और न ही सम्भोग करने वालों के अतिरिक्त किसी दूसरे को राय देने का अधिकार है। यह म संसार की नवीन विचार-धारा होने से हिन्दुस्तान में भी आ पहुँचा है।

इसी विचार-धारा को लेकर इस पुस्तक की सृष्टि की गई है। पक्ष और विपक्ष दोनों मतों पर प्रकाश डालने का यत्न किया गया है। पाठकों से निवेदन है कि इस विषय पर भारतीय समाज और भारतवासियों के हित और [illegible] को ध्यान में रखकर विचार करें। मनुष्य-प्रकृति

पहला भाग

बौद्ध

"भगवान! भगवान!! दिन रात भगवान की ही बात करती रहती हो। तुम भगवान का नाम ले लेकर मुझे पागल बना दोगी। इसे अपने तक ही रहने दो तो अच्छा है। मुझे इसकी आवश्यकता नहीं। इससे तो तुम मेरे मन को यथार्थ तत्व की बात से हटाकर निरर्थक, निःसहाय, नपुँसक और बेकार की वस्तु पर लगाने का यत्न करती हो।"

लाहौर भाटी दरवाजे के अन्दर, एक हिन्दू मोहल्ले में, एक तिमँज़िले की बीच की मंज़िल पर, एक कमरे में, एक नवयुवक एक युवति से कह रहा था। युवक बहुत मामूली कीमत के सूती कपड़े का सूट पहने हुए था। युवति खद्दर के साधारण कपड़े पहने हुए थी। युवक खड़ा खूँटी से अपना टोप उतार रूमाल से झाड़ रहा था और उक्त बात कह रहा था। युवति ने उसके बूट के तस्मे बांधते हुए कहा था, "भगवान करे, यह काम तो मिल जाये।"

इस भगवान शब्द से चिढ़कर ही युवक ने भगवान के विषय में अपने मन के उद्‌गार कह डाले थे। युवति की आंखें आंसुओं से भर आई थीं। उसने सिर नीचे कर लिया, जिससे उसकी भरी हुई आंखें वह देख न ले। जब वह तस्मे बांध चुकी तो उसने अपने आंचल से बूट की मट्टी पोंछ दी। बिना कुछ बोले और देखे युवक सीढ़िओं की ओर चला गया। पश्चात खट खटकर उसके नीचे उतरने का शब्द हुआ। युवति उसे देखने के लिये उठ खिड़की में जा खड़ी हुई और झुककर नीचे देखने लगी। युवक मकान से निकल बिना एक बार भी पीछे अथवा ऊपर देखे कूचे से बाहर हो गया।

युवति खिड़की से उठी और बगल के कमरे में चली गई। एक लकड़ी की सन्दूकची में से एक पीतल के चौकोर डिब्बे को निकाल और खोल सम्मुख रख लिया। स्वयं डिब्बे के समीप बैठ गई। डिब्बे में भगवान

कृष्ण और राधा की पीतल की मूर्त्ति थी। युवति ने डिब्बे के सामने सिर नवा दिया और धीरे धीरे कहने लगी, "प्रभु, इनके अपराध को क्षमा करना। वह आपको नहीं जानते, इसी से अपमान की बात कह देते हैं। ज्ञानेश्वर, कुछ बोध इनको भी करा दो न। आपकी उँगली के संकेतमात्र से पूर्ण जगत प्रकाश से जगमगा उठता है। एक भूले-भटके मन को क्या अपने ज्ञान का प्रकाश नहीं दोगे?"

कितनी ही देर तक वह सजल नेत्रों से भगवान की मूर्ति के सामने सिर नवाये पड़ी रही। मन के उद्‌गारों को भगवान के सम्मुख उड़ेल देने से और समय व्यतीत होने से उसका मन शान्त हो गया। चित्त में पुनः उत्साह प्रतीत होने लगा। वह प्रसन्न-वदन उठी, डिब्बे को बन्द कर, सन्दूक में रख, बाहर कमरे में आगयी और एक चादर ले उस पर बेल-बूटे काढ़ने लगी।

इसी समय पड़ोस की एक स्त्री कमरे में दाखिल हुई। उसके हाथ में एक पीतल का डिब्बा था जिसमें खाने के लिये रोटी थी। पड़ोसिन ने आते ही कहा, "विमला बहिन, खाना खा चुकी हो?"

"नहीं, आज भूख नहीं है।"

"हट!" उसने विमला के गले में बांह डालते हुए कहा, "भूख क्यों नहीं है? आओ दोनो इकट्ठी खावेंगी। भूख तो अपने आप लग आवेगी।"

"नहीं, बहिन सुधा। तुम खाओ। लो मैं तुम्हारे पीने को पानी ला देती हूं।"

"और अपनी रोटी भी लेती आना। भाजी क्या बनाई है?"

विमला ने कुछ उत्तर नहीं दिया और रसोई-घर में से पानी का एक लोटा और एक खाली गिलास ले आई। सुधा ने उसकी आंखों की ओर [illegible]। विमला की आंखें भूमि की ओर झुक गईं। सुधा का मुख [illegible]। विमला ने लोटा और गिलास सुधा के सम्मुख रख [illegible] और [illegible] बूटे [illegible] काढ़ने लगी।

सुधा कुछ देर तो अवाक मुख विमला की ओर देखती रही, पश्चात चादर घुटने से खेंच, एक ओर फेंककर कहने लगी, "नहीं करने दूंगी। पहले बताओ क्या बात है? खाना नहीं बनाया क्या?"

"नहीं।" इतना कह विमला ने चादर को पकड़ने का यत्न किया।

"क्यों नहीं बनाया?" सुधा ने पूछा।

"उनको कहीं बाहर खाना है। मेरी तबियत नहीं करती।"

"अच्छी बात।" इतना कह सुधा ने अपनी रोटी के डिब्बे को खोल दिया। उसमें से रोटी निकालीं। सब चार थीं। दो पर बैंगन की भुजिया डाल विमला के सम्मुख रख दीं और कहा, "खाओ।"

"नहीं, मुझे भूख नहीं है।"

"चुप। झूठी न हो तो।"

"अच्छा, एक खा लेती हूँ।"

"नहीं, दो।"

विवश विमला को सुधा का साथ देना पड़ा।

सुधा और विमला दोनों सहेली हैं। परस्पर बहुत स्नेह है। प्रायः दोपहर का खाना इकट्ठा खाया करती हैं। इधर कुछ दिन से विमला उदास रहने लगी थी। सुधा इस उदासी का कारण जानने का यत्न करती रहती थी। परन्तु विमला, 'कुछ नहीं, 'तुम्हारा भ्रम है', इत्यादि कहकर टाल दिया करती थी। आज घर में खाना ही नहीं बना। विमला ने तो कहा, 'भूख नहीं है,' परन्तु सुधा को इस कहने पर विश्वास नहीं आया और आग्रह कर उसे कुछ तो खिला ही दिया।

जब दोनों खा चुकीं तो सुधा ने कहा, "बहिन, तुम मुझसे प्रेम नहीं करती न!"

"करती तो हूं। तभी तो भूख न रहने पर भी तुम्हारा कहना मान लिया है।"

"यह सब देख रही हूं। तभी तो कहती हूं, तुम्हारा मन अति कठोर है।"

विमला चुप रही और चादर को पकड़ घुटने पर रख सुई-तागा

ढूंढने लगी। सुधा ने खिसककर, गम्भीर हो बहुत धीरे से चादर को मुटने से उतार दिया और कहा, "आज तुम टाल नहीं सकोगी। मैं पूरी बात जाने बिना नहीं छोड़ूंगी। क्या मैं देख नहीं रही कि तुम कई दिन से उदास रहती हो?"

विमला ने अब दोनों हाथों को पंजे में बांध, घुटने पर रखते हुए, आंखें नीची किये हुए कहा, "बहिन, तुम इस विषय को छोड़ नहीं सकती क्या? कभी कोई ऐसी बात भी हो सकती है कि उसको छुपाना ही ठीक रहता है। बताने से दुःख, वैमनस्य और क्लेश बढ़ता ही है; सो उनको ऐसी ही बात है, बहिन। अब मुझे मत पूछो।"

विमला के कहने का ढंग और मुख की मुद्रा ऐसी थी कि सुधा की ज़बान तालू से लगी रह गयी।

[२]

सुधा और विमला का विवाह एक ही रात हुआ था। दोनों की डोली एक ही समय घर पहुंची थी। यह उनका परस्पर पहला परिचय था। जब विमला को डोली से उतारकर उसकी सास घर के भीतर पहुँची थी और उसे अपनी पीढ़ि पर बैठाया ही था कि बाहर सुधा की डोली के बाजों का शब्द सुनाई दिया। किसी ने कहा, 'लो, मोहन की माँ भी बहू ले आई है।' मोहन सुधा के पति का नाम था।

कुछ दिन पश्चात दोनों नववधुओं की परस्पर भेंट हुई और फिर उनकी बातें हुई। नवविवाहिता क्या क्या बातें करती हैं और उनमें कितनी मधुरता भरी रहती है, यह लिखने का विषय नहीं है। इसे केवल अनुभव ही किया जा सकता है। सुधा की वाणी मधु के समान मीठी थी। विमला का सौन्दर्य चन्द्रवत् था। दोनों ने अपने अपने प्रभाव से एक दूसरे को मोह लिया था।

इस बात को दो वर्ष व्यतीत हो चुके थे। विमला की सास का देहान्त हो चुका था और उसके पति बिहारीलाल की नौकरी छूट चुकी थी। यद्यपि घर में खाने की कमी नहीं थी तो भी बेकार घूमना बहुत

अखर रहा था।

सुधा के पति का नाम मोहनलाल था। वह एक बीमा-कम्पनी का एजेन्ट था। बहुत चतुर और बात-बनाने वाला आदमी था। कोई न कोई बीमा कराने वाला हर रोज फांस लेता था। यद्यपि बिहारीलाल की भांति बाप-दादाओं की सम्पत्ति नहीं थी और न ही सुसराल धनी थे, इस पर भी अपने पुरुषार्थ से इतना कमा लेता था कि बहुत मज़े से निर्वाह होता जाता था। घर में केवल तीन प्राणी थे—मोहनलाल था, उसकी स्त्री सुधा और मोहनलाल की मा।

मोहनलाल रात भोजनादि से निवृत्त हुआ तो सुधा ने दिन भर से मन में चक्कर काटने वाली बात कह दी, "आपका विमला के घर वाले से परिचय है क्या?"

"जब हम स्कूल में पढ़ते थे तो एक ही श्रेणी में थे। उस समय हमारे स्वभाव नहीं मिलते थे। बिहारीलाल श्रेणी में सबसे योग्य विद्यार्थी था। मैट्रिक में वजीफा पाकर गवर्मेंट कालेज में भर्ती हो गया था। मेरी योग्यता साधारण विद्यार्थियों की सी थी। इस कारण स्कूल में भी हमारा परस्पर परिचय तो था, परन्तु मित्रता नहीं थी। यह नहीं कि बिहारीलाल को अपनी योग्यता का अभिमान था। यों तो वह स्वभाव से हंसी-मज़ाक, दंगा-फसाद बहुत पसन्द करता था और मैं श्रेणी में पढ़ाई कर चुपचाप किताबें बगल में दबाकर लौट आता था। मेरी किसी से भी मैत्री नहीं थी।"

"तो अब आपकी साहब-सलामत भी नहीं है क्या?"

"क्यों क्या बात है, बताओ? साहब-सलामत तो मैं एक क्षण में कर सकता हूँ। अब मैं स्कूल वाला मोहनलाल नहीं हू। अब मैं बीमा-कम्पनी का एजेन्ट हू। परिचय पैदा करना और फिर मैत्री बनाना तो मेरा बायें हाथ का काम है। आख से आख मिलाई कि दोस्ती हो गयी।" इतना कहते कहते मोहनलाल ने सुधा की ओर ऐसी प्रेम-भरी दृष्टि से देखा कि उसका मुख लाल हो गया।

"तो दिन भर आख से आख ही लड़ाते रहते हैं, क्यों?"

"हां, अगर नित्य एक नये शिकार से आंख न मिला लूँ, तो फिर रोटी कहां से कमाकर लाऊँ।"

"अच्छा छोड़ो इसे। पहले मेरी बात सुनो। बिमला कई दिन से उदास रहती है। आज उनके घर खाना भी नहीं बना। यह ठीक है कि उसके घर वाले की नौकरी छूटी हुई है, परन्तु यह खर्चा न होने के कारण नहीं है। कुछ और ही कारण है और वह बताती नहीं है। आप पं० बिहारीलाल से मिलकर कारण जानने का यत्न करें और यदि कुछ सहायता हो सके तो की जाय।"

मोहनलाल के लिये विमला चिरकाल से दिलचस्पी का कारण बनी हुई थी। जब वह फोरमैन क्रिश्चियन कॉलेज की बी० ए० की श्रेणी में पढ़ता था, वह भी वहां पढ़ती थी। कॉलेज में वह बहुत ही सादे ढंग के कपड़े पहनकर जाया करती थी। इस पर भी उसका सौन्दर्य अपना प्रभाव कॉलेज के कोने २ पर डालता रहता था। मोहनलाल इस प्रभाव से बचा नहीं रह सका था। अब तो वह उसकी पड़ोसिन बन गयी थी। उसके एक परिचित की स्त्री थी और उसकी पत्नी की सखी थी। यद्यपि उसकी बिहारीलाल से बोलचाल नहीं थी इस पर भी वह विमला के सम्बन्ध की बातें अपनी स्त्री से मन लगाकर सुना करता था। विमला उदास रहती है, यह जानकर उसकी इच्छा इसका कारण जानने की होनी स्वाभाविक ही थी।

[३]

दूसरे दिन मोहनलाल जब घर से निकला तो बिहारीलाल कहीं बाहर से आ रहा था। मोहन लाल ने तीर चला दिया, "पं० बिहारीलाल जी, नमस्ते। क्या प्रातः सैर करने जाया करते हैं?"

"नमस्ते," बिहारीलाल का उत्तर था। मोहनलाल गली के बाहर चला गया और बिहारीलाल अपने घर को। मोहनलाल के इस अभिवादन ने बिहारीलाल को विस्मय में डाल दिया। स्कूल में भी और उसके पश्चात् भी वे परस्पर बोलते नहीं थे। क्यों, वह नहीं जानता था और आज मोहनलाल ने उसे क्यों नमस्ते की है, वह नहीं बता सकता था। वह

सोचता था कि कारण अवश्य होगा। बिना कारण के कार्य नहीं होता।

विमला स्नान कर साथ वाले कमरे में ठाकुर जी की पूजा कर रही थी। वही मूर्ति वाला डिब्बा खोलकर सामने रखा हुआ था। स्वयं पलथी मार, हाथ जोड़, आंखें मूंद धीरे धीरे आरती गा रही थी :—

मंगल मय जय तिलक भूपिते
मोर मुकुट शीश धरे।
द्वार खोल दे मेरे मन के, दर्शन पाऊं मन मोहन के।
ज्ञानेश्वर मन में प्रकाश दे, सकल मोह ममता निकास दे॥
दुखियन के प्रभु ताप हरे।

बिहारीलाल बाहर के कमरे में कपड़े उतारता हुआ अपनी स्त्री को आरती गाते सुन खिलखिलाकर हंस पड़ा। इस हंसी के शब्द ने भीतर के कमरे में आरती बन्द कर दी और विमला ठाकुर जी के डिब्बे को सन्दूक में बन्दकर बाहर चली आई। वहां उसने हाथ जोड़कर नमस्ते कही और पांव छूए। पूजा के पश्चात् यह उसका नित्य का काम था।

"फिर वही बात। न जाने तुम्हारा पढ़ा-लिखा किधर लोप होता जा रहा है? क्या कॉलेज में यही पढ़ती रही हो कि अपने पति के पांव छूआ करो?"

विमला वहीं फर्श पर बैठ गयी और बिहारीलाल के बूट के तस्मे खोलते हुए बोली, "जी हां।"

"हां! भला सुनूं तो किस किताब में लिखा है?"

"कॉलेज की शिक्षा क्या पुस्तकों तक ही सीमित होती है?"

"पुस्तक न सही, किस प्रोफैसर ने अपने लैक्चर में बताया था?"

"प्रोफैसरों के लैक्चर भी तो पुस्तकों की भांति अधूरे और सांकेतिक होते हैं। किसी कवि ने लिखा है, 'प्रेम का अर्थ है उत्कट प्रशंसा और आदर' और हमारा हिन्दुस्तानी ढंग आदर करने का है चरण स्पर्श करना।"

"यह तरीका ग़लत है।"

"हिन्दुस्तानी है, इसलिये न?"

"नहीं, हिन्दुस्तानी होने से नहीं, प्रत्युत गन्दा होने से। स्वास्थ्य के नियमों के विपरीत होने से और आत्म-सम्मान को हनन करने वाला होने से।"

"किसके स्वास्थ्य और किस की आत्मा को हनन करता है?"

"चरण स्पर्श करने वाले की।"

"परन्तु चरण स्पर्श करने वाली ऐसा नहीं मानती। वह तो इससे आत्मा के उच्च होने को मानती है।"

"वह गलत मानती है।"

"इसमें प्रमाण?"

"मैं प्रमाणों को नहीं मानता। मेरे लिये युक्ति ही पथ-प्रदर्शक है। मैं बौद्ध हूं।"

"बौद्ध? बुद्ध मत के अनुयाई?"

"बौद्ध किसी भी मत के अनुयाई नहीं होते। वे बुद्धिशील अर्थात अपनी बुद्धि से विचारकर प्रत्येक बात में अपना मत निर्माण करते हैं।"

"ओह! परन्तु कठिनाई यह है कि चरण स्पर्श करने वाली भी बुद्धि रखती है। खैर छोड़िये इस बात को। काम बना?"

"हां बन गया है। अभी एक सौ बीस मासिक मिलेगा।"

"कल तो आप कह रहे थे कि ढाई सौ की जगह है।"

"हां, मगर नहीं दिये। जब देखा कि मैं बेकार हूं तो कहने लगा कि छः मास के लिये प्रोबेशन पर। पश्चात काम संतोषजनक होने पर ढाई सौ मिलेगा।"

"पहले तो यह बात न थी।"

"नहीं, बिलकुल नहीं। विज्ञापन में इसका उल्लेख नहीं था। बात यह थी कि मैं बेकार था। मुझसे उसने पूछा, 'कहां काम करते हो?' मैंने उत्तर दिया, 'कहीं नहीं।' तो सेठ बोला, 'पहले छः मास तक प्रोबेशन पर एक सौ बीस मिलेंगे'।"

"तो आपने स्वीकार कर लिया?"

"तो और क्या करता ? मेरे अतिरिक्त और भी तो उम्मीदवार थे। मैं नहीं मानता तो कोई भी मान जाता।"

"जैसी भगवान की इच्छा।"

"भगवान की नहीं। ये धनवान अपने रुपये बचाने के लिये बहाना ढूँढ लेते हैं। मेरी योग्यता को वह स्वीकार करता था। इस पर भी जब देखा कि मैं बेकार हूँ और उसकी नौकरी करने के लिये उत्सुक हूं तो बहाना बनाकर सात सौ अस्सी रुपये की बचत कर ली।"

"फिर भी ईश्वर का धन्यवाद है। छः महीने तो बात की बात में ही व्यतीत हो जायेंगे। पिछला काम छूटे भी तो छः महीने हो चले हैं। हां, तो काम पर कब जाना होगा ?"

"आज से ही।"

"तो खाना तैयार कर दूं। आप स्नानादि से निवृत्त हो जायें।"

[४]

सायंकाल जब मोहनलाल घर आया तो सुधा ने पहला ही प्रश्न बिहारीलाल के विषय में किया। मोहनलाल का उत्तर था, "बाबा, कपड़े तो उतार लेने दो। जरा शान्ति से बात होगी। बिहारीलाल हैं। छोटे-मोटे आदमी तो हैं नहीं, और इनकी बात कैसे छोटी हो सकती है।"

इससे सुधा को विश्वास हो गया कि कुछ बात का पता चल गया है। वह कुछ निश्चिन्त मन से पति के लिये जल-पान का प्रबन्ध करने लगी। मोहनलाल ने कपड़े बदल लिये और सायँकाल का समाचार-पत्र पढ़ने लगा। व्यापार के विषय के समाचार पढ़ने पर उसका मुख खिल उठा। बोला, "मार लिया, सुधा ! सुधा रानी, आओ देखो, तुम्हारे लिये सोने का हार। अरी ! इधर आओ।"

सुधा ट्रे पर चाय का सामान लगा कर ला रही थी। पति का पुकारना सुन पूछने लगी, " क्या सोने के हार का विज्ञापन है ?"

"विज्ञापन नहीं, समाचार है। देखो मैंने तुम्हें कहा था न कि टाटा के दो हिस्से खरीदे हैं। आज उनका दाम बाईस सौ हो गया है।

"नहीं, हिन्दुस्तानी होने से नहीं, प्रत्युत गन्दा होने से। स्वास्थ्य के नियमों के विपरीत होने से और आत्म-सम्मान को हनन करने वाला होने से।"

"किसके स्वास्थ्य और किस की आत्मा को हनन करता है?"

"चरण स्पर्श करने वाले की।"

"परन्तु चरण स्पर्श करने वाली ऐसा नहीं मानती। वह तो इससे आत्मा के उच्च होने को मानती है।"

"वह ग़लत मानती है।"

"इसमें प्रमाण?"

"मैं प्रमाणों को नहीं मानता। मेरे लिये युक्ति ही पथ-प्रदर्शक है। मैं बौद्ध हूं।"

"बौद्ध? बुद्ध मत के अनुयाई?"

"बौद्ध किसी भी मत के अनुयाई नहीं होते। वे बुद्धिशील अर्थात अपनी बुद्धि से विचारकर प्रत्येक बात में अपना मत निर्माण करते हैं।"

"ओह! परन्तु कठिनाई यह है कि चरण स्पर्श करने वाली भी बुद्धि रखती है। खैर छोड़िये इस बात को। काम बना?"

"हां बन गया है। अभी एक सौ बीस मासिक मिलेगा।"

"कल तो आप कह रहे थे कि ढाई सौ की जगह है।"

"हां, मगर नहीं दिये। जब देखा कि मैं बेकार हूं तो कहने लगा कि छः मास के लिये प्रोबेशन पर। पश्चात काम संतोषजनक होने पर ढाई सौ मिलेगा।"

"पहले तो यह बात न थी।"

"नहीं, बिलकुल नहीं। विज्ञापन में इसका उल्लेख नहीं था। बात यह थी कि मैं बेकार था। मुझसे उसने पूछा, 'कहां काम करते हो? मैंने उत्तर दिया, 'कहीं नहीं।' तो सेठ बोला, 'पहले छः मास तक प्रोबेशन पर एक सौ बीस मिलेंगे'।"

"तो आपने स्वीकार कर लिया?"

"तो और क्या करता ? मेरे अतिरिक्त और भी तो उम्मीदवार थे। मैं नहीं मानता तो कोई भी मान जाता।"

"जैसी भगवान की इच्छा!"

"भगवान की नहीं। ये धनवान अपने रुपये बचाने के लिये बहाना ढूँढ लेते हैं। मेरी योग्यता को वह स्वीकार करता था। इस पर भी जब देखा कि मैं बेकार हूँ और उसकी नौकरी करने के लिये उत्सुक हूँ तो बहाना बनाकर सात सौ अस्सी रुपये की बचत कर ली।"

"फिर भी ईश्वर का धन्यवाद है। छः महीने तो बात की बात में ही व्यतीत हो जायेंगे। पिछला काम छूटे भी तो छः महीने हो चले हैं। हां, तो काम पर कब जाना होगा ?"

"आज से ही।"

"तो खाना तैयार कर दूं। आप स्नानादि से निवृत्त हो जायें।"

[४]

सायंकाल जब मोहनलाल घर आया तो सुधा ने पहला ही प्रश्न बिहारीलाल के विषय में किया। मोहनलाल का उत्तर था, "बाबा, कपड़े तो उतार लेने दो। जरा शान्ति से बात होगी। बिहारीलाल हैं। छोटे-मोटे आदमी तो हैं नहीं, और इनकी बात कैसे छोटी हो सकती है।"

इससे सुधा को विश्वास हो गया कि कुछ बात का पता चल गया है। वह कुछ निश्चिन्त मन से पति के लिये जल-पान का प्रबन्ध करने लगी। मोहनलाल ने कपड़े बदल लिये और सायँकाल का समाचार-पत्र पढ़ने लगा। व्यापार के विषय के समाचार पढ़ने पर उसका मुख खिल उठा। बोला, "मार लिया, सुधा! सुधा रानी, आओ देखो, तुम्हारे लिये सोने का हार। अरी! इधर आओ।"

सुधा ट्रे पर चाय का सामान लगा कर ला रही थी। पति का पुकारना सुन पूछने लगी, " क्या सोने के हार का विज्ञापन है ?"

"विज्ञापन नहीं, समाचार है। देखो मैंने तुम्हें कहा था न कि टाटा के दो हिस्से खरीदे हैं।

मैंने पन्द्रह सौ रुपये के भाव से खरीदे थे। अनायास चौदह सौ का लाभ हो गया है। मेरा विचार है कि इससे तुम्हें एक जड़ाऊ हार खरीद दूं।"

सुधा इस हार के समाचार से उतावली हो उठी थी। जब कुछ समय तक आनन्द की बातें होती रहीं और हार खरीदने का विचार-विन्मय होता रहा तो एकाएक सुधा के मन में विचार आया कि यह हिस्सों में लाभ कौन देगा। उसने पूछा, "यह चौदह सौ रुपया हिस्सों की कीमत कैसे बढ़ गयी है?"

मोहनलाल ने सुधा को समझाया, "टाटा कम्पनी के एक हिस्से का दाम आरम्भ में एक हज़ार रुपया था। जब कम्पनी खूब चलने लगी तो लोगों के मन में इस कम्पनी के हिस्से खरीदने की इच्छा बढ़ गयी। जिनके पास इसके हिस्से थे उन्होंने इनके दाम बढ़ा दिये। धीरे धीरे कीमत बढ़ती गयी और अब बाईस सौ हो गयी है।"

"मैंने तो यह पूछा था कि यह सात सौ कीमत में बढ़ती कुछ ही दिनों में कैसे हो गयी?"

"यथार्थ में तो ये चढ़ाव-उतार कुछ धनी लोगों की चालाकी से होते हैं। कभी किसी धनी आदमी ने कुछ हिस्से बेचने हैं तो वह बाज़ार में बेचने के स्थान हिस्से खरीदने का बहाना करता है। कभी एक-एक दो-दो कर खरीद भी लेता है। लोगों को जब ज्ञात होता है कि अमुक आदमी अमुक कम्पनी के हिस्से खरीद रहा है तो वे लोग भी बाज़ार में इन्हें खरीदने के लिये पहुँच जाते हैं। हिस्सों का भाव बढ़ जाता है और तब वह अपने हिस्से इस बढ़े हुए दाम पर बेचकर लाखों का मुनाफ़ा कमा लेता है। कभी कभी तो ऐसा करने के लिये बनावटी ढंग पर कम्पनी में लाभ दिखा दिया जाता है और हिस्सों की दर उन्नत हो जाती है।"

"तो इससे कई लोगों को हानि भी हो जाती होगी।"

"हां, अनेकों के दिवाले पिट जाते हैं।"

"तो यह काम तो ठीक नहीं।"

"पूर्ण रूप से हुआ है।"

"तो आपने यह क्यों खेला? यदि कहीं हानि हो जाती तो?"

"बात यह है कि आजकल कम्पनियों के 'बैलेंस-शीट' निकलते हैं और टाटा कम्पनी इस वर्ष भारी लाभ दिखाने वाली थी। मुझे अखबार पढ़ने से कुछ ऐसा अनुमान हो गया था। इससे मुझे विश्वास था कि हिस्सों के दाम बढ़ जायेंगे। परन्तु यह तो अत्यधिक चढ़ाव है। अवश्य किसी ने चालाकी खेली है।"

"तो फिर?"

"फिर क्या? मैं अभी सिन्डीकेट में टैलीफून कर हिस्से बेच देता हूं। अब देरी नहीं करनी चाहिये। कल कुछ गड़बड़ भी हो सकती है।"

इतना कह मोहनलाल धोती-कुर्ते से ही बाज़ार टैलीफून करने के लिये चला गया। सुधा इस एकाएक रुपयों की वर्षा पर विस्मय में, बिना कुछ समझे, बैठी रही।

जब मोहनलाल वापिस आया तो सुधा ने पूछा, "हिस्से बिक गये?"

"हां, रुपया कल बैंक से मिल जायेगा।"

"मैं एक बात आपसे कहूँ। मानियेगा?"

"हां, कहो क्या बात है?"

"आप फिर ऐसा व्यापार न करें।"

"क्यों?"

"इसमें तो कहीं धोखा-धड़ी प्रतीत होती है। मैं बहुत पढ़ी-लिखी तो नहीं। इस पर भी एक बात तो समझती हूँ कि बिना महनत किये जो कमाई होती है वह पचती नहीं।"

मोहनलाल हंस पड़ा। सुधा ने सातवीं-आठवीं श्रेणी तक शिक्षा पाई थी। वह समझता था कि अर्थ-शास्त्र से अनभिज्ञ होने के कारण ही वह उसे इस काम से मना करती है। इस कारण वह उसे समझाने के लिये कहने लगा, "इस ज़माने में प्रायः आधी दुनिया इसी प्रकार की कमाई करती है।"

"कलयुग में और होगा ही क्या ? पर हमें लोगों से क्या ? जब परमात्मा ने हमें दो हाथ कमाने को दिये हैं तो फिर ऐसे काम करने से क्या लाभ ? न जाने किस की जेब से यह चौदह सौ रुपया आपको मिल रहा है। नहीं, मुझे हार और भूषणों की आवश्यकता नहीं। आप मेरे लिये चिन्ता न करें।"

मोहनलाल ने बात बदल दी, "सुधा रानी, तुम्हारी बिमला के पतिदेव की बात तो बताई ही नहीं।"

"हा, तो कुछ पता चला ?"

"लोग कहते हैं कि बीमा-कम्पनी के एजेंट उड़ते पत्ती के पंख कतर लेते हैं। आज की मेरी कारगुज़ारी सुनोगी तो तुम भी कहोगी कि लोगों के कहने में झूठ नहीं है। मैं अपने विचार से तो तुम्हारी सहेली के दुख का कारण जान गया हूँ। लो, सारी बात क्रमवार सुनाता हूँ :—

"आज प्रातःकाल जब मैं मकान से निकला तो बिहारीलाल गली के बाहर से घर को आरहा था। मैंने उसे नमस्ते कह ही डाली। बिहारीलाल मेरी नमस्ते सुन हैरान रह गया। मेरी कई वर्ष से उससे बातचीत नहीं थी। उसने केवल नमस्ते ही कही और बिना ठहरे घर में चला गया। मैं इस ठंडे व्यवहार से कुछ निराश था। जब मैं गली के बाहर निकला तो वहां एक मोटर खड़ी थी जिसको चलाने वाली एक लड़की थी। मैं उस लड़की को जानता हूँ। वह लाहौर की फैशनेबल सुसायटी का एक विख्यात सितारा है। मुझे संदेह हो गया कि बिहारीलाल उसी गाड़ी में आया था। इस विचार के आते ही मुझे यह सूझ पड़ा कि शायद बिहारीलाल इसी लड़की के जाल में न फंसा हो। वह लड़की डाक्टर खन्ना की लड़की है और डाक्टर खन्ना हमारी कम्पनी के डाक्टर हैं। मैंने मन में सोचा कि डाक्टर साहब से दो-चार बार मिलने से कुछ पता अवश्य लग जायेगा।

"आज सायंकाल पांच बजे के लगभग मैं एक बीमा कराने वाले को डाक्टरी परीक्षा के लिये डा० खन्ना के पास लेकर पहुँचा। डा० खन्ना

जब उस पुरुष की डाक्टरी-परीक्षा कर चुके तो मैं उस आदमी को टांगे में विदा कर डाक्टर साहब से इधर उधर की बातें करने लगा। इन्हीं बातों में मैंने उनकी लड़की प्रेम की बात कर दी, 'आपको अब प्रेम के विवाह की सोचनी चाहिये।' वह बोले, 'यह मेरा काम नहीं। वह पढ़-लिखकर समझदार हो गयी है। अपना पति ढूंढना उसका अपना काम है।'

"मैंने बहुत नम्रता से कहा, 'यदि वह इस खोज में सफल न हो सकी तो क्या आप उसकी सहायता नहीं करेंगे?'

"इस पर डाक्टर साहब बोले, 'मेरी सहायता सदैव उपस्थित है, परन्तु मैं समझता हूं कि वह मुझसे अधिक अच्छी तरह अपना साथी ढूंढ सकेगी। और शायद वह इस काम में सफल हो गयी है।'

"इसी समय प्रेम और बिहारीलाल कोठी के भीतर से निकल डाक्टर साहब के दफ्तर में चले आये। मुझे डाक्टर साहब के पास बैठा देख एक क्षण लिये तो बिहारीलाल घबराया, परन्तु तुरन्त ही अपने आपको सावधान कर वह आगे बढ़, मुझे नमस्ते कर, हाथ मिलाने लगा। पूर्व इसके कि मैं कुछ पूछूं, वह मुझसे पूछने लगा, 'बा० मोहनलाल, स्वास्थ्य तो ठीक है?'

"मैंने उत्तर दिया, 'सब आपकी कृपा है। आप तो जानते ही हैं कि मैं एक बीमा-कम्पनी का काम करता हूं। अभी एक की डाक्टरी परीक्षा के लिये यहां आया था।'

"इसी समय प्रेम ने डाक्टर साहब से कहा, 'पिता जी, हम सिनेमा देखने जा रहे हैं।'

"डाक्टर साहब ने सिर हिलाकर जाने की स्वीकृति दे दी और वे दोनों चले गये। पश्चात डाक्टर साहब ने मुझसे पूछा, 'आप बिहारी लाल को जानते हैं?"

"हां?"

"इस पर डाक्टर साहब ने पूछा, 'स्वभाव का कैसा है?'

"बहुत ही खुश-मिजाज़ है। हम दोनों डी० ए० वी० स्कूल में इकट्ठे

पढ़ते थे। पीछे वह गवर्मेन्ट कालेज में भर्ती हो गया और मैं फोरमैन क्रिश्चियन कालेज में। पश्चात वह शहादरा में कपड़े रंगने के सरकारी कारखाने में काम करता था। आजकल खाली है।'

"डाक्टर साहब के मुख से संतोष और प्रसन्नता टपकती प्रतीत होती थी। इस समय डाक्टर साहब को टैलीफून से किसी ने तुरन्त बुला लिया। वह मुझसे हाथ मिला अपनी मोटर में चले गये, और मैं घर चला आया।"

सुधा यह कथा सुन चिन्ता-सागर में डूब गयी। अन्त में उसने पूछा, "तो आपने डाक्टर साहब से बताया नहीं कि बिहारीलाल का विवाह हो चुका है।"

"डाक्टर साहब के एकाएक उठकर चले जाने से मैं कुछ कह नहीं सका। साथ ही मेरा अनुमान ही तो है। निश्चय से तो कुछ कह भी नहीं सकता।"

"क्या प्रेम विमला से भी अधिक सुन्दर है?"

"वह विमला से अधिक चतुर है।"

[५]

बिहारीलाल को काशमीर फार्मास्युटिकल कम्पनी में सलाहकार कैमिस्ट की नौकरी मिली थी। इस कम्पनी के मुख्य मालिक सेठ धन्नाराम लाहौर के एक प्रसिद्ध व्यापारी थे। उनके पंजाब भर में बीसियों कारखाने थे। केवल लाहौर मुगलपुरा में ही भिन्न भिन्न कामों के कारखाने थे। यह फार्मास्युटिकल कम्पनी तो उनके व्यापार का एक बहुत ही छोटा सा भाग था।

बिहारीलाल को जब ढाई सौ रुपये के स्थान पर लगाकर केवल सौ बीस दिये गये तो वह क्रोध से जलभुन गया था, इस पर भी उसने नौकरी स्वीकार कर ली थी। इसमें विशेष कारण था। वह कम्यूनिस्ट पार्टी का सदस्य था और छः मास से बेकार होने से पुलिस उसे तंग करने लगी थी। उसने नौकरी कर पुलिस की देखरेख से बचने की आशा की थी। वह अभी और बिना कारण के कैद होना पसन्द नहीं करता

उसका विचार था कि भारतवर्ष में अभी विचार-प्रचार का काल है। यहां मज़दूरों का संगठन अभी क्रियात्मक काम के लिये नहीं हो सकता। भारतवर्ष में यथार्थ क्रान्ति का समय अभी नहीं आया, वह ऐसा मानता था।

कम्यूनिस्ट पार्टी के प्रायः सदस्य यह समझते थे कि आर्थिक आधार पर किसी देश में कभी भी विप्लव किया जा सकता है। वे इस विप्लव का श्रीगणेश करने के लिये कारखानों में हड़तालें कराना उचित समझते थे। अतएव जब बिहारीलाल उनको कहता कि साम्यवाद के सिद्धान्तों का प्रचार करना प्रथम काम है तो वे उसे दब्बू, डरपोक, नरम दल का अथवा पूँजीवादी कहकर पुकारते थे।

डाक्टर खन्ना की लड़की प्रेम भी कम्यूनिस्ट पार्टी की सदस्य थी। वह यद्यपि पार्टी के अग्रसर विभाग से सहमत थी तो भी बिहारीलाल से घनिष्ठता रखती थी। कई बातों में बिहारीलाल से उसकी विचार-साम्यता भी थी। वह स्त्रियों के लिये पूर्ण स्वतन्त्रता को मानती थी और सर्वथा, सर्वत्र, सदैव पुरुषों के बराबर अधिकार चाहती थी।

एक दिन कम्यूनिस्ट पार्टी में बिहारीलाल ने अपने विचार बताये। उसने कहा, "मैं सर्वांग विप्लव और परिवर्तन का उपासक हूँ। यह नहीं हो सकता कि समाज एक रूप से तो स्वतंत्र हो जाये और दूसरे विषयों में परतन्त्र रहे। स्वतन्त्रता की सुख-समीर जब समाज में बहेगी तो इसका सब कूड़ा-करकट निकल बाहर हो जायगा। यह नहीं हो सकता कि राजनीतिक स्वतन्त्रता तो हो पर आर्थिक पराधीनता उपस्थित रहे, अथवा सामाजिक स्वतन्त्रता हो जाय पर धार्मिक पराधीनता चलती जाय। जब भी स्वतन्त्रता यहां होगी तो वह सर्वांगी होगी। यह तो मन की एक अवस्था है, जिसमें मनुष्य प्रत्येक प्रकार का प्रतिबन्ध तोड़कर फेंक देना चाहता है। यही स्वतन्त्रता का पथ है।"

प्रेम भी इसी प्रकार के विचार रखती थी। वह समझती थी कि बिहारीलाल परिस्थिति तथा मनोविज्ञान को समझता है। उस दिन पार्टी

की मीटिंग से घर आते समय प्रेम ने बिहारीलाल से पूछा, "विवाह के रीति-रिवाज के विषय में आप क्या समझते हैं ?"

"यह एक कृत्रिम बन्धन है।"

"इसके स्थान पर आप क्या चाहते हैं ?"

"उन्मुक्त प्रेम अर्थात् पूर्ण स्वतंत्रता।"

"प्रेम-पात्र बदलने में भी ?"

"आवश्यकता हो तो।"

"किस की आवश्यकता ?"

"प्रेमी-प्रेमिका दोनों की अथवा दोनों में से एक की।"

इस पर प्रेम ने बिहारीलाल का हाथ ऐसे ढंग से दबाया कि उसके शरीर में बिजली सी दौड़ गयी।

आज बिहारीलाल का काशमीर फार्मास्युटिकल कम्पनी में काम करने का पहला दिन था। भिन्न भिन्न पदार्थों का विश्लेषण कर विवरण निश्चय करना था। उसने ठीक चार बजे काम बन्द कर दिया और पैदल ही डाक्टर खन्ना की कोठी की ओर चल पड़ा।

डाक्टर खन्ना की कोठी फिरोज़पुर रोड पर थी और काशमीर फार्मास्युटिकल कम्पनी की प्रयोगशाला माल पर। जब बिहारीलाल कोठी पर पहुंचा तो प्रेम अपने कमरे में थी। वह आज बहुत प्रसन्न थी। कारण यह था कि उसने उस दिन प्रातःकाल बिहारीलाल से अपने मन की बात कह दी थी। उसने बताया था कि वह उससे प्रेम करती है। बिहारीलाल ने यद्यपि उसके कहने का कुछ उत्तर नहीं दिया था और चुप रहा था, इस पर भी उसके मुख को देखकर और अब, इस बात के पश्चात, उसके कोठी पर चले आने से वह समझ रही थी कि उसने उसके प्रेम को ठुकराया नहीं है। बिहारीलाल ने कमरे के बाहर खड़े खड़े पुकारा, "प्रेम।"

"भीतर चले आइये," उसका उत्तर था। बिहारीलाल भीतर चला आया और एक सोफा पर बैठ गया। प्रेम जो आईने के सामने

खड़ी अपना मुख देख रही थी उनके पास आकर बैठ गयी। बैठते हुए उसकी दृष्टि विहारीलाल के जूतों की ओर चली गयी। इस पर उसने पूछा, "पैदल आये हैं ?"

"हां।"

"तांगे पर आजाते।"

"आज जेब खाली थी।"

"तो तांगे का भाड़ा यहां आकर दे दिया जाता।"

"और मान लो आप यहां न मिलतीं तो ?"

"तो यहाँ से अपने घर जाकर दे सकते थे।"

"और यदि वहां भी नकद न होते तो। आखिर एक सौ बीस रुपये मासिक कमाने वाला तांगे पर कितना खर्च कर सकता है।"

"एक सौ बीस ? मैं समझती हूँ कि आपकी आय पांच सौ बीस है।"

"पांच सौ बीस ? मैंने तो प्रातःकाल ही बताया था कि मेरा वेतन एक सौ बीस निश्चय हुआ है और छः मास तक तो यही रहेगा।"

"हां जानती हूँ, परन्तु चार सौ मुझे जो पिता जी से मिलते हैं।"

"मैं उसे अपना कहने का अधिकार नहीं रखता।"

"परन्तु जब ...।"

विहारीलाल ने बात बीच में ही काटकर कहा, "देखो प्रेम, तुम्हारी बात मैं समझता हूं। मेरे विचार तुम्हारे विषय में क्या हैं बताना नहीं चाहता, कारण यह कि तुम मेरे विषय में अभी पूरी बात नहीं जानती।"

"मैं समझती हूँ कि मैं आपको भली भांति जानती हूँ।"

"फिर भी सुनो। मैं बहुत ग़रीब आदमी हूँ; मेरी पैतृक सम्पत्ति नहीं के बराबर है।"

"जानती हूँ।"

"मेरी अपनी आय बहुत कम है।"

"यह मैं नहीं जानती क्या ?"

"मेरा विवाह हो चुका है।"

"श्रीमती विमलादेवी से न ! क्रिश्चियन कॉलेज की 'बेबी-डॉल' से ।"

"तो तुम जानती हो और इस पर भी मुझसे प्रेम करती हो ?"

"इससे क्या होता है ? मैं तो आपसे प्रेम करती हूं, न कि आपकी सम्पत्ति से ।" इतना कहते कहते प्रेम ने बिहारीलाल के हाथ पर अपना हाथ कुछ दबाव डालकर रख दिया और अपना कहना जारी रखा, "आपकी बीवी है या नहीं, मुझे इससे कुछ प्रयोजन नहीं ।" इतना कहते कहते वह उसके और समीप हो गयी, "आपकी एक क्या कितनी भी पत्नियां हों, पर मैं तो आपकी एक प्रेमिका हूँ और चाहती हूँ कि आप भी मुझसे प्रेम करें ।"

"प्रेम से कौन प्रेम नहीं करेगा," इतना कहते हुए बिहारीलाल ने अपना दूसरा हाथ उसके हाथ पर रख दिया, "परन्तु क्या हम कभी पति-पत्नी के रूप में रह सकते हैं ? यदि यह नहीं हो सकता तो फिर असम्भव के पीछे भागने से क्या लाभ ?"

"असम्भव क्यों है ? मैं तो इसमें कोई ऐसी बात नहीं देखती ।"

"लोग क्या कहेंगे ?"

"क्या लोगों की राय पर हम अपना जीवन-पथ-निर्माण करना चाहते हैं ? मूर्ख समाज की मूर्खतापूर्ण बातों से क्या हमने मुक्ति प्राप्त नहीं कर ली ?"

"परन्तु आपके पिता ?"

"वह बुद्धिशील हैं । मुझे उन पर विश्वास है ।"

"सचमुच ?"

"हां और मुझे आप पर विश्वास है ।" अब उसने बिहारीलाल की कमर में हाथ डाल दिया ।

इसी समय प्रेम को लाज़ा में 'रोमियो-जूलियेट' पिक्चर लगे होने का ध्यान आगया । उसने कहा, "चलो पिक्चर देखने चलें ।"

[६]

दूसरे दिन जब सुधा, नित्य की भांति, विमला के घर आई, तो वह

खाट पर चादर ओढ़े लेटी हुई थी। सुधा सहम गयी। उसने खाट के पास जाकर धीरे से कहा, "विमला !"

विमला चुपचाप पड़ी रही। सुधा ने उसे धीरे-धीरे हिलाया। वह नहीं उठी। मुख से चादर हटाकर देखा तो विमला की आंखें मुंदी हुई थीं और उनसे अश्रुधारा बहने से तकिया भीगा हुआ था। कुछ क्षण तक तो सुधा उसे देखती रही, पश्चात् उसने विमला के समीप खाट पर बैठ, गले में बांह डाल, उसका मुख चूम लिया और कहा, "बहिन !"

विमला ने आंखें खोल दीं और अपनी गालों से आंसू पोंछते हुए एक लम्बी आह भरी। सुधा ने पूछा, "बहिन, बहुत दुखी हो ?"

विमला उठकर बैठ गयी और बहुत धीरे से बोली, "नहीं।"

सुधा ने हैरानी से पूछा, "इसका अर्थ यह है कि या तो तुम मुझे सर्वथा मूर्ख समझती हो या कोई सर्वथा अपरिचित। दो मास से मैं तुम्हारी अवस्था दिन प्रति दिन बिगड़ती हुई देख रही हूँ और तुम मेरे सामने कुछ मानती ही नहीं। या तो एक बार कह दो कि तुम मुझे कोई पराया मानती हो, तब मैं तुमसे कुछ नहीं पूछूंगी।"

विमला ने आंखें नीचे किये हुए कहा, "सुधा बहिन, मुझे क्षमा कर दो। यदि मैंने कोई बात तुमसे छिपाई है तो इसलिये नहीं कि मैं तुमसे प्रेम नहीं करती, प्रत्युत इसलिये कि हिन्दू पत्नी होने से मैं उसे छुपाना अपना धर्म समझती हूँ।"

"इतना पढ़-लिखकर भी तुम इन बातों को मानती हो। मैं तो प्रत्येक बात में विवेक से काम लेती हूँ। जो बात समय और परिस्थिति के अनुकूल हो उसे ही धर्म मानती हूँ।"

"धर्म तो काल और परिस्थिति से ऊपर की वस्तु है। यदि इसकी रूप-रेखा को हम समय समय पर अपने अनुकूल बनाते चले जावें तो धर्म और अधर्म में भेद ही क्या रह जायगा ? समय पड़ने पर हम अधर्म को भी धर्म समझ बैठेंगे।"

"भ्रम में तुम अधर्म को धर्म भी तो समझ सकती हो। इसका क्या

इलाज है ?"

"धर्म और अधर्म क्या हैं यह मनुष्य की आत्मा का विषय है। यह युक्ति अथवा परामर्श करने का विषय नहीं है।"

"बचपन में भी तो तुम्हारी आत्मा थी। वही आत्मा अब भी है। इस पर भी अनेकों बातें ऐसी हैं जो तुम उस समय ठीक समझती थीं और अब बेठीक। क्या इससे यह सिद्ध नहीं होता कि किसी बात को ठीक या ग़लत समझना आत्मा का विषय न होकर मन का विषय है। मन के विचार, बहुत सीमा तक, अनुभव और स्मरण-शक्ति पर निर्भर होते हैं। जिसका अनुभव अधिक है और जो अनुभवों को स्मरण रख सकता है, उसके विचार अधिक ठीक होते हैं।"

"मेरी शिक्षा और मेरे अनुभव मुझे चुप रहने को कहते हैं।"

"तुम्हारी शिक्षा तुम्हें अपना कष्ट मिटाने से मना करती है क्या ?"

"रोग की चिकित्सा समय पर ही हो सकती है।"

"परन्तु यदि रोग को बढ़ने दिया जाय तो वह घातक भी सिद्ध हो सकता है।"

"हां, और कभी रोग की असाध्यता का ज्ञान हो जाये तो क्या शांति से मृत्यु की प्रतीक्षा करनी ठीक नहीं होती ?"

सुधा विमला के विचार सुन घबरा गयी और बोली, "तो तुम आत्मघात करने पर उतर आई हो ?"

"नहीं। अपने आप नहीं मरूंगी, परन्तु जीने की इच्छा भी कुछ प्रबल नहीं रही।"

"छी ! कैसी बातें करती हो विमला ? देखो मैं स्त्री-सुलभ बुद्धि से तुम्हारे मन की बात को कुछ कुछ समझती हूँ। कहो तो अपना अनुमान बताऊं ?"

विमला इससे कुछ सहम गयी। उसने मन को दृढ़ कर कहा, "इससे क्या लाभ होगा ?"

"लाभ यह होगा कि यदि मेरा अनुमान ठीक हुआ तो उसका उपाय

भी हो सकता है।"

"मेरा विचार है कि हमारे किये कुछ नहीं हो सकेगा।"

"यह तुम्हारा विचार है न, किसी दूसरे का दूसरा विचार भी हो सकता है।"

"देखो बहिन, इस समय मेरा मस्तिष्क काम नहीं कर रहा। यदि बुरा न मानो तो इस समय इस विषय पर वार्तालाप बन्द कर दी जाये।"

[७]

सेठ धन्नाराम पंजाब के एक विख्यात व्यापारी थे। कई स्थानों पर उनके काम चलते थे। बम्बई के सोना-चांदी के बाज़ार से टेलीफ़ून से व्यापार होता था। कैनाल रोड पर उनके रहने की कोठी बहुत सुन्दर, विशाल और सुसज्जित थी। उनकी स्त्री का देहान्त हो चुका था। कोठी में उनका एक लड़का, एक लड़की और विधवा बहिन रहती थी। लड़के का नाम रामलाल था। वह बी० ए० की श्रेणी में अर्थ-शास्त्र पढ़ता था। लड़की ने अभी मैट्रिक किया था और कॉलेज में प्रवेश करने के स्थान हिन्दी की उच्चतम योग्यता प्राप्त करने की इच्छा रखती थी। उसने अपने पिता से कह दिया था कि वह हिन्दी भाषा पढ़ना चाहती है। पिता उसकी इस अनोखी इच्छा पर चकित था। कारण यह था कि इस समय पंजाब में लड़कियों में कॉलेज की शिक्षा प्राप्त करने का एक प्रकार से पागलपन सा चल पड़ा था। बिना जाने कि इस शिक्षा से उनको क्या लाभ होगा, अंधा-धुन्ध, भेड़-चाल की भांति, अमीर, गरीब, सब लड़कियां कॉलेजों में दाखिल हो अंग्रेज़ी भाषा सीखने के लिये उतावली हो रही थीं। सेठ धन्नाराम ने अपनी लड़की से कहा, "मोहिनी, हिन्दी सीखने से तुम्हारी शिक्षा अधूरी रह जायेगी।"

"पिता जी, किस अंश में?"

सेठ साहब ने कुछ उत्तेजित होकर कहा, "अंग्रेज़ी भाषा की उच्च शिक्षा से वंचित रह जाओगी।"

"फिर क्या होगा?"

"तुम्हारे विचार संकुचित रह जायेंगे। आज अंग्रेज़ी साहित्य के मुकाबिले में दुनिया की किसी भी भाषा का साहित्य नहीं है।"

"अंग्रेज़ी की पुस्तकें समझने की योग्यता तो मुझे हो ही गयी है। शेष अभ्यास से हो जायगी। मैं अब हिन्दी भाषा में योग्यता प्राप्त कर उसके विषय में जानना चाहती हूँ।"

"क्यों ?"

"यह हमारी मातृ-भाषा है।"

"हमारी मातृ-भाषा तो पंजाबी है।"

"पंजाबी हिन्दी की बेटी है और साथ ही हिन्दी पूर्ण भारतवर्ष की राष्ट्रीय-भाषा होने वाली है।"

"अंग्रेज़ी राज्य रहते तो ऐसा हो नहीं सकता।"

"अंग्रेज़ी राज्य भी तो हटाना ही होगा।"

"इससे हमें क्या लाभ होगा ?"

"पिता जी, आप कैसी बातें करते हैं ? क्या देशी राज्य होने से हमें लाभ नहीं होगा ?"

"नहीं। देशी राज्य में तो लोग कारखाने बंद कराकर घरेलू दस्तकारी चलायेंगे। इससे हमें क्या लाभ होगा ?"

मोहिनी यद्यपि समझी नहीं थी कि देशी राज्य हो जाने से ऐसा क्यों होगा, इस पर भी वह निश्चय से नहीं कह सकती थी कि यह नहीं होगा। वह महात्मा गांधी के खद्दर-आन्दोलन के विषय में सुन चुकी थी। इस पर भी उसने अपना निश्चय हिन्दी सीखने का नहीं छोड़ा। जब वह अपने पिता से वार्तालाप कर रही थी, रामलाल, उसका भाई, समीप बैठा सब कुछ सुन रहा था। मोहिनी ने, इस आशा में कि वह उसका पक्ष लेगा, उससे कहा, "भैया, क्या मैं हिन्दी न पढ़ूँ ?"

"क्यों नहीं ? अवश्य पढ़ो। मैं तो समझता हूँ कि हिन्दी पढ़ना ठीक ही है।"

इस पर सेठ साहब ने कहा, "तुम स्वयं क्यों कॉलेज में पढ़ते हो ?"

"मेरा काम मोहिनी से सर्वथा भिन्न प्रकार का होगा। मोहिनी क्या, मैं तो समझता हूं, प्रत्येक हिन्दू स्त्री का हिन्दी साहित्य से अवश्य परिचय होना चाहिये, ताकि अपने बच्चों पर वह हिन्दू संस्कृति की छाप लगा सके।"

सेठ धन्नाराम अपने पुत्र और लड़की के विचारों से संतुष्ट नहीं हुए। इस पर भी चुप रहे। मोहिनी अपने भाई के विचारों को अपने अनुकूल देख अपने आपको उसके समीप अनुभव करने लगी थी। भाई-बहिन परस्पर अनेकानेक सार्वजनिक विषयों पर बातें करने लगे। परिणाम यह हुआ कि मोहिनी में बीज-रूप से जो स्वतंत्रता और देशी वस्तुओं से प्रेम बना था वह विकसित होने लगा।

एक दिन मोहिनी पिता से झगड़ा कर अपने लिये नई मोटर लेकर आई तो अपने भाई को यह बताने के लिये कि यह गाड़ी उसकी गाड़ी से बढ़िया है उसके कॉलेज से लौटते ही उसे गैरेज़ में ले जा नई गाड़ी दिखाने लगी। रामलाल ने गाड़ी को देख कहा, "यह तो 'सीनियर ब्यूक' है। कितने दाम की है?"

"नौ हज़ार की।"

"पिता जी ने खरीदी है?"

"हां, परन्तु मेरे लिये।"

"तुम इसे क्या करोगी?"

"वाह! गाड़ी को क्या करते हैं? सवारी करूंगी।"

"हलके दाम की गाड़ी से भी तो काम चल सकता था।"

"जब पिता जी ने आज बताया कि पिछले मास सोने के सट्टे में उन्हें ढाई लाख का लाभ हुआ है तो मैंने उनसे यह गाड़ी खरीद देने के लिये कहा और उन्होंने खरीद दी।"

"यह सब रुपया इस प्रकार व्यय करना अनधिकार चेष्टा है।"

"किस की? मेरी?"

"नहीं मोहिनी, तुम नहीं समझती। पिता जी का इस सब रुपये पर कुछ भी अधिकार नहीं है। यह तो समाज में विकृत प्रथा के प्रचलित

होने से उनको मिल गया है। जब यह रुपया उनका नहीं तो उनको व्यय करने का भी अधिकार नहीं। जब वह व्यय नहीं कर सकते तो तुम्हारा यह मोटर लेना भी अधिकार की बात नहीं रह जाती।"

मोहिनी विस्मय में पड़ गयी। वह नहीं समझ सकी कि पिता जी का इस रुपये पर अधिकार क्यों नहीं है। उसने शंका-समाधान करने के लिये कहा, "पिता जी का इस ढाई लाख पर अधिकार क्यों नहीं ? उन्होंने स्वयं ही तो इसे कमाया है।"

रामलाल ने समझाने के लिये मोहिनी से पूछा, "तुमने कभी विचार किया है कि धन क्या है ?"

"यह रुपया, चांदी के अथवा करेन्सी नोटों में, धन होता है। और क्या ?"

"नहीं मोहिनी, धन यह नहीं है। यह तो केवल वास्तविक धन को नापने के लिये पैमाना है। यथार्थ धन तो भूमि और मनुष्य की महनत है। इसमें भूमि तो प्रकृति की दी हुई है और महनत मज़दूर करते हैं। प्रकृति की दी हुई वस्तु का दाम तो कुछ भी नहीं है। प्रकृति ने भूमि देते समय कभी किसी प्रकार का भी दाम नियत नहीं किया। शेष है मज़दूरों की महनत। तुम समझ सकती हो कि पिता जी ने यह ढाई लाख रुपया कमाने में कितनी महनत की है। कुछ भी नहीं।"

"तो तुम समझते हो कि यह हराम की कमाई है।"

"जिस आय पर कुछ भी महनत नहीं की गयी उसे तुम क्या कहोगी ?"

मोहिनी के मस्तिष्क को इस वार्तालाप से भारी चोट पहुंची। कई दिन तक वह इस विषय पर सोचती रही। कौन सी आय उचित है और कौन सी अनुचित। वह सोचती थी कि सट्टे के व्यापार में रुपये की हानि भी हो सकती है। परन्तु रुपये को खतरे में रखना क्या किसी प्रकार की आय कर सकता है। यदि कर सकता है तो जुआरी की आय भी उचित आय होगी। तो फिर कानून से जुआ खेलना मना क्यों है ?

वह ऐसे ही विचारों में कई बार लीन रहती थी। जब समझ नहीं

सकती थी तो रामलाल से वह इसी प्रकार के आर्थिक प्रश्नों को पूछने लगती थी। उसने एक दिन बातों बातों में प्रेम, डाक्टर खन्ना की लड़की, का परिचय दिया और कहा कि उससे कभी कभी मिल लिया करे। रामलाल यद्यपि कम्यूनिस्ट पार्टी का सदस्य नहीं था, परन्तु अर्थ-शास्त्र का विद्यार्थी होने से वह कम्यूनिज़म और सोशलिज़म (समाजवाद और साम्यवाद) के विषय में और अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिये कम्यूनिस्ट पार्टी के जलसों में जाया करता था। वहाँ उसको बिहारीलाल, प्रेम और अन्य कम्यूनिस्टों के विचार सुनने का अवसर मिला था।

रामलाल के अपने विचारों में भी परिवर्तन हो रहा था। ज्यों ज्यों उसे विश्वास होता जाता था कि उसके पिता की आय न्याययुक्त नहीं है उसने अपना रहन-सहन कम खर्चीला और सादा करना आरम्भ कर दिया था। अब वह खद्दर का सूट पहनता था। अपनी मोटर गाड़ी उसने गैरेज़ में बन्द कर दी थी और प्रायः इधर-उधर पैदल जाया करता था। मोटर का प्रयोग तो अत्यावश्यक अवसर पर ही होता था।

[८]

बिहारीलाल को घर पर न आते हुए पन्द्रह दिन से ऊपर व्यतीत हो चुके थे। इस काल में उसने कुछ रुपये घर भेजे थे। विमला ने रुपये ले लिये थे, परन्तु उनमें से कुछ भी व्यय नहीं किया था। उसे कुछ अधिक आवश्यकता भी नहीं थी। दिन में एक समय खाती थी। एक सफेद धोती और कुर्ता पहने रहती थी। तीसरे दिन जब वे मैले हो जाते तो घर का धुला दूसरा जोड़ा पहिन लेती और मैले को धोकर रख लेती। मकान बिहारीलाल का अपना था, किराया नहीं देना पड़ता था। खाने के लिये पर्याप्त सामान घर पर रखा था।

सुधा उससे नित्य मिलने आती थी, परन्तु बिहारीलाल के विषय में कभी बात नहीं होती थी। यदि सुधा कभी पूछने का यत्न करती भी तो विमला टाल जाती थी।

भोजन कम कर देने अथवा मानसिक चिन्ता के कारण विमला

आज रुग्ण थी। उसे ज्वर हो आया था। सुधा जब आई तो विमला की लाल २ आंखें देख समझ गयी। उसने कहा. "बहिन, तुम्हें तो ज्वर आगया है।"

"हा।"

"दवाई खाई है?"

"दवाई?" विमला हँस पड़ी। "इसकी क्या आवश्यकता है। कल तक ठीक हो जाऊंगी।"

"दूध पीना था।"

"नहीं, व्रत रखूंगी। ज्वर की सब से अच्छी चिकित्सा यही है।"

"नहीं, दूध पीना ही चाहिये; नहीं तो आतें खुश्क हो जायेंगी और बाद में कष्ट होगा।"

"मुझे कष्ट नहीं होता। मुझे व्रत रखने का अभ्यास है।"

परन्तु जब सुधा ने माथे पर हाथ रखा तो वह सहम गयी। माथा जल रहा था। उसने फिर आग्रह से कहा, "बहिन, कुछ औषधि तो खानी ही चाहिये। बाबू बिहारीलाल कब घर पर आयेंगे?"

"क्या मालूम?" विमला ने आंखें दूसरी ओर फेरकर कहा।

"तो लो, गली के बाहर वाले वैद्य को मैं बुला लाती हूँ।"

"नहीं, नहीं, बहिन! मुझे औषधि की आवश्यकता नहीं।"

"चुप रहो। मैं तुम्हें आत्मघात करने नहीं दूंगी।" इतना कहते हुए सुधा उठकर अपने घर चली गयी। वहां से कपड़े बदल और कुछ रुपये ले, गली के बाहर, बाज़ार में से वैद्य को बुला लाई।

वैद्य ने कह दिया न्युमोनिया हो गया है। ज्वर में स्नान इत्यादि कर लेने से ऐसा हुआ प्रतीत होता है। बहुत सावधानी की आवश्यकता है। उसने कुछ औषधि तो वहीं अपने डिब्बे में से निकाल कर दे दी और कुछ दुकान पर से भेज दी।

रोग बढ़ता ही गया। सायंकाल होते २ ज्वर तीव्र होगया। मोहनलाल को जब पता चला तो वह और उसकी मां भी चली आई। चिकित्सा

बहुत सावधानी से होने लगी। रात भर सुधा और मोहनलाल की मा विमला के पास रहीं। बिहारीलाल घर पर नहीं आया।

प्रातःकाल फिर वैद्य को बुलाया गया। उसने ओषधि बदल कर दे दी। इस समय विमला अर्ध-चेतन अवस्था में थी। कभी २ बक-झक भी करती थी। ऐसी अवस्था में मोहनलाल ने बिहारीलाल को सूचना देनी आवश्यक समझी। वह नहीं जानता था कि बिहारीलाल कहां नौकर है और कहां रहता है। विमला बताने में असमर्थ थी। इस कारण मोहनलाल ने डाक्टर खन्ना की लड़की प्रेम से मिलकर उसका पता जानने के लिये तांगा किया और डाक्टर साहब की कोठी में जा पहुँचा।

डाक्टर साहब ने मोहनलाल का अभिवादन किया और पूछा, "कैसे आना हुआ है?"

"प्रेम से कुछ काम है। क्या वह भीतर है?"

"नहीं। वह बिहारीलाल को उसके दफ़्तर छोड़ने गयी है।"

"बिहारीलाल को?" मोहनलाल विस्मय में डाक्टर का मुख देखता रह गया।

"हां! क्या बात है?

"यथार्थ में, मैं बिहारीलाल का पता पूछने ही आया था। वह रात घर पर नहीं आया।" मोहनलाल ने झिझकते हुए कहा, "उसकी स्त्री बीमार है।"

"स्त्री? क्या कहते हो मोहनलाल? क्या उसकी शादी पहले भी हो चुकी है?"

मोहनलाल ने उत्तर देने के स्थान पूछ लिया, "तो क्या उसने कोई नया विवाह कर लिया है?"

अब हैरान होने की बारी डाक्टर की थी। मोहनलाल तो सब बात समझ गया था। इस पर भी वह डाक्टर के मुख से सुनने के लिये चुप रहा और प्रश्न भरी दृष्टि से देखता रहा। डाक्टर कुछ काल तक विस्मय में पड़ा विचार करता रहा। एकाएक वह अपने स्थान से

उठा और टेलीफून करने लगा, "कहां से बोलते हो ?···काशमीर फार्मास्युटिकल-कम्पनी ?·····जरा बिहारीलाल को टेलीफून पर बुला दो।"

दो तीन मिनट पश्चात फिर कहने लगा, "हैलो·····कौन ? ·····बिहारीलाल ?···हां···डाक्टर खन्ना···प्रेम है या चली गयी ?··· टेलीफून पर उसे बुलाओ।"

अब प्रेम की बारी थी। डाक्टर बोला "प्रेम सीधी घर चली आओ ···बहुत जरूरी काम है···पार्टी की मीटिंग ?···नहीं, पहले घर आओ··· हां·····सीधी ·····कुछ आवश्यक काम है।"

इतना कह डाक्टर ने टेलीफून लटका दिया। अब मोहनलाल की ओर देखकर पूछने लगा, "आप निश्चय से जानते हैं कि बिहारीलाल की कोई स्त्री पहले भी थी ?"

मोहनलाल ने हैरानी प्रकट करते हुए कहा, "हां साहब ! उसका और मेरा विवाह एक ही दिन हुआ था। वह हमारे घर के सामने रहता है। उसकी स्त्री गुज़रात के पं० विलासराय की लड़की है। वह क्रिश्चियन कॉलेज में एफ० ए० की श्रेणी में पढ़ती थी तब उसका विवाह हुआ था।"

"ओह ! आपने मुझे पहले क्यों नहीं बताया ? पन्द्रह दिन हुए उसने प्रेम से विवाह कर लिया है। बड़ा धूर्त है।"

मोहनलाल इतना तो पहले ही समझ गया था। इस पर भी विस्मय का भाव दिखाते हुए बोला, "प्रेम से ? गजब हो गया डाक्टर साहब। बेचारी विमला का क्या होगा ?"

डाक्टर सिर खुजलाते हुए बोला, "ठहरो, प्रेम को आने दो। मेरा तो मस्तिष्क काम नहीं करता। जी चाहता है उस पाजी को जूतों से पिटवा कर घर से बाहर निकाल दूं। जब से विवाह हुआ है, यहीं डेरा डाले पड़ा है। बेचारी प्रेम का क्या होगा ?"

इतना कहते कहते डाक्टर कुर्सी से उठ, बेचैनी से कमरे में इधर से उधर और उधर से इधर चक्कर काटने लगा। मोहनलाल अपने स्थान पर बैठा डाक्टर की बेचैनी को देख रहा था।

कुछ ही मिनट में प्रेम की मोटर कोठी में पहुँच गयी। प्रेम के कमरे में प्रवेश करते ही डाक्टर ने घूरकर प्रेम की ओर देखते हुए कहा, "जानती हो, यह क्या कह रहे हैं?"

"कौन, पिता जी? मिस्टर मोहनलाल? क्या कह रहे हैं?"

"यह कहते हैं कि बिहारीलाल की औरत सख्त बीमार है।"

"कौन? विमलादेवी? क्या हुआ है उसे?"

"डब्बल न्युमोनिया।"

"पिता जी! जाइये उसे देख इलाज कर दीजिये न।"

डाक्टर, प्रेम की बात सुन, अवाक खड़ा रह गया। प्रेम ने आग्रह से पुनः कहा, "पिता जी, उसे राज़ी कर देना होगा। जाइये......।"

डाक्टर अधिक सहन नहीं कर सका और बोला, "तो तुम्हें यह सब मालूम है?"

"क्या मालूम है पिता जी?"

"बिहारीलाल की एक स्त्री पहले भी है।"

"हां, मालूम था।"

"इस पर भी तुमने उससे विवाह कर लिया?"

"इसमें हानि ही क्या है? अच्छे आदमियों से एक से अधिक स्त्रियों के विवाह करने की इच्छा और यत्न करना स्वाभाविक ही है।"

मोहनलाल ने बात को बीच में ही रोककर कहा, "परन्तु बेचारी विमला का क्या होगा?"

"वह यदि मिस्टर बिहारीलाल से प्रेम करती है तो उनकी स्त्री बनी रह सकती है।"

"आपकी मौजूदगी में भी?"

"मैं इसमें कोई हानि नहीं समझती।"

मोहनलाल ने कंधों को ऊपर उठा, सिर को एक ओर को झुकाकर कहा, "मुझे इस बात से कुछ प्रयोजन नहीं है। मैं तो बिहारीलाल को विमला की बीमारी की सूचना देने आया था। वह सख्त बीमार है और

उसे उसके पास जाना चाहिये।"

"हां, हां, मैं भी तो यही कह रही हूँ। पिता जी, आप अपनी कार में बाबू मोहनलाल जी के साथ चलिये और मैं उनको साथ लेकर आती हूँ।"

डाक्टर ने घूमकर मुख दीवार की ओर कर लिया और कहा, "मैं उसकी चिकित्सा नहीं करूंगा।"

प्रेम ने विस्मय से पूछा, "पिता जी, क्यों? आप तो डाक्टर हैं।"

"मैं तुम्हारा पिता पहले हूं और पीछे डाक्टर। यदि उसे आराम न हो सका तो लोग कहेंगे कि मैंने जान-बूझकर मार डाला है।"

"अच्छी बात," प्रेम ने कहा, "चलिये, पहले मैं तो देख लूं। मिस्टर मोहनलाल, आइये। मैं आपको अपनी कार में ले चलती हूं।"

[६]

जब प्रेम, बिहारीलाल और मोहनलाल घर पहुँचे तो विमला अभी भी अचेत थी। केवल सांस लेने में अंतर पड़ा था। वैद्य भी वहां उपस्थित था। प्रेम ने भी विमला की परीक्षा की और प्रश्न भरी दृष्टि से वैद्य की ओर देखा। उसने कहा, "अवस्था बहुत बिगड़ चुकी थी, पर अब ठीक हो रही प्रतीत होती है।"

मोहनलाल का वैद्यक चिकित्सा पर बहुत विश्वास था। बिहारीलाल को विदित था कि विमला के पिता भी इसी चिकित्सा को पसन्द करेंगे। साथ ही वह अपने आपको ऐसी परिस्थिति में पाता था कि चिकित्सा में अधिक हस्ताक्षेप उसके लिए अपमान का कारण हो सकता था। उसने मोहनलाल से कहा, "आपकी इच्छा हो तो डाक्टर बुलाया जाय।"

प्रेम ने इस प्रस्ताव का समर्थन कर दिया, परन्तु मोहनलाल, उसकी माता और सुधा ने आयुर्वेदिक चिकित्सा के लिये अनुरोध किया।

वैद्य विमला को देखकर जब मकान के नीचे उतरा तो प्रेम उसके साथ ही चली आई। उसने वैद्य से पूछा, "आप क्या समझते हैं? मैं तो समझती हूँ कि वह ठीक हो जायेगी।"

"इस समय तो कुछ आशा प्रतीत होती है।"

"आप चिकित्सा में ढील न करें। सायंकाल और फिर रात को आकर देख जाइयेगा। जितना भी खर्चा होगा मैं आपको दूंगी।"

"आप निश्चिन्त रहें। मेरी ओर से कोई ढील नहीं होगी।"

प्रेम ने दस दस रुपये के पांच नोट निकाल वैद्य को देते हुए कहा, "अभी ये आप रखिये।"

वैद्य ने इन्कार करते हुए बताया, "मुझे सब दाम मिल चुका है।"

"किसने दिया है?"

"सुधादेवी जी ने।"

प्रेम चुप कर गयी। वह चाहती थी कि विमला की चिकित्सा भली भांति की जाय। रुपये के अभाव से अथवा बिहारीलाल के उससे सम्बन्ध के कारण उसमें त्रुटि न होने पावे।

[१०]

बिहारीलाल आज अपने घर पर रहा। सायंकाल प्रेम कोठी में पहुँची तो डाक्टर खन्ना परेशानी में कमरों में चक्कर काट रहा था। एक कमरे से दूसरे में और दूसरे से तीसरे में और फिर दफ्तर में। उसके मन में भांति भांति के विचार आ रहे थे। कभी तो वह कॉलेजों की शिक्षा को कोसता था। कभी अपने स्वभाव को जिससे उसने लड़की को पूर्ण स्वतंत्रता दे रखी थी। वह बार बार प्रेम के व्यवहार पर विचार करता था और प्रत्येक बार उसे असन्तोषजनक पाता था। वह मन में कहता था, 'मैं धनवान हूँ। लाखों की सम्पत्ति है। मेरे कोई लड़का नहीं, प्रेम ही एक सन्तान है। उसे क्या बिहारीलाल से अच्छा पति नहीं मिल सकता था? यदि वह चाहती तो मैं उसे प्रान्त भर से अच्छे से अच्छा वर ढूंढ देता।' उसे प्रेम की बातें याद आने लगीं। पन्द्रह दिन के लगभग हुए थे कि वह बिहारीलाल को साथ लेकर उसके पास आई थी और कहने लगी थी, 'पिता जी, हम पति-पत्नी के रूप में रहना चाहते हैं। आप अशीर्वाद दें।' डाक्टर का उत्तर था, 'बहुत अच्छी बात है, परन्तु

क्या तुमने एक दूसरे को समझ लिया है?' प्रेम का उत्तर था, 'हां पिता जी।'

'तो विवाह 'स्पेशल मैरेज़ एक्ट' के अनुसार होगा अथवा हिन्दू रीति के अनुसार।'

'प्राकृतिक नियमों के अनुसार। जैसे प्रायः प्राणी करते हैं।'

इस उत्तर से डा० खन्ना को सन्तोष नहीं हुआ था, पर लड़की के हठ और बिहारीलाल के आश्वासन पर, कि वह प्रेम से प्रेम करता है और करता रहेगा, उसने स्वीकृति दे दी। परन्तु अब बिहारीलाल के एक स्त्री पहले होने की बात सुन उसके आश्वासन पर विश्वास नहीं रहा था। भांति भांति की आशंकायें उसके मन में उठ रही थीं और प्रेम के भविष्य के विषय में उसे चिन्ता हो रही थी। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि उसकी भी एक समाज थी। यद्यपि उस समाज के लोग अति स्वतंत्र विचार के थे इस पर भी वे अपने लड़के-लड़कियों के विवाह धूमधाम और रीति-रिवाज के अनुसार करते थे। डाक्टर और प्रेम ने उन लोगों के समुख बिहारीलाल से विवाह के विषय में ऐसे ढंग से बात की थी कि उनके मन पर यह अंकित हो गया था कि विवाह 'स्पेशल मैरिज एक्ट' के अनुसार हुआ है। अब डाक्टर डरता था कि यदि उन्हें पता चल गया कि बिहारी लाल की एक स्त्री पहले भी है तो बात खुल जायेगी क्योंकि इस कानून के अनुसार तो एक पत्नी के जीते जी दूसरा विवाह हो नहीं सकता। इससे घोर अपमान होगा।

इन विचारों में डूबा हुआ डाक्टर खन्ना चंचल हो उठा था और बहुत ही उत्सुकता से प्रेम की प्रतीक्षा करने लगा था। जब प्रेम आई तो वह उसे अपने कमरे में ले गया। उसे वहां बैठा, भीतर से दरवाज़ा बन्द कर, पूछने लगा, "क्या हाल है?"

"अब ठीक हो रही है।"

"तो तुम इससे प्रसन्न हो?"

"नाराज़ होने में कोई कारण नहीं।"

"ओह, तुम्हें अपने भविष्य के विषय में कभी चिन्ता नहीं होती?"

"चिन्ता तो मुझे कभी हुई ही नहीं। पिता जी, देखिये। मैंने डाक्टरी की उच्च शिक्षा प्राप्त की है। प्रकृति ने मुझे आप जैसे उन्नत विचारों वाला पिता दिया है। आपके पास धन है, यश है। मैं स्वयं भी अपने जीवन-निर्वाह के लिये पैदा कर सकती हूं। मैंने अपनी वृद्धावस्था के लिये दस हज़ार का बीमा भी करवा लिया है। फिर चिन्ता किस लिये की जाय?"

"यदि समाज को पता चल गया कि तुम लोगों ने समाज के नियमानुसार विवाह नहीं किया तो वहां कितनी निन्दा होगी?"

"समाज मूर्खों से भरी पड़ी है। क्या एक बुद्धिशील मनुष्य को मूर्खों की इच्छानुकूल रहना चाहिये? बताउंगे, अग्नि के चार चक्कर काट लेने से कोई बात अधिक पक्की और माननीय कैसे हो सकती है? बुद्धि इन बातों में कोई भी सार नहीं देखती।"

"तो तुम्हें लोगों से मान-अपमान की कुछ भी परवाह नहीं है?"

"नहीं, कुछ भी नहीं।"

"तुम्हें रहना तो उन्हीं में है।"

"सोशल बायकाट का ज़माना गया। अब तो जिसके पास पैसा है समाज उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती। पिता जी, हम पढ़े-लिखे, बुद्धि रखने वाले प्राणी हैं। हमें रीति-रिवाज से बंधी समाज से ऊपर उठना चाहिये।"

युक्ति से तो प्रेम की बात ठीक प्रतीत होती थी। डाक्टर इसका कुछ भी उत्तर नहीं दे सकता था। इस पर भी उसका मन शंकाओं से दबा जा रहा था। उसने अब एक दूसरे दृष्टि-कोण से बात कही।

"क्या बिहारीलाल पर तुम्हें विश्वास है कि वह तुम्हें छोड़ नहीं देगा?"

"वह बहुत प्रेममय स्वभाव रखता है। कोई भी व्यक्ति उससे प्रेम किये बिना नहीं रह सकता। वह सभ्य है, सुशील है, पढ़ा-लिखा विद्वान है, और अति उच्च कोटि के विचार रखता है। यदि ऐसे सज्जन पर विश्वास नहीं किया जायगा तो किस पर किया जायगा?"

डाक्टर निरुत्तर था।

[११]

सात दिन के पश्चात् विमला का ज्वर टूटा। बिहारीलाल ने सेवा करते करते रात और दिन एक कर दिया। कम्पनी से उसने छुट्टी ले रखी थी। रात को एक आध घंटा सो जाता था और शेष समय पानी दे, दवाई पिला, टट्टी करा, पेशाब साफ कर इत्यादि में व्यय हो जाता था। दिन के समय प्रेम और सुधा उसकी सहायता को आजाती थीं। विमला के पिता गुजरात से आगये थे और वह भी यथा शक्ति सेवा-सुश्रूषा में लगे थे।

ज्वर कुछ २ हलका हुआ तो विमला ने बिहारीलाल को पहिचाना। वह इतनी दुर्बल हो गयी थी कि कुछ कहने की शक्ति नहीं रखती थी, परन्तु उसके मुख पर प्रसन्नता और संतोष की झलक दिखाई देती थी। अब उसने प्रेम को भी देखा और उसका परिचय पाने के लिये उत्सुक हो रही थी। सायंकाल को प्रेम चली गयी। विमला ने बिहारीलाल के मुख की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखा। परन्तु उसने ऐसा भाव दिखाया जैसे वह उसकी बात समझा ही नहीं।

इसी प्रकार एक सप्ताह और व्यतीत हो गया। अब विमला उठ-बैठ सकती थी। बातें भी करती थी। बिहारीलाल अब काम पर जाने लगा था। प्रेम अब भी दिन में एक बार अवश्य आती थी और कुछ काम-धन्धा कर जाती थी। विमला को कुछ सन्देह तो हो रहा था। इस पर भी वह पूछने का साहस नहीं कर सकती थी। प्रेम का व्यवहार इतना सहृदयपूर्ण था कि मन में ईर्षा-द्वेष रखते हुए भी उसके मुख से कुछ निकल नहीं सकता था। वह विस्मय भरे भाव से प्रेम का मुख देखा करती थी।

प्रेम जब आती तो सबसे पहले रोगी का कमरा साफ करती, उसका बिस्तर बदलती, फिर खाने को देती। फिर घर की व्यवस्था को, जो घर वाली की अनुपस्थिति में अस्त-व्यस्त हो रही थी, ठीक करती। जब यह सब कुछ होजाता तो फिर विमला के पास बैठकर उससे अनेकों मनोरंजक

बातें कर उसका जी बहलाती। अभिप्राय यह कि जब तक वह वहां रहती कुछ न कुछ करती रहती और विमला को अवसर ही नहीं देती थी कि वह उसके विषय में कुछ पूछ सके।

सुधा भी आती थी, परन्तु उसे अपने घर और घर वाले की भी देख-भाल करनी होती थी। अतएव जब वह आती तो प्रेम सब काम समाप्त कर चुकी होती थी। सुधा, विमला और प्रेम भिन्न भिन्न प्रकार की बातों में लगी रहती थीं।

आज विमला ने सुधा से आग्रह कर उसे प्रेम के जाने के पीछे तक रोक रखा। ठीक चार बजे प्रेम चली जाती थी। साढ़े चार बजे उसे बिहारीलाल को दफ्तर से लेने के लिये मोटर लेकर जाना होता था। वहां से वह पहले फिरोज़पुररोड कोठी पर जाते थे। वहां सायंकाल की चाय पी बिहारीलाल विमला के पास चला आता था।

प्रेम के चले जाने पर विमला ने सुधा का हाथ पकड़कर कहा, "बहिन, जरा और बैठो। मुझे तुमसे कुछ पूछना है।"

सुधा बैठ गयी। विमला ने पूछा, "क्या मैं अब बिलकुल ठीक नहीं हूं?"

"हां बीमारी तो ठीक है, पर दुर्बलता अभी है।"

"क्या मैं अभी कोई दुख की बात सुनने योग्य नहीं हुई?"

"दुख की बात सुनने के तो कोई, कभी भी, योग्य नहीं होता और तुम तो अभी बहुत दुर्बल हो।"

"नहीं, मैं समझती हूं कि मैं अब बुरी से बुरी बात सुनने की शक्ति रखती हूँ। तो क्या तुम मुझे यह नहीं बताओगी कि यह कौन लड़की है और यहां क्यों आती है?"

"तो तुम नहीं जानती कि यह कौन है?"

"नहीं। मुझे सन्देह तो हो रहा है, परन्तु निश्चय से नहीं कह सकती। क्या यह मेरी सौतिन है?"

"अपने बाबू साहब से क्यों नहीं पूछ लेती?"

"बात यह है कि जब वह आते हैं तो पिता जी उपस्थित होते हैं और मैं समझती हूं कि यदि मेरा सन्देह सत्य हुआ तो पिता जी को बहुत दुख होगा।"

"पिता जी तो कल जा रहे हैं, फिर पूछ लेना।"

"जब तुम जानती हो तो तुम्हीं बता दो न।"

"मैं? मुझे बताने में दुख होता है और मैं समझती हूँ तुम्हें भी दुख होगा।"

इतना कह सुधा चुप कर गयी। विमला भी कुछ देर आखें नीची किये सोचती रही। पश्चात् सुधा के मुख की ओर स्थिर दृष्टि कर बोली, "तो मेरा सन्देह सत्य है। पर मुझे दुख नहीं है। ईर्षा तो होती है। मैं सोचती हूं कि मुझमें अवश्य कुछ त्रुटि है जिससे मैं उसके मुकाबिले में असफल रही हूँ। पहले जब मैंने उसे नहीं देखा था तो मैं उससे द्वेष करती थी, परन्तु अब उसकी सेवा-सुश्रूषा देख मुझे उससे द्वेष नहीं रहा। वह उनसे बहुत प्रेम करती होगी और मैं नहीं जानती कि किस भांति मैं उससे बढ़कर उन्हें प्रेम कर सकूंगी।"

इसमें कुछ भी उत्तर देने को नहीं था। सुधा चुप थी। विमला ने कहना जारी रखा, "काम करने में कितनी चतुर है। घर की चीज़ों को क्या तरीके से सजाया है। और फिर बातें तो इतनी मीठी मीठी करती है कि जी चाहता है सुनते ही जाओ। बहिन, जानती हो कि वह किस की लड़की है?"

सुधा ने कहा, "डाक्टर खन्ना की लड़की है और नाम है प्रेम। पिछले साल मैडिकल कॉलेज से एम० बी० बी० एस० किया था। कम्यूनिस्ट पार्टी की नेता है। उसी पार्टी में तुम्हारे बाबू जी से भेंट हुई थी और मित्रता होगयी। यह मित्रता अब इस सीमा तक पहुँच गयी कि पति-पत्नी कहे जा सकते हैं।"

"तो विवाह नहीं हुआ क्या?"

"नहीं। 'स्पैशल मैरिज एक्ट' से तुम्हारे जीते जी हो नहीं सकता

था और दूसरी किसी भी रीति में उनका विश्वास नहीं।"

"तो मुझे मार डालने का बहुत अच्छा अवसर था। इसके विपरीत तो वह मुझे जीवित रखने का यत्न कर रही है।"

सुधा हंस पड़ी और बोली, "इससे यह पता चलता है कि मन की खोटी नहीं।"

"परन्तु यह बुद्धिमानी नहीं कही जा सकती कि बिना विवाह के सम्बन्ध कर लिया है। क्या उसके पिता ने भी मना नहीं किया?"

"डाक्टर साहब को सब विदित है। वे दोनों उसी कोठी में रहते हैं। वह मन से पसन्द भी नहीं करते, परन्तु लड़की बहुत ज़बरदस्त है और बाप की इकलौती बेटी है।"

विमला ने एक लम्बी सांस ली और कहा, "ईश्वर इनका भला करे।"

सुधा को मन ही मन बहुत दुख हो रहा था और उसका अनुमान था कि विमला भी अति दुखी है। इस कारण सांत्वना देते हुए बोली, "बहिन, क्षमा करना। यह बात मुझे ही बतानी पड़ी। मन तो नहीं चाहता था पर जब तुमने पूछ ही लिया तो विवश थी। झूठ भी तो नहीं कह सकती थी। हां तुमको अपने मन को दृढ़ रखना चाहिये। यह सम्बन्ध स्थायी नहीं रह सकता। और अंत में जो अपने हैं वही अपने बनेंगे।"

विमला गम्भीर विचार में लीन थी। इससे वह सुधा की अंतिम बातें नहीं सुन रही थी। जब सुधा ने उसे चुप देखा तो जाने के लिये कहा। तब भी वह अपने ही विचारों में खोई हुई थी। सुधा चली गयी।

विमला सोच रही थी कि वह अपने पिता के साथ चली जाय और अपने पति के मार्ग को साफ़ कर दे। परन्तु ऐसा करने से पिता जी को सब बताना होगा। इससे उनको अत्यन्त दुख होगा। यह वह नहीं चाहती थी। तो क्या लाहौर में ही पड़ी रहे? केवल यहां बैठे रहने से क्या लाभ होगा? तो फिर क्या किया जाय? इस क्या का उत्तर वह सोचती थी और उसके मन में नहीं आता था।

इस समय उसके पिता जी आगये। वह बाज़ार से कुछ फल लाये थे। इनको विमला को देते हुए बोले, "देखो बेटा, खाना खाने और कपड़ा पहरने में सावधानी रखना। एक बार बीमार होने से फिर उसी रोग में ग्रस्त होने की सम्भावना बनी रहती है। मैं कल सुबह की गाड़ी से जा रहा हूँ। अगर कुछ रुपये की आवश्यकता हो तो दे जाऊं।"

"नहीं, पिता जी! सब आपकी कृपा है।"

"अच्छी बात तो यह लो। आशा है दो मास तक फिर लाहौर आऊंगा।" इतना कह उन्होंने सौ रुपये का एक नोट तकिये के नीचे रख दिया। विमला चुप रही।

जब बिहारीलाल आया तो उससे भी विमला की देखभाल के विषय में वार्तालाप होती रही। अगले दिन पं० विलासराय गुजरात चले गये। इस दिन जब बिहारीलाल काम पर जाने लगा तो विमला ने पूछा, "क्या आप सायंकाल आइयेगा?"

"क्यों? इसके आज पूछने की आवश्यकता क्यों हुई?"

"मैं समझती हूँ कि आप पिता जी का मन रखने के लिये आते थे। और मैं तो अब ठीक हूँ ही।"

"मैं अभी तुम्हें ठीक नहीं समझता। जब तक तुम उठ-बैठकर अपना सब काम करने योग्य नहीं हो जाती तब तक देखभाल की आवश्यकता है।"

"आपका अत्यन्त धन्यवाद है।"

"धन्यवाद तो पराये लोगों का किया जाता है।"

"आप मेरे अपने हैं क्या? अपने मन से पूछिये न।"

"मैंने नया विवाह कर लिया है इसलिये?"

"इसे विवाह कैसे कह सकते हैं? विवाह, मैत्री अथवा लैंगिक सम्बन्ध से भिन्न बात है। क्या आप यह नहीं मानते?"

"मानता हूं। लोग अग्नि के चार चक्कर काटने अथवा निरर्थक मंत्रों के उच्चारण को विवाह कहते हैं। इसमें मुझे कुछ वास्तविकता नज़र नहीं आती।"

"परन्तु समाज और राज्य ने कुछ विधान बनाये हैं। यदि आपको उनमें कुछ भी लाभ प्रतीत नहीं होता तो भी उनका पालन, समाज में अनुशासन को स्थिर रखने के लिये, क्या अनिवार्य नहीं?"

"समाज और राज्य से हमने विद्रोह किया हुआ है," बिहारीलाल ने कुछ तेजी में कहा।

बात यहीं पर समाप्त होगयी। बिहारीलाल को काम पर जाना था।

दूसरा भाग

पूंजीवाद

कम्यूनिस्ट पार्टी में वर्ष भर का कार्य-क्रम बन रहा था। बिहारीलाल का प्रस्ताव था कि सर्व साधारण में विचारों का प्रचार किया जाय। पार्टी की शाखायें स्थान स्थान पर खोली जायें और लाखों की संख्या में सदस्य बनाये जायें।

किसी ने बिहारीलाल से पूछ लिया, "किन विचारों का प्रचार किया जाय?"

"साम्यवाद के सिद्धान्तों का।"

पूछने वाले ने फिर पूछा, "आप साम्यवाद किसे कहते हैं?"

"संसार की पूर्ण विभूति महनत करने वालों की सम्पत्ति है। उसका उपयोग श्रमजीवियो के लिये समान मात्रा में उपलब्ध होना चाहिये। जो लोग महनत नहीं करते उनके लिये संसार के पदार्थ नहीं होने चाहियें।"

"इसके प्रचार से क्या लाभ होगा? इन सिद्धान्तों को कार्यरूप में लाना चाहिये। कौन मज़दूर है जो यह नहीं जानता कि उसे संसार के अनेकों पदार्थों से वंचित रखा जाता है। हमें तो मज़दूरों को संसार के सब उत्तम पदार्थों के उपभोग के समीप ले जाने के उपाय प्रयोग में लाने चाहियें।"

अब प्रश्न पूछने की बारी थी बिहारीलाल की। उसने पूछा, "यदि विचारों का प्रसार लक्ष्य के समीप जाना नहीं तो और कौन उपाय हो सकता है?"

बिहारीलाल के विरोधी ने तुरन्त कह दिया, "मज़दूरों के वेतन बढ़वाने चाहियें।"

"यदि मालिक वेतन बढ़ाने को उचित न समझें तब क्या किया जाय?"

"तब कारखानों में हड़तालें कराने का यत्न किया जाय।"

"हड़तालों से क्या होगा?"

"मालिक तंग आकर वेतन बढ़ा देंगे।"

"वेतन बढ़ाने के साथ ही वे कारखानों में बने माल का दाम भी बढ़ा देंगे और मज़दूर तब भी उन पदार्थों का उपभोग नहीं कर सकेंगे।"

इस समय एक और उपस्थित सज्जन ने पूछा, "तो पं० बिहारीलाल कौन उपाय बताते हैं ?"

बिहारीलाल ने उत्तर में कहा, "मैं तो आप लोगों को अपनी योजना बताना ही चाहता था। आप ध्यान से सुनें, "हमारा देश एक विदेशी और पूंजीपतियों की सरकार के आधीन है। इंगलैंड की सरकार पूंजीपतियों से छुटकारा पाकर जनसाधारण के आधीन हो जायगी अथवा नहीं, यह मैं नहीं बता सकता। न ही हम भारतवासी इस विषय में कुछ कर सकते हैं। मैं तो यह कहता हूं कि जब तक भारतवर्ष इंगलैंड के आधीन है तब तक यहां जनसाधारण की अवस्था सुधर नहीं सकती। इंगलैंड में पूंजीपतियों का राज्य है। वे यहां भी पूँजीपतियों का स्वत्व स्थापित किये रखेंगे। यदि हमने पूंजीपतियों के रक्तशोषण करने वाले राज्य से बचना है तो प्रथम कार्य यह है कि ब्रिटिश राज्य यहां से हटाया जाय। देश में रहने वाले पूँजीपतियों से तो सुगमता से निपट लिया जायगा। जहां तक स्वराज्य-प्राप्ति का सम्बन्ध है हमें राष्ट्रीय संस्था से सहयोग करना चाहिये और साम्यवाद के सिद्धान्तों का प्रचुर मात्रा में प्रचार करना चाहिये ताकि स्वराज्य प्राप्त करते ही मज़दूरों का राज्य स्थापित हो सके।"

पार्टी के प्रधान, कामरेड गुलामरसूल ने कहा, "पं० बिहारीलाल, जैसी तन्ज़ीम (सङ्गठन) आप चाहते हैं उसके लिये लाखों रुपये चाहियें। राष्ट्रीय संस्था तो इतना रुपया व्यय कर सकती है, क्योंकि उसके भीतर सरमायादार लोग भी सम्मिलित हैं। हमें इतना रुपया कौन देगा ?"

बिहारीलाल ने कहा, "अभी काम आरम्भ करने के लिये बीस हज़ार तो मैं आपको दिलवा सकता हूं।"

"कहां से ?"

यह निर्णय सुन गुलामरसूल ने जेब से दस दस रुपये के पांच नोट निकालकर मैजिस्ट्रेट की मेज़ पर रख दिये और सलाम कर अदालत से बाहर निकल आया।

गुलामरसूल का स्वभाव था कि जिस काम को करने लगे उसे करके ही छोड़ता था। जब कम्यूनिस्ट पार्टी ने यह निश्चय कर दिया कि सेठ धन्नाराम के कारखानों के मज़दूरों की यूनियन बनाई जाये तो गुलामरसूल ने काम आरम्भ करने में देरी नहीं की। उसने पार्टी के पांच-छः सदस्यों की एक अनियमित सभा बुलाई। इसमें केवल उनको ही बुलाया जो पार्टी के प्रस्ताव के पूरे २ समर्थक थे। इनमें प्रेम भी थी। इस सभा में कार्य करने की आयोजना बनाई गई। इसमें गुलामरसूल ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा, "किसी बात का प्रचार करने के लिये उससे विरोधी बात के मुतल्लिक लोगों में असंतोष पैदा कर देना चाहिये। हम चाहते हैं कि मज़दूरों के रहने का ढंग अच्छा हो। यह तब ही हो सकता है जब उनमें अपने मौजूदा रहन-सहन से नफरत हो जाये। हमने मज़दूरों के मन में उनकी तनख्वाह से, उनके मालिकों से, और उनकी दूसरी बातों से नफरत पैदा कर देनी है। तब वे अपनी बातों में तबदीली करने के लिये बेताब हो जायेंगे। यही तरक्की का रास्ता है।"

इस सभा में यह निश्चय हुआ कि प्रेम और गुलामरसूल मिलों के मज़दूरों से मेल-जोल उत्पन्न करने का यत्न करें। परिणाम यह हुआ कि प्रेम और गुलामरसूल प्रायः नित्य मुगलपुरा इकट्ठे जाने लगे। प्रेम अपनी मोटर-गाड़ी में गुलामरसूल को ले जाती थी। वहां वे मज़दूरों से मिलते और उनसे बातचीत करते। कभी धन से, कभी दवाई से उनकी यथा शक्ति सेवा भी करते थे।

प्रेम को इस काम में आनन्द आने लगा। वह स्वयं डाक्टर थी। जब वह अपना दवाइयों का बेग लेकर वहां पहुंचती और बीसियों रोगों से पीड़ित मज़दूर, उनकी स्त्रियां और बच्चे इकट्ठे हो उसे घेर लेते तो वह अपने आप में एक विशेष उल्लास अनुभव करती।

दूसरी ओर मज़दूर उसे अपना हितचिन्तक समझ उसकी सम्मति मानने के लिये तैयार होगये। गुलामरसूल यद्यपि सदैव प्रेम के साथ रहता था, इस पर भी लोग प्रेम के प्रभाव के नीचे अधिक आते जाते थे। प्रेम गुलामरसूल का परिचय अपनी पार्टी के प्रधान के नाम से देती थी, परन्तु लोग प्रेम को ही नेता मानते थे। गुलामरसूल अपनी जेब से अनेकों की आर्थिक सहायता करता था, परन्तु लोग समझते थे कि वह तो केवल बांटने वाला है। यथार्थ रुपया व्यय करने वाली प्रेम है।

जब प्रेम सर्व-प्रिय हो गयी तो यूनियन बनने में देरी नहीं लगी। इसमें निन्यानवे प्रति शत से अधिक मज़दूर और मिलों में काम करने वाले क्लर्क सम्मिलित हो गये। यूनियन की एक प्रबन्धक-समिति बनाई गयी और उसमें सर्व सम्मति से प्रेम सम्मिलित कर ली गयी। प्रेम के कहने पर गुलामरसूल को भी समिति में आने दिया जाता था।

प्रेम अब नित्य मज़दूरों के बच्चों और स्त्रियों की चिकित्सा के लिये मज़दूरों के रहने के स्थान पर जा पहुंचती। पश्चात वह वहां के लोगों में समाजवाद का प्रचार करती रहती थी। मज़दूरों की स्त्रियां और बच्चे तक समझने लगे थे कि कारखानों के लाभ में मुख्य भाग उनका है। मालिक चालाकी से उनके भाग को स्वयं हज़म कर जाते हैं। मज़दूरों को अपना भाग वापिस लेना चाहिये। यदि वे अपनी इच्छा से न दें तो बलपूर्वक लेना चाहिये।

ऐसी धारणा जब कारखानों में काम करने वालों की हो गयी तो कारखाने में अफसरों और मज़दूरों में तनातनी होने लगी। गुलामरसूल इस परिस्थिति के उत्पन्न हो जाने से अति प्रसन्न था। वह समझता था कि बारूद तैयार हो गया है, केवल चिन्गारी फेंकने की देरी है कि सब कुछ भक से उड़ जायगा। अगर सेठ साहब ने मज़दूरों को अधिक वेतन तथा अन्य सुविधायें देकर प्रसन्न कर लिया तब तो ठीक है, नहीं तो उनका सर्वनाश हुए बिना नहीं रहेगा।

[४]

रामलाल की बी० ए० की परीक्षा का फल निकलने पर सेठ साहब ने उससे पूछा, "अब तुम्हारा क्या करने का विचार है ?"

"मैंने निश्चय नहीं किया। केवल इतना मै जानता हूं कि मैं एम० ए० में दाखिल नहीं हो रहा।"

"क्यों ?"

"मैं लाभ नहीं समझता। अर्थ-शास्त्र का आधारमूल ज्ञान मुझे होगया है। शेप अध्ययन से जान जाऊंगा। यही दो वर्ष जो एम० ए० की पढ़ाई में व्यय करने हैं मैं किसी स्थान पर क्रियात्मक अनुभव प्राप्त करने के लिये लगाना चाहता हूं।"

"तो ठीक है। मैं चाहता हूं कि तुम काश्मीर फार्मास्युटिकल कम्पनी का काम संभाल लो। अभी आज इस कम्पनी को सीमा-प्रान्त में पारे की खान का ठेका मिल गया है। जब यह खान खुल जायेगी तो काम बहुत बढ़ जायेगा। तब मैं अकेला शायद इस काम की देखभाल न कर सकूंगा। यहां तुम्हें काम का अनुभव भी होगा और मुझे भी सहायता मिलेगी।"

रामलाल ने कहा, "पिता जी, मैं काम करूंगा तो, परन्तु मैं चाहता हूँ कि जो काम भी मेरे आधीन किया जाय मुझे उसके प्रबन्ध में पूरा अधिकार हो। मैं अपने विचारानुकूल कारखाना चलाना चाहता हूं और आशा करता हूं कि उसका प्रबन्ध एक ऐसा नमूना होगा कि भारत भर के कारखाने उसकी नकल पर चलने लगेंगे।"

"भला सुनूँ कि तुम्हारा क्या विचार है ? तुम कैसे इसको चलाना चाहते हो ?"

"मैं कारखाने में काम करने वालों का वेतन कम से कम पचास रुपया रखना चाहता हूँ।"

"चपरासी और भंगियों का भी ?"

"जी हां। और अधिक से अधिक पांच सौ रुपया।"

"मैनेजर और अपना भी ?"

"आप बिलकुल ठीक कहते हैं। इसके अतिरिक्त मैं कारखानों में काम करने वालों के लिये सांझा रसोईखाना, सांझे खेलतमाशे और मनोरञ्जन का प्रबन्ध, अस्पताल, स्कूल, दस्तकारी सिखाने का प्रबन्ध, कपड़े सीने, धोने, अभिप्राय यह है कि प्रत्येक आवश्यकता को पूरा करने का सांझा प्रबन्ध करना चाहता हूं। और यह सब प्रबन्ध ऐसे ढंग से करना चाहता हूं कि कारखाने का प्रत्येक कर्मचारी अपने वेतन के भीतर सब प्रकार की सुविधाओं का उपभोग कर सके।"

"इस सबके लिये रुपया कहां से आवेगा ?"

"जो लाखों रुपये वार्षिक की आय होती है उसमें से लगी हुई पूंजी पर एक प्रति शत प्रति वर्ष लाभ देकर इन्हीं कामों में व्यय कर दूंगा।"

"इतने कम मुनाफे पर कौन पूंजी लगायेगा ?"

"आप, पिता जी ! और कौन ?"

"मुझे तो इससे अधिक बैंकों में सूद मिल जाता है।"

"वह इसलिये कि कारखानों और कम्पनियों वाले लाभ की दर बहुत ज्यादा रखते हैं। यदि उनकी मुनाफे की दर एक प्रति शत से अधिक न हो तो अधिक ब्याज न दे सकें। मैं अपना कारखाना एक आदर्श कारखाना बनना चाहता हूं। यदि इसमें सफल होगया तो देश भर के दूसरे मालिक भी अपने कारखानों में ऐसा ही करने पर विवश हो जायेंगे।"

सेठ साहब कितने ही काल तक अवाक मुख रामलाल का मुख देखते रहे। पश्चात् एकाएक अपने स्थान से उठ खड़े हुए और कहने लगे, "तुम अभी काम संभालने के योग्य नहीं हुए। मेरी राय है कि एम० ए० में प्रवेश कर लो।"

४ रामलाल भी अपने स्थान से उठ खड़ा हुआ और बोला, "पिता जी, मैं एम० ए० की पढ़ाई नहीं करना चाहता।"

मोहिनी, जो समीप बैठी ये बातें सुन रही थी और जो अब खड़ी होगयी थी, बोल उठी, "और मैं जानती हूं कि भैया क्या करना चाहेंगे ?"

पिता ने घूमकर मोहिनी की ओर देखते हुए पूछा, "क्या करना

चाहेगा ?"

"मज़दूरों का नेता बन प्रान्त भर के कारखानों में हड़ताल करा देना।"

"इससे क्या होगा ?"

"कारखानों के मालिक विवश हो मज़दूरों की मांगे मान लेंगे।"

सेठ साहब हंस पड़े। बोले, "तुम दोनों अभी बच्चे हो। तुम खिलौनों से खेलना चाहते हो। अच्छी बात। रामलाल तुमको मैंने काशमीर फार्मास्युटिकल कम्पनी का जनरल मैनेजर नियत किया। कल से तुम अपनी इच्छानुसार प्रबन्ध कर सकते हो। हां यदि कोई कठिनाई आन पड़े तो मेरे पास चले आना। मैं ठीक कर दूंगा।"

रामलाल को पिता का एकाएक उसकी बातें स्वीकार करना देख अचम्भा हुआ। सेठ साहब ऊपर की बात कह कमरे से बाहर होगये। मोहिनी ने कहा, "लो भैया, पिताजी ने समझा है कि कहीं दूसरे कारखानों में गड़बड़ न करो, इस कारण एक ही कारखाने में तुम्हें लिप्त कर लिया है।"

"मुझे भय नहीं। मैं अब यत्न करूंगा कि इस फार्मेसी को एक ऐसी आदर्श वस्तु बना दूं कि लोग इसे तीर्थ मान इसके दर्शन करने आवें।"

"परन्तु प्रेम कहती थी कि उसकी पार्टी ने सब कारखानों के मज़दूरों की यूनियन बना दी है और उनका संगठित बल सेठ साहब को सीधे मार्ग पर आने पर विवश कर देगा।"

"प्रेम और उसकी पार्टी के लोग विनाशात्मक प्रवृत्ति रखते हैं। रचनात्मक काम वे नहीं कर सकते। मैं रचनात्मक काम में विश्वास रखता हूं। जब कोई अच्छी बात मुझे प्रतीत होती है तो मैं उसे ग्रहण कर कार्यरूप में परिणित करना चाहता हूं।"

[५]

विमला अब घर में अकेली रहती थी। सुधा और मोहनलाल इस बात को जानते थे, परन्तु विमला के आग्रह पर वे न तो यह बात मोहल्ले वाले दूसरे लोगों से कहते थे और न ही इस परिस्थिति को सुधार सकते थे। सुधा प्रायः विमला के घर जाती रहती थी। अब कभी कभी विमला

भी सुधा के घर आजाती थी।

विमला की रुचि घर के कामों में नहीं रही थी। वह समझती थी कि अकेले जीव के लिये बहुत लम्बे-चोड़े घर की आवश्यकता नहीं होती। धन की कमी उसे नहीं थी। बिहारीलाल अपना आधा वेतन उसे दे जाया करता था और ये साठ रुपये उसकी आवश्यकता से कहीं अधिक थे।

लक्ष्यहीन पथिक जैसे भटकने लगता है, वैसी ही दशा विमला की होगयी थी। अब घर पर उसे किसी की प्रतीक्षा नहीं करनी होती थी। किसी के लिये खाना बनाना नहीं था। किसी के कपड़ों की देख-भाल की आवश्यकता नहीं रह गयी थी। अपना खाना और अपना ही पहरना रह गया था। एक घंटे में दिन भर का काम पूरा हो जाता था और फिर कभी कोई पुस्तक पढ़ने लगती, कभी सुधा के घर चली जाती और नहीं तो चादर ओढ़, खाट पर लेटी रहती।

परन्तु इस प्रकार कब तक चल सकता था। कुछ ही दिनों में वह इस उद्देश्यरहित जीवन से ऊब गयी। उसकी आत्मा किसी विशेष आकर्षण के लिये तड़फने लगी। उसे किसी लगन की आवश्यकता थी जिसके लिये वह यत्न करती। कुछ लक्ष्य चाहिये था जिस तक पहुँचने के लिये वह दौड़ लगाती। मन में कोई धुन होती तो उसमें वह लीन होजाती। यदि विमला का कोई अपना बच्चा होता अथवा सुधा का ही कोई बच्चा होता तो वह बड़े उत्साह से उसके लालन-पालन में लग जाती। ऐसा कोई बालक न होने से विमला के लिये कुछ करने को नहीं था।

एक दिन मोहनलाल बहुत देरी से घर आया। उसने देखा कि विमला अभी घर नहीं गयी। उसने विस्मय में पूछा, "विमला बहिन, आज रोटी नहीं बनेगी क्या ?"

विमला ने उत्तर दिया, "आज दिन में ही दोनों समय की बना ली थी। बस अब जाकर खा लूंगी।"

"तो क्या बासी खाओगी ?"

"हजम तो हो ही जाती है।"

"परन्तु मैं पूछता हूँ इस समय कौन भारी काम था? ताजी बना कर खा लेती तो क्या था?"

"अच्छा भैया! अब जाती हूँ।"

विमला चली गयी और मोहनलाल तथा सुधा दोनों चकित हो एक दूसरे का मुख देखते रह गये।

"देखते नहीं आप, कि दिन प्रति दिन उसके मुख की आभा मलिन होती जाती है," सुधा ने लम्बी सांस खींचकर कहा।

"देख रहा हूँ, सुधा। परन्तु क्या करूं कुछ समझ में नहीं आता।"

"आपका इतना परिचय है। कहीं स्कूल इत्यादि में नौकरी ही दिलवा दीजिये।"

"क्या रुपये की भी कुछ कमी है? मैंने तो सुना था बिहारीलाल साठ रुपये मासिक भेज देता है।"

"नहीं! परन्तु वह कहती थी, कि उसके रुपये से खरीदी हुई वस्तु गले में कांटे की भांति चुभती है।"

"नौकरी की बात तो बहुत ही सुगम है। तुमने पहले कभी बताया नहीं। अच्छा सुनो, खद्दर-भंडार की एक शाखा माल पर खुल रही है। उसमें स्त्री विक्रेता की आवश्यकता है। तुम उससे पूछना। यदि स्वीकार हो तो अस्सी रुपये मासिक तक दिलवा दूंगा।"

विमला ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। पहले तो उसे कुछ संकोच हुआ, परन्तु कुछ विचार के पश्चात् उसे यह काम कुछ बुरा प्रतीत नहीं हुआ। वह सोचती थी कि यदि उससे रुपया लेने से इन्कार ही करना है तो कुछ न कुछ काम तो करना ही होगा। अखिल भारतीय चर्खा संघ की सेवा से अच्छा काम मिलना कठिन था।

मोहनलाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का मंत्री था। विमला की नियुक्ति करानी उसके लिये कुछ भी कठिन बात नहीं थी। अतएव भंडार खुलते ही स्त्रियों के लिये माल खरीदने के पृथक स्थान पर विमला खड़ी काम

करती देखी जाने लगी।

काम कुछ कठिन नहीं था। प्रत्येक वस्तु पर दाम लिखा रहता था। केवल वस्तुओं की विशेषतायें जाननी आवश्यक थीं। यह वह कुछ दिन में जान गयी। मैनेजर उसे प्रत्येक माल की बाबत पूर्ण वृत्तान्त बता देता था और फिर विमला की बुद्धि प्रखर थी। वह बात को समझने में बहुत चतुर थी।

भंडार में स्त्री माल बेचने वाली रखने से भंडार सहज ही चल निकला था। स्त्रियों को माल खरीदने में विशेष सुविधा होने से दिन भर उनकी भीड़ लगी रहती थी। पुरुष स्त्री-विभाग में बिना किसी स्त्री को साथ लिये नहीं जा सकते थे। और फिर जब वे वहां जाते थे तो साथी-स्त्री की पसन्द को खरीदे बिना नहीं आते थे।

विमला के काम से मैनेजर अति संतुष्ट था, इसलिये उसकी प्रत्येक सुविधा का वह ध्यान रखता था।

[६]

रामलाल ने अपने पिता के कथनानुसार काशमीर फार्मास्युटिकल कम्पनी का चार्ज ले लिया। पहले दिन ही उसने 'माल' पर प्रयोगशाला का निरीक्षण किया और प्रत्येक काम करने वाले से पृथक पृथक भेंट की। बिहारीलाल से रामलाल का परिचय पहले से था। दोनों कम्यूनिस्ट पार्टी में मिल चुके थे। जब बिहारीलाल से भेंट करने की बारी आई तो रामलाल ने उठकर उसका स्वागत किया।

बिहारीलाल ने हाथ मिलाते हुए कहा, "आप यह तकल्लुफ़ क्यों करते हैं? तशरीफ़ रखिये न!"

रामलाल ने बिहारीलाल को बैठते हुए कहा, "मैं यहां से मालिक और नौकर का भेद निकालना चाहता हूं। हम सब कामरेड बनकर रहना चाहते हैं। आप इसे पसन्द करेंगे क्या?"

बिहारीलाल रामलाल के विचारों से परिचित तो था, परन्तु वह यह आशा नहीं रखता था कि मालिक की कुर्सी पर बैठकर भी वह आदर्श-

वादी बना रहेगा। इस पर भी रामलाल के हृदय की थाह लेने के लिये उसने कुछ मुस्कराते हुए पूछा, "कामरेड शब्द की गम्भीरता का अनुभव करते हैं आप?"

"मैं समझता हूँ कि मैं इस शब्द का अर्थ जानता हूं। परन्तु बातों से क्या समझाऊं? मैं तो सिद्धान्तों का प्रतिपादन कार्यरूप में करना चाहता हूँ। सुनिये, आपके आधीन कौन कौन काम करते हैं?"

"दो चपरासी, एक लेबोरेटरी असिस्टैन्ट और एक भंगी।"

"कम से कम कितना वेतन लेकर लाहौर जैसे नगर में एक मनुष्य निर्वाह कर सकता है?"

"चालीस-पचास से कम क्या हो।"

"मैं चपरासियों और भंगी का वेतन पचास रुपया मासिक करता हूं। लेबोरेटरी असिस्टैन्ट का पचहत्तर रुपया।"

"इससे चपरासी असंतुष्ट हो जायेंगे।"

"क्यों?"

"वे समझेंगे कि उन्हें भंगियों के बराबर कर दिया गया है।"

"तो क्या हुआ? रोटी तो सब बराबर खाते हैं।"

"इस पर भी वे नहीं मानेंगे।"

"नई बात पहले पसन्द नहीं की जाती, परन्तु कुछ काल पश्चात् उसके गुण-अवगुण प्रतीत होते हैं। मेरा विचार यह है कि यहां प्रयोग-शाला में और फार्मेसी के कारखाने में कोई भी व्यक्ति पचास रुपये से कम वेतन न लेता हो। इसी प्रकार अधिक से अधिक वेतन पांच सौ रुपये तक हो।"

"जो अधिक वेतन पाते हैं वे असन्तुष्ट हो जायेंगे।"

"उनको निकाल बाहर करूंगा।"

"इससे असन्तोष और बढ़ेगा।"

"असन्तोष ही उन्नति का मूल है।"

बिहारीलाल चुप रहा। वह समझता था कि रामलाल की योजना

सिद्धान्त-रूप से तो ठीक है, परन्तु भारतवर्ष के लोग यह समझ नहीं सकेंगे और व्यर्थ में झगड़ा करेंगे। ऐसा सोचकर वह बोला, "सैंकड़ों मनुष्यों को तरक्की मिलेगी, परन्तु क्या उन्हें सन्तोष होगा?"

"यही मैं परीक्षा करना चाहता हूं। हां, और आपके लिये भी एक समाचार लेकर आया हूं। सीमा-प्रान्त, बन्नू के इलाके में हमें पारे की खान का ठेका मिल गया है। आपने वहां के कच्चे माल का विश्लेषण किया था और उस माल से धातु निकालने की योजना लिख कर दी थी। मैंने वह पढ़ी है और मैं उस योजना को चलाने के लिये आपको वहां का मैनेजर नियत करता हूं। जब तक काम चालू नहीं हो जाता, तीन सौ रुपया मासिक आपको मिलेगा, पश्चात् पांच सौ रुपया मासिक वेतन होगा।"

"मैं आपका धन्यवाद करता हूं।"

"इसकी आवश्यकता नहीं।"

पश्चात् फार्मेसी के कारखाने में, जो मुगलपुरा में था, रामलाल जा पहुँचा। वहां उसने मैनेजर को बुलाकर अपनी वेतन-सम्बन्धी योजना का वर्णन किया। मैनेजर सात सौ रुपया मासिक लेता था। उसके पांव-तले से मिट्टी खिसक गयी। उसने कहा, "सेठ साहब, मैं तो तरक्की की आशा कर रहा था और यहां उलटी गंगा बहने लगी।"

"उलटी तो पहले बह रही थी, अब इसे सीधी करने का यत्न करना चाहता हूँ। मेरा विचार है कि पेट भर रोटी, पहनने को कपड़ा, रहने का स्थान, बीमारी में चिकित्सा, बच्चों के लिये पढ़ने का प्रबन्ध और मनोरञ्जन-सामग्री सब को प्राप्त होनी चाहिये। मैंने कारखाने के समीप एक प्रथम श्रेणी का, पौष्टिक भोजन बेचने वाला भोजनालय खोलने का प्रबन्ध किया है, जिसमें हमारी फार्मेसी में काम करने वाले ही भोजन कर सकेंगे। एक समय की रोटी का एक आना लिया जायगा। इसका मतलब यह है कि एक मनुष्य को जिसके घर में चार प्राणी हैं सोलह रुपये मासिक से अधिक व्यय न करना पड़ेगा। फिर एक सस्ती परन्तु बढ़िया और मज़बूत

कपड़े की दुकान भी खुलवाना चाहता हूँ। साथ ही मैं प्रबन्ध कर रहा हूँ कि मज़दूरों के क्वार्टरों में खेल-तमाशे का प्रबन्ध भी हो जाये। एक सिनेमा-हॉल हो, एक जिमनेज़ियम, एक तैरने को तालाब और दूसरे मन बहलाने को खेल भी हों। प्रत्येक में दाम देकर भाग लिया जा सकेगा, परन्तु दाम इतना कम होगा कि सब लोग अपने आपको प्रसन्न रख सकेंगे।"

मैनेजर अवाक मुख रामलाल की ओर देख रहा था। उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मज़दूरों के लिये ये सब सुभीते उसकी और उस जैसे दूसरे वेतन पाने वालों की तनख़ाह को कम करके दिये जा रहे हैं। अतएव उसने इस योजना का विरोध करते हुए कहा, "मुझे इस योजना से कुछ सरोकार नहीं। मैं अपने वेतन में कमी नहीं चाहता।"

"आप इतना वेतन लेकर क्या करते हैं? रहने को कोठी आपको मुफ़्त मिली हुई है। आपकी एक स्त्री है और दो बच्चे हैं। इन सब के लिये क्या पांच सौ पर्याप्त नहीं?"

"नहीं! बिलकुल नहीं। मुझे अपने बच्चों को उच्च शिक्षा देनी है। हमारे खाने पर दस रुपये रोज़ खर्च बैठता है। हमारे कपड़ों का बजट दो सौ रुपया मासिक से कम नहीं होता। स्त्री के लिये कभी भूषण इत्यादि भी चाहियें। और फिर लड़की और दो-चार वर्ष में विवाह-योग्य हो जायेगी। उसके विवाह के लिये कम से कम बीस हज़ार रुपया चाहिये। बताइये पांच सौ तो दूर रहा सात सौ में भी कैसे निर्वाह हो सकता है?"

रामलाल ने मुस्कराते हुए कहा, "मैं समझता हूं आप रुपये को मिट्टी की तरह से फेंक रहे हैं और फेंकना चाहते हैं। क्या कभी आपने अपने चपरासी की लड़की और बच्चों की शिक्षा, कपड़े, भोजन और विवाह इत्यादि के विषय में सोचा है? उसको पन्द्रह रुपये वेतन मिलता है। उसके पांच बच्चे हैं। आपने कभी भी उसका वेतन बढ़ाने की सिफारिश की है? आपको लड़की के विवाह में बीस हज़ार खर्च करना है। क्यों, विवाह तो पांच रुपये में होता है? क्या आपकी इन फिज़ूलखर्चियों के लिये हमें आपका वेतन बढ़ाना चाहिये और ग़रीब चपरासी की सुध नहीं

लेनी चाहिये ?"

"साहब, मेरी योग्यता का भी तो ध्यान रखें। मुझे आज ही कहीं पर भी एक हज़ार रुपया मासिक मिल सकता है।"

"हां, यह मैं जानता हूं कि आप प्रबन्ध अच्छा कर रहे हैं। इसी से तो चपरासी को पचास और आपको पांच सौ देना चाहता हूं। रही दूसरों की आपको एक हज़ार देने की बात। वे तो और भी अधिक दे सकेंगे क्योंकि उन्होंने गरीबों का खून चूसकर आपको देना है। मैं ऐसा नहीं कर सकता।"

"आप अपने पिता का मुनाफ़ा तो कम नहीं कर रहे। वह तो प्रति वर्ष साढ़े बारह प्रति शत लाभ घोषित कर ही देते हैं।"

"नहीं, मैंनेजर साहब, अब वह भी नहीं कर सकेंगे। यदि इतना लाभ वह ले लेंगे तो मेरी ये सब योजनायें, जो मैं मज़दूरों के सुभीते के लिये चलाना चाहता हूं, कहां से चलेंगी ?"

मैंनेजर निरुत्तर था, परन्तु वह जब यह देखता था कि उसके वेतन में से दो सौ कम होजायेंगे तो उसका दिमाग़ चक्कर खाने लगता था। उस दिन सायंकाल जब वह घर गया तो उतरा हुआ मुख देखकर उसकी स्त्री को चिन्ता लग गयी। वह इसका कारण पूछने लगी। मिस्टर बी० एन कपिल, यह मैंनेजर का नाम था, ने सारी कहानी अपनी स्त्री को बताई। दो सौ रुपया वेतन कम किये जाने का समाचार सुन उसका मुख तमतमा उठा। वह कहने लगी, "कौशल्या अब पन्द्रह वर्ष की होगयी है और उसकी सगाई की बातचीत मैंने पं० बिशम्भरदयाल की स्त्री से की है। वह कल यहां आई थी और कहती थी कि लड़का बी० एससी० में पढ़ता है। एम० एससी० पास करने पर विवाह होगा और वह दहेज में दस हज़ार रुपया मांगती थी।"

"यह तो ठीक है। परन्तु जब वेतन ही कम होगया तो दस हज़ार कहां से आयेगा ?"

"कहीं अन्य स्थान पर नौकरी ढूंढ लीजिये न।"

"दस वर्ष से यहां काम कर रहा हूं। दो सौ मासिक से उन्नति करते करते सात सौ तक पहुँचा था। अब सेठ साहब की नौकरी छोड़ने को मन नहीं चाहता।"

"तो फिर निर्वाह कैसे होगा? बनिये का बिल दो सौ रुपये से कम नहीं होता। दूध और मक्खन पचास रुपये का होता है। कौशल्या और जगदीश की पढ़ाई में डेढ़ सौ खर्च हो जाता है। बजाज का पहले ही एक हज़ार के लगभग देना हो गया है। हर महीने दो सौ के करीब का नया कपड़ा आजाता है। फिर सिनेमा, सैर और दूसरे भी तो कई खर्चे हैं। तीस-चालीस रुपये महीने के तो फल ही आजाते हैं।"

"इनमें कुछ बचाने का यत्न करो न।"

"क्या बचाऊं? बच्चों के लिये ट्यूशन बन्द कर दो। साठ रुपये की बचत हो जायेगी।"

"हां, तो बच्चे जब स्कूल में बीस बीस की फीस देते हैं तो फिर घर पर मास्टर रखने की क्या आवश्यकता है? देखो तो हमारे क्लर्क बा० रोशनलाल का लड़का मैट्रिक में पढ़ता था। बिना घर पर मास्टर रखे फर्स्ट क्लास में पास हुआ है और यह कौशल्या है, कन्वैन्ट स्कूल में पढ़ती है। बीस रुपये फीस, पन्द्रह रुपये डान्सिंग की फीस, दस रुपये बस की फीस, कुल पैंतालीस रुपये मासिक स्कूल में देती रही है। घर पर भी उस्ताद तीस रुपये लेता रहा है। इस पर भी थर्ड क्लास में पास हुई है।"

"थर्ड और फर्स्ट तो मैं जानती नहीं। अंग्रेज़ी खूब बोल लेती है। उस दिन जब मिस्टर, मिसेज़ और मिस मिचेल चाय पीने आये थे तो देखते नहीं थे कैसे फट फट बातें करती थी। आपके बाबू रोशनलाल के लड़के को तो बात करने का ढंग भी नहीं आता। वही तो है न जिसे कोट के बटन बन्द करने की भी अक़ल नहीं।"

"यह तो सब ठीक है। परन्तु प्रश्न यह है कि जब कौशल्या की शिक्षा पर इतना खर्च हो रहा है तो अब उसके दहेज के लिये दस हज़ार कहां से आये?"

"पं० विशम्भरदयाल बहुत भले आदमी हैं। उनका लड़का अविनाशचन्द्र सुन्दर, सुडौल और सुयोग्य है। उसे तो कहीं से भी दस हज़ार मिल जायेगा। यदि वे लोग हमारी लड़की लेने को मान रहे हैं तो इसलिये ही न कि दस हज़ार के साथ पढ़ी-लिखी लड़की भी है।"

"तो तुम ही बताओ, यह दस हज़ार कहां से आयेगा? यदि यहां सगाई हो जाये तो तीन वर्ष के पश्चात् विवाह करना होगा। तीन वर्ष में दस हज़ार इकट्ठा करना है। अर्थात् एक वर्ष में सवा तीन हज़ार, या यों कहो कि प्रति मास तीन सौ रुपया। बताओ सात सौ में तो तुम कर्ज़ा लेकर काम चलाती हो और अब पांच सौ में से कैसे तीन सौ मासिक निकाल सकोगी?"

"तो मैं कहती हूँ न, कि सेठ साहब की नौकरी छोड़िये और किसी अन्य स्थान पर कर लीजिये। आखिर मुख पर पट्टी बांधकर तो जीवन नहीं रह सकता।"

मिस्टर कपिल गम्भीर विचार में डूब गये। अगले दिन से उन्होंने सिविल एण्ड मिलिटरी गज़ेट के 'ज़रूरत है' के कालम देखने आरम्भ कर दिये।

[७]

यों तो सेठ धन्नाराम की सब कम्पनियां और कारखाने लिमिटेड थे, तो भी हर एक में सेठ साहब के अस्सी प्रति शत हिस्से थे और वह सब कम्पनियों के मैनेजिंग डायरैक्टर थे। प्रत्येक कम्पनी अथवा कारखाने की मैनेजिंग डायरैक्टरी करने पर उन्हें दो दो हज़ार रुपया मासिक मिलता था। दस कारखाने केवल मुगलपुरा में थे। इनसे बीस हज़ार मासिक सहज में मिल जाता था। इन सब कारखानों का काम चलाने के लिये वह दिन भर में दो घंटे से अधिक समय नहीं देते थे। प्रातःकाल आठ बजे से दस बजे तक प्रत्येक कम्पनी अथवा कारखाने के चपरासी डाक लेकर आते थे। यह डाक वह दो घंटे में समाप्त कर फिर प्रातः का खाना खाते, पश्चात् ग्यारह बजे मोटर में सवार हो एक-दो कारखानों व कम्पनियां

का निरीक्षण करने चले जाते थे। ठीक एक बजे दोपहर का खाना खाने आजाते। खाने के पश्चात आधा घंटा आराम कर फिर सट्टे इत्यादि के बाज़ार की टोह लेते।

सायंकाल सेठ साहब क्लब में चले जाते थे। वहां मनोरञ्जन के प्रायः साधन रहते थे। जब कभी वहां से जल्दी आजाते थे तब मोहनी और रामलाल से मिल लेते थे। प्रायः उन्हें पिता के दर्शनमात्र ही होते थे। परस्पर सामीप्य न के बराबर था। पुत्र-पुत्री दोनों अपने विचारों को तथा अपने कर्तव्य को स्वयं ही निर्माण कर रहे थे।

पांच-छः दिन से रामलाल फार्मास्युटिकल कम्पनी का कारोबार देख रहा था। सेठ धन्नाराम यह जानने के लिये उत्सुक थे कि वह कैसे काम चला रहा है। आज रात जब खाना खा चुके तो रामलाल के कमरे में चले गये। मोहिनी और रामलाल दोनों कुछ काग़ज़ों पर हिसाब बना रहे थे। सेठ साहब ने पूछा, "क्या हो रहा है?"

"पिता जी," रामलाल का उत्तर था, "हम फार्मास्युटिकल कम्पनी का एक वर्ष का बजट बना रहे हैं।"

"बजट? वह तो मैंने बना रखा है।"

"जी हां, परन्तु मैं तो उसमें बहुत परिवर्तन कर रहा हूँ।"

"कैसे? लाओ तो देखूं।"

रामलाल ने पुराना बजट जो सेठ साहब ने बना रखा था और नया जो उसने स्वयं बनाया था दोनों अपने पिता के सम्मुख रख दिये।

सेठ साहब पन्द्रह बीस मिनट तक दोनों को देखकर मुकाबिला करते रहे। पश्चात् पूछने लगे, "यह 'होटल को सहायता', 'क्लब को सहायता' और 'सिनेमा इत्यादि' यह सब तुमने कहां से ला रखे हैं?"

रामलाल समझाते हुए बोला, "हमारे पास दस लाख रिज़र्व में हैं। उसमें से मैंने पांच लाख लेकर मज़दूरों के लिये कुछ नये काम आरम्भ कर दिये हैं। मज़दूरों के क्वार्टरों में मैंने एक भोजनालय खोल दिया है। इस पर मैंने एक लाख रुपया पूंजी लगाने का बन्दोबस्त किया

है। मुनासिब मशीनरी वगैरा के लिये बम्बई आर्डर भेज दिया है। उसके लिये इमारत बननी आरम्भ हो गयी है। इस भोजनालय में खाना मशीन से बनेगा, मशीन से परसा जायगा, बर्तन मशीन से उठाये जायेंगे और फिर मशीन से साफ होंगे। रोटी, चावल, तीन प्रकार की सब्ज़ी, चटनी, अचार, पानी सब का खर्चा एक आना चार्ज किया जायेगा। शाम को वहां चाय मिलेगी और एक प्याला चाय और दो टोस्ट-मक्खन का दाम दो पैसे होगा। मैं चाहता हूँ कि मज़दूर, क्लर्क और कारखाने के दूसरे नौकर सब अपने बाल-बच्चों सहित वहां खाना खायें। यदि एक हज़ार खाने वाले एक समय वहां आजायें तो होटल का खर्चा निकल जायगा और घाटा नहीं होगा। वैसे तो फार्मेसी में काम करने वालों की और उनकी स्त्रियों और बाल-बच्चों की संख्या तीन हज़ार है, परन्तु मैं समझता हूँ कि अभी भोजनालय में कम लोग खाना खायेंगे। इस कारण कुछ समय तक काम घाटे में चलेगा। उस घाटे के लिये मैंने इस वर्ष के बजट में चौदह हज़ार छः सौ रुपया रख दिया है।"

"इससे तुम्हें क्या मिलेगा?"

"लोगों को सामूहिक जीवन व्यतीत करने का तरीका आयेगा। इससे उनका जीवन सस्ता और सुखप्रद हो जायेगा। अब प्रत्येक परिवार में पृथक पृथक चूल्हा फूंका जाता है। हर घर में आटा, दाल, भाजी जूठन में कितनी ही व्यर्थ जाती है। सामूहिक भोजनालय में कम से कम हानि होगी। लकड़ी-कोयले की भारी बचत होगी। बहुत समय जो घर घर में पृथक पृथक भोजन बनाने में व्यय होता है बच जायेगा। स्त्रियां जब रोटी के झंझट से छुट्टी पा जायेंगी तो अपने बच्चों की देखभाल पर अधिक समय लगा सकेंगी। इन सब बातों से फार्मेसी के काम करने वालों को सुख, आराम और तरक्की मिलेगी।"

"मैं पूछता हूं तुम्हें क्या मिलेगा? देखो, मेरे अनुमान से लाभ ढाई लाख होना चाहिये था और तुम्हारे अनुमान से पचीस हज़ार रह गया है। सवा दो लाख तुम यह खेल-तमाशे में व्यय कर देना चाहते हो।"

"पिताजी, मैं अपना वेतन पच्चीस हज़ार के अतिरिक्त ले रहा हूं। कम्पनी की मशीनों की टूटफूट या आग लगने से हानि और अन्य प्रकार से हानि की सम्भावना को सुरक्षित कर लिया गया है। ऐसी अवस्था में तो पच्चीस हज़ार लाभ बहुत है। और क्या चाहिये?"

"इससे अधिक तो बैंक में सूद मिल जायेगा।"

"परन्तु तीन हज़ार मनुष्यों को सुखी और प्रसन्न करने का पुण्य तो न हो सकेगा।"

यद्यपि सेठ साहब रामलाल को कुछ भी युक्तियुक्त उत्तर नहीं दे सकते थे तो भी अपने हठ पर डटे रहे और कहते रहे, "यह मज़दूरों की भलाई करने के यत्न में तुम्हारा मुख काला ही होगा। ये लोग कृतघ्न होते हैं। इनका भला करो तो तुरंत भूल जाते हैं। एक दो पैसे के लोभ में अपने परम हितचिन्तक की भी पगड़ी उछालने में संकोच नहीं करते।"

रामलाल अपने विचारों पर अटल था।

[८]

बिहारीलाल अपने साथ इन्जीनियर, सरवे करने के लिये ओवरसियर और पारे की खान पर खुदाई इत्यादि का प्रबन्ध करने के लिये बहुत से लोग लेकर बन्नू जाने का प्रबन्ध कर रहा था। कम्पनी की ओर से उसे सब प्रकार की सुविधा दी गई थी, ताकि आरम्भिक देखभाल शीघ्रातिशीघ्र हो सके। पञ्जाब सरकार से सीमा-प्रान्त की सरकार को लिखवा दिया गया था कि बिहारीलाल की पार्टी की रक्षा के लिये पर्याप्त संख्या में संरक्षक दिये जायें। उन सब का खर्चा भी कम्पनी उठा रही थी।

यह सब प्रबन्ध कोई साधारण काम नहीं था। लोग सीमा-प्रान्त में वज़ीरस्तान की सीमा के अन्दर एक जंगल में जाकर डेरे डालकर काम करने के लिये तैयार नहीं होते थे। बहुत आश्वासन देने पर कि सरकार पूरा-पूरा रक्षा का प्रबन्ध कर रही है और कई दिन की भागदौड़ के पश्चात् लगभग पचास आदमियों की पार्टी तैयार की गई। संरक्षक तो बन्नू में जाकर मिलने थे और आशा की जाती थी कि

उनकी संख्या भी पचास साठ से कम नहीं होगी।

बिहारीलाल इस सब प्रबन्ध के कारण कई दिन से घर की ओर ध्यान नहीं दे रहा था। वह प्रातःकाल घर से चला आता था और देर करके रात को घर लौटता था। प्रायः दोपहर का खाना जहां कहीं होता वहीं खा लेता था।

प्रेम भी सेट धन्नाराम के कारखानों के मज़दूरों का संगठन करने के लिये नित्य प्रति गुलामरसूल को साथ ले मुगलपुरा चली जाती। उसे यह विदित नहीं था कि बिहारीलाल किसी वृहत् आयोजना में लगा है। जब वह घर पहुँचती तो बिहारीलाल को वहां न पाती। वह स्वयं बहुत थकी होने से सो जाती थी। बिहारीलाल जब आता तो वह सोई होती थी।

आज, शुक्रवार, बिहारीलाल बन्नू जाने का सब प्रबन्ध समाप्त कर चुका था और जाने के लिये रविवार का दिन निश्चय हो चुका था। बिहारीलाल आज काम से मुक्त हो चार बजे सायंकाल घर लौट आया। वह एक दिन पूरा पूरा आराम करना चाहता था। इसी आशय से वह नित्य से बहुत पहले घर चला आया था।

जब वह घर पहुँचा तो प्रेम और गुलामरसूल प्रेम के निजी कमरे में बैठे बातें कर रहे थे। कमरे का दरवाज़ा भिचा हुआ था। ड्राइङ्ग-रूम में पहुंचते ही बिहारीलाल ने प्रेम को आवाज़ दी। यह उसका सदा का स्वभाव था। बिहारीलाल की आवाज़ सुनते ही प्रेम ने उत्तर दिया, 'आई।' यह सदा से भिन्न था। पहले वह कहा करती थी, 'आजाइये।'

बिहारीलाल अनिश्चित मन से बाहर कमरे में खड़ा रह गया। वह प्रेम के उत्तर का अर्थ नहीं समझा। स्वभाववश कमरे के दरवाज़े तक गया और भीतर जाने के लिये दरवाज़ा धकेलने ही वाला था कि उसे भीतर किसी पुरुष के बोलने की ध्वनि सुनाई दी। वह वहीं रुक गया। यह आवाज कुछ पहचानी सी प्रतीत होती थी। वह पुरुष कह रहा था, "फिर कब भेंट होगी?"

प्रेम का उत्तर था, "जब भी आप चाहें।"

"पिताजी, मैं अपना वेतन पच्चीस हज़ार के अतिरिक्त ले रहा हूं। कम्पनी की मशीनों की टूटफूट या आग लगने से हानि और अन्य प्रकार से हानि की सम्भावना को सुरक्षित कर लिया गया है। ऐसी अवस्था में तो पच्चीस हज़ार लाभ बहुत है। और क्या चाहिये?"

"इससे अधिक तो बैंक में सूद मिल जायेगा।"

"परन्तु तीन हज़ार मनुष्यों को सुखी और प्रसन्न करने का पुण्य तो न हो सकेगा।"

यद्यपि सेठ साहब रामलाल को कुछ भी युक्तियुक्त उत्तर नहीं दे सकते थे तो भी अपने हठ पर डटे रहे और कहते रहे, "यह मज़दूरों की भलाई करने के यत्न में तुम्हारा मुख काला ही होगा। ये लोग कृतघ्न होते हैं। इनका भला करो तो तुरंत भूल जाते हैं। एक दो पैसे के लोभ में अपने परम हितचिन्तक की भी पगड़ी उछालने में संकोच नहीं करते।"

रामलाल अपने विचारों पर अटल था।

[८]

बिहारीलाल अपने साथ इन्जीनियर, सरवे करने के लिये ओवरसियर और पारे की खान पर खुदाई इत्यादि का प्रबन्ध करने के लिये बहुत से लोग लेकर बन्नू जाने का प्रबन्ध कर रहा था। कम्पनी की ओर से उसे सब प्रकार की सुविधा दी गई थी, ताकि आरम्भिक देखभाल शीघ्रातिशीघ्र हो सके। पञ्जाब सरकार से सीमा-प्रान्त की सरकार को लिखवा दिया गया था कि बिहारीलाल की पार्टी की रक्षा के लिये पर्याप्त संख्या में संरक्षक दिये जायें। उन सब का खर्चा भी कम्पनी उठा रही थी।

यह सब प्रबन्ध कोई साधारण काम नहीं था। लोग सीमा-प्रान्त में वज़ीरस्तान की सीमा के अन्दर एक जंगल में जाकर डेरे डालकर काम करने के लिये तैयार नहीं होते थे। बहुत आश्वासन देने पर कि सरकार पूरा-पूरा रक्षा का प्रबन्ध कर रही है और कई दिन की भागदौड़ के पश्चात् लगभग पचास आदमियों की पार्टी तैयार की गई। संरक्षक तो बन्नू में जाकर मिलने थे और आशा की जाती थी कि

उनकी संख्या भी पचास साठ से कम नहीं होगी।

बिहारीलाल इस सब प्रबन्ध के कारण कई दिन से घर की ओर ध्यान नहीं दे रहा था। वह प्रातःकाल घर से चला आता था और देर करके रात को घर लौटता था। प्रायः दोपहर का खाना जहां कहीं होता वहीं खा लेता था।

प्रेम भी सेठ धन्नाराम के कारखानों के मज़दूरों का संगठन करने के लिये नित्य प्रति गुलामरसूल को साथ ले मुगलपुरा चली जाती। उसे यह विदित नहीं था कि बिहारीलाल किसी बृहत् आयोजना में लगा है। जब वह घर पहुँचती तो बिहारीलाल को वहां न पाती। वह स्वयं बहुत थकी होने से सो जाती थी। बिहारीलाल जब आता तो वह सोई होती थी।

आज, शुक्रवार, बिहारीलाल बन्नू जाने का सब प्रबन्ध समाप्त कर चुका था और जाने के लिये रविवार का दिन निश्चय हो चुका था। बिहारीलाल आज काम से मुक्त हो चार बजे सायंकाल घर लौट आया। वह एक दिन पूरा पूरा आराम करना चाहता था। इसी आशय से वह नित्य से बहुत पहले घर चला आया था।

जब वह घर पहुँचा तो प्रेम और गुलामरसूल प्रेम के निजी कमरे में बैठे बातें कर रहे थे। कमरे का दरवाज़ा भिचा हुआ था। ड्राइङ्ग-रूम में पहुंचते ही बिहारीलाल ने प्रेम को आवाज़ दी। यह उसका सदा का स्वभाव था। बिहारीलाल की आवाज़ सुनते ही प्रेम ने उत्तर दिया, 'आई।' यह सदा से भिन्न था। पहले वह कहा करती थी, 'आजाइये।'

बिहारीलाल अनिश्चित मन से बाहर कमरे में खड़ा रह गया। वह प्रेम के उत्तर का अर्थ नहीं समझा। स्वभाववश कमरे के दरवाज़े तक गया और भीतर जाने के लिये दरवाज़ा धकेलने ही वाला था कि उसे भीतर किसी पुरुष के बोलने की ध्वनि सुनाई दी। वह वहीं रुक गया। यह आवाज कुछ पहचानी सी प्रतीत होती थी। वह पुरुष कह रहा था, "फिर कब भेंट होगी?"

प्रेम का उत्तर था, "जब भी आप चाहें।"

बिहारीलाल के मन में आया कि अवश्य उससे कुछ लुकाव-छुपाव की बात हो रही है। वह दरवाजे के समीप से वापिस आकर एक सोफा पर बैठ गया और बेसब्री से प्रतीक्षा करने लगा। दो मिनट पश्चात् प्रेम कमरे से निकली। उसके हाथ में कुछ कागज़ थे। प्रेम अति प्रसन्न थी और प्रसन्नता से उसका मुख सिन्दूरी हो रहा था। उसके पीछे पीछे गुलामरसूल था। वह अपने स्वाभाविक रंग-ढंग में था। उसने ऊंची आवाज़ में बिहारीलाल का अभिवादन किया," आदावअर्ज़।"

आगे बढ़कर उसने बिहारीलाल से हाथ मिलाया। बिहारीलाल का हाथ कांप रहा था। गुलामरसूल ने कुछ अचम्भा प्रकट करते हुए पूछा, "क्या बात है? तबियत तो ठीक है?"

"कुछ नहीं। जरा सिर में चक्कर आने लगा था," बिहारीलाल का उत्तर था।

प्रेम ने, चिन्ता का भाव दिखाते हुए, समीप बैठकर पूछा, "सिर में चक्कर की क्या बात हुई है?"

"ऐसे ही। मिस्टर रामलाल के खानसामा ने चाय कुछ तेज़ बना दी मालूम होती है।"

प्रेम ने अपने कमरे में से 'समैलिंग-साल्ट' लाकर दिया और कहा, "इसे सूँघिये। अभी तबियत ठीक हो जावेगी।"

इस समय तक गुलामरसूल खड़ा खड़ा ही देख रहा था। जब बिहारीलाल स्मैलिंग-साल्ट सूँघने लगा तो गुलामरसूल ने बिहारीलाल और प्रेम से हाथ मिलाकर विदा ली। जब वह चला गया तो प्रेम ने बिहारीलाल की आंखों में घूरकर देखते हुए पूछा, "क्या हो गया था आपको?"

"बताया तो है चक्कर आगया था।"

"आप मुझे और गुलामरसूल को देखकर लाल-पीले क्यों हो रहे थे?"

"तुम्हें देखकर नहीं, प्रेम। मेरी तबियत ठीक नहीं है। मैं आराम करना चाहता हूँ।"

"तो चलिये, आराम करिये।" इतना कह प्रेम ने उसे आश्रय दे उठाया और उसको अपने कमरे में ले गयी। बिहारीलाल का कमरा और प्रेम का कमरा साथ साथ था। दोनों में परस्पर आने-जाने को दरवाज़ा था। बिना गोल कमरे में गये एक से दूसरे कमरे में आ-जा सकते थे। प्रेम बिहारीलाल को अपने पलंग पर लेटाकर बाहर गोल कमरे में चली आई। वहां से वह डाक्टर के दफ़्तर में चली आई। डाक्टर कोई किताब पढ़ रहा था। प्रेम ने वहां पहुँच रामलाल के घर टैलीफ़ून किया। "हैलो!···कहां से बोलते हैं?···सेठ रामलाल से···आप हैं? नमस्ते··· मैं हूँ प्रेम··· मिस्टर बिहारीलाल कहां हैं?·····वहां नहीं आये?··· ···आज बिलकुल नहीं आये?···ओह·····अच्छा!···धन्यवाद।"

प्रेम जान गयी कि बिहारीलाल रामलाल की कोठी पर उस दिन गया ही नहीं। दफ्तर से वह ढाई बजे से चला हुआ है। अब टैलीफ़ून बन्द कर वह पुनः अपने कमरे में चली आई और पूछने लगी, "अब तबियत कैसी है?"

"पहले से अच्छी है?"

"डाक्टर साहब से कुछ दवाई ला दूं।"

"नहीं, कुछ आवश्यकता नहीं। तुम्हारा स्मैलिंग-साल्ट बहुत अच्छा है।"

प्रेम पलंग के पास ही बैठ गयी और बिहारीलाल के माथे पर हाथ रखकर कहने लगी, "ओह, बर्फ की तरह ठंडा होगया है। मेरी राय है कि पांच बूंद 'स्पिरिट एरोमैटिक अमोनिया' ले लें। लाऊं?"

"नहीं, अब तो मैं ठीक हूँ।"

"मैं रामलाल के खानसामा को डांटना चाहती हूँ। बहुत असावधानी से चाय बनाता है। नालायक......।"

बिहारीलाल ने बात बीच में ही रोककर कहा, "छोड़ो इस बात को। मुझे शीघ्र ही बाज़ार कुछ कपड़ा खरीदने जाना है।"

"हां, मुझे भी तो कुछ साड़ियां खरीदनी हैं। आप चल सकेंगे?"

"हां। मोटर में ही तो जा रहे हैं न?"

"अच्छा तो मैं चाय पी लूँ।" इतना कह उसने घंटी बजाई। बैरा दरवाज़े पर आ खड़ा हुआ। प्रेम ने नाश्ता लाने के लिये कहा।

बिहारीलाल गम्भीर विचार में पड़ गया था। वह सोचता था कि प्रेम पर उसने व्यर्थ का संदेह किया। अपने मन के संदेह को छुपाने के लिये उसे कितना झूँठ बोलना पड़ा है। वह तो यथार्थ में उससे प्रेम करती है। तभी तो उसके स्वास्थ्य के लिये कितनी परेशान प्रतीत होती है। उसने उसके चरित्र पर सन्देह कर पाप किया है। इसका प्रायश्चित करना होगा। कम से कम उसके सम्मुख अपने मन के विकार को स्वीकार कर उससे क्षमा मांग लेनी चाहिये। वह सोचता था कि परस्पर मन में मैल रखना उचित नहीं है।

प्रेम भी अपने मन में सोच रही थी कि बिहारीलाल को उस पर अवश्य सन्देह होगया है। तभी तो उसे देखते ही उसके मुख का रंग फीका पड़ गया था, उसका सारा शरीर कांपने लगा था और फिर अपने मन के भाव को छुपाने के लिये उसने झूँठ बोल दिया था। यदि उसकी तबियत सत्य ही ख़राब होती तो चाय के विषय में झूँठ कहने की क्या आवश्यकता थी। वह तो रामलाल के घर गया ही नहीं। फिर वहां उसके खानसामा ने तेज़ चाय कैसे पिला दी? इस झूठ की आवश्यकता केवल मन के भावों को छुपाने के लिये ही हो सकती थी। प्रेम को प्रायः विश्वास होगया था कि उसके चरित्र पर बिहारीलाल को सन्देह होगया है। तो अब क्या किया जाय, वह इस पर गम्भीरता से विचार कर रही थी। वह सोच रही थी कि उससे साफ साफ बात कर ले। मन में विष छुपा रहने से जीवन नीरस हो जायेगा। वह कह देना चाहती थी कि वह उसकी गुलाम नहीं है। वह अपने आचार-व्यवहार में स्वतंत्रता से रहने के लिये सब कुछ करने को तैयार थी।

इस समय खानसामा नाश्ता और चाय का सामान ले आया। यह सामान दोनों के लिये था। प्रेम ने कुछ थोड़ा सा खा लेने के लिये आग्रह

किया। यथार्थ में बिहारीलाल को खूब भूख लग रही थी और प्रेम यह जानती थी। बिहारीलाल ने एक बार कहने पर ही खाना आरम्भ कर दिया। प्रेम उसको और खाने के लिये कहती गयी और उसने अपने भाग से भी अधिक खाया।

चाय पीने से दोनों के भावों में परिवर्तन होगया। प्रेम ने जो बात खोल देने और बिहारीलाल को उसके व्यवहार पर डांटने और नाराज़ होने का निश्चय किया था वह त्याग दिया। दूसरी ओर बिहारीलाल ने समझा कि जब प्रेम को उसके झूँट बोलने का पता ही नहीं चला तो बताकर अपनी हंसी करानी ठीक नहीं। दोनों ने यही समझा कि इस मामले को यहीं भूल जाना चाहिये। यदि कभी फिर ऐसा ही अवसर आवेगा तो उस समय विचार कर लिया जायगा। प्रेम अभी झगड़ा करना व्यर्थ समझने लगी थी और बिहारीलाल अपने मन में मैल आने की बात को अपनी मूर्खता का सूचक समझ चुप कर गया।

चाय पीने के पश्चात् बिहारीलाल ने कहा, "अब मेरी तबियत बिलकुल ठीक है।"

"अपने भाग से दुगुना नाश्ता करने पर भी तबियत ठीक न होती क्या?"

बिहारीलाल हंस पड़ा। प्रेम ने बाज़ार जाने की बात कर उस विषय को, जो दोनों के होटों पर चक्कर खा रहा था, बन्द कर दिया।

[६]

गुलामरसूल डाक्टर खन्ना की कोठी से पैदल ही चलकर माल पर आ पहुंचा। आज उसका विचार कुछ खद्दर खरीदने का था। माल पर नये खुले हुए खद्दर-भण्डार में चला आया। भीतर पहुंचते ही उसकी दृष्टि विमला पर जा पड़ी। वह स्त्री-विभाग में खड़ी एक स्त्री को कपड़े दिखा रही थी। दूकान के एक विक्रेता ने, गुलामरसूल को दूकान के बीचोबीच खड़े विमला की ओर टकटकी लगाये देख, उसके पास आकर कहा, "आपको क्या चाहिये?"

"रेशमी साड़ियां।"

"तो आप इधर आइये। मैं आपको दिखाता हूँ।"

"मैं वहां जाकर नहीं देख सकता क्या?"

"वह स्थान औरतों के लिये है। आपके साथ यदि आपकी धर्म-पत्नी होती तो आप वहां से खरीद सकते थे।"

"तो अच्छी बात है। हम अपनी औरत को लेकर आयेंगे।"

इतना कह वह भण्डार से बाहर चला आया। उसने कह तो दिया कि अपनी औरत को लेकर आवेगा। परन्तु मन ही मन सोच रहा था कि औरत तो है नहीं, किसे लेकर आवेगा। वह इसी धुन में वहां से चिड़ियाघर की ओर चल पड़ा। जब भल्ला शू कम्पनी के समीप पहुंचा तो उसने मोहिनी को मोटर से उतर दूकान के भीतर जाते देखा। एकाएक उसके मन में विचार उठा। उसका मुख प्रसन्नता से खिल उठा। वह भी भल्ला शू कम्पनी के अन्दर चला गया।

गुलामरसूल की एक वार मोहिनी से नमस्ते मात्र हुई थी। वह प्रेम से मिलने उसके घर पर गयी हुई थी। तब प्रेम ने परिचय कराया था। आज मोहिनी को भल्ला शू कम्पनी में जाते देख उसे अपनी समस्या हल होती हुई दिखाई दी। जब तक मोहिनी ने तीन जोड़े सैंडल खरीदे, तब तक गुलामरसूल भी जूते देखता रहा। जब मोहिनी खरीदे हुए माल का मोल देने लगी तो वह जूतों को नापसन्द करता हुआ बाहर निकल आया। इसी समय मोहिनी भी बाहर आई। गुलामरसूल ने हाथ जोड़कर कहा, "बहिन जी, नमस्ते।"

"ओह! मिस्टर गुलामरसूल? सुनाइये क्या हालचाल है? यहां क्या कर रहे हैं?"

"सब ठीक है, बहिन। अगर कुछ फुरसत हो तो थोड़ा सा काम है।"

"जी, क्या बात है?"

"मैंने अपने एक स्त्री-मित्र के लिये दो साड़ियां खरीदनी हैं। यदि आप चलकर पसन्द कर दें तो आपका निहायत मशकूर हूँगा।"

"क्या किसी को भेंट देनी है ?"

"जी हां।"

मोहिनी ने आंखों की कनखियों से देखते हुए और मुस्कराते हुए पूछा, "क्या भाई गुलामरसूल भाभी लाने की सोच रहे हैं ?"

गुलामरसूल ने आंखें नीचे कर शर्माने का बहाना करते हुए कहा, "ख्याल तो कर रहा हूँ। देखो बहिन, ऐसे नमूने की पसन्द करना कि मुझे उल्लू न बनना पड़े।"

"किस दूकान पर चलियेगा ?"

"वह तो शुद्ध हाथ की बनी हुई पसन्द करेगी। खद्दर-भण्डार के सिवा और तो कहीं मिलेगी नहीं।"

"तो चलो।"

दोनों मोटर में सवार हो खद्दर-भण्डार में जा पहुँचे। वही विक्रेता, जिसने पहले गुलामरसूल से वार्तालाप की थी, एक सर्वथा नवीन युग की लड़की को उसके साथ देख चकित रह गया। गुलामरसूल मोहिनी को लिये हुए स्त्री-विभाग में जा पहुंचा। विमला ने मोहिनी की ओर देखते हुए पूछा, "बहिन, क्या चाहिये ?"

मोहिनी ने उत्तर दिया, 'साड़ी।' इतना कह वह गुलामरसूल के मुख की ओर देखने लगी।

गुलामरसूल ने विमला की ओर देखते हुए कहा, "दो साड़ियां चाहियें। जैसी आप बतायें या बहिन जी पसन्द करें।" इतना कह उसने विमला को ओर देखते हुए मोहिनी की ओर संकेत कर दिया।

विमला ने रेशमी साड़ियों की अलमारी खोलकर मोहिनी के सम्मुख नये नये नमूने की रखनी आरम्भ कर दीं। उनको दिखाते हुए वह बोली, "यह देखिये, मैसूर के रेशम पर बनी है। मैसूर का रेशम मज़बूती में, चमक में और मुलायम होने में दुनिया में अव्वल दर्जे का माना जाता है। इस पर छपाई का काम बम्बई के मशहूर छापने वालों से करवाया गया है।" कपड़े को दिखाते हुए विमला ने कहा, "देखिये न, कितना

गफ़ बुना गया है। प्याज़ के छिलके की भांति बारीक और मुलायम है।"

मोहिनी ने नमूने तो बहुत पसन्द किये, परन्तु कपड़े के विषय में कहा, "बहुत मोटा है।"

"पहिनने वाली बहुत ही नाज़ुक बदन है क्या?" विमला ने कुछ मुस्कराते हुए पूछा।

"हां, बिलकुल आप जैसी," गुलामरसूल ने उत्तर दिया।

"मगर मैं तो मोटा सूती खद्दर पहिनती हूं।"

"आपको यह फबता भी तो नहीं।"

विमला ने कुछ उत्तर नहीं दिया और दूसरी अलमारी खोल बारीक कपड़े निकालने लगी। गुलामरसूल की बात का उत्तर मोहिनी ने दिया, "आपकी दृष्टि में नहीं फबती न। आपके मन......।"

विमला ने बात बीच में ही काटकर कहा, "यह देखिये। शायद आपको यह पसन्द आजाये। यह काशमीर का रेशम है। बहुत बारीक है, इस पर भी मज़बूत बहुत है। यह इतना बारीक है कि पांच परत लपेटने पर भी नीचे के पेटीकोट और जम्पर का नमूना दिखाई देता रहेगा।"

गुलामरसूल ने कुछ संशय प्रकट करते हुए कहा, "मोहिनी बहिन, क्या तुम यह ठीक समझती हो?"

"नहीं, बहुत बारीक है।"

गुलामरसूल ने विमला की ओर देखते हुए कहा, "जी देखिये, मैं तो एक गंवार आदमी हूं। नहीं जानता, आजकल की लड़कियां क्या पसन्द करती हैं। आप ही मेरी मदद कर दें। आप अपनी पसन्द की दो साड़ियां चुन दें। क्यों मोहिनी बहिन?"

"हां, आप अपनी पसन्द बताइये।"

विमला ने दो साड़ियां पसन्द कर दीं। मोहिनी ने छपाई की प्रशंसा की। गुलामरसूल ने कपड़े की तारीफ़ की। निश्चय होगया। गुलामरसूल ने दाम पूछा। विमला ने बताया, 'साठ रुपये।'

विमला ने पर्चा बना साड़ियां बांधने के लिये चपरासी को दे दीं। जब यह काम हो रहा था मोहिनी ने, केवल समय बिताने के लिये, कह दिया, "आप कहां रहती हैं ?"

"जहां सींग समायें।"

गुलामरसूल ने कुछ अचम्भे का भाव दिखाते हुए कहा, "सींग तो दिखाई नहीं देते।"

मोहिनी खिलखिलाकर हंस पड़ी। विमला भी हंस रही थी। ठीक इसी समय बिहारीलाल और प्रेम खद्दर-भण्डार में पहुँचे। बिहारीलाल ने तीनों को हंसते हुए देख लिया था। उसके अचम्भे का वारापार नहीं रहा, जब उसने विमला को पहचाना। वह मूर्तिवत् वहीं दरवाज़े में खड़ा रह गया। प्रेम आगे निकल गयी थी। वह जब एक विक्रेता से कुछ कहने लगी तो उसने कहा, "आप उधर तशरीफ़ ले जाइये।" साथ ही स्त्री-विभाग की ओर संकेत कर दिया।

प्रेम उधर गयी तो उसकी दृष्टि सबसे पहले गुलामरसूल पर पड़ी। "तुम...।" एकाएक उसके मुख से निकल गया। उसी समय उसकी दृष्टि विमला पर पड़ी। "ओह, आप भी हैं!" प्रेम ने विमला को सम्बोधन कर कहा।

इस समय बिहारीलाल भी वहां पहुँच गया। उसे खद्दर-भण्डार में प्रवेश करते ही विमला ने देख लिया था और तुरन्त हंसी छोड़ गम्भीर मुद्रा बना ली थी। गुलामरसूल ने बिहारीलाल की ओर देखकर पूछा, "अब आपकी तबियत कैसी है?"

"ठीक है," बिहारीलाल ने कुछ रूखे मन से उत्तर दिया। अब उसने मोहिनी को हाथ जोड़ नमस्ते की और पश्चात् प्रेम से कहा, "मेरी सम्मति है कि किसी और दूकान पर चलें।"

प्रेम ने अचम्भे में बिहारीलाल की ओर देखकर कहा, "यहां भी देख लें तो क्या हानि है?"

गुलामरसूल ने कहा, "हम जा रहे हैं। आप खरीदिये। देखिये, इन

"मुझे क्या करना होगा ?"

"दो तरीके हैं। जो उचित समझें करियेगा। मैं आपको ये साड़ियां और चिट्ठी दे देता हूँ। आप कल चपरासी के हाथ ये दोनों चीज़ें लिखे पते पर भेज दें। भण्डार में किसी को पता न चले कि मेरी तरफ से माल जा रहा है। दूसरा तरीका यह है कि आप कल-परसों जब आपको फ़ुरसत हो इस पते पर खुद जाकर यह उस लड़की को दे दें और मेरा सलाम कह दें। इसमें आपको तकलीफ तो होगी, मगर मुझे मालूम हो जायगा कि उसने इसे कैसे कबूल किया है।"

एक क्षण के लिये विमला अनिश्चित रही। वह कम से कम चपरासी के हाथ पार्सल भेज देने में कोई हानि नहीं समझती थी। उसने इतना विचार कर पार्सल गुलामरसूल से ले लिया और चिट्ठी जो उसने अलग दी थी उसी पार्सल में ठूँस ली। अब वह गुलामरसूल से बोली, "इस समय तो मुझे बहुत जल्दी है। मैं कल आपका यह काम चपरासी के हाथ तो ज़रूर करवा दूंगी। मेरा जाना कुछ कठिन है।"

गुलामरसूल ने दोनों हाथ जोड़ नमस्ते कहकर शुक्रिया अदा किया और भण्डार की ओर लौट पड़ा।

विमला को घर पहुँचने की जल्दी थी, अतएव उसने लिफाफे पर का पता पढ़ने की आवश्यकता नहीं समझी। उसने सोचा कि चपरासी स्वयं पढ़ लेगा। वह लम्बे लम्बे कदम उठाती हुई घर की ओर चल पड़ी।

[११]

बिहारीलाल और प्रेम जब खद्दर-भण्डार से बाहर आये तो बिहारीलाल का रङ्ग क्रोध से लाल हो रहा था। प्रेम ने उसके मुख का रंग देख पूछा, "क्या बात है ? क्या फिर तकलीफ़ हो रही है ?"

"नहीं। तुमने उसका निमंत्रण क्यों स्वीकार कर लिया है ?"

"हां, जब उसने इतनी नम्रता से कहा तो कैसे अस्वीकार कर सकती थी।"

"मगर, खाने को वहां मांस-अंडे नहीं मिल सकेंगे।"

"तो क्या हुआ। कुछ तो देगी ही। भूखे तो उठा न देगी।"

"नहीं, खाने को तो देगी ज़रूर और पेट भर खाने के लिये। परन्तु जानती हो क्या देगी ? दलिया जो गाय-भैंस खाती हैं।"

"एक दिन ऐसा ही सही और अगर पेट न भरा तो लौटते समय होटल में खालेंगे।"

"परन्तु, मैं उससे झगड़ा करने जा रहा हूं।"

इस समय प्रेम मोटर में बैठ गयी थी। बिहारीलाल उसके पास जा बैठा था। प्रेम ने मोटर चला दी। जब मोटर बाहर सड़क पर आगयी तो प्रेम ने पूछा, "इतनी सीधी लड़की से आप झगड़ा क्यों करेंगे ?"

"तुमने भी तो उससे झगड़ा किया है।"

"मैंने ? कैसे ?"

"उसके पति को छीनकर।"

"मैंने नहीं छीना। मैंने आपसे प्रेम किया है और उस प्रेम के लिये अपने आपको दे दिया है।"

"यह तो वाक्जाल है। किसी बात को कहने का दूसरा ढंग है। परिणाम तो यही है कि मैं उसके पास न जाकर तुम्हारे प्रेम-पाश में बंधा हुआ तुम्हारी ओर खिंचा चला आता हूं।"

"तो इसमें मेरा क्या दोष है ? मैंने तो प्रेम किया है और उसकी कीमत दी है। आपको मेरी कीमत पसन्द आई है। इसमें झगड़ा करने की कौन बात है ?"

बिहारीलाल ने इस विषय को आगे नहीं बढ़ाया। उसके मन से अभी भी गुलामरसूल वाली घटना विस्मृत नहीं हुई थी। वह प्रेमदेवी के प्रेम और उस प्रेम की कीमत पर अधिक बात करने की अपेक्षा उसके गुलामरसूल के साथ सम्बन्ध के विषय में कुछ कहने वाला था। मुख में आती आती बात उसने रोक ली। जब बिहारीलाल ने कुछ नहीं कहा तो प्रेम यह समझ कि वह निरुत्तर होगया है बोली, "तो आप विमला से झगड़ा नहीं करियेगा न।"

"तो फिर जाने से क्या लाभ ?"

"वाह ! क्या झगड़ा करने के लिये ही जाना चाहिये ? मेल-मुलाकात बड़ी बात है। उससे मिलते रहने में क्या हानि है ? मुझे तो वह बहुत भली मालूम होती है।"

विहारीलाल उत्तर नहीं दे सका। वे कोठी पर पहुंच गये थे।

ठीक साढ़े सात बजे प्रेम ने मोटर निकाली और विहारीलाल को साथ लेकर खद्दर-भण्डार की ओर चल पड़ी। गाड़ी चलाते हुए प्रेम ने कहा, "खद्दर-भण्डार से उसे भी साथ ले लें तो क्या हानि है ?"

विहारीलाल अपने विचारों में लीन था। उसने कुछ उत्तर नहीं दिया। खद्दर-भण्डार में पहुंच उसे विदित हुआ कि विमला एक घण्टा पहले ही वहां से चली गयी है। वहां से वे विमला की गली के बाहर जा पहुंचे।

विमला ने घर पहुँच सुधा के नौकर को बाज़ार भेज, मिठाई, घी में तले पकौड़े, पकी-पकाई सब्जियां चने इत्यादि मंगवा लिये और स्वयं रसोई-घर में आग जला रोटी बनाने लगी। जब विहारीलाल और प्रेम आये तो वह रसोई-घर में थी। उनको आया देख उसने उन्हें कहा, "आप बाहर कमरे में बैठिये। मैं पन्द्रह मिनट में खाली हुई जाती हूं।"

विहारीलाल और प्रेम बाहर के कमरे में पड़ी खाट पर बैठ गये। बैठते ही प्रेम की दृष्टि साड़ियों के बंडल पर पड़ी। यह वही बंडल था जो गुलामरसूल ने मार्ग में विमला को दिया था। विमला ने जल्दी में होने के कारण उसे खाट पर फेंक दिया था। प्रेम ने उस बंडल को देख यह समझा कि विमला अपने लिये कुछ कपड़ा खरीद लाई है। उसने बंडल को उठाकर देखा। उसमें एक लिफ़ाफ़ा ठूंसा हुआ था। इस लिफ़ाफे को प्रेम ने निकाल कर पढ़ा। उर्दू में बहुत बारीक अक्षरों में पता लिखा था। प्रेम ने पता पढ़ा तो उसकी पत्र के बारे में जानने की उत्कंठा और भी बढ़ गयी।

पता इस प्रकार था :—

बख़िदमत मोत्रिमा विमलारानी, खद्दर-भण्डार, माल, लाहौर।

प्रेम ने चिट्ठी बिहारीलाल को दिखाते हुए कहा, "यह लिखावट गुलामरसूल की मालूम होती है।"

बिहारीलाल ने ध्यान से देखकर कहा, "मैं उसकी लिखावट नहीं पहचानता, परन्तु उसकी चिट्ठी यहां कैसे?"

लिफाफा खुला था। बिहारीलाल ने चिट्ठी निकाल पढ़नी आरम्भ कर दी। चिट्ठी अंग्रेजी में थी। लिखा था :—

मेरी प्यारी विमलादेवी,

मुझे विश्वास है कि मैं पत्थर की दीवार के साथ माथा नहीं टकरा रहा। आपकी आंखों की सरसता, आपके ओठों की मुस्कराहट, आपका चौड़ा मस्तक और निशंक भाव से बातें करना मुझे आशा दिला रहा है कि मैं बहरे कानों में अपनी पुकार नहीं डाल रहा। पांच मिनट की मुलाकात से ही मैं इस नतीजे पर पहुंच गया हूं कि यह जो तुच्छ भेंट सेवा में भेज रहा हूं वह आपको स्वीकार होगी। मैंने कहा था कि आपको मोटा खद्दर फबता नहीं। आपने यद्यपि इस बात का उत्तर मुख से नहीं दिया था पर आपकी गालों का शर्म से लाल होजाना यह बताता था कि मैंने ठीक कहा था। आप भी मेरी बात की सच्चाई का अनुभव करती थीं। मैंने तो उसी समय निश्चय कर लिया था कि आपको आपके मन पसन्द की ही वस्तु पहनने को दिलवानी चाहिये।

मेरी रानी! आप कितनी दयालु हैं। मेरे संकेत मात्र से आपने अपने पसन्द की साड़ियां बांध दीं; और क्या उस वक्त आपके मुख से निकली हुई सरद आह को मैं सुन नहीं रहा था? जब आपने कहा कि ये साड़ियां मैं अपनी बीवी के लिये ले जा रहा हूं काश कि आप उस समय जानतीं कि मैं आपको देने के लिये ही साड़ियां ले रहा था।

मेरे मन को अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि यह साड़ियों का बंडल आपने मुझसे पकड़ लिया है। मैं अब आपका सदा तुच्छ सेवक बना रहूँगा। यहां मेरे पास रुपये की कमी नहीं है। चाहो तो दो साड़ियां नित्य लेकर दे सकता हूँ। चाहो तो आपको महलों में रख सकता हूँ। संसार की सब

सुख-सम्पत्ति उंगलियों के इशारों से एकत्रित कर सकता हूँ।

आपके गोरे रंग पर यह हरे रंग की साड़ी कैसी फबेगी, यह आंख वाला ही बता सकता है। मैं चाहता हूँ कि आप मंगल के दिन इस साड़ी को पहनकर भंडार में तशरीफ लाइयेगा। मैं आपके उस सौंदर्य को देख फूला नहीं समाऊंगा। मैं समझूँगा कि आपके उस सौन्दर्य में कुछ न कुछ भाग मेरा भी है। इससे मुझे जो संतोष और आनन्द प्राप्त होगा वह मैं शब्दों में वर्णन नहीं कर सकता। मैं जब आपको देखने आऊं तो आप एक बार मुस्करा दें तो मैं अपने आपको धन्य मानूंगा। मेरा रोम-रोम आपके अहसान में दबा रह जायगा।

आपका गुलाम—गुलामरसूल

बिहारीलाल ने चिट्ठी पढ़ बंधा बंडल खोल डाला और उन्हीं साड़ियां को, जो गुलामरसूल खद्दर-भंडार में खरीद रहा था, देख चकित रह गया। इस चिट्ठी को पढ़ और गुलामरसूल की साड़ियां देख बिहारीलाल और प्रेम दोनों क्रोध से लाल होने लगे। बिहारीलाल ने कहा, "दुष्टा।"

प्रेम ने कहा, "बदमाश का बच्चा।"

बिहारीलाल ने बिना प्रेम के कहने की ओर ध्यान दिये कह दिया, "फरेबन।"

परन्तु प्रेम अपनी ही धुन में कह रही थी, "धोखेबाज़, झूठा, फरेबी..."

इसी समय रसोई घर में से विमला के सामान समेटने का शब्द हुआ। प्रेम ने जल्दी जल्दी साड़ियों को फिर कागज़ में लपेट दिया और चिट्ठी को लिफाफे में डाल फिर बंडल में ठूँस दिया।

अभी भी बिहारीलाल का क्रोध कम नहीं हुआ था और विमला के लिये बुरे शब्दों का प्रयोग कर रहा था। विमला को वह साधू-स्वभाव वाली मानता था और उसे खद्दर-भण्डार में 'काउन्टर' पर खड़ी देख सोचता था कि इस स्थान पर वह बाज़ारी गुण्डों के जाल में फंस जायेगी। इसी से सचेत करने के लिये वह उससे मिलने आया था। परन्तु इन साड़ियों को देख और चिट्ठी को पढ़ तो वह समझने लगा था कि विमला

पहले ही फंस चुकी है। वह सोचता था कि वह ठाकुर की पूजा करने वाली, सनातन-धर्म को मानने वाली, शरीर, मन और आत्मा की पवित्रता में विश्वास करने वाली एक गंवार मुसलमान के सम्मुख झुक गयी है। इसी से वह अपनी धारणा को, कि परमात्मा के भरोसे पर जीने वाले अपने पर भरोसा खो बैठते हैं, ठीक समझने लगा था। उसका विश्वास, कि आस्तिक सबसे बड़े फरेबी और अपने आपको धोखे में रखने वाले होते हैं, आज सोलह आने सत्य प्रतीत होने लगा था।

प्रेम को गुलामरसूल पर क्रोध आ रहा था। वह मन ही मन में कह रही थी कि आदमी कितना धोखेबाज़ होता है कि कहीं तो प्रेम प्रकट कर रुपये ऐंठता है और कहीं प्रेम प्रकट कर रुपये, भूषण और कपड़े नज़र करता है। वह स्वयं गुलामरसूल को आड़े हाथों लेने के लिये व्याकुल हो रही थी। उसे बिहारीलाल के मन की बात जानने का अवकाश नहीं था।

इस समय विमला हाथ में आसन लिये हुए रसोई घर से बाहर चली आई। उसने एक स्थान पर आसन लगा दिये और फिर एक हाथ में पानी का भरा लोटा और एक हाथ में तौलिया ले हाथ धोने के लिये प्रेम से कहने लगी, "बहिन, हाथ धो लो न।"

प्रेम बिहारीलाल का मुख देखने लगी। बिहारीलाल ने कहा, "मुझे तो भूख नहीं है।"

विमला ने मुस्कराते हुए कहा, "भूख तो लग आयेगी।"

प्रेम ने धीरे से कहा, "कुछ तो खाना ही होगा।"

दोनों ने उठ हाथ धो लिये और आसनों पर बैठ गये। विमला खाने का सामान लेने रसोईघर में चली गयी। बिहारीलाल ने प्रेम से कहा, "मुझे तो इस घर में एक क्षण के लिये भी ठहरना कांटे की भांति चुभ रहा है।"

प्रेम अपने मन के आवेग को रोकने के प्रयत्न में लगी हुई थी। उसने कहा, "बहादुरी मन के भावों को छुपाने में है न कि पतली हंडिया के पानी की भांति उबल पड़ने में।"

"मगर जब आंच अधिक हो तो गहरे बर्तन का पानी भी उबल उठता है।"

"फिर भी और अधिक गम्भीर बनने में दोष नहीं।"

इस समय विमला दो थालों में खाने के सब व्यञ्जन परसकर ले आई। एक थाल को बिहारीलाल के और दूसरे को प्रेम के सम्मुख रख पीने का पानी लेने चली गयी। बिहारीलाल ने प्रेम से कहा, "मैं अब समझा हूँ कि इसे तुमसे ईर्षा और द्वेष क्यों नहीं होता।"

"मुझसे?"

"नहीं तो और किस से?"

विमला दो गिलासों में पानी ले आई। गिलासों को उनके सम्मुख रख स्वयं दोनों के सामने फर्श पर ही बैठ गयी और बोली, "खाइये।"

"तो तुम नहीं खाओगी?" प्रेम ने पूछा।

"आज आप मेरे महमान हैं। आप जब तक पेट भर खा नहीं लीजियेगा तब तक मेरे मुख से एक दाना नहीं उतर सकता।"

"मेरा तो पेट भर गया है," बिहारीलाल ने चीज़ों की ओर देखते हुए कहा।

प्रेम ने बिना उत्तर दिये खाना आरम्भ कर दिया। बिहारीलाल ने भी हाथ हिलाया। विमला ने बैठे बैठे कहा, "आज आपके आने से मुझे अत्यन्त आनन्द हुआ है। मैं अपने मन में फूली नहीं समाती।"

"क्यों?"

"मन के उद्गार युक्ति का विषय नहीं होते। क्यों का उत्तर कौन दे सकता है?"

"ठीक है। समझ गया। कोई किसी से क्यों प्रेम करता है पूछा नहीं जा सकता।"

"केवल प्रेम की ही बात नहीं, प्रत्युत मन की प्रत्येक भावना की यही अवस्था है। कोई मीठा पसन्द करता है और कोई नमकीन। कोई लोभी है और कोई उदार। ईर्षा, द्वेष, काम, मोह का भी यही हाल है।

श्रद्धा-भक्ति भी मन से होती है।"

प्रेम ने बात को बीच में ही काटकर कहा, "यह तो मनमानी करने का बहुत अच्छा बहाना है। जब कोई बात कर दी तो कह दिया मन चाहता था और क्यों का कुछ उत्तर नहीं।"

विमला ने मुस्कराते हुए कहा, "मेरे कहने का यह अर्थ नहीं है। मैंने यह नहीं कहा कि मन सदैव अच्छे काम करता अथवा सोचता है। मन बुरे काम भी कर सकता है। प्रायः बुरे काम करना चाहता है। मैंने तो केवल यह कहा है कि मन के चाहने में युक्ति कुछ भी काम नहीं कर सकती। एक उदाहरण मेरी बात को स्पष्ट कर देगा। मान लो एक मनुष्य मिठाई बहुत पसन्द करता है। जब भी वह हलवाई की दूकान के समीप से गुज़रता है उसके मुख से लार टपकने लगती है। विचार करने से वह भले ही समझ ले कि मिठाई खाने से पेट खराब हो जायगा, परन्तु मन की चाहना तो इस विचार के आधीन नहीं है।"

इस पर बिहारीलाल ने पूछा, "यदि किसी का मन कोई ख़राब काम करना चाहे तो उसे रोका कैसे जा सकता है? समझाना-बुझाना ही तो एक साधन है। यदि मन के भाव बुद्धि के आधीन नहीं तो समझाना-बुझाना व्यर्थ नहीं हो जायेगा क्या?"

"समझाने-बुझाने से तो कोई मानता नहीं। मनाने के लिये दो उपाय हैं। एक बल का प्रयोग। यह उपाय अस्थाई है। इस पर भी रोग को दबा कर समय निकालने का एक अच्छा ढंग है। दूसरा उपाय है संस्कार डालना। यह उपाय स्थाई प्रभाव रखता है और मन में यथार्थ परिवर्तन उत्पन्न करने की योग्यता रखता है। इसमें दोष यह है कि इसका प्रभाव देर से होता है। इस कारण तुरंत प्रभाव उत्पन्न करने वाला उपाय और यह, दोनों प्रयोग में लाने चाहियें।"

"बल से अथवा संस्कारों से," प्रेम का पूछना था, "क्या बुरे काम नहीं करवाये जा सकते? देखो एक ब्राह्मण के लड़के को ऐसे संस्कार डाले जाते हैं कि वह छोटी जाति वालों से घृणा करने लगता है। यह काम

कितना खराब है। परन्तु संस्कारों के कारण हिन्दुस्तान भर के उच्च जातियों के हिन्दू यही कर रहे हैं।"

बिहारीलाल प्रेम की युक्ति से खिलखिलाकर हंस पड़ा, परन्तु विमला निरुत्तर नहीं हुई थी। वह गम्भीर भाव में वैसे ही बैठी रही। जब बिहारीलाल हंस चुका तो विमला ने कहा, "आप हंस क्यों रहे हैं ? मैंने तो साधनों का नाम बताया है। मैंने कहा है कि युक्ति मन को प्रेरित करने में सबल नहीं होती। बल और संस्कार मन को बदल सकते हैं। परन्तु बल और संस्कार किन बातों की प्रेरणा करें यह समाज के विद्वान नेता और व्यवस्था देने वाले निश्चय करें।"

"तो क्या विद्वानों की कौंसिल बैठेगी जो प्रत्येक व्यक्ति के आचार-व्यवहार की श्रेष्ठता की जांच करती रहेगी ?"

"हां, ऐसा तो होता ही है। समाज के रीति-रिवाज और राज्य-नियम ऐसे विद्वान लोगों से की गयी जांच-पड़ताल का परिणाम ही तो होते हैं।"

"बहुत से स्वार्थी और मूर्ख लोग मिलकर भी तो रीति-रिवाज और राज्य-नियम बना सकते हैं," बिहारीलाल ने झुंझलाकर उत्तर दिया।

"जिस देश में ऐसा होने लगता है वह देश तथा जाति अवनति के गड्ढे में गिर जाती है।"

प्रेम खाना खा चुकी थी। बिहारीलाल का अभी आधा पेट भरा था। वह विमला को वाक्-युद्ध में परास्त करने में लगा हुआ था। विमला भी अपने पक्ष को बलपूर्वक उपस्थित कर रही थी। वह चाहती थी कि बिहारीलाल के मन पर अंकित कर दे कि उसका व्यवहार अशुद्ध और हानिकर है। इसके विपरीत बिहारीलाल बातों का बहाव जिस ओर लाना चाहता था वह आ नहीं रहा था। इससे वह झुंझला रहा था। प्रेम ने समझा कि उसने विमला को अपने कहने के अनुसार फंसा लिया है। उसने कहा, "तो तुम कहती हो कि समाज के रीति-रिवाज मानने योग्य होते हैं ?"

"हां। उनमें सुधारों की आवश्यकता हो तो वे होने चाहियें। परन्तु

प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छा के अनुसार सुधार नहीं कर सकता। इन सुधारों के लिये कोई ढंग होना चाहिये।"

"ठीक," बिहारीलाल ने कहा, "लाहौर में स्त्रियां दूकानों पर नौकरी करने नहीं जातीं। तुमने यह नई प्रथा क्यों चलाई है?"

प्रेम खिलखिलाकर हंस पड़ी और बोली, "हम लोग, जो स्त्रियां के लिये वैसे ही अधिकार चाहते हैं जैसे पुरुषों के, तो स्त्रियों को नौकरी की स्वीकृति दे सकते हैं, परन्तु तुम तो रीति-रिवाज को मानती हो।"

"मैं तो यह जानती हूं कि देहातों में स्त्रियां वे सब काम कर लेती हैं जो पुरुष करते हैं। वे खेतों में जाती हैं। हल चलाना, काटना, पीटना, पुर चलाना, बैलों की सानी करना इत्यादि सब काम करती हैं। स्त्रियों का अधिकार कि वे पुरुषां की तरह काम कर सकें उपस्थित है। भारतवर्ष के सब प्रान्तों में स्त्रियां काम करती हैं। केवल पंजाब में मुसलमानों के प्रभाव से और गुँडों के डर से स्त्रियां घरों से बाहर काम करने नहीं जातीं। काम करने की मनाही नहीं है। अब मुसलमानों का भय नहीं रहा। इससे हमें अपने अधिकार प्रयोग करने में बाधा भी नहीं है।"

"दूसरे प्रान्तों में भी छोटे दर्जे के लोगों की स्त्रियां खेतों में काम करती हैं, बड़े घरां की नहीं।"

"समय के फेर से छोटे घर बड़े हो जाते हैं और बड़े घर छोटे। ऐसा सर्वत्र और सदैव होता रहा है।"

"तो तुम अब छोटे घर की होगयी हो?"

"इसको आप मुझसे क्यों पूछते हैं?"

"ओह!" बिहारीलाल का मुख क्रोध से लाल होगया, "परन्तु तुम्हारे बाप का घर छोटा होगया है या तुम्हारे सुसराल का?"

स्त्री को चिढ़ाने और क्रुद्ध करने का सब से सहज उपाय उसके मां-बाप का अपमान करना है। विमला इससे क्रोध में भर गयी, परन्तु तुरन्त ही अपना धर्म, पति से झगड़ा न करना, स्मरण कर शान्त होगयी और कहने लगी, "एक के छोटा होने से दूसरा भी होजाता है। जब सम्बन्ध

बन गया है तो दोनों घर एक ही नौका में हो जाते हैं।"

"मैं ऐसा नहीं मानता। मैं ऐसा नहीं होने दूंगा। मैं चाहता हूं कि तुम्हारे मायके तुम्हारे सुसराल से सम्बन्ध न रखें। इसमें दोनों की भलाई है।"

"क्यों? और यह कैसे हो सकता है?"

"मैं तुम्हें अपने घर से निकाल दूंगा। इससे तुम और तुम्हारे माता-पिता हमारी नेकनामी या बदनामी से दूर हो जायेंगे।"

"पर मैं पूछती हूं क्यों? उन्होंने आपका क्या बिगाड़ा है?"

"उनकी लड़की ने एक दूकान पर नौकरी कर मुझे बदनाम करने का यत्न किया है।"

"बदनामी कैसे होगयी?"

"मैं जब तुम्हारे खाने-पहरने को देता हूं और दे सकता हूँ तो नौकरी करना मेरी बदनामी नहीं तो और क्या है?"

"क्या नौकरी केवल रुपया कमाने के लिये होती है?"

"नहीं! दूकान पर ग्राहकों से आंखें लड़ाने के लिये और···।"

बिहारीलाल क्रोध से हांप रहा था। वह गुलामरसूल के विपरीत भाग संचित क्रोध विमला पर निकाल रहा था। उसने थाल दूर खिसका दिया और लाल २ आंखों से विमला की ओर देखता हुआ खड़ा होगया।

विमला इस लांच्छन को नहीं सह सकी। उसने बैठे बैठे ही क्रोध में लाल-पीले होते हुए बिहारीलाल की ओर देखते हुए कहा, "यह बात झूठ है, निराधार है।"

"इसका प्रमाण चाहती हो? यह लो·····।"

इतना कहते हुए बिहारीलाल ने नाड़ियों का बंडल, जो खाट पर पड़ा था, उठाकर विमला के मुख पर दे मारा। अब वह प्रेम की बांह पकड़कर उठाते हुए बोला, "चलो प्रेम, चलें। यहां ठहरना ज़लालत है।"

प्रेम की इच्छा अभी और ठहरने की थी, परन्तु बिहारीलाल उसे बलपूर्वक घसीटते हुए मकान के बाहर लेगया।

जब वे गली के बाहर चले गये तो प्रेम ने मोटर में बैठते हुए पूछा, "यह आपने क्या किया है ?"

"जो करना चाहिये था ।"

प्रेम ने मोटर चला दी । शहर में भीड़ बहुत थी, इस कारण प्रेम का पूरा ध्यान मोटर चलाने में लगा था और उसने कुछ नहीं कहा । वह मन में बिहारीलाल के व्यवहार पर मनन कर रही थी । उसे यह व्यवहार अनुचित जान पड़ा था । शहर के दरवाज़े के बाहर पहुँचते ही उसने अपनी मन की बात कह डाली । वह बोली, "आपने विमला से अनुचित व्यवहार किया है ।"

"वह इसी लायक है ।"

"क्यों ?"

"उसने दूकान पर नौकरी करली है ।"

"तो आप नौकरी कर रुपया पैदा करने का अधिकार स्त्रियों को नहीं देते ?"

"उसे रुपया कमाने की आवश्यकता नहीं है । तुम जानती हो कि मैं उसे साठ रुपये महीना देता हूँ ।"

"साठ रुपये पर आपने एक स्त्री को गिरवी रख लिया है । रुपये के अतिरिक्त मन-बहलाव और अनेकों अन्य प्रकार के मन के भावों की पूर्ति के लिये मनुष्य कुछ न कुछ काम करना चाहता है । इसमें हानि ही क्या है ?"

"तो तुम भी उसका पक्ष लेती हो । तुम उसका गुलामरसूल जैसे व्यक्ति से सम्बन्ध रखना उचित समझती हो ?"

प्रेम एक क्षण के लिये निरुत्तर हो विचार करने लगी कि गुलामरसूल से सम्बन्ध उसका भी है । यदि वह विमला को बुरी कहती है तो अपने आपको कैसे अच्छा समझ सकती है । साथ ही उसको बिहारीलाल के, स्त्रियों के अधिकारों और उनकी स्वतन्त्रता के विषय में, संकुचित विचारों को सुन अचम्भा होने लगा था । आखिर उससे नहीं रहा गया । वह

बोली, "मैं आपको अधिक उदार विचार रखने वाला व्यक्ति समझती थी।"

"उदारता की भी कुछ सीमा होती है, प्रेम!"

"वह सीमा मनुष्य और स्त्रियों में एक समान है या अलग २ ?"

"मनुष्य और स्त्रियों में शारीरिक अन्तर है।"

"आप आज इतनी अयुक्तिसंगत बातें क्यों कर रहे हैं ? मैंने पूछा है कि यदि एक बात के लिये स्त्री पुरुष को क्षमा कर सकती है तो पुरुष उसी बात के लिये स्त्री को क्षमा क्यों नहीं कर सकता ?"

बिहारीलाल अपने अयुक्तिसंगत व्यवहार को समझ गया था, परन्तु उसका मन उसकी बुद्धि के विपरीत जा रहा था। बुद्धि तो उन्मुक्त प्रेम की पुकार मचाती थी, परन्तु मन उसे विवश कर रहा था कि वह अपनी प्रेमिका को दूसरे के आधीन न होने दे। जहां तक विमला का सम्बन्ध था उसके लिये वह कुछ अधिक चिन्तित नहीं था। वह उससे प्रेम नहीं करता था। वह तो प्रेम के विषय में सोच रहा था। यदि वह कह दे कि विमला को जिससे चाहे प्रेम करने का अधिकार है तो उसे प्रेम को भी यह अधिकार देना पड़ता। इस बात को उसका मन स्वीकार नहीं करता था। वह प्रेम को अपने और केवल अपने लिये ही रखना चाहता था।

प्रेम को जब कुछ उत्तर नहीं मिला तो उसने कहा, "मैं आपके विचारों का विश्लेषण करूं ?"

"क्या ?"

"आप पूंजीपति हैं। आप अपनी स्त्री को अपनी सम्पत्ति समझते हैं। जैसे एक पूंजीपति अपनी सम्पत्ति पर दूसरे का अधिकार नहीं चाहता, वैसे आप भी अपनी स्त्री को अपने ही आधीन रखना चाहते हैं। मुझे अचम्भा हो रहा है कि आप हमारी पार्टी के सदस्य कैसे बन गये हैं ?"

बिहारीलाल चुप था।

[१२]

बिहारीलाल रात भर विमला, प्रेम और गुलामरसूल के विषय में विचार करता रहा। वह अपना व्यवहार निश्चय करना चाहता था।

जब उसके मन में विमला और गुलामरसूल के मित्र होने का विश्वास होगया तो वह प्रेम की ओर से कुछ कुछ निश्चिन्त होगया। उसने समझा कि प्रेम के साथ गुलामरसूल का शायद प्रेम नहीं है। वे तो केवल मज़दूर-यूनियन के विषय की बातें करते होंगे।

इस पर भी वह प्रेम पर यह बात स्पष्ट कर देना चाहता था कि गुलामरसूल से वह विमला के, विशेष रूप में, छुपे छुपे सम्बन्ध को घृणा की दृष्टि से देखता है। साथ ही रविवार के दिन उसे बन्नू के लिये चला जाना था और अपने जाने से पूर्व वह विमला के विषय में अपने भाव स्पष्ट रूप से प्रकट कर देना चाहता था। इन्हीं विचारों में वह रात भर जागता रहा। बहुत देर से उसे नींद आई और फिर देरी से वह जाग सका। इस समय तक प्रेम, जो रात साड़ियां देख गुलामरसूल से लड़ने का मन में ठान चुकी थी, उसके घर के लिये रवाना हो चुकी थी। अतः बिहारीलाल ने विमला को एक चिट्ठी लिखी जो उसे शनिवार रात को भंडार से लौटने पर मिली थी। इस चिट्ठी के लिखने के पश्चात उसने एक चिट्ठी खद्दर-भंडार के मैनेजर को लिख दी। उसने लिखा, "आपके भंडार में माल बेचने के लिये एक स्त्री को नियुक्त देख मुझे अत्यन्त अचम्भा हुआ है। दूसरे व्यापारी तो स्त्रियों को दूकानों में नौकर रखकर उनको अधिक आकर्षणयुक्त बनाते हैं। क्या आपने भी यही करने का यत्न किया है? क्या आपको भी खद्दर बेचने के लिये मनुष्य की नीच मनोवृत्ति को उभारने की आवश्यकता प्रतीत हुई है? यदि ऐसा ही है तो मुझे बहुत शोक है। आपने भी व्यभिचार, जो प्रायः दूकानों पर काम करने वाली लड़कियों के द्वारा बढ़ रहा है, अधिक करने में हाथ बँटाया है। आपकी दूकान पर काम करने वाली स्त्री-विक्रेता भी इस दोष से मुक्त नहीं है। मुझे यह देखकर अति खेद हो रहा है। प्रत्येक देश और जाति का भला चाहने वाले को इस अवस्था से दुःख होगा। मैं चाहता हूँ कि आप, खद्दर के काम को देश की भलाई का साधन समझकर, इसमें कृत्रिम आकर्षण उत्पन्न करने के लिये समाज को पतन की ओर ले जाने वाली

बातों से दूर रहेंगे।"

इन दोनों चिट्ठियों को लिफाफों में बन्दकर, डाक में डालने के लिये भेज, बिहारीलाल स्नानादि से निवृत्त हो दफ़्तर चला गया। आज उसे बन्नू जाने के लिये खर्चे इत्यादि का प्रबन्ध करना था।

[१३]

विमला मकान की ड्योढ़ी में खड़ी बिहारीलाल और प्रेम को गली के बाहर जाते देखती रह गयी। कितनी ही देर तक वह निस्तब्ध, अचल, मन्द मति की भांति खड़ी रही। उसके मस्तिष्क में बवन्डर उठ रहा था। वह अपने में कोई मैल नहीं देखती थी, इस पर भी अपने को चरित्रहीन कहा सुन विचार-शून्य हो गयी थी।

कितनी ही देर तक वह बिहारीलाल के लांच्छन का अभिप्राय समझने में लगी रही। जब कुछ भी समझ नहीं सकी तो मूर्ख सी बनी हुई भीतर चली आई। जहां वह आकर बैठी थी वहां गुलामरसूल की साड़ियों का बंडल देख उसे स्मरण हो आया कि बिहारीलाल ने उस बंडल के विषय में भी कुछ कहा है। विमला उस बंडल को उठाकर देखने लगी। वह उतनी सफाई से बंधा हुआ नहीं था जितनी सफाई से खद्दर-भण्डार में बांधा गया था। पहले उसे विचार आया कि गुलामरसूल ने खोलकर बांधा होगा, परन्तु तुरन्त ही उसे सूझ गया कि बिहारीलाल ने देखा होगा। साथ ही उसे चिट्ठी की याद आई। बिहारीलाल को वह चिट्ठी पढ़ लेनी चाहिये थी। शायद पढ़ ली हो, यह विचार आते ही उसे चिट्ठी पढ़ने की इच्छा हुई। उसने लिफ़ाफे पर पता पढ़ा और उस पर अपना नाम और पता लिखा देख सन्न रह गयी। उसके मस्तिष्क में चक्कर आने लगा और वह अचेत सी भूमि पर लेट गयी।

कई घण्टे पश्चात् उसके दिमाग़ में कुछ शान्ति हुई। अब विस्मय, अचम्भा, तथा शोक और क्रोध का आवेश कम पड़ गया था। वह अब पूर्ण घटना पर विचार करने योग्य हो गयी थी। वह भूमि से उठी और खाट पर जाकर लेट गयी। अब वह अधिक गम्भीरता से घटना पर विचार

करने लगी। वह सोचती थी कि शायद वह उसे नौकरी छोड़ देने के लिये कहने आया था, परन्तु इन साड़ियों और इस चिट्ठी को यहां देख वह समझ गया होगा कि गुलामरसूल से उसका सम्बन्ध है। इस पर भी वह सोचती थी कि उसे धैर्य और शान्ति से इस विषय पर बात करनी चाहिये थी। वह तो बात करते करते क्रोध में आगया था। फिर वह सोचती थी कि एक पुरुष को, जो स्वयं अपनी विवाहित पत्नी को छोड़कर किसी दूसरे से सम्बन्ध कर सकता है, क्या अधिकार है कि किसी दूसरे के चरित्र में छिद्र देख क्रोध करे। इस प्रकार विचार करते करते उसका मस्तिष्क रोष से भर गया था। परन्तु फिर वह सोचती थी कि उसका धर्म अपने पति के विपरीत बुरा सोचने को नहीं कहता। वह शान्त होगयी और ईश्वर से अपने मन को अपने पति के प्रति निर्मल करने के लिये प्रार्थना करने लगी। अब उसे गुलामरसूल पर क्रोध आगया। वह सोचती थी कि इस दुष्ट ने उसके जीवन में विष घोल दिया है। परन्तु वह इस बात को स्वीकार नहीं कर सकती थी कि बिना जांच-पड़ताल किये लाञ्छन लगाकर उसे दोषी निश्चित कर देना कहां की बुद्धिमत्ता है।

उसने गुलामरसूल की चिट्ठी को कई बार पढ़ा और उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि उसको लिखने वाला आधा पागल अवश्य है। वह चिट्ठी सर्वथा बे सिर-पैर की थी। परन्तु ऐसी चिट्ठी से बिहारीलाल ने कैसे परिणाम लगा लिया कि उसने उसकी भेंट स्वीकार कर ली है।

इन्हीं विचारों में वह रात भर नहीं सो सकी। प्रभात होगया। अभी भी उसका मन विषाद से भरा था। उसे खद्दर-भण्डार की याद आई तो वह तैयार होगयी। रात का बासी खाना खाकर भण्डार में जा पहुंची।

शनिवार का दिन था। खद्दर-भण्डार में विशेष काम होने से वह अपनी समस्याओं को भूल गयी थी। दोपहर को जो दो घण्टे आराम को मिले तो वह कुर्सी पर ढासना लगाकर सो गयी।

सायंकाल आठ बजे नियमपूर्वक वह घर को चल पड़ी। घर का दरवाज़ा खोलते ही उसे एक चिट्ठी ड्योढ़ी में पड़ी मिली। चिट्ठी

डाकिया छोड़ गया था। उसने समझा कि उसके पिता की चिट्ठी आई है। कमरे में पहुँच रोशनी कर जब लिफाफे पर बिहारीलाल के हाथ का लिखा पता देखा तो वह समझी कि शायद उसे अपने अन्याययुक्त व्यवहार का ज्ञान होगया है। वह मन में मनाने लगी कि ईश्वर करे ऐसा ही हो। आशा भरे मन से उसने चिट्ठी खोली और पढ़ने लगी। उसमें लिखा था :—

श्रीमती विमलादेवी जी, नमस्ते !

कल मैंने गुलामरसूल की श्रीमती जी के नाम चिट्ठी और उसकी श्रीमती जी के चरणों में भेंट खाट पर पड़ी देखी थी। इससे मुझे रोष हो आया था। अब शान्त चित्त से विचार करने पर मुझे प्रतीत हुआ है कि मेरा रोष करना व्यर्थ था। यदि आप गुलामरसूल से सम्बन्ध स्थापित करना चाहती हैं तो मुझे इसमें आपत्ति उठानी नहीं चाहिये। मैं उन्मुक्त प्रेम का उपासक हूँ। केवल एक बात है कि जब आपका उससे सम्बन्ध है तो प्रत्यक्ष होना चाहिये न कि छुपे छुपे। मैंने प्रेम से विवाह किया है और आप जानती हैं कि मैं और प्रेम दोनों इसको छुपाते नहीं फिरते। इसी प्रकार यदि आप भी करना चाहें तो करें। मैं इन मामलों में लुकाव-छुपाव चरित्रहीनता समझता हूं।

मुझे आपके इस नये जीवन में प्रवेश करने में किंचितमात्र भी आपत्ति नहीं, परन्तु मैं आपका यह व्यवहार अपने विवाह के पर्दे में छुपा रहने नहीं दूंगा। निकल आओ मैदान में और घोषणा कर दो अपने व्यवहार की। मैं आपके इस साहस के काम पर बधाई दूंगा। धर्म की ओट में ऐसा व्यवहार दुराचार है। प्रत्यक्ष में किया गया ऐसा व्यवहार पवित्र आचरण कहा जा सकता है। अतएव मैं आपको प्रत्यक्ष व्यवहार रखने के लिये यह कह रहा हूं कि मेरे घर को छोड़ दें और जहां आपकी इच्छा हो जाकर रह सकती हैं। घर की ताली या तो बा० मोहन लाल के हाथ अथवा डाक द्वारा भेज दें। घर के सामान में से जो आपके पसन्द आये या जो आपको चाहिये हो मेरी ओर से अंतिम भेंट समझ ले जा सकती हैं।

आपका जो कभी कुछ था, बिहारीलाल।

चिट्ठी पढ़कर विमला के मन में बहुत दुख हुआ। वह अपने आपको निर्दोष जानती थी। इस पर भी एक दुर्बल प्रमाण के आधार पर बिना जांच-पड़ताल किये, बिना उसका उत्तर सुने, उसे दोषी ठहराया जाना उसके लिये असह्य हो उठा। फिर बिहारीलाल का उसे यह कहना कि वह पथ, जिसकी न वह पथिक है और न जिस पर चलना वह उचित समझती है, उसके लिये खुला है, उस पर वह निशंक होकर और बिना लुकाव-छुपाव के चले, यह सब उसे एक विकृत बुद्धि की उपज प्रतीत होती थी। जो ठीक नहीं वह, चाहे प्रकट में किया जाय चाहे छुपकर, सदैव खराब रहेगा। मन में एक मिथ्या धारणा बनाकर बिहारीलाल उसे उसके अनुसार आचरण रखने पर विवश करना चाहता है। 'घर छोड़ दे,' 'जहां चाहें चली जाएँ,' 'घर का सब सामान अंतिम भेंट समझ ले लें'—यह सब क्यों और किस बात के लिये प्रोत्साहन दिया जा रहा है ?

एकाएक उसके मन में विचार आया कि बिहारीलाल इतनी उलटी बुद्धि रखने वाला नहीं हो सकता कि वह अपनी विवाहिता को भ्रष्ट आचरण के लिये प्रोत्साहित करे। उसने जो कुछ कहा है भ्रम में पड़कर कहा है। तो इस भ्रम को दूर करने का उपाय ढूंढ़ना चाहिये। उसने निश्चय कर लिया कि वह उसे चिट्ठी लिखे और उसमें अपनी धारणा और व्यवहार को स्पष्ट रूप में लिख दे। वह आशा करने लगी थी कि बिहारीलाल अपनी भूल समझ जायेगा और मान जायेगा। इस आशा से उसको शान्ति मिली। वह पिछली रात न सो सकने से बहुत थकावट अनुभव कर रही थी। खाट पर लेटते ही सो गयी।

अगला दिन रविवार था। भण्डार बन्द था। विमला प्रातः उठी और सिर धोकर बाल सुखाने के लिये मकान की छत पर चढ़ गयी। सुधा रात अपने पति के साथ सिनेमा देखने गयी थी। इस कारण सुबह देरी से उठी थी। जब वह शौचादि के लिये छत पर आई तो विमला को बाल सुखाते देख नमस्ते कर पूछने लगी, "स्वास्थ्य तो ठीक है ? दो दिन से दर्शन नहीं हुए। आपके भाई साहब भी पूछते थे।"

"हां, परसों कुछ झंझट में फंस गयी थी। इसमे आप लोगों के दर्शन नहीं कर सकी।"

"झंझट ? क्या हुआ था ?" सुधा ने कुछ चिन्ता में पूछा।

"तुम्हारे जीजा और प्रेम बहिन परसों रात आये थे।"

"ओह ! तब तो मुबारिक हो।"

"मुबारिक देने की बात नहीं। उन्हें मेरे चरित्र पर संदेह होगया है और परसों लड़कर चले गये हैं।"

"तुम्हारे चरित्र पर ? बेहूदा है। चालाक चोर चले डांटने कोतवाल को।"

"इसमें चोर-कोतवाल की बात नहीं, बहिन। ऐसी बात होगयी है कि उन्हें संदेह करने का अवसर मिल गया है।" इसके पश्चात् विमला ने साड़ियों का सारा वृत्तान्त सुधा को बता दिया।

"तो अब क्या करोगी ?"

"चिट्ठी लिख रही हूं। आशा है कि समझा सकूंगी।"

"कठिन है। मूर्खों को समझाया जा सकता है, भूले हुए को मार्ग दिखाया जा सकता है, परन्तु जानबूझकर उलटे मार्ग पर चलने वाले को ठीक करने का कोई उपाय नहीं।"

"फिर भी घर छोड़ने से पूर्व एक बार तो यत्न करना ही चाहिये।"

विमला ने नीचे आ कलम-दवात ले चिट्ठी लिख दी। उसमें गुलामरसूल की साड़ियों का पूरा वृत्तान्त लिख दिया। पीछे लिखा, "इससे आपको विदित होगया होगा कि आपका संदेह निराधार है। मैं सतीत्व की बहुत महिमा मानती हूँ। असती होना, क्या चोरी चोरी और क्या प्रत्यक्ष में, पाप समझती हूं और भगवान से सदैव प्रार्थना करती हूँ कि वह मुझे बुद्धि और बल दे कि इससे बचती रहूँ। जिस मार्ग पर आप मुझे प्रत्यक्ष आजाने को कहते हैं मैं उस पर आना ही नहीं चाहती। क्या इसके पश्चात् भी आप मुझे घर छोड़ने को कहते हैं ? घर छोड़ने में मैं झगड़ा नहीं करना चाहती। आपसे झगड़ा करना मुझे शोभा नहीं देता। इस

पर भी मैं समझती हूँ कि लोक-लाज के कारण मकान न छोड़ा जाय तो ठीक है। आपको लोक-लाज की परवाह नहीं, परन्तु मुझे है। मैं समाज द्वारा निर्मित भीत को फांदने की शक्ति नहीं रखती। मुझे अपने आपको ठीक मार्ग पर रखने के लिये समाज के नियम ही एक सुलभ उपाय प्रतीत होते हैं। अतएव लोक-लाज मुझे है। क्या आप, इसलिये ही सही, मुझे अब घर से निकल जाने को नहीं कहेंगे न?"

चिट्ठी के नीचे हस्ताक्षर कर, लिफ़ाफे में बन्द कर, कपड़े बदल, घर से बाहर जा डाक के डिब्बे में डाल आई।



तीसरा भाग

हड़ताल

गुलामरसूल को मुगलपुरा से बहुत ही आशाजनक समाचार मिला था। इससे वह खुशी २ वहां जाने की तैयारी कर रहा था। इस समय उसे प्रेम की मोटर के भोंपू का शब्द सुनाई दिया। उसने खिड़की से झांककर देखा और अपने अनुमान को ठीक पा भागकर घर से बाहर आगया और प्रेम का स्वागत करते हुए कहने लगा, "आपने इस समय आकर बहुत अच्छा किया है। मुगलपुरा से रात बहुत ही पुर उम्मीद ख़बर मिली है और मैं वहीं जाने के लिये तैयार हो रहा था। अब आप आगयी हैं तो मोटर की सवारी तो मिल ही जायगी।"

प्रेम ने पूछा, "क्या ख़बर मिली है?"

"काशमीर फार्मास्युटिकल कम्पनी की वर्कशाप से पचास आदमियों को निकाल दिया गया है। यह सेठ धन्नाराम के लड़के रामलाल के हुकम से हुआ है। इससे लोग भड़क उठे हैं। यूनियन का प्रधान झंडासिंह रात आया था। उसने इस नई हालत पर सोचने के लिये यूनियन की इन्तज़ामिया का जलसा किया है। हमें इससे अपना मतलब निकालना चाहिये।"

प्रेम ने पूछा, "क्या मतलब?"

"मतलब साफ है। मज़दूरों में मालिकों के लिये नफरत पैदा करना ही मक़सद है। अगर हालात ठीक नजर आये तो मैं आम हड़ताल करवा देना चाहता हूँ।"

"मगर मैं तो सुन रही हूँ कि रामलाल बहुत कुछ सुधार कर रहा है। हमें पहले सब बात भली भांति जान लेनी चाहिये। पश्चात् कोई कार्यवाई करनी चाहिये।"

"देखो प्रेम, बिहारीलाल ने तुम्हारे कान भरने आरम्भ कर दिये हैं। यह तो तुम जानती हो कि वह अपने मन में सरमायादारी की बू रखता है।

यदि रामलाल कुछ थोड़े-बहुत सुधार करने का बहाना कर भी रहा है तो ये केवल फरेब के बादल हैं जिनके पीछे छुपकर ये सरमायादार लोग मनमानी करना चाहते हैं।"

प्रेम को गुलामरसूल का कहना कि बिहारीलाल की मनोवृत्ति सरमाया-दारों की सी है, कुछ ठीक प्रतीत हुआ। वह पिछली रात उसका विमला के प्रति व्यवहार जान चुकी थी और उस व्यवहार में भी उसने सरमायादारों के रंग-ढंग पाये थे। रामलाल के विषय में भी जो कुछ उसे मालूम हुआ था वह बिहारीलाल से ही हुआ था। इस कारण वह समझती थी कि रामलाल की प्रशंसा में अत्योक्ति भी हो सकती है। रात की घटना ने उसके मन में बिहारीलाल के प्रति विद्रोह उत्पन्न कर दिया था। वह मुगलपुरा जाने को तैयार होगयी।

गुलामरसूल तैयार खड़ा था। मोटर में प्रेम के समीप ही बैठ गया और प्रेम ने मोटर चला दी। जब दोनों निश्चिन्त हो बैठ गये और मोटर कच्ची सड़क से पक्की पर आगयी तो प्रेम ने कहा, "मैं तो तुमसे रात वाली साड़ियां लेने आई थी।"

"साड़ियां! वे तो मैंने अपने देश भेज दी हैं। रात ही एक आदमी जा रहा था। वह उन्हें ले गया है।"

"वहां तुम्हारा कौन है जो इतनी फैशनेबल साड़ियां पहनेगा?"

इसके उत्तर में गुलामरसूल ने केवल मुस्करा दिया। प्रेम मन में कह रही थी 'झूठा कहीं का।'

गुलामरसूल इस विषय को आगे चलाना नहीं चाहता था। वह समझता था कि जितनी कम बातचीत इस पर वह करेगा उतना ही ठीक रहेगा। प्रेम के मन में पुरुषों के प्रति घृणा उत्पन्न हो रही थी। बिहारी-लाल को औरतों के प्रति नवाबी व्यवहार करते वह रात देख चुकी थी। गुलामरसूल को झूठ बोलते हुए वह अभी देख रही थी। उसके मन में आरहा था कि इन दोनों से सम्पर्क त्याग दे। परन्तु बिहारीलाल से उसका सम्बन्ध इतना घना था कि वह बिना अपने सब इष्ट-मित्रों और पिता को

नाराज़ किये उससे अलग नहीं हो सकती थी। गुलामरसूल को साथ रखकर वह मज़दूर-आंदोलन खड़ा करने जा रही थी। इसे वह अपना जीवन-कार्य समझती थी। इससे वह नहीं जानती थी कि क्या करे।

इन्हीं विचारों में वह मुगलपुरा जा पहुँची। यूनियन के दफ़्तर में यूनियन की प्रबन्धकारिणी की बैठक हुई। प्रश्न फार्मेसी की वर्कशाप से निकाले गये पचास आदमियों का था। इन पचास में दस तो यूनियन के ही सदस्य थे। वे सब वहां उपस्थित थे। प्रेम ने उनसे उनके निकाल दिये जाने का कारण पूछा। सबने यह बताया कि वे यूनियन का काम करते थे, इस कारण उनको निकाल दिया गया है।

प्रेम चाहती थी कि रामलाल से मिलकर उससे इनके निकाले जाने का कारण पूछा जावे, परन्तु वह इतने नरम व्यवहार का प्रस्ताव रखने का साहस नहीं कर सकी। उस समय प्रबन्धकारिणी के सब सदस्य क्रोध और जोश से लाल-पीले हो रहे थे। गुलामरसूल ने कहा कि आम हड़ताल कर देनी चाहिये। सेठ धन्नाराम के सब कारखानों के मज़दूरों को एक मत होकर इन बर्खास्तगियों का विरोध करना चाहिये। यूनियन का काम करना कोई पाप नहीं था। इस बात के लिये अगर बर्खास्तगी को वे चुपचाप सहन कर गये तो फिर उन्हें यूनियन का काम करने को कोई नहीं मिलेगा।

इस समय झंडासिंह, जो यूनियन का प्रधान था, उठकर बताने लगा, "यह बात, कि ये लोग यूनियन का काम करते थे, केवल इनको निकाल बाहर करने का बहाना है। यथार्थ बात वर्कशाप के मैनेजर मिस्टर कपिला से प्रतीत हुई है। वह यह है कि कुछ नई मशीनें मंगवाई गयी हैं, जिनसे एक व्यक्ति अनेकों का काम कर सकता है। इस कारण बहुत से लोग खाली हो गये हैं और उन्हें निकाल दिया गया है। हमारा कहना है कि मशीनें तब बढ़ानी चाहियें जब काम इतना बढ़ जाय कि जिससे काम करते हुए मज़दूरों को निकालने की आवश्यकता न रहे।"

इस समाचार ने कार्यकारिणी को और भी भड़का दिया। एक अन्य सदस्य ने कहा, "ये रुपये वाले यदि ऐसी मशीन बनवा लें जिससे एक

आदमी सौ का काम कर सके तो फिर शेष निन्यानवे लोगों को भूखों मरना पड़ेगा। हम ऐसी अवस्था सहन नहीं कर सकते। जब मज़दूरों की संख्या काम पूरा करने के लिये पर्याप्त न हो तो ऐसी मशीनें लगानी चाहियें जिनसे मज़दूर कम होने पर भी काम पूरा हो सके। मज़दूरों को बेकार कर देने के लिये हम मशीनें नहीं लगने देंगे।"

प्रेम बहुत परेशान थी। वह समझती थी कि बिना रामलाल से बातचीत किये हड़ताल नहीं करनी चाहिये। उसने प्रस्ताव किया कि एक डेपुटेशन रामलाल से मिलकर अपनी मांग पेश करे, परन्तु गुलामरसूल ने लोगों को इतना भड़काया कि हड़ताल कर देने का प्रस्ताव स्वीकृत होगया। प्रेम ने देखा कि यदि वह अधिक विरोध करती है तो लोग उसके नेतृत्व से बाहर हो जायेंगे। समाजवाद के सिद्धान्तों के प्रचार के लिये वह नेतृत्व छोड़ना नहीं चाहती थी। अतएव चुप रही।

उसी सायंकाल मज़दूरों की एक सर्वसाधारण सभा की गयी। उसमें प्रबन्धकारिणी समिति का निर्णय बताया गया और लोगों को हड़ताल कर देने के लिये बहुत भड़काने वाले व्याख्यान दिये गये। एक इस आशय का प्रस्ताव भी किया गया, जो सर्व सम्मति से पास कर दिया गया। इस प्रस्ताव का आशय यह था कि सेठ धन्नाराम के सब कारखानों के सब मज़दूर सोमवार आधे दिन की छुट्टी के पश्चात काम बन्दकर हड़ताल कर देंगे और तब तक काम नहीं करेंगे जब तक उनके नेता, अभिप्राय यह कि प्रबन्धकारिणी कमेटी, उन्हें काम करने का आदेश नहीं देंगे।

इसके पश्चात स्वयंसेवक धरना देने के लिये नियत किये गये और एक अर्थ-उपसमिति बनाई गयी जिसका काम यह था कि वह हड़ताल के खर्चों के लिये धन एकत्रित करे।

[२]

प्रेम प्रातःकाल से ही घर से निकली हुई थी। दोपहर को खाना उसने झंडासिंह के घर खाया था। बहुत रात जाने तक मज़दूरों का जलसा होता रहा था। जब जलसा समाप्त हुआ तो प्रेम को घर की याद

आई। पिछली रात बिहारीलाल को उसने कुछ कड़े शब्द कहे थे और अब वह उससे मिलने के लिये आतुर हो उठी थी।

जलसा समाप्त होते ही वह कूदकर मोटर में जा बैठी। गुलामरसूल, जो अभी भी लोगों को समझा-बुझा रहा था, प्रेम को मोटर चालू करते देख लोगों को छोड़ भागा और प्रेम से जाकर बोला, "अभी आप ठहरिये। मैंने भी चलना है।"

"मुझे काम है, मैं जा रही हूँ।"

निराश गुलामरसूल लोगों से कहता हुआ कि वह कल आयेगा मोटर में सवार होगया। जब मोटर चल पड़ी तो गुलामरसूल ने कहा, "क्या बात है ? इतनी जल्दी क्यों है ?"

"मुझे घर पर काम है। मैं समझती हूं हमने बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी अपने पर ले ली है और मैं इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने के लिये एकान्त चाहती हूं।"

"एकान्त या बिहारीलाल से राय करना चाहती हो।"

प्रेम हंस पड़ी। उसने कहा, "उनसे राय करने में पाप है क्या ?"

"उसकी राय मैं अभी बता देता हूं। वह कहेगा कि हड़ताल करनी ठीक नहीं है। इससे कारखानों के मालिकों की हानि होगी और परिणाम में उन मालिकों के आधीन मज़दूरों को भी हानि होगी।"

"मैं नहीं जानती वह क्या कहेंगे। इतना तो मैं समझती हूँ कि यह हड़ताल रुक सकती है। लोगों की मुख्य मांग कि निकाले गये आदमी रख लिये जायें मनवाई जा सकती है।"

"इसलिये न कि बिहारीलाल ने अपने मालिक रामलाल की प्रशंसा से आपके कान भर रखे हैं। वह देवता है। वह अपने नौकरों के आराम के लिये बड़ी २ योजनायें बनाये हुए है। यह सब कुछ इसलिये कहा गया है कि रामलाल ने बिहारीलाल का वेतन एक सौ बीस रुपये माहवार से तीन सौ कर दिया है।"

प्रेम को यह मालूम नहीं था। कारण यह था कि कई दिन से वह

निश्चिन्त हो उसके पास बैठी ही नहीं थी। वह यूनियन के काम में व्यस्त थी। इस पर भी प्रेम को गुलामरसूल की बात का विश्वास नहीं हुआ। उसने कहा, "मुझे तुम्हारे कहने पर विश्वास नहीं रहा।"

"घर जाकर पूछ लीजियेगा।"

प्रेम सन्देह में पड़ गयी। जब मोटर गुलामरसूल के घर पहुंची तो उसने कहा, "प्रेम, खाना यहीं खा लो न।"

प्रेम को भूख लगी थी और रात के ग्यारह बज चुके थे। उसने विचार किया कि अगर खानसामा सो गया होगा, तो रात भर भूखे ही रहना पड़ेगा। वह गुलामरसूल के यहां खाने को तैयार हो गयी। उसने पूछा, "क्या खिलाओगे?"

"इस वक्त तो नान और कबाब ही मिल सकेंगे।"

"तब तो ठीक है।"

गुलामरसूल ने नौकर को शेरांवाला दरवाजे के भीतर खाने के लिये कबाब इत्यादि लाने को भेज दिया।

बिहारीलाल दफ्तर से शीघ्र ही लौट आया था। उसका विचार था कि प्रेम घर पर होगी, परन्तु जब उसे वहां नहीं पाया तो वह अपने बन्नू जाने की स्वयं ही तैयारी करने लगा। उसने नौकर को बुलाया और जाने के लिये अपना सामान बंधवाने लगा। एक सूटकेस में अपने पहनने के कपड़े रखवा लिये और बिस्तर बांधकर तैयार कर लिया। एक अटेची-केस में दूसरा आवश्यक सामान रख लिया। इस समय तक सांझ हो गयी। प्रेम अभी भी नहीं आई थी। बिहारीलाल घूमने के लिये माल पर चला आया। बिना प्रयोजन को दो घण्टे घूमकर वह घर की ओर लौटा। उसका विचार था कि प्रेम अब अवश्य आ चुकी होगी और उसके साथ बैठकर खाना खायेगा। परन्तु प्रेम अभी भी नहीं आई थी। डाक्टर खन्ना भी कुछ चिन्तित थे। इस दिन प्रेम बहुत प्रातःकाल से गयी अभी तक नहीं लौटी थी। कुछ प्रतीक्षा के पश्चात डाक्टर ने तो खाना खा लिया, परन्तु बिहारीलाल बरामदे में कुर्सी लगाये प्रतीक्षा

में बैठा रहा। खाना नहीं खाया। वह समझता था कि यह कई महीने तक के लिये प्रेम के साथ बैठकर अन्तिम खाना होगा। प्रातःकाल उसने बन्नू को चला जाना था। वह प्रेम के साथ कई विषयों पर बातें भी करना चाहता था। विशेष रूप में वह उसे गुलामरसूल से सचेत कर देना चाहता था।

प्रेम रात के बारह बजे के कुछ पीछे घर पहुंची। बिहारीलाल को बरामदे में आराम-कुर्सी पर बैठे देख उसे अपने देरी से आने पर अफसोस हुआ। वह मोटर को मोटरखाने में छोड़ आई और पूछने लगी, "आप सोये नहीं?"

"नहीं, तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूं।"

"मेरी, क्यों? मैंने तो आपको कह रखा है कि समय पर न आऊं तो समझ लें कि किसी आवश्यक काम में हूं।"

"परन्तु आज तुम प्रातःकाल से ही गायब थीं। डाक्टर साहब भी चिन्ता कर रहे थे।"

इस समय दोनों गोल कमरे में चले आये थे। बिहारीलाल ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा, "मुझे प्रातःकाल बन्नू जाना है।"

"क्यों?"

"दफ्तर के काम से। वहां कई महीने रहना होगा।"

"ओह!" प्रेम गम्भीर विचार में पड़ गयी। जब वह आई थी तो उसका मुख प्रसन्नता से प्रफुल्लित था। बिहारीलाल के लाहौर से बाहर जाने की बात सुन वह कुछ सहम गयी।

बिहारीलाल खाने के कमरे में चला गया। वह भूख से व्याकुल हो रहा था। प्रेम उसके पीछे पीछे वहां पहुंच गयी। मेज़ पर दोनों के लिये खाना लगा था। वह अपने खाने के सामने बैठकर बोला, "आओ प्रेम, खा लो। फिर न जाने कब इकट्ठे खाने का अवसर मिलेगा।"

"मैं तो खा चुकी हूं।"

"कहां?"

"गुलामरसूल के घर। वहां शेरांवाला दरवाज़े में एक बहुत बढ़िया कबाब बनाता है। बहुत स्वादिष्ट थे।"

"वह तो गोमांस के होंगे।"

"आपको इसके खाने में आपत्ति है?"

बिहारीलाल ने उत्तर नहीं दिया। उसने खाना आरम्भ करते हुए कहा, "कुछ तो खा लो, प्रेम।"

प्रेम बिना उत्तर दिये खाने में देखने लगी कि क्या क्या बना है। बिहारीलाल ने कहना जारी रखा, "प्रेम, मेरे साथ बन्नू चल सकोगी?"

"मैं?" प्रेम ने अचम्भे में पूछा।

"हां, तुम। कई महीने तक वहां रहना होगा और तुम्हारे बिना चित्त उदास हो जायेगा।"

"मगर यहां तो कारखानों में परसों हड़ताल होने वाली है। यदि मैं इस समय चली गयी तो पार्टी के सब लोग यही कहेंगे कि आग लगाकर भाग गयी है।"

हड़ताल का नाम सुन बिहारीलाल के हाथ से ग्रास नीचे गिर गया और वह अवाक् मुख प्रेम का मुख देखता रह गया। प्रेम बिहारीलाल की ओर नहीं देख रही थी। वह आंखें नीची किये बताती गयी, "सेठ धन्नाराम के लड़के बा० रामलाल ने कल वर्कशाप से पचास आदमियों को निकाल दिया है। इस पर मजदूरों की यूनियन ने यह निर्णय किया है कि सोमवार दोपहर से सब कारखानों में हड़ताल कर दी जाय।"

"मगर यह तो कानून और न्याय दोनों के विरुद्ध होगा। हड़ताल करने से पूर्व मालिकों को नोटिस और हड़ताल करने के कारण बताने चाहियें। शायद वे उनको दूर कर दें?"

"इसकी आशा नहीं और यदि नोटिस देकर हड़ताल करनी हो तो हड़ताल के व्यर्थ होने में संशय ही नहीं रह जाता। नोटिस के दिनों में मालिक अपना प्रबन्ध कर लेंगे। हड़ताल का प्रभाव तो इसके एकाएक करने में ही है।"

"परन्तु कानून तो यही है।"

"कानून तो पूंजीपतियों के हक में होगा ही। हमें तो दोनों का विरोध करना है। और फिर हमारा मुख्य प्रयोजन तो मज़दूरों में मालिकों के प्रति घृणा उत्पन्न करना है। हमारा आशय यह है कि मालिक क्रोध में आजावें और कोई ऐसी हरकत कर बैठें कि केवल मज़दूर ही नहीं प्रत्युत नगर भर के विचारशील लोग भी इनके विरोधी हो जायें। क्रांति का यही मार्ग है। लोगों के मनोद्गारों को भड़काना अत्यावश्यक है।"

बिहारीलाल बहुत देर तक चिन्ताग्रस्त रहा। पश्चात् बिना खाये उठ खड़ा हुआ। प्रेम भी आंखें नीची किये चुपचाप बैठी थी। बिहारीलाल को बिना खाये उठता देख पूछने लगी, "तो और नहीं खाइयेगा?"

"मैं समझता हूं कि पेटभर न खाना ही ठीक होगा। मुझे बहुत कुछ विचार करना है।"

"भूखे नींद भी कैसे आयेगी?"

"नींद के लिये अवसर ही कहां है? काम इतना है कि रात भर का समय भी काफी नहीं है।"

"क्या मैं इसमें सहायता कर सकती हूँ?"

"भरे हुए पेट वाला व्यक्ति खाली पेट वाले की भांति सोच नहीं सकता।"

"आप परीक्षा तो कीजिये।"

"अच्छी बात, चली आओ।"

दोनों सोने के कमरे में चले गये। वहां बिहारीलाल का सफर के लिये सामान बंधा देख, उसे विश्वास होगया कि सत्य ही वह जा रहा है। एक क्षण के लिये उसके पूर्ण शरीर में कंपकपी हो उठी। उसने अपने आपको काबू में कर कहा, "तो आप अवश्य जाइयेगा?"

"हां, क्यों?"

"मैं इस हड़ताल के अवसर पर आपको अपने पास चाहती थी।"

"परन्तु मैं तो हड़तालों में विश्वास नहीं रखता।"

प्रेम को गुलामरसूल की बात याद आगयी और उसने पूछा, "आपकी तरक्की होगयी है क्या ?"

"हां, अब तीन सौ मिलते हैं।"

"तभी।"

"तभी क्या। मैं तो हड़तालों के उस समय भी विपरीत था जब मुझे ढाई सौ के स्थान पर केवल एक सौ बीस ही दिया गया था। मैं तो इस हड़ताल में आप लोगों की कुछ भी सहायता नहीं कर सकूंगा।"

"मैं आपको हड़ताल के मामले में घसीटना नहीं चाहती। मैं इसमें विश्वास रखती हूँ और मैं ही इसमें रहूंगी। परन्तु मैं सोचती थी कि क्या जाने किसी समय किसी सहारे की आवश्यकता पड़ जाय। पिता जी को मैं इन बातों में लाना नहीं चाहती। वह वृद्ध हो गये हैं।"

"तो क्या तुम समझती हो कि कभी तुम्हें मेरी आवश्यकता पड़ेगी ? गुलामरसूल के रहते हुए भी ?"

गुलामरसूल का नाम सुन प्रेम के मुख का रङ्ग राख की भांति फीका पड़ गया और उसके शरीर से ठंडा पसीना छूटने लगा। वह मन में सोचती थी कि बिहारीलाल को उस पर पूर्ण सन्देह है।

जब उसने इस प्रश्न का कुछ भी उत्तर नहीं दिया तो बिहारीलाल ने फिर पूछा, "प्रेम, चुप क्यों हो ? क्या मेरे आश्रय की कभी भी तुमको आवश्यकता हो सकती है ? किस बात की तुम्हें आशंका है ? कहो तो मैं इसी समय नौकरी से इस्तीफा लिखकर भेज दूं।"

"न जाने आज मेरे मन को क्या हो रहा है ? मुझे अपना भविष्य कुछ अधिक उज्ज्वल प्रतीत नहीं होता। ऐसी आशंकायें मेरे मन में पहले भी उठती थीं परन्तु आपके समीप होने से मेरे मन का समाधान हो जाता था। आज तो ऐसा प्रतीत हो रहा है कि पांव-तले से ज़मीन खिसक चली है।"

"तो ठीक है मैं बन्नू नहीं जाऊंगा, या तुम भी मेरे साथ चलो। यहां अकेले रहने से तुम्हारा अहित होने की ही सम्भावना है।"

प्रेम ने कुछ सोचकर सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं, आपका इस्तीफा

देना उचित नहीं। इस समय आपके नौकरी छोड़ने का अर्थ यह लिया जायगा कि आप हड़तालियों से सहमत हैं। मैं अपने लिये आपको इस मिथ्या स्थिति में पड़ने नहीं दूंगी।"

"तो तुम मेरे साथ चलो।"

"मैं हड़तालियों को छोड़ नहीं सकती।"

"हड़तालियों को या गुलामरसूल को?"

यह एक स्पष्ट लांच्छन था। प्रेम यद्यपि मन में डर रही थी, परन्तु अपने आपको ठीक और चरित्रवान सिद्ध करने के लिये कुछ क्रोध का भाव प्रकट कर बोली, "इसका क्या अर्थ है, मैं नहीं समझी?"

बिहारीलाल के मन में गुलामरसूल के प्रति विष भर रहा था। वह मन से तो चाहता था कि उसको प्रेम के सम्मुख नीच, पतित और मूर्ख सिद्ध कर दे, परन्तु वह अब केवल कुछ घण्टों के लिये लाहौर में था। प्रातः आठ बजे की गाड़ी से उसे चला जाना था। अतएव वह प्रेम से लड़कर नहीं जाना चाहता था। उसने बात बदल दी। बोला, "मेरे कहने का अर्थ तो यह है कि यह हड़तालों का झगड़ा उसी का शुरू किया हुआ है। इस समय तुम्हारा मेरे साथ चलना उसे अकेला इस झंझट में छोड़ देना होगा, जो तुम पसन्द नहीं करोगी।"

बात इस प्रकार सुगमता से टलती देख प्रेम ने सुख का सांस लिया और कहा, "बात तो आप ठीक कहते हैं। मैं गुलामरसूल को इस मामले में अकेले छोड़ जाना पसन्द नहीं करती। विशेष रूप में जब मैं हड़ताल करना मजदूरों के हित की बात समझती हूँ। मैं गुलामरसूल को केवल एक हथियार समझती हूँ। यथार्थ में राय तो मेरी ही चल रही है। क्रांति पैदा करने के लिये प्रायः विद्वान और बुद्धिमान ऐसे उजड्ड लोगों का प्रयोग करते रहे हैं। चाणक्य ने भी अपनी योजनाओं को चलाने के लिये चन्द्रगुप्त को अपना हथियार बनाया था। कृष्ण ने पाण्डवों का आश्रय लेकर महाभारत का युद्ध करवा दिया था।"

बिहारीलाल ने भी बात को टलते देख कह दिया, "तो फिर मैं ही

यहां रह जाता हूं। मेरे जीवन की आहुति भी आपकी योजनाओं को सफल बनाने के लिये दी जा सकती है। इस मामले में गुलामरसूल से पीछे क्यों रह जाऊं ?"

प्रेम इस जीवन की आहुति की बात सुन कांप उठी। बोली, "नहीं, आप इसमें विश्वास नहीं करते, इस कारण आपको हानि नहीं पहुँचनी चाहिये।"

"विश्वास-अविश्वास की बात छोड़ो। एक महान सत्य है और वह है मेरा तुमसे प्रेम। इसमें आहुति देने के लिये जीवन तो एक बहुत छोटी वस्तु है।"

प्रेम की आंखें लज्जा से झुक गयीं। वह कहने लगी, "नहीं, नहीं! मैं नहीं चाहती। यों ही कभी मनुष्य के मन में दुर्बलता आजाती है। मैं भी यही अनुभव कर रही थी। अब मेरा मन फिर दृढ़ है। आप निश्चिन्त रहें। हां एक बात का प्रण करें कि यदि मुझ पर कुछ भीड़ पड़ी तो सूचना पाते ही तुरन्त चले आना और मेरा हाथ पकड़ लेना।"

बिहारीलाल ने विषय को बदल दिया और कहा, "मैंने विमला को आज लिख दिया है।"

"क्या ?"

"यह कि मेरा उससे अब कुछ सम्बन्ध नहीं है और उसे मेरा घर छोड़ देना चाहिये।"

"आपने ठीक नहीं किया। वह कहां जायेगी ?"

"गुलामरसूल के पास और मैंने उसे लिखा है कि घर की ताली यहां भेज दे।"

"आपका व्यवहार निर्दयतापूर्ण है। क्या आपको विश्वास हो गया है कि उसका सम्बन्ध गुलामरसूल से है ?"

"तुमको गुलामरसूल से पूछ लेना चाहिये था। दिन भर तो तुम उसके साथ घूमती रही हो।"

"मेरा ऐसा पूछना अनधिकार चेष्टा होती। आपने विमला से क्यों

नहीं पूछा ? केवलमात्र उस चिट्ठी से तो कुछ परिणाम नहीं निकल सकता।"

प्रेम, विमला को प्रत्यक्ष रख, स्त्रियों की स्वतन्त्रता पर अपने विचार बिहारीलाल को बताने को तैयार हो गयी। उसने अपना कहना जारी रखा, "देखिये, आपका विवाह विमला से हो चुका था, परन्तु मुझमे प्रेम हो जाने पर आपका मुझसे सम्बन्ध बन गया। विमला को इससे कितना दुख हुआ होगा, मैं नहीं जानती। हां इतना जानती हूँ कि वह आपसे रुष्ट नहीं हुई। सदैव आपको मान की दृष्टि से देखती रही है। परन्तु आपके पास अभी उसके गुलामरसूल से सम्बन्ध का कोई पक्का प्रमाण भी नहीं। केवल सन्देहमात्र पर आप उसे घर से निकालने पर तैयार हो गये हैं। यह क्यों ? इसलिये ही न कि आप पुरुष हैं और वह स्त्री'''।"

बिहारीलाल ने बात बीच में ही काटकर कहा, "प्रेम, तुम नहीं समझती। मैंने उसे गुलामरसूल से सम्बन्ध तोड़ने को नहीं कहा। मैंने तो केवल यह कहा है कि मैं चोरी चोरी किये व्यवहार को पसन्द नहीं करता। मैं ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर देना चाहता हूं कि उसका व्यवहार चोरी न रह सके। इस उद्देश्य से मैंने खद्दर-भण्डार के मैनेजर को भी लिख दिया है कि उनकी दूकान पर काम करने वाली स्त्री अच्छे चरित्र की नहीं है।"

"और अभी तक आपके पास उसके चरित्र खराब होने का प्रमाण नहीं है।"

"मुझे उसके गुलामरसूल से सम्बन्ध कर लेने का विश्वास होगया है।"

इसके पश्चात कहने को कुछ नहीं था। प्रेम ने पूछा, "आप क्या २ सामान ले जा रहे हैं ? कोई आवश्यक वस्तु भूल तो नहीं रहे।"

"मैं तो समझता हूँ नहीं। फिर भी तुम देख सकती हो।"

प्रेम ने सूटकेस खोलकर सब सामान देखा और जो कुछ कमी उसमें रह गयी थी उसे ठीक कर दिया।

[३]

सोमवार के दिन जब विमला भण्डार में पहुंची तो मैनेजर ने उसे

बुला भेजा। मैनेजर का कमरा दूकान के पिछले हिस्से में दूकान से सर्वथा पृथक था। विमला जब उपस्थित हुई तो मैनेजर ने बैठने को कहा। वह बैठ गयी। मैनेजर ने बिहारीलाल की चिट्ठी निकालकर विमला को दे दी और कहा, "इसे पढ़ो।"

विमला चिट्ठी पढ़कर सन्न रह गयी। वह बिहारीलाल से यह आशा नहीं रखती थी। जहां तक तो उनका परस्पर का सम्बन्ध था टूट सकता था। परन्तु वह समझती थी कि उसे सर्वसाधारण के सम्मुख बदनाम करने का यत्न नहीं किया जायगा। विमला ने अपने पत्र में लिखा था कि यदि न्याय के लिये नहीं तो लोक-लाज के लिये ही उसे घर से न निकाला जाय, परन्तु इस चिट्ठी से उसे यह विश्वास होगया कि उसका आशय तो उसे लोगों के सम्मुख लज्जित करने का है। इस अवस्था में उसे घर में रहने की स्वीकृति मिलने की आशा नहीं रही। वह अपने हिन्दू संस्कारों के कारण अपने पति के प्रति श्रद्धा और भक्ति का भाव रखती थी, परन्तु उसका यह काम तो उसे बदला लेने के विचार से ओत-प्रोत प्रतीत हुआ। बदला लेने के विचार से किया गया काम मनुष्य के हृदय की क्षुद्रता ही प्रकट करता है। वह उसे इतने ओछे दिल का नहीं समझती थी। इस पर उसे विचार आया कि शायद यह आग प्रेम की लगाई हुई हो। इस विचार के आते ही उसके मन में विद्रोह उत्पन्न हो गया। क्रोध से उसकी गालें लाल हो उठीं और उसके मन में प्रतिकार की भावना जाग उठी। परन्तु शीघ्र ही मन में यह भाव लाने पर उसे लज्जा और शोक होने लगा। वह सोचती थी कि बिहारीलाल उसका पति है। धर्म और भगवान के सम्मुख उसने बिहारीलाल का आदर और मान करने का वचन दिया हुआ है। उसको बदनाम करने का विचार करना भी उसके लिये पाप है। हृदय के आवेश पर इस धर्म के प्रतिबन्ध ने उसे अधीर कर दिया और उसकी आंखें भर आईं।

मैनेजर विमला के मुख पर उतार-चढ़ाव देख रहा था। जल्दी २ मुख पर बदलती हुई रेखाओं से उसके मन की अवस्था जानने का यत्न

कर रहा था। इससे किसी परिणाम पर न पहुँच उसने पूछा, "आपको इस विषय में कुछ कहना है?"

"केवल यह कि मैं निर्दोष हूँ।"

"तो आप इस चिट्ठी में लिखी बात को झूठ कहती हैं?"

"यह बात भ्रम में लिखी गयी है। इसमें सच्चाई कुछ भी नहीं है।"

"तो फिर आप रो क्यों रही हैं?"

"यह आप न पूछिये। इसका मेरे निर्दोष होने से कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं अपने निर्दोष होने का कोई प्रमाण देना नहीं चाहती। सच्चाई को जानना आपका काम है। जांच करिये और यदि आप इस विषय में मुझे कुछ आज्ञा देना चाहते हैं तो बताइये। मैं सुनने को तैयार हूं।"

"अच्छी बात। मैं जांच करूंगा और उसका परिणाम आपको बताऊंगा। अभी मैं इस विषय में कुछ कहना नहीं चाहता। इस पत्र में एक बात यह भी लिखी है कि सिद्धान्त-रूप से स्त्रियां दूकानों पर माल बेचने के लिये नहीं रखनी चाहियें। हमारी प्रबन्धक-समिति ने इस बात पर विचार किया है और उनका यह मत है कि उन दूकानों पर जहां स्त्रियां और पुरुष दोनों माल खरीदने आते हैं वहां स्त्री माल बेचने वाली उतनी ही हानिकर हो सकती है जितना कि एक पुरुष माल बेचने वाला। यदि स्त्रियां पुरुषों के लिये आकर्षण हो सकती हैं तो पुरुष भी स्त्रियों के लिये आकर्षण हैं। दोनों को तो हम दूकान से हटा नहीं सकते। ऐसी अवस्था में हमने जो किया है वह सर्वथा युक्तिसंगत है। अर्थात् स्त्रियों के पास माल बेचने के लिये स्त्री माल बेचने वाली और पुरुषों के पास पुरुष।

"रहा आपके चरित्र का प्रश्न। इस पर केवलमात्र किसी के लिख देने से कोई बात सिद्ध नहीं हो सकती। मैं अपनी जांच का परिणाम आपको बताऊंगा। अब आप काम पर जा सकती हैं।"

विमला को मैनेजर की बात से सन्तोष हुआ, परन्तु अपने और बिहारीलाल के विषय में उसके मन में भिन्न २ प्रकार के विचार उठते

रहे। उसने देख लिया था कि भण्डार के मैनेजर को और उसे घर से निकल जाने के दोनों पत्र एक ही तिथि के लिखे हुए थे। वह आशा कर रही थी कि उसका पत्र रविवार सायं तक उसे मिल गया होगा और उस पत्र से सब सन्देह दूर हो गया होगा। वह समझ रही थी कि रात को उसे अवश्य अपने पत्र का उत्तर मिल जायेगा। इस आशा में वह दिन भर काम करती रही।

घर जाते हुए मार्ग में फिर उसका मन शंकाओं से नीचे दबने लगा। वह बिहारीलाल से चिट्ठी पाने की आशा में लम्बे २ कदम उठाती हुई घर पहुंची। दरवाज़ा खोल उसने चिट्ठी ढूढ़नी आरम्भ की। ड्योढ़ी का कोना २ ढूंढ़ा। परन्तु वहां कोई चिट्ठी नहीं थी। दिन भर की बंधी हुई आशा टूट गई। उसे विश्वास हो गया कि इस व्यवहार के नीचे प्रेम का हाथ है। तो उसे अब मकान छोड़ना पड़ेगा। पिता जी को उनके झगड़े का पता लगे बिना नहीं रहेगा। गली-मोहल्ले में उस पर अथवा उसके पति पर लोग थू-थू करेंगे। कोई उसे बदकार कहेंगे, कोई उसके पति को। घोर अपमान होगा। इस सब बदनामी का चिन्तन कर उसका दिल बुझे दीपक की भांति हो गया। केवल सुलगते हुए अंगारे का धुंआ रह गया और वह दिमाग़ को चढ़ने लगा।

सीढ़ियां चढ़ते समय उसका सिर चक्कर खा रहा था। टांगें लड़-खड़ा रही थीं और हृदय एकदम शिथिल होता जाता था। कठिनाई से वह अपनी खाट पर पहुंच सकी थी। वहां जाते ही वह लेट गयी।

यह वेहोशी थी अथवा विचारों में लीन होना, कहना कठिन है। यह स्पष्ट था कि सुधा का नीचे का दरवाज़ा खटखटाना उसे सुनाई नहीं दे रहा था। सुधा ने उसे आते देखा था और वह उससे मिलने के लिये आई थी। उसके आते २ ही विमला दरवाज़ा बन्द कर ऊपर चढ़ गयी थी। सुधा ने दरवाज़ा खटखटाया। कई बार और बहुत जोर २ से। परन्तु कुछ परिणाम नहीं निकला।

सुधा के मन में एक भयङ्कर आशङ्का उठी। वह मन में सोच रही

थी कि कहीं वह आत्महत्या न कर ले। वह भागी २ अपने मकान की छत पर चढ़ गयी और वहां से कूद विमला के मकान पर जा पहुंची। वहां से सीढ़ियों के ऊपर के दरवाजे को खटखटाने लगी। यह युक्ति भी असफल रही।

वह अपने घर गयी और अपने पति को साथ ले आई। दोनों ने मिलकर दरवाजे को उखाड़ दिया और नीचे उतर आये। कमरे में बिलकुल अंधेरा था। सुधा ने बिजली का बटन दबाया। प्रकाश में उन्होंने देखा कि विमला खाट पर लेटी हुई छत की ओर टकटकी लगाये देख रही है। वह निश्चल पड़ी थी। सुधा ने उसे ज़ोर से हिलाते हुए पुकारा, "विमला बहिन! विमला!! विमला!!!"

विमला उठकर खाट पर बैठ गयी और सुधा और मोहनलाल का मुख देखने लगी। ऐसा प्रतीत होता था कि वह उन्हें पहिचानने का यत्न कर रही है। सुधा समझी कि उसका मन डोल गया है। उसने फिर उसे पुकारा। एकाएक, मानों उसे चेतना हो आई हो, उसके ओंठ फड़कने लगे और फिर बड़े यत्न से उसने कहा, "आप?"

"हां बहिन, बोलती क्यों नहीं?" सुधा ने पूछा।

विमला ने अपने सिर को दोनों हाथों में पकड़ लिया और आंखें मूंद लीं। सुधा ने इसे अच्छा लक्षण समझा। उसने कहा, "हमने बहुत दरवाज़ा खटखटाया, परन्तु तुमने जवाब ही नहीं दिया। क्या हुआ है? तबियत तो ठीक है?"

विमला ने अब आंखें खोलीं। वह खड़ी होने लगी तो उसे चक्कर आगया और वह फिर खाट पर बैठ गयी। अब उसने कहा, "भाई साहब, आप कुर्सी ले लें न। अब मैं ठीक हूं। क्या मैं बेहोश होगयी थी?"

सुधा ने उसे ढाड़स बंधाते हुए कहा, "घबराओ नहीं। सुबह से कुछ खाया है या नहीं?"

"मुझे भूख नहीं है।"

सुधा ने आंख से मोहनलाल को संकेत किया और वह अपने घर से

एक गिलास में गरम २ दूध ले आया। विमला ने बहुत कहा कि इच्छा नहीं है, परन्तु सुधा और मोहनलाल के आग्रह पर उसे पीना ही पड़ा। अब वह सर्वथा सचेत होगयी थी। विमला को, जो भविष्य काला और अन्धकारमय प्रतीत होने लगा था, अब फिर उसमें क्षितिज के समीप स्वर्ण-रेखायें दिखाई देने लगीं। वह उठकर खाट पर बैठ गयी और बोली, "सुधा बहिन, आपको बहुत कष्ट देती हूँ। इससे बहुत लज्जित हूं।"

"वाह! इसमें हमें कष्ट नहीं होता। हां, तुम्हें देख दुःख होता है। मुझे अचम्भा होता है कि तुमने इसको इतना मन पर क्यों लगाया है? बहिन, हम हिन्दू हैं और अपने प्रत्येक कष्ट को अपने कर्मों का फल ही मानते हैं। कुछ तो इसी जन्म के कर्मों के फल होते हैं और कुछ पूर्व जन्म के। जब हम ऐसा मानते हैं तो क्या यह नहीं है कि प्रत्येक कष्ट हमारे सिर पर पापों की लदी गठरी को हलका कर रहा है। कष्ट तो शरीर को भोगने पड़ते हैं, परन्तु बोझा हलका होता है आत्मा का। प्रत्येक कष्ट को यदि हम प्रसन्नतापूर्वक सहन करें और अपने मन में मैल न आने देवें तो निश्चय हम अपने भविष्य को उज्ज्वल और सुखपूर्ण बनाते हैं।"

विमला ने इतने उत्साह की बात कभी सोची ही नहीं थी। कष्ट पूर्व जन्म के पापों का फल है। कष्ट भोगने का अर्थ वही है जैसे एक ऋणी अपनी पाई २ जमा कर ऋण चुकाता है और ऋण से मुक्त होने के समीप और समीप होता जाता है। जैसे ऋण के कम होने से ऋणी को आनन्द अनुभव करना चाहिये, वैसे ही कष्ट सहन करने से पाप-फल के कम होने का आनन्द क्यों नहीं होता? इस विचार से विमला के मुख पर अलौकिक दीप्ति आ विराजमान हुई। वह बोली, "भैया, धन्यवाद। मैं पथ भूल चली थी। आपने मार्ग बता दिया। मुझे मार्ग दिखाई नहीं देता था। अब दीखने लगा है। चुपचाप कष्ट सहन करने से ही आनन्द की प्राप्ति हो सकती है।"

मोहनलाल चुप था। सुधा ने पूछा, "तुम्हारे पत्र का उत्तर आया है?"

"नहीं। न आने की आशा है। प्रतीत होता है कि उन्हें मेरे कथन पर विश्वास नहीं आया। मैंने लिखा था कि न्याय के लिये नहीं तो लोकलाज के लिये ही मुझे घर में रहने दिया जाय, परन्तु उन्होंने तो हमारे भण्डार के मैनेजर को चिट्ठी लिख दी है कि मेरा चरित्र ठीक नहीं है और मुझे वहां से निकाल दिया जाय।"

"परन्तु वह तो तुम्हें निकाल नही सकता। तुम्हारी नियुक्ति और निकालना उसके आधीन नहीं है।"

"मुझे इसकी कुछ भी चिन्ता नहीं। मैं तो यह सोचती हूं कि अब मकान छोड़ना ही होगा और फिर पिता जी तथा अन्य लोगों के सम्मुख भेद खुल ही जायगा। मैंने उनके आचरण को यत्न से छुपाकर रखा था। अब छुपा नहीं रह सकेगा।"

"तो मकान छोड़ दोगी?"

"और क्या धक्के खाकर निकलना होगा?"

"परन्तु······।"

"मैं समझती हूँ कि अब छोड़ ही दूं तो ठीक है। परन्तु, प्रश्न तो यह है कि कहां जाऊं?"

"कितनी जगह चाहिये तुम्हें?" सुधा ने पूछा।

"एक कमरा और रसोईघर।"

"इतना तो हम अपने घर में भी दे सकते हैं।"

"आपके घर में? परन्तु······।"

"क्यों, क्या है बहिन? मोहनलाल ने पूछा।

"मैं समझती हूँ कि आपको भी अपमानित होना पड़ेगा।"

"अपमानित! क्यों?" सुधा ने पूछा।

"दूषित लोगों के सम्पर्क मे दोष ही लगता है।"

"सम्पर्क तो हमारा पहले ही से है।"

"तो इसे और घना करने की क्या आवश्यकता है?"

"यदि सम्बन्ध घना नहीं करना था तो भैया क्यों कहती हो? क्या

भाई-बहिन के सम्बन्ध से कोई और घना सम्बन्ध हो सकता है ?"

विमला चुप रही। इस पर सुधा ने कहा, "बहिन, या तो घर छोड़ो ही नहीं। जो होगा हम निपट लेंगे। और यदि मकान छोड़ना ही है तो हम तुम्हें अपने घर में रखेंगे।"

इस पर मोहनलाल ने कहा, "तुम कहीं और जगह पर मकान किराये पर जाकर ले लो हो नहीं सकता। माता जी के साथ तुम रहोगी। उनके साथ ही तुम्हारा खाना बनेगा। हां, यदि तुमने अपने पिता जी के घर जाकर रहना हो तो बात दूसरी है। इस पर भी मैं एक बात कहता हूं कि यदि तुम घर न छोड़ो और यहीं पर रहो तो मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि तुमसे कोई झगड़ा करने वाला नहीं है। मैं सब निपट लूंगा।"

"परन्तु अब इतना कुछ हो जाने के पश्चात मेरा चित्त उनके मकान में रहने को और वह भी झगड़ा कर ठीक नहीं समझता। जब तक वह स्वयं आकर अपनी भूल स्वीकार नहीं कर लेते और मुझे मकान में रहने को नहीं कहते मैं यहां रहना अपमान समझती हूं।"

इस पर मोहनलाल ने कहा, "यद्यपि मुझे तुम्हारे विचार ठीक नहीं जंचते, इस पर भी मैं उन्हें बदलने को नहीं कहता। हां, तुम्हें रहना हमारे घर पर ही होगा।"

अगले दिन विमला केवल वह सामान लेकर, जो उसने भण्डार के वेतन से बनवाया था, सुधा के घर रहने को चली गयी। अपने स्वयं पैदा किये रुपये के अतिरिक्त बिहारीलाल की कमाई के लगभग दो सौ रुपये उसके पास थे। वह उसने मनीआर्डर कर उसे भेज दिया। मकान की चाबी और एक चिट्ठी रजिस्टर्ड पार्सल में भेज दी। चिट्ठी में लिखा था :—

श्रीमान् जी,

मैंने अपनी निर्दोषता प्रकट करने के लिये आपको एक पत्र लिखा था। परन्तु आपने तो मैनेजर खद्दर-भण्डार को चिट्ठी लिख मुझे अपमानित करने का पूरा यत्न किया है। ऐसी अवस्था में भी मैं यह

आशा करती रही थी कि शायद आप मेरे पत्र का उत्तर देंगे। दो दिन की प्रतीक्षा से यह आशा टूट गयी है। आप मुझे निर्दोष नहीं मानते और मुझे मानयुक्त जीवन व्यतीत करने भी नहीं देना चाहते। इससे मैं इस निर्णय पर पहुँची हूँ कि आपसे झगड़ा कर आपके मकान में रहना उचित नहीं। जब आपने छोड़ दिया है तो भगवान ने तो नहीं छोड़ा। मेरा चरित्र मेरी आत्मा की वस्तु है। इस पर आपके मुझे त्याग देने का कुछ भी प्रभाव नहीं हो सकता। चरित्र की पवित्रता किसी दूसरे के लिये नहीं रखी जाती। यह केवल अपने लाभ की वस्तु है। इसलिये आपको इसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। हां, आपने मुझे त्याग दिया है यह आपके आधीन है। मैं बलपूर्वक आपसे सम्बन्ध नहीं रख सकती। मैं आपका घर छोड़ रही हूं। जो कुछ आपके दिये पदार्थों और धन का उपयोग किया है उसके लिये धन्यवाद। जो उपयोग नहीं हो उका वह आपके मकान में है। कुछ रुपया आपका मेरे पास बचा था। वह मैंने मनीआर्डर द्वारा आपको भेज दिया है। वे सब भूषण, जो मेरे पास आपके दिये थे, मैंने बैंक में सुरक्षित रखवा दिये हैं और उसके सन्दूक की चाबी और रसीद आपको कल भेज दूंगी। अभी बैंक से आई नहीं है।

मेरे मन में आपके प्रति रोष नहीं है। आप मेरे पूज्य थे, हैं और रहेंगे।

आपकी दासी, विमला।

[४]

सोमवार के दिन दो बजे के लगभग रामलाल और सेठ धन्नाराम को सूचना मिली कि उनके कारखानों में हड़ताल हो गयी है। सेठ साहब अपने घर पर थे और रामलाल फार्मास्युटिकल कम्पनी के दफ्तर में। दोनों अपनी अपनी मोटर पर सवार होकर मुगलपुरा में पहुंचे। पुत्र पहले पहुंचा था और पिता पीछे। रामलाल ने देखा कि कुछ लोग कारखानों के बाहर धरना दे रहे हैं और कारखाने सुनसान पड़े हैं। रामलाल दफ्तर में पहुंचा। वहां मैनेजर मिस्टर कपिल कुछ क्लर्कों के साथ गम्भीरता-पूर्वक बातें कर रहे थे। रामलाल को देखते ही उनकी सभा भंग हुई

और वह नमस्ते कर रामलाल के सम्मुख आ खड़े हुए। रामलाल के हड़ताल के विषय में पूछने पर मैनेजर ने उत्तर दिया, "हजूर, मुझे कुछ मालूम नहीं। इन लोगों ने नोटिस इत्यादि तो दिया नहीं।"

"आप इनकी यूनियन के मेम्बर हैं या नहीं?"

"नहीं साहब, बिलकुल नहीं।"

"क्यों? आप मेम्बर क्यों नहीं बने?"

मैनेजर इस प्रश्न से बहुत ही हैरान हुआ। विस्मय में पूछने लगा, "मैं क्यों मेम्बर बनता, साहब? मैं तो मजदूर नहीं हूं।"

"आप मज़दूर तो हैं ही। अन्तर केवल इतना है कि आप दिमाग़ी महनत करते हैं और ये लोग शारीरिक। आपका वेतन उनसे कुछ अधिक है। बस यही तो। देखो मिस्टर कपिल, आपके दिमाग़ में झूटी मर्यादा और आन का विचार समा रहा है। यथार्थ में इस यूनियन में कारखानों के प्रत्येक मुलाज़िम को होना चाहिये था। आप जैसे पढ़े-लिखे लोग इसमें होते तो शायद यह हड़ताल न हो सकती। कम से कम इस प्रकार बिना नोटिस और बिना कारण बताये न होती। आप इन लोगों के स्वाभाविक नेता हैं और आपको इनका नेतृत्व कर इन्हें उचित मार्ग पर रखना चाहिये।"

मैनेजर यूनियन से पृथक होने के कारण प्रशंसा किये जाने की आशा रखता था। उलटा डांटा जाने पर भौंचक्का हो रामलाल का मुख देखता रह गया। रामलाल ने अपनी बात को जारी रखा, "अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा। आप जाइये। इन लोगों से मिलिये और पता निकालिये कि ये लोग क्या चाहते हैं?"

मिस्टर कपिल सिर नीचा किये दफ्तर से बाहर निकल कारखानों के बाहर खुले मैदान की ओर चल पड़े। यहां मजदूर एक बृहत सभा कर रहे थे।

इस समय सेठ साहब वहां पहुंचे। वह रामलाल को एक पृथक कमरे में ले गये और दरवाजा बन्द करवा कहने लगे, "क्यों जी बाबू

रामलाल, देखा है न मज़दूरों के वेतन बढ़ाने का मज़ा। मैंने कहा न था कि ये लोग बहुत कृतघ्न होते हैं।"

"पिता जी, मेरी योजनायें तो अभी चल ही नहीं सकीं। जब वे चलेंगी और उनसे प्रत्येक को लाभ पहुंचने लगेगा तब मुझे पूर्ण आशा है कि ये लोग आपके गुणानुवाद गायेंगे। आपका नाम संसार भर में विख्यात हो जायेगा।"

"मेरी ख्याति की तुम चिन्ता न करो, बेटा। मैं अपने लिये नाम पैदा करने का इससे अधिक सुगम उपाय जानता हूं। मान-प्रतिष्ठा के लिये मुझे इन मूर्खों की खुशामद की आवश्यकता नहीं है। जानते हो यह हड़ताल क्यों हुई है? मैं इसका कारण जानता हूँ और उसका समूल नाश कर देना चाहता हूँ।"

"क्या कारण है, पिता जी?"

"तुम्हारे मित्र और विश्वासपात्र कार्यकर्ता मिस्टर बिहारीलाल की रखैल प्रेम और उसका दूसरा प्रेमी गुलामरसूल ही इसमें कारण हैं। मुझे इनकी कारगुजारी की सब खबर कई दिन से आ रही थी और मुझे इस परिस्थिति की आशा हो रही थी।"

"तो आपने उस समय इस परिस्थिति के घटने को रोका क्यों नहीं? यह हड़ताल तो बहुत हानिकर वस्तु है, पिता जी।"

"रोकने में मुझे लाभ नहीं था। इस हड़ताल से मुझे भारी लाभ की आशा है।"

"हड़ताल से लाभ?"

"हां, तुम नहीं समझ सकते। तुमने अर्थ-शास्त्र पुस्तकों में पढ़ा है। इसके प्रयोग को नहीं समझते। अभी बच्चे ही हो न।"

"परन्तु पिता जी, मजदूर बिचारे भूखों मर जायेंगे।"

"मैंने उन्हें हड़ताल करने को नहीं कहा। मेरे कारखानों के फाटक खुले हैं। वे आ सकते हैं।"

"परन्तु पिता जी, वे मूर्ख हैं। अपने हित-अहित की बात नहीं

सोचते। हम पढ़े-लिखे लोगों का काम है कि उनको ठीक मार्ग पर रखें।"

"प्रेम और गुलामरसूल तुमसे कम पढ़े-लिखे नहीं हैं।"

"फिर भी पिता जी, हमारा धर्म है कि हज़ारों लोग जो हमारे आश्रय पल रहे हैं उनकी उन्नति और सुरक्षा का यत्न करें।"

"मैं उनको वेतन देता हूँ तब वे मेरा काम करते हैं। कोई फोकट में तो काम करता नहीं।"

"मजदूरी तो हम बहुत कम देते हैं।"

"दूसरे लोगों के कारखानों से अधिक देता हूँ। सब लोग इस बात को मानते हैं।"

"इस पर भी यह कम है। तभी तो हमें वर्ष भर में लाखों की आय हो जाती है।"

"मैंने अपना धन, मन और बुद्धि इसमें लगाई है। इसी से तो लाभ होता है।"

"क्या आपकी महनत इतने गुणा अधिक है कि हमें चालीस-पचास लाख रुपये वर्ष की आय हो जाये? देखिये, अपना एक मैनेजर चतुर्भुज है। वह इन्जीनियर है। विलायत से पास कर आया है। दस वर्ष से हमारी क्लाथ मिलों को चला रहा है। आप उसे पन्द्रह सौ रुपया मासिक देते हैं। उसके मुकाबले में आप हैं। दिन में केवल एक आध घण्टा काम करते हैं। आपकी विशेष योग्यता भी कुछ नहीं। आपने किसी विषय में विशेषज्ञता भी प्राप्त नहीं की। आपको पिछले वर्ष पैंतालीस लाख के लगभग लाभ हुआ है। अभिप्राय यह कि आपकी आय उससे अढ़ाई सौ गुणा अधिक है।"

"मैंने सरमाया जो लगाया है।"

"वह भी तो आपको इन्हीं कारखानों से मिला है।"

"उस सरमाये के डूब जाने का भय भी तो है।"

"डूब क्यों जायेगा? इतने भारी २ वेतन लेने वाले बुद्धिमान जब काम कर रहे हैं तो सरमाया तो डूबना नहीं चाहिये।"

"तुम इन बातों को नहीं समझ सकते। तुम्हें अभी अनुभव बहुत कम है।"

"जो कुछ भी हो। मैंने मिस्टर कपिल को हड़तालियों के पास भेजा है कि वह पता करें कि ये लोग चाहते क्या हैं?"

"तुमने भारी भूल की है।"

"क्यों पिता जी?"

"ये लोग समझेंगे कि हम उनकी खुशामद कर रहे हैं। परिणाम यह होगा कि उनकी मांगें असीम हो जायेंगी।"

"हमें कुछ तो उनमें भी बुद्धि का होना मानना ही पड़ेगा।"

"अच्छी बात है देख लो।"

मिस्टर कपिल जब मजदूर-सभा में पहुंचे तो प्रेम व्याख्यान दे रही थी। वह बता रही थी कि किस प्रकार प्रत्येक पदार्थ के बनाने में केवल दो बातों का सम्बन्ध है। एक भूमि, दूसरी मजदूरी। ये सरमाया लगाने वाले, लोगों को झूठी बातें बताकर अथवा साधारण लोगों को एक दूसरे के विपरीत लड़ाकर, भारी लाभ अपने लिये निकाल लेते हैं। भूमि पैदा करने वाले वे नहीं हैं। महनत करने वाले वे नहीं हैं। तो फिर लाखों रुपयों का लाभ वे क्यों निकालते हैं? यथार्थ में इनके सब लाभ को मजदूरों में बंट जाना चाहिये।

प्रेम अपने आशय को बहुत अच्छे ढंग से समझा रही थी। मिस्टर कपिल ने समाजवाद का यह प्रथम पाठ अब सीखा था। वह इस सिद्धान्त की सरलता को देख चकित रह गया। वस्तुओं की पैदावार महनत से होती है और महनत करने वालों का उस पैदावार पर प्रथम अधिकार है, यह बात उसके मन में लगी थी। उसने समीप खड़े एक मजदूर से पूछा, "यह कौन बोल रही है?"

"श्रीमती प्रेमदेवी।"

मैनेजर ने नाम सुना हुआ था। व्याख्यान समाप्त होने पर वह उसके पास पहुंचा और कहने लगा, "मैं फार्मास्युटिकल कम्पनी का मैनेजर हूँ,

और मुझे कम्पनी के डायरेक्टर मिस्टर रामलाल ने भेजा है कि आप लोगों से मालूम करूं कि इस हड़ताल में कारण क्या है और वे लोग क्या चाहते हैं ?"

प्रेम ने कहा, "हम अपनी मांगें आज निश्चय करेंगे।"

"तो आपने बिना मांगों का निश्चय किये हड़ताल कर दी है ?"

"हड़ताल करने का कारण तो है ही। पचास कार्यकर्ता जो निकाल दिये गये हैं।"

मिस्टर कपिल इस प्रकार के ढीले विचारों से विस्मय में पड़ गये। जितना प्रेम की वक्तृता का प्रभाव उनके मन पर हुआ था, वह सब इस प्रकार की बेतुकी बात सुनकर मिट गया। उन्होंने कहा, "प्रेमदेवी जी, आप हजारों लोगों की जानों से खेल रही हैं। क्या यह अच्छा न होता कि आप इन लोगों की मांगों को हड़ताल करने से पूर्व लिख डालतीं और उन्हें मालिकों तक भेज देतीं।"

प्रेम अपनी दुर्बल स्थिति को समझती थी। अतएव उसने तुरन्त कार्यकारिणी की सभा करवाकर मजदूरों की मांगों को लिख डाला। वह चाहती थी कि मांगें हलकी रखी जायें ताकि यदि वे मान ली जायें तो मजदूरों की जीत हो जाय और हड़ताल मान से समाप्त की जा सके। परन्तु गुलामरसूल और उसके प्रभाव के नीचे आये हुए लोगों ने लड़-झगड़कर मांगों को बहुत कड़ा करवा दिया। इनमें निकाले गये पचास आदमियों की पुनः नियुक्ति के अतिरिक्त मज़दूरों को वार्षिक बोनस, शारीरिक हानि अथवा मृत्यु का बीमा, बच्चों के लिये मुफ्त शिक्षा का प्रबन्ध, अस्पताल इत्यादि का खोलना, और सब से अधिक, मजदूरों की एक उपसमिति की नियुक्ति, जो नये भर्ती किये जाने वाले और निकाले जाने वाले कार्यकर्ताओं के विषय में मालिकों को राय दे सके, इत्यादि मांगें थीं।

जब मिस्टर कपिल को इन मांगों की एक लिखित प्रति दी गयी और उन्होंने उसे पढ़ा तो मुख लम्बा किये हुए रामलाल के पास आ पहुँचे।

अधिकार कर लिया। फाटकों के बाहर हड़ताली धरना दे रहे थे। उनसे कोई झगड़ा नहीं करता था। नये कार्यकर्ताओं की नियुक्ति का तो अभी प्रश्न ही नहीं था। पुराने लोगों में से भी यदि कोई आना चाहता तो उनके लिये फाटक खोलने की आज्ञा नहीं थी। प्रत्येक फाटक पर सेठ साहब की ओर से सूचना लगवा दी गयी थी, जिसमें लिखा था :—

कारखाने के मालिकों को हड़ताल से अत्यन्त दुख है। वे नहीं चाहते कि हड़ताल एक क्षण के लिये भी जारी रहे। साथ ही वे किसी को काम करने पर बाध्य भी नहीं कर सकते। महीने के ऊपर केवल पांच दिन काम किया गया है। उन दिनों का वेतन जब भी कोई हड़ताली चाहे दफ्तर से आकर ले सकता है। हम अभी नये नौकर नहीं रखेंगे, क्योंकि हमारी हार्दिक इच्छा है कि पुराने लोग ही काम करें। हां एक बात है कि जब तक सब के सब लोग पूरी संख्या में आकर काम करने को तैयार नहीं होते हम कारखाने नहीं खोल सकते। थोड़े से आदमियों के लिये कारखाने नहीं खुल सकते। इस कारण धरना देने वालों से किसी को भी झगड़ा करने की जरूरत नहीं। दो-चार लोगों के झगड़ा कर भीतर आजाने से भी कारखाना खुल नहीं सकेगा। सब के सब निर्णय कर जब आयेंगे तो काम चालू किया जायगा और हाजिर होने वालों की हाजिरी लगेगी।

यही सूचना छपवाकर मजदूरों की बस्तियों में बंटवा दी गयी थी। इस सूचना का एक प्रभाव तो यह हुआ कि लोगों को विदित हो गया कि हड़ताल लम्बी होगी। इससे लोग घबराये अवश्य, परन्तु प्रेम और उसकी पार्टी के लोगों ने उनका धीरज टूटने नहीं दिया।

इस दिन जब गुलामरसूल मुगलपुरा से लौट रहा था तो उसे विमला की याद आई। उसने विमला को पत्र में लिखा हुआ था कि वह उसे हरे रंग की साड़ी में मंगल के दिन देखकर अत्यन्त प्रसन्न होगा। आज वह उसे वह साड़ी पहने हुए देखने की आशा करता था।

जब प्रेम और वह घर लौट रहे थे तो प्रेम ने पूछा, "आप घर

जाइयेगा या कहीं और ?"

गुलामरसूल को विदित नहीं था कि विमला और प्रेम में परस्पर परिचय है और प्रेम ने उसकी चिट्ठी भी पढ़ी है। अतएव उसने निशंक भाव से कह दिया, "मुझे आप माल पर खद्दर-भण्डार के सम्मुख उतार दें।"

"ओह!" प्रेम के मुख से अकस्मात निकल गया। उसे उसकी विमला के नाम चिट्ठी की याद आगयी। एक क्षण में वह समझ गयी कि गुलामरसूल विमला को साड़ी पहने भण्डार में देखने जा रहा है। उसने बिना यह प्रकट किये कि वह विमला से परिचय रखती है पूछा, "क्या आज फिर कुछ खरीदना है ?"

गुलामरसूल ने बिना शंका किये कह दिया, "हां।"

"तो चलो, मैं भी कुछ खद्दर खरीदना चाहती हूँ।"

"बहुत अच्छा।" गुलामरसूल ने समझा कि उसके साथ होने से वह स्त्री-विभाग में जा सकेगा।

प्रेम ने गुलामरसूल के मन के भावों को जानने के लिये कह दिया, "वहां की स्त्री-विक्रेता किसी उच्च परिवार की लड़की प्रतीत होती है।"

"ऊँह" गुलामरसूल ने कुछ नाक चढ़ाकर कहा। प्रेम मोटर चला रही थी। उसने गुलामरसूल का मुख नहीं देखा। उसने कहा, "कितनी मिठास थी उसकी बातों में।"

गुलामरसूल विमला के विषय में अपने भाव बताना नहीं चाहता था। उसने प्रेम की खुशामद करते हुए कहा, "तुमसे भी अधिक, प्रेम ? मैं नहीं मान सकता।"

"मैं अपने साथ तो उसकी तुलना कर नहीं सकती। यह मेरे लिये असम्भव है। हां, अपनी दूसरी परिचित लड़कियों से उसे अधिक सुन्दर, मीठा बोलने वाली और शिष्टाचारयुक्त पाती हूँ।"

"ओह! तुम उसे ऐसा समझती हो। मैं तो समझता हूँ संसार भर में तुमसे ज्यादा खूबसूरत सूरत, सीरत और इखलाक में कोई और औरत

नहीं है।"

प्रेम को गुलामरसूल की बातों पर क्रोध आ रहा था और उसके मुख से निकल ही गया, "झूठा कहीं का।"

"कौन ?"

"तुम।"

"यह तो मेरा मन जानता है।"

"मेरा भी मन जानता है। क्या मैं मूर्ख हूँ जो किसी पुरुष से की गयी खुशामद को भी नहीं समझ सकती ?"

"तो मैं खुशामद कर रहा हूँ ?"

"नहीं, तुम सब सत्य कह रहे हो। तुम्हारा मतलब यह है कि मैं अन्धी हूँ न। उस स्त्री-विक्रेता के सौंदर्य को नहीं देख सकती।"

"नहीं, प्रेम ! तुम अन्धी नहीं हो, शायद मैं ही अन्धा हूं। मुझे तो तुम्हारे सिवा और सब कुछ फीका मालूम होता है।"

इस समय मोटर खद्दर-भण्डार के सम्मुख जा पहुँची थी।

प्रेम ने गुलामरसूल की बात का उत्तर नहीं दिया। दोनों भण्डार के भीतर चले गये। प्रेम सोच रही थी कि देखें विमला साड़ी पहनकर आती है या नहीं। इससे वह उत्सुकता से उसकी ओर देखने लगी। वह साधारण खद्दर की सलवार, कुर्ता और दुपट्टा ओढ़े खड़ी थी।

गुलामरसूल अभी दूकान में दाखिल ही हुआ था कि चपरासी ने आगे आकर एक पार्सल उसे देते हुए कहा, "यह आपका पार्सल वापिस आगया है। स्वीकार नहीं हुआ।"

गुलामरसूल घबरा गया। वह उन्हीं साड़ियों को, जिनके विषय में वह प्रेम को कह चुका था कि एबटाबाद भेजी गयी हैं, पुनः उसके सम्मुख आने नहीं देना चाहता था। एक क्षण के लिये वह अनिश्चित मन खड़ा रहा। वह सोच रहा था कि क्या कहे। तुरन्त ही उसने मन को दृढ़ कर कहा, "क्या ? पार्सल ? मैं नहीं समझा, भाई ! तुम भूल गये हो। यह मेरा नहीं है।"

चपरासी एक क्षण तक पार्सल को देखता रहा। उस पर 'गुलाम-रसूल' हिन्दी अक्षरों में लिखा था। उसने कहा, "नहीं साहब, मैं भूल नहीं करता। आपका नाम गुलामरसूल नहीं है क्या? मैं आपको जानता हूं। आप कम्यूनिस्ट पार्टी के प्रधान हैं।"

"ठीक, मगर यह पार्सल मेरा नहीं है। किसने दिया है?"

चपरासी ने कह दिया, "विमलादेवी जी ने।"

प्रेम तुरन्त समझ गयी। उसने पार्सल चपरासी के हाथ से ले लिया और गुलामरसूल से कहा, "चलो उनसे पूछें।"

विमला को यह आशा नहीं थी कि प्रेम भी गुलामरसूल के साथ होगी और फिर यह कि वह पार्सल लेकर उससे पूछने आवेगी। वह चाहती थी कि गुलामरसूल पार्सल लेकर लज्जित होकर चला जाता। अब दोनों को अपनी ओर आते देख वह सोचने लगी कि वह कैसा व्यवहार उनसे करे। वह नहीं चाहती थी कि दूकान में झगड़ा हो, परन्तु वह किसी भी भांति, किसी भी परिस्थिति के उपस्थित होने पर, डरना नहीं चाहती थी। उसके मन में क्रोधानल भरा हुआ था, परन्तु मन को दृढ़ कर वह उसकी लपटों को बाहर निकलने से रोकने का यत्न कर रही थी। वह भली भांति जानती थी कि जितनी शांति से वह बात करेगी उतनी ही उसकी विजय होगी।"

प्रेम ने विमला की नमस्ते स्वीकार कर पूछा, "यह किस का है?"

गुलामरसूल की ओर संकेत कर विमला ने कहा, "इनका।"

प्रेम ने तीव्र दृष्टि से गुलामरसूल की ओर देखा। उसने सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं, मैं नहीं जानता। मेरा तो यह नहीं है।"

प्रेम ने विमला से अपने मन की बात पूछ ही ली। "यह आपको कहां से मिला है?" उसने पूछा।

"उस दिन इन्होंने खरीदने के पश्चात मुझे दिया था कि मैं यह इनकी प्रेमिका को दे दूं। एक चिट्ठी भी दी थी। जब मैं पार्सल और चिट्ठी लेकर इनके लिखे पते पर पहुँची और ज्योंही उसने चिट्ठी पढ़ी तो

उसने चिट्ठी को तो दियासलाई लगा दी और पार्सल वापिस करने के लिये लौटा दिया।"

"ओह!" प्रेम के मन में प्रकाश हो गया। फिर भी अपने मन का संशय दूर करने के लिये उसने पूछा, "चिट्ठी किस भाषा में लिखी थी?"

"लिफाफे पर पता उर्दू भाषा में लिखा था। मुझे उर्दू ठीक नहीं आता। पता पीछे पढ़वाना पड़ा था। चिट्ठी अंग्रेजी में थी। उस औरत ने, जिसके नाम चिट्ठी लिखी थी, चिट्ठी और पार्सल ले जाने वाले को गालियां दीं और बहुत फटकारा। वह घबराकर पार्सल ले पांव सिर पर रख भाग खड़ी हुई।"

यह सब बात विमला ने इतनी शांति से कही थी कि प्रेम से हंसे बिना नहीं रहा गया। उसने गुलामरसूल की ओर देखकर पूछा, "क्यों जी, अभी भी याद आया है या नहीं?"

"बिलकुल नहीं," गुलामरसूल ने कहा, "देवी जी कुछ भूल कर रही हैं। मैं इस पार्सल और चिट्ठी की बाबत कुछ नहीं जानता। यह मेरा नहीं है।"

"ओह!" प्रेम ने पार्सल पर बंधा तागा तोड़ डाला और पार्सल खोल दिया। अब उसने साड़ियों को निकाल, अचम्भा प्रकट करते हुए कहा, "ये तो वही हैं, जो आपने उस दिन खरीदी थीं।"

"नहीं, नहीं, वे नहीं हो सकतीं। वे तो मैंने एबटाबाद भेज दी थीं।"

प्रेम ने साड़ियों को बगल में दबाते हुए कहा, "अच्छी बात है। इस बात का निर्णय घर चलकर होगा। अब आपने क्या लेना है?"

"मैंने? सलवार के लिये कुछ सफेद खद्दर।" इतना कह वह स्त्री-विभाग से हट आया और एक लड़के से खद्दर देखने लगा।

प्रेम ने झुककर विमला के कान में धीरे से कहा, "बहुत खूब। मैं अति प्रसन्न हूँ।"

"मेरी चिट्ठी उनको मिली या नहीं?" विमला ने दिल कड़ा कर पूछ ही लिया। वह प्रेम के मन के भावों को जानना चाहती थी।

"मुझे नहीं मालूम। मैं उनकी डाक को नहीं खोला करती और वह बाहर गये हैं।"

"ओह!"

"बहिन विमला, उस दिन उन्होंने व्यर्थ ही क्रोध किया। मुझे उनके व्यवहार पर लज्जा आ रही है।"

"जैसी भगवान की इच्छा। मैंने आज घर छोड़कर चाबी और उनका रुपया डाक द्वारा उनको भेज दिया है।"

"भेज दिया है, क्यों?"

"उन्होंने मांगा था।"

"उफ़! तो अब कहां रहोगी?"

"भाड़े का मकान लेकर।"

"प्रेम के दिल को भारी ठेस पहुंची। वह मजदूरों के अधिकारों के लिये लड़ रही थी और इधर एक स्त्री के-अधिकार पद-दलित किये जा रहे थे। इसी विचार में वह बिना उत्तर दिये गुलामरसूल के पास चली आई। उसने एक खद्दर का थान चुन लिया था। प्रेम ने पहुँचते ही पूछा, "आप अब किधर जाइयेगा?"

"मैं चला जाऊंगा। मुझे अनारकली बाज़ार में काम है। आप जा सकती हैं।"

प्रेम बिना उत्तर दिये दुकान से बाहर निकल आई। वह शीघ्र ही घर जाकर विमला की चिट्ठियां, जिनकी बिहारीलाल की डाक में होने की आशा कर रही थी, पढ़ने के लिये व्याकुल हो रही थी। उसने साड़ियों को मोटर की पिछली सीट में फेंक, स्वयं सवार हो, मोटर घर की ओर भगा दी।

गुलामरसूल, उन साड़ियों के विषय में क्या बात बनाये और बोले हुए झूठ को किस प्रकार छुपाये, निश्चय नहीं कर सका था। इस कारण उसने प्रेम का साथ छोड़ना ही उचित समझा।

प्रेम ने घर जाकर सब डाक मंगवाई। बिहारीलाल के नाम की एक

चिट्ठी तो सोमवार को ही पहुँच गई थी। उस दिन एक रजिस्ट्री-पैकट और आया था। उसने दोनों खोलकर देखीं। पैकट में भी एक चिट्ठी थी। उसने दोनों चिट्ठियों को कई बार पढ़ा। उसे बिहारीलाल के ओछे व्यवहार पर लज्जा और क्रोध आ रहा था। वह बिना जांच किये ही आग-बबूला हो गया था और गालियां देने लगा था। कितनी मूर्खता थी। उसे शान्तिपूर्वक विमला से पूछना चाहिये था और जो कुछ वह कहती उसकी जांच करनी चाहिये थी। उसके इस ओछे व्यवहार के अतिरिक्त एक और बात भी थी। वह उसे अति उदार विचार रखने वाला समझती थी। वह स्वयं प्रेम करने में स्वतन्त्रता की उपासिका थी। बिहारीलाल ने भी अपने आपको ऐसे ही विचारों वाला प्रकट किया था। यही कारण था कि वह उसके साथ पत्नी रूप में रहने के लिये तैयार हुई थी। अब अपनी विवाहित स्त्री के प्रति वह इतने संकुचित विचारों का प्रदर्शन कर रहा था। यह उसे असह्य हो उठा था।

वह अपने गुलामरसूल से सम्बन्ध के विषय में यह विचार कर, कि इसे बिहारीलाल किस प्रकार स्वीकार करेगा, कांप उठती थी। क्या वह उसका गला घोट देगा, अथवा स्वयं आत्मघात कर लेगा। बिहारीलाल को विमला पर निराधार क्रोध करते देख वह अपने विषय में क्रोध से उसके पागल हो जाने की आशंका कर रही थी।

अब उसे गुलामरसूल की याद आई। वह उसके शारीरिक बल और सौन्दर्य पर मुग्ध थी। बिहारीलाल की युक्तियां अकाट्य होती थीं और वह अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ रहता था। इसी ने उसे बिहारीलाल पर आसक्त किया था। वह उदार विचारों—स्वतन्त्र व्यवहार, उन्मुक्त प्रेम और स्वच्छन्द विवाह को मानने वाली थी। स्त्री जाति और श्रमजीवियों के अधिकारों के लिये झगड़ा करना वह अपना कर्तव्य मानती थी। इन सब बातों में वह अपने और बिहारीलाल में समानता मानती थी। इसी से वह उससे प्रेम करती थी। वह एक से अधिक पुरुषों से प्रेम करने में हानि नहीं समझती थी। भिन्न भिन्न पुरुषों को उनके भिन्न भिन्न गुणों के लिये प्रेम

करने में वह कुछ भी हानि नहीं मानती थी। इसे वह स्वाभाविक ही समझती थी। अच्छे पुरुषों को कई कई स्त्रियां प्रेम करें और अच्छी स्त्री को एक से अधिक पुरुष प्रेम करें, इसमें उसे कोई अचम्भा प्रतीत नहीं होता था।

परन्तु विमला ने गुलामरसूल को फटकार दिया था। वह सोचती थी कि क्यों? क्या इसलिये कि वह उसमें कोई गुण नहीं पाती? नहीं, यह बात नहीं। शायद इस कारण कि वह बिहारीलाल से त्यागे जाने और समाज में निन्दा के भय से उसे प्रेम कर नहीं सकती। क्या समाज इतनी प्रबल वस्तु है कि उससे डरकर मन की सर्वोच्च अभिलाषा भी छोड़ी जा सकती है? विमला ने यदि ऐसा किया है तो यह उसके लिये कोई श्लाघा की बात नहीं। इस पर भी उसके मन में यह आता था कि विमला जिस परिस्थिति में है, जब वह अपने पति से केवल त्यागी ही नहीं गयी प्रत्युत घर से बाहर भी निकाल दी गयी है, उसके लिये समाज के भय से मन की अभिलाषा को दबाना सम्भव नहीं। वह उस समाज से क्यों डरे जिसने उसकी रक्षा नहीं की। उसे विमला का व्यवहार, यदि वह केवल समाज के डर से है तो, अयुक्तिसंगत प्रतीत होता था। इसी से वह समझती थी कि कुछ और कारण ही हो सकता है। वह विमला से बातचीत कर उस के मन के भीतर की बात जानना चाहती थी। इस विचार के मन में आते ही वह उठी और मोटर ले विमला को मिलने के लिये भण्डार की ओर चल पड़ी।

[६]

गुलामरसूल खद्दर-भण्डार से निकल लारेंन्स गार्डन की ओर चल पड़ा। वहाँ वह एकान्त में बैठकर विचार करने लगा कि इस झमेले से कैसे वह अपने आपको बचावे। वह प्रेम से अपने परिचय के इतिहास पर विचार करने लगा, और चल-चित्र की भांति प्रत्येक घटना उसकी आंखों के सामने से गुजरने लगी। जब उसने प्रेम को पहली बार पार्टी में देखा था तो वह उस पर आसक्त होगया था। अनेक उपायों और प्रयत्नों

के पश्चात् वह उससे घनिष्टता उत्पन्न कर सका था। कई महीनों के यत्न के पीछे वह प्रेम के इतने समीप आ सका था कि प्रेम ने उसे अपने पास बैठने को स्थान दिया था। इसके बाद सेठ धन्नाराम के कारखानों में यूनियन बनाने का काम आरम्भ हो गया। जो घनिष्टता पहले उत्पन्न हो चुकी थी वह अब प्रेम में परिवर्तित होने लगी थी। प्रेम के मन में भी गुलामरसूल स्थान लेने लगा था।

एक दिन दोनों मुगलपुरा से लौट रहे थे। गुलामरसूल ने पासा फेंका, "मैं बहुत बदकिस्मत हूँ।"

प्रेम का प्रश्न था, "क्यों?"

"जब कोई इन्सान किसी चीज़ को हासिल करना चाहे और वह चीज़ उसकी पहुँच से दूर हो जाये, तो वह अपने आपको बदकिस्मत ही तो कहेगा।"

"पहुँच से दूर चीज़ तक पहुँचने की कोशिश करना ही तो खुश-किस्मती है। ऐसे मौके तो भाग्यशाली लोगों को ही मिलते हैं।"

"ओह!" यह आह गुलामरसूल के मुख से एकाएक निकल गयी।

"हाँ, देखो मांउन्ट एवरेस्ट पर चढ़ने की कितनी नाकामयाब कोशिशें की गई हैं और प्रत्येक असफल प्रयत्न करने वाला कितने मान से देखा जाता है। इसी प्रकार उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों पर जाने, आकाश में स्ट्रैटोस्फीयर का अधिक और अधिक ज्ञान प्राप्त करने के यत्न किये जा रहे हैं। किसी काम की कठिनाई उत्साही खोज करने वालों के उत्साह को भंग नहीं करती। बल्कि उनके उत्साह को बढ़ाती है।"

"लेकिन इनमें और मेरी दिली ख्वाहिश में ज़मीन आसमान का फ़र्क है। एक ओर तो कुदरत के उसूलों का अधूरा इल्म रुकावट डालने वाला है और दूसरी ओर इन्सान के वहम और दकियानूसी ख्यालात। इल्म में तरक्की हो सकती है, मगर इन्सान के वहम दूर नहीं हो सकते।"

"मगर वहम और दकियानूसी ख्यालात भी तो लाइल्मी की वजह से होते हैं। जैसे इल्म की तरक्की से हम कुदरत पर ज्यादा और ज्यादा

काबू पा सकते हैं, वैसे ही इससे सामाजिक सहूलियतों को खरीद किया जा सकता है।"

"तो मैं अपनी चाहती चीज़ को पाने की कोशिश करूं ?"

"अगर न करोगे तो तुम इन्सान ही नहीं। ऐसी कोशिश करना तो इन्सानी खसलत में शामिल है।"

"यह बात है ? तो मैं अभी तक भूल कर रहा था ?"

"हाँ, इसमें भी भला शक हो सकता है।"

गुलामरसूल ने समझा कि प्रेम उसे अपना प्रेम प्रकट करने के लिये आमंत्रित कर रही है। अब उसने कुछ उत्साह से कहा, "तो आप ही मुझे बतावें न कि मैं कैसे कोशिश करूं ?"

प्रेम ने घूमकर गुलामरसूल के मुख की ओर देखा। वह कार में उसके पास बैठा हुआ सर्वथा सामने की ओर देख रहा था। प्रेम उसके मुख को देख उसके आन्तरिक भावों को जानना चाहती थी। जब कुछ नहीं समझ सकी तो उसने पूछा, "आप क्या चाहते हैं ?"

"मैं एक औरत से मुहब्बत करता हूँ।"

"मुहब्बत ? मुहब्बत के मायने समझते भी हो ?"

"हां क्यों नहीं। किसी चीज़ को पाने की बेहद ख्वाहिश रखना मुहब्बत कहाता है।"

प्रेम खिलखिलाकर हंस पड़ी।

"क्यों ? आप हंसती क्यों हैं ?"

"प्रेम की यह तारीफ किसी जानवर के दिमाग की बनाई है।"

"तो इसमें हंसने की कौन बात है ? मैं जानवर हूँ और जिस औरत को मैं चाहता हूँ वह भी जानवर है।"

"एक इन्सान मुहब्बत की इस तारीफ को ठीक नहीं समझ सकता।"

"भला आपके ख्याल में एक इन्सान के लिये मुहब्बत क्या चीज़ है ?"

"किसी चीज के लिये अपना सब कुछ कुर्बान करने की ख्वाहिश

रखना उस चीज़ से मुहब्बत करना कहाता है। उस वस्तु का पाना न पाना दूसरे दर्जे की बात है।"

"मुझे तो दोनों में कोई अन्तर प्रतीत नहीं होता।"

"इस बैल-बुद्धि में इतनी स्पष्ट बात आ कैसे सकती है? प्रेमी प्रेमिका के लिये सब कुछ देना चाहता है। इसलिये नहीं कि उसको पाना है, परन्तु इसलिये कि प्रेमिका को प्रसन्न करना है। उसे सुख और आनन्द पहुँचाना है। उसके दुःख और कष्टों को दूर करना है। उसके पाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। प्रेमिका का आकर गले से लिपट जाना उसका काम है न कि प्रेमी के आशा करने का।"

"परन्तु प्रेमिका के आकर गले से लिपट जाने में ही तो रुकावट है। वह शादी शुदा है।"

"इससे क्या होता है? यदि आप प्रेम को इस ढंग पर समझते हैं जैसे मैंने बयान किया है, तो आप प्रेम कर सकते हैं। सदा अपनी प्रेमिका को, बिना किसी प्रकार की उसे पाने की इच्छा करते हुए, सुख, आराम और शांति देने की कोशिश करते रहो। यदि आपका प्रेम इतना प्रबल है कि वह आपकी प्रेमिका के मन में प्रेम की ज्योति जगा सके तो वह विवाह की बाधा तोड़कर स्वयं आपके पास आजावेगी।"

इस समय मोटर गुलामरसूल के मकान पर पहुँच चुकी थी। गुलाम रसूल ने मोटर से उतरते हुए कहा, "प्रेम, भीतर नहीं आओगी?"

"क्या करूंगी?"

"अभी आपसे बहुत बातें पूछनी हैं।"

प्रेम भी मोटर से नीचे उतर आई। गुलामरसूल घर में अकेला रहता था। अपनी बैठक में उसे बैठाकर उसने जलपान के लिये पूछा। प्रेम ने मुस्कराते हुए पूछा, "क्या खिला सकते हैं आप? यहां क्या मिल सकेगा?"

गुलामरसूल ने नौकर को भेज कबाब और नान मंगवा लिये। प्रेम को बहुत पसन्द आये। समाप्त होने पर और मंगवाये गये। जब वे खा

रहे थे तो गुलामरसूल ने अवसर देख पुनः अपनी बात आरम्भ कर दी। वह कहने लगा, "मैं आपका बड़ा शुकरिया अदा करता हूँ। आपने मुझे मुहब्बत के सही मायने बताये हैं, मगर मैंने तो पूछा था कि मैं किस तरह अपने दिल के जज़बात (उद्‌गार) उसके इल्म में लाऊँ ?"

"तो क्या यह भी बताना पड़ेगा। यह तो सर्वथा स्वाभाविक है। जब आप अपनी प्रेमिका की कोई सेवा करें और वह आपकी सेवा के लिये धन्यवाद करे तो कह देना, 'मेरी जान ! इस नाचीज़ खिदमत का ज़िकर कर मुझे क्यों शरमिन्दा करती हो। मैं तो अपनी जान तक आपके कदमों में नज़र कर चुका हूँ। इस पर वह पूछेगी 'क्यों' या कुछ ऐसी फजूल सी बात,' तो आप कह देना, 'आप मेरे लिये फरिश्ता हैं। मेरी आरज़ुओं और अरमानों के मुहाफ़िज़ हैं। मेरे रहबर, मुहब्बत के पैग़म्बर, मुहब्बत के बहिश्त में ले जाने वाले मसीहा हैं।"

"और अगर वह इन बातों से नाराज़ हो जाये तो ?"

"तो क्या ? अगर तुम्हारी मुहब्बत सच्ची है, तो तुम्हें उसके नाराज़ हो जाने की परवाह नहीं करनी चाहिये। तुम सच्चे दिल से खिदमत करते जाना। एक न एक दिन वह पिघल उठेगी।"

"शुकरिया ! बहुत शुकरिया !! अब मुझे अपना रास्ता बिलकुल साफ़ दिखाई देता है। मुहब्बत का तकाज़ा है कि मैं खिदमत सरंजाम देता जाऊं। नतीजे के लिये बेताब होने की ज़रूरत नहीं।"

"बिलकुल ठीक। जैसे एक चिराग़ से दूसरा चिराग़ जलता है, वैसे ही सच्ची मुहब्बत एक दिल से दूसरे के दिल में जाग उठती है। तुम अपने दिल की मुहब्बत को पाक और साफ़ रखने की कोशिश करते जाओ। दूसरे के दिल में मुहब्बत के चिराग़ का जल उठना एक लाज़िमी बात है।"

इतना कह प्रेम घर जाने के लिये उठ खड़ी हुई। गुलामरसूल भाग कर गया और हाथ धुलाने के लिये एक लोटे में पानी, चिलमची, साबुन और तौलिया ले आया। प्रेम ने हाथ धो तौलिये से पोंछते हुए

कहा, "गुलामरसूल, बहुत बहुत धन्यवाद।"

"धन्यवाद! इसकी क्या ज़रूरत है मेरी जान?" इतना कह गुलामरसूल ने एक घुटना टेक, एक हाथ से प्रेम की साड़ी का आंचल पकड़ वही बात दुहरा दी, जो प्रेम अभी उसे सिखा रही थी।

प्रेम गुलामरसूल को नाटक करते देख खिलखिलाकर हंस पड़ी। गुलामरसूल ने अपनी गम्भीरता को नहीं छोड़ा, प्रत्युत प्रेम को हंसता देख विस्मय से उसका मुख देखते हुए कहने लगा, "प्रेम, तुम हंसती हो। इसमें हंसने की कौन बात है? मैं अपने दिली जज़्बात का इज़हार करने के लिये कई दिन से परेशान था। मुझे मौज़ूँ अलफ़ाज़ नहीं मिल रहे थे जिनमें यह इज़हार कर सकता। आज तुमने मुझे रास्ता दिखा दिया है तो फिर अब देरी करने की क्या ज़रूरत थी?"

"मैं तुम्हारे इज़हार पर नहीं हंस रही।" प्रेम ने हंसी से दुहरे होते हुए कहा।

"तो फिर क्या बात है? अगर तो तुम नाराज़ होतीं तब तो मैं वही करता जो तुमने अभी बताया है। लेकिन यह हंसने की बात तो तुमने बताई ही नहीं।"

इससे प्रेम और ज़्यादा हंसने लगी। वह कुर्सी पर फिर बैठ गयी और कहने लगी, "मैंने जो कुछ बताया था वह दूसरी औरतों के लिये था। मैं अपने आपको उन औरतों से मुख़्तलिफ़ देखती हूँ। मेरे साथ वे उपाय नहीं चलेंगे जो साधारण औरतों के साथ चल जाते हैं।"

गुलामरसूल उसी भांति घुटनों के बल खड़ा रहा और पूछने लगा, "तो मेरे मन की रानी! मैं क्या करूं कि तुम्हें रिझा सकूं?"

"मैं तो गुणों की उपासिका हूं। मिस्टर बिहारीलाल में मैंने विशेष प्रतिभा, हृदय की उदारता, और विचारों की विशालता देखी है। इसी से मैं उसे प्रेम करती हूँ। यदि तुम मेरे प्रेम के भाजन बनना चाहते हो तो अपने में उपस्थित विशेष गुणों को मेरे मन पर अंकित कर दो और मैं तुम्हें भी प्रेम करने लगूँगी।"

"अच्छी बात! मैं अपनी खसूसियत (विशेषता) कभी आपको दिखाऊँगा। आप अब घर जाएंगी?"

"हाँ।" कहकर प्रेम घर से बाहर निकल आई। वह जब मोटर चलाने लगी और उसने गीयर चढ़ाया तो मोटर कुछ हिलकर रह गयी। प्रेम ने उसे चलाने का तीन-चार बार यत्न किया, परन्तु मोटर हिलती थी और फिर रह जाती थी। प्रेम ने समझा कि कोई पत्थर गाड़ी को रोक रहा है। वह गाड़ी के नीचे उतर कर देखने लगी। पत्थर तो वहां कोई नहीं था। हां, गुलामरसूल गाड़ी को पीछे से पकड़े खड़ा था। प्रेम ने हंसते हुए कहा "वाह रे मेरे राममूर्ति!"

गुलामरसूल ने गाड़ी को छोड़ते हुए कहा, "अब आज से अपनी खसूसियतें आपके मन पर नक्श करनी हैं न।"

"यह तो कुछ नहीं," प्रेम ने व्यंग के भाव से कहा, "यह तो गलियों में छोटे छोटे लौंडे करते फिरते हैं।"

"बहुत अच्छा, तो यह लो।" इतना कह गुलामरसूल मोटर को पीछे से उठाकर कंधों के ऊपर तक ले गया। प्रेम गुलामरसूल की शारीरिक शक्ति को स्वीकार करने लगी थी। मोटर का वह भाग पाच-छः मन से कम नहीं रहा होगा। उसने कहा, "मानती हूं कि तुम एक बैल के बराबर शक्ति रखते हो।"

"दुनिया में बैलों की भी ज़रूरत रहती है, देवी जी।"

प्रेम के मन पर गुलामरसूल की शारीरिक शक्ति ने विशेष प्रभाव डाला था। वह उसे और भी अधिक चाहने लगी थी।

स्त्री-पुरुष में थोड़ी सी लज्जा की बाधा हटने की देरी है और फिर जैसे बांध के छोटे से छेद में से बहता हुआ पानी पूरी नदी का आकार धारण कर लेता है, वैसे ही स्त्री-पुरुष का लैंगिक आकर्षण प्रेम को प्रणय में बदलने में समय नहीं लेता। इस आकर्षण को रोकने के लिये युक्तियाँ और विचार-शक्ति निर्बल सिद्ध हुई हैं। प्रबल संस्कार और रीतिरिवाज में दृढ़ निष्ठा ही प्रेम को शारीरिक भोग-विलास से पृथक रखने में सफल

हो सके हैं। प्रेम ने गुलामरसूल को जब हृदय में स्थान दिया था, तब उसके मन में प्रेम वासना से मुक्त ही रहा हो सकता है। परन्तु भोग-विलास को वह कोई विशेष महत्व नहीं देती थी। हृदय से किसी को चाहना ही उसके लिये मुख्य बात थी। इस चाह के साथ वासना मिश्रित हो गयी अथवा नहीं हो गयी, कुछ अधिक सोच करने का विषय नहीं था। परिणाम स्वरूप कुछ ही दिनों में गुलामरसूल ने प्रेम पर पति के पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिये। यह अवस्था थी जब बिहारीलाल को प्रेम पर गुलामरसूल से सम्बन्ध रखने का संदेह हुआ था।

गुलामरसूल प्रेम से सम्बन्ध का इतिहास स्मरण कर जहां आनन्द अनुभव करता था, वहां प्रेम के नाराज़ हो जाने के भय से घबरा भी रहा था। वह प्रेम को सभ्य, सुशिक्षित, हंसी-मज़ाक में चतुर और समाज में विख्यात स्त्री समझता था। सब से बढ़कर वह धनी बाप की अकेली सन्तान थी। ऐसी अवस्था में उसे प्रेम से सम्बन्ध तोड़ना ठीक प्रतीत नहीं होता था। परन्तु विमला अति सुन्दर थी और प्रेम के सब गुण मिलकर भी विमला के सौंदर्य के सम्मुख फीके पड़ रहे थे। इस पर भी विमला की ओर से कोरा जवाब पाकर गुलामरसूल प्रेम से झगड़ना नहीं चाहता था। वह मन में अपने झूठ को सुलझाने की योजना बनाने लगा। बहुत विचारोपरान्त वह एक योजना बना सका। वह सोचता था कि वह कह देगा कि साड़ियां एबटाबाद नहीं भेजी थीं। लाहौर में ही एक पुराने स्त्री-मित्र को पुरानी मित्रता के उपलक्ष में भेजी थीं। चूँकि प्रेम से सम्बन्ध हो जाने पर वह नाराज़ हो गयी है इस कारण उसने भेंट को अस्वीकार कर दिया है। गुलामरसूल अपनी इस सफ़ाई पर बहुत प्रसन्न हुआ। उसे अभी भी यह पता नहीं था कि प्रेम साड़ियों को विमला के घर देख चुकी थी।

इतनी योजना बनाकर वह लारेंस गार्डन से उठकर पैदल ही घूमता हुआ अनारकली बाज़ार में जा पहुँचा। वहां एक रैस्टोरेन्ट में खाना खा पुनः फिरोज़पुर रोड पर प्रेम से मिलने को चल पड़ा। ज्योंही वह माल

पर पहुँचा तो उसने विमला को अकेले घर जाते देखा। उसके मन में आया कि एक-दो शब्द उससे भी कह दे। वह विमला के समीप पहुँच, हाथ जोड़कर कहने लगा, "देवी जी, नमस्ते।"

विमला खड़ी हो गयी। घूरकर देखते हुए उसने पूछा, "क्या है?"

"यही, कि गुस्ताख़ी के लिये माफ़ी चाहता हूँ। मगर..."

वह और अधिक नहीं कह पाया। विमला ने अपने पूरे बल से एक चपत उसके मुख पर लगा दी। एक क्षण के लिये गुलामरसूल भौंचक्का हो खड़ा रह गया। वह जानता था कि यदि चाहे तो एक क्षण में विमला की गर्दन मरोड़कर दुनिया के उस पार कर सकता है, परन्तु वह उस कोमलांगी को छूना तो दूर रहा घूरकर देखने का साहस भी नहीं रखता था। उसे विमला की चपत केवल प्यार ही प्रतीत हुआ और वह प्रेम भरी दृष्टि से उसकी तरफ़ मुस्कराते हुए देखने लगा।

विमला ने उसे इस प्रकार अपनी ओर देखते हुए दो चार चपत और लगा दीं। अब उसने अपने हाथों को चपत मारने के कष्ट से बचाने के लिये पांव का जूता उतार लिया। परन्तु वह माल थी। सैंकड़ों सैर करने वाले आ जा रहे थे। यह सम्भव नहीं था कि इतनी मारपीट हो जाये और सैंकड़ों लोग एकत्रित न हों। गुलामरसूल ने जब भीड़ इकट्ठी होते देखी तो वहां से खिसक जाना ही उचित समझा। परन्तु ज्योंही वह घूमा कि एक मज़बूत आदमी ने अपनी भुजाओं में उसे जकड़ लिया। वह कोई दांव-पेच जानने वाला पहलवान प्रतीत होता था। गुलामरसूल को अभी इस बात का ज्ञान भी नहीं हुआ था कि यह आफ़त कहां से आ टपकी है, कि उस पहलवान ने उसे कमर से पकड़कर ज़मीन पर चित्त लेटा दिया और ऊपर से घूंसों की बौछार आरम्भ कर दी। गुलामरसूल उठने का यत्न कर रहा था और वह पहलवान अपना घुटना उसकी छाती पर रखे हुए उसकी कुल्हियों की घूँसों से मरम्मत कर रहा था। विमला कुछ दूर खड़ी यह सब देख रही थी। क्रोध और घबराहट से उसका मुख लाल हो गया था और सारा शरीर कांप रहा था।

हो सके हैं। प्रेम ने गुलामरसूल को जब हृदय में स्थान दिया था, तब उसके मन में प्रेम वासना से मुक्त ही रहा हो सकता है। परन्तु भोग-विलास को वह कोई विशेष महत्व नहीं देती थी। हृदय से किसी को चाहना ही उसके लिये मुख्य बात थी। इस चाह के साथ वासना मिश्रित हो गयी अथवा नहीं हो गयी, कुछ अधिक सोच करने का विषय नहीं था। परिणाम स्वरूप कुछ ही दिनों में गुलामरसूल ने प्रेम पर पति के पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिये। यह अवस्था थी जब बिहारीलाल को प्रेम पर गुलामरसूल से सम्बन्ध रखने का संदेह हुआ था।

गुलामरसूल प्रेम से सम्बन्ध का इतिहास स्मरण कर जहां आनन्द अनुभव करता था, वहां प्रेम के नाराज़ हो जाने के भय से घबरा भी रहा था। वह प्रेम को सभ्य, सुशिक्षित, हंसी-मज़ाक में चतुर और समाज में विख्यात स्त्री समझता था। सब से बढ़कर वह धनी बाप की अकेली सन्तान थी। ऐसी अवस्था में उसे प्रेम से सम्बन्ध तोडना ठीक प्रतीत नहीं होता था। परन्तु विमला अति सुन्दर थी और प्रेम के सब गुण मिलकर भी विमला के सौंदर्य के सम्मुख फीके पड़ रहे थे। इस पर भी विमला की ओर से कोरा जवाब पाकर गुलामरसूल प्रेम से झगड़ना नहीं चाहता था। वह मन में अपने झूठ को सुलझाने की योजना बनाने लगा। बहुत विचारोपरान्त वह एक योजना बना सका। वह सोचता था कि वह कह देगा कि साड़ियां एबटाबाद नहीं भेजी थीं। लाहौर में ही एक पुराने स्त्री-मित्र को पुरानी मित्रता के उपलक्ष में भेजी थीं। चूँकि प्रेम से सम्बन्ध हो जाने पर वह नाराज़ हो गयी है इस कारण उसने भेंट को अस्वीकार कर दिया है। गुलामरसूल अपनी इस सफाई पर बहुत प्रसन्न हुआ। उसे अभी भी यह पता नहीं था कि प्रेम साड़ियों को विमला के घर देख चुकी थी।

इतनी योजना बनाकर वह लारेंस गार्डन से उठकर पैदल ही घूमता हुआ अनारकली बाज़ार में जा पहुँचा। वहां एक रैस्टोरेन्ट में खाना खा पुनः फिरोजपुर रोड पर प्रेम से मिलने को चल पड़ा। ज्योंही वह माल

पर पहुँचा तो उसने विमला को अकेले घर जाते देखा। उसके मन में आया कि एक-दो शब्द इसने भी कह दे। वह विमला के समीप पहुँच, हाथ जोड़कर कहने लगा, "देवी जी, नमस्ते।"

विमला खड़ी हो गयी। घूरकर देखते हुए उसने पूछा, "क्या है?"

"यही, कि गुस्ताखी के लिये माफी चाहता हूं। मगर..."

वह और अधिक नहीं कह पाया। विमला ने अपने पूरे बल से एक चपत उसके मुख पर लगा दी। एक क्षण के लिये गुलामरसूल भौंचक्का हो खड़ा रह गया। वह जानता था कि यदि चाहे तो एक क्षण में विमला की गर्दन मरोड़कर दुनिया के उस पार कर सकता है, परन्तु वह उस कोमलांगी को छूना तो दूर रहा घूरकर देखने का साहस भी नहीं रखता था। उसे विमला की चपत केवल प्यार ही प्रतीत हुआ और वह प्रेम भरी दृष्टि से उसकी तरफ मुस्कराते हुए देखने लगा।

विमला ने उसे इस प्रकार अपनी ओर देखते हुये दो चार चपत और लगा दीं। अब उसने अपने हाथों को चपत मारने के कष्ट से बचाने के लिये पांव का जूता उतार लिया। परन्तु वह माल थी। सैंकड़ों सैर करने वाले आ जा रहे थे। यह सम्भव नहीं था कि इतनी मारपीट हो जाये और सैंकड़ों लोग एकत्रित न हों। गुलामरसूल ने जब भीड़ इकट्ठी होते देखी तो वहां से खिसक जाना ही उचित समझा। परन्तु ज्योंही वह घूमा कि एक मज़बूत आदमी ने अपनी भुजाओं में उसे जकड़ लिया। वह कोई दांव-पेच जानने वाला पहलवान प्रतीत होता था। गुलामरसूल को अभी इस बात का ज्ञान भी नहीं हुआ था कि यह आफत कहां से आ टपकी है, कि उस पहलवान ने उसे कमर से पकड़कर ज़मीन पर चित्त लेटा दिया और ऊपर से घूंसों की बौछार आरम्भ कर दी। गुलामरसूल उठने का यत्न कर रहा था और वह पहलवान अपना घुटना उसकी छाती पर रखे हुए उसकी कुक्षियों की घूँसों से मरम्मत कर रहा था। विमला कुछ दूर खड़ी यह सब देख रही थी। क्रोध और घबराहट से उसका मुख लाल हो गया था और सारा शरीर कांप रहा था।

लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गयी थी। किसी ने पहलवान से पूछा, "क्यों मारते हो इसे ?"

"एक हिन्दू-लड़की से छेड़खानी करता था।"

बस फिर क्या था। कई हिन्दू विद्यार्थी सैर करते हुए एकत्रित हो गये थे। सबने पावों की ठोकरों से उसकी मरम्मत आरम्भ कर दी। पहलवान कह रहा था, "पठान के बच्चे यह वज़ीरस्तान नहीं है, लाहौर है।"

विमला वहां से खिसक जाना चाहती थी। किसी परिचित का स्थान समीप नहीं था। वह तुरन्त खद्दर-भण्डार की ओर लौट पड़ी। अभी कुछ कदम ही गयी थी कि उसने प्रेम को मोटर में जाते देखा। विमला ने हाथ उठाकर उसे ठहरने का संकेत किया। मोटर खड़ी होते ही वह भागकर उसमें चढ़ गयी और बोली, "बहिन, मुझे घर छोड़ आओ।"

"क्यों क्या हुआ है ?"

"वह बदमाश मेरे पीछे लग गया है।"

"कहाँ है वह ?"

"वह लोगों से पीटा जा रहा है। यहाँ से शीघ्र चल दो। मामला कहीं पुलिस में चला गया तो बहुत झंझट होगा।"

प्रेम ने मोटर चला दी। विमला बहुत घबराई हुई थी और प्रेम माल पर मोटरों की भीड़ के कारण मोटर बचाने में लगी हुई थी। न तो एक ने पूछा और न दूसरी ने बताया कि कौन पिट रहा था।

जब गली के बाहर मोटर पहुँची तो प्रेम ने पूछा, "अब कहां चलना है ? घर तो आपने छोड़ दिया है न।"

"हाँ, अब मैं बाबू मोहनलाल के घर रहती हूँ। वही सुधा बहिन के घर जो बीमारी में मेरे घर बहुत आया करती थी।"

"वे तो आपके पड़ोसी ही थे न। चलो आपको छोड़ आऊं।"

प्रेम मोटर से नीचे उतर आई और दोनों मोहनलाल के मकान की ओर चल पड़ीं। विमला अभी भी कांप रही थी। मोहनलाल और सुधा

घर पर नहीं थे। दोनों कहीं बाहर गये हुए थे।

जब दोनों निश्चिन्त होकर बैठीं तो प्रेम ने विमला से पूछा, "यह सब कैसे हुआ है ?"

"नित्य की भांति मैं भण्डार से निकलकर घर को जा रही थी। इम्पीरियल बैंक के सामने पहुँची तो वही पठान-लड़का, जो आपके साथ आया था और जिसको साड़ियां लौटाई थीं, अनारकली बाजार की ओर से आता दिखाई दिया। मैं चुपचाप चली जा रही थी। परन्तु वह मेरा मार्ग रोककर खड़ा हो गया और कुछ कहने लगा। बहिन आप तो जानती हैं कि उस बदमाश के कारण मेरी कितनी हानि हुई है। जिन्हें मैं स्वप्न में भी नाराज़ करना नहीं चाहती थी उस कुचक्री की करतूत से नाराज़ हो गये। उसे अपने सम्मुख देखकर मेरे क्रोध का पारावार नहीं रहा। मेरे मस्तिष्क में उसे जीते जी भस्म कर देने की इच्छा होने लगी। बिना यह सुने कि वह क्या कह रहा है मैंने उसे एक चपत मुख पर लगाई और जूते से पीटने के लिये जूता उतार लिया। वह भाग खड़ा हुआ, परन्तु एक आदमी ने उसे भागने नहीं दिया। उसे पकड़कर नीचे गिरा दिया और घूँसों से उसकी मरम्मत करने लगा। किसी ने कह दिया कि मुसलमान पठान है, और एक हिन्दू-लड़की से छेड़खानी कर रहा था। यह सुनते ही बीसियों लोग उस पर टूट पड़े। उसके मुख से रक्त बहने लगा। इससे अधिक मैं नहीं देख सकी और वहां से भाग खड़ी हुई। सौभाग्य से आपकी मोटर दिखाई दी...।"

विमला ने बात समाप्त नहीं की थी कि प्रेम घबराकर उठ खड़ी हुई। उसके मुख से निकल गया, "ओह ! पहले क्यों नहीं बताया ? बेचारा गु...

इतना कहते कहते वह मकान से बाहर निकल गयी।

[७]

प्रेम के इस दिन के व्यवहार से विमला के मन में भारी संदेह उत्पन्न हो रहा था। विमला सोच रही थी कि प्रेम को गुलामरसूल की

चिट्ठी और साड़ियों का ज्ञान था। इस पर भी वह उसको साथ लेकर भण्डार में आई। विमला को विश्वास था कि गुलामरसूल उसे साड़ी पहने देखने के लिये आया था। प्रेम का उसके साथ आना सिद्ध करता था कि वह भी उसे देखने आई थी। साड़ियां वापिस होने के पश्चात् उनका घनिष्टता से वार्तालाप और फिर उसे यह मालूम होते ही कि वह बुरी तरह पिट गया है उसका घबराकर घटना-स्थल की ओर जाना, इन सब बातों से यही परिणाम निकलता था कि प्रेम ने उसे पतित करने के लिये गुलामरसूल की सहायता से षड़यंत्र किया है। उसे ऐसा विश्वास हो गया था और यह स्वाभाविक भी था। वह उसकी सौतिन थी। उसे पातिव्रत-धर्म से पतित कर अपने पति की दृष्टि में नीच सिद्ध करना उसके लाभ की बात थी। सम्भव है उसने उसकी चिट्ठियों को भी रोक लिया हो ताकि बिहारीलाल को उसके सतीत्व पर विश्वास न हो जाय। अब उसे मालूम हो चुका था कि गुलामरसूल कम्यूनिस्ट पार्टी का प्रधान है और प्रेम उस पार्टी की मुख्य कार्य करने वाली। इससे वह प्रेम से सशंक हो रही थी।

जब मोहनलाल और सुधा लौटकर आये तो विमला ने उस दिन की घटना का सविस्तार वर्णन कर दिया और साथ ही प्रेम पर अपना संदेह भी बता दिया। मोहनलाल इस घटना की बात सुन गम्भीर हो गया। उसने कहा, "गुलामरसूल के पिट जाने का मुझे शोक नहीं। ऐसे आदमी के मर जाने से भी कुछ हानि नहीं है। हाँ, प्रेम के विषय में बात विचारणीय है। लोगों में यह बात फैल रही है कि प्रेम गुलामरसूल से प्रेम करती है। ऐसी अवस्था में वह गुलामरसूल से यह षडयन्त्र चलवा रही हो कुछ अस्वाभाविक प्रतीत होता है। इस विषय में कुछ अधिक प्रमाण और जानकारी की आवश्यकता है। तब ही हम उस पर दोषारोपण कर सकते हैं।

प्रातःकाल गुलामरसूल के माल पर पिट जाने का वृत्तान्त समाचार-पत्र में छपा। वह वास्तविकता से सर्वथा दूसरे रङ्ग में था। समाचार का

शीर्षक था 'पूँजीपतियों की गुंडेबाजी'। नीचे समाचार इस प्रकार था:—

"गुलामरसूल, प्रधान कम्यूनिस्ट पार्टी लाहौर, जो सेठ धन्नाराम की मिलों में हड़तालियों का पथ-प्रदर्शन कर रहा है, सायंकाल माल पर सैर करते हुए, गुंडों से घेर लिया गया और पीटपीटकर अधमरा कर दिया गया। इस समय उसकी अवस्था चिन्ताजनक है। हमारे संवाद-दाता के पूछने पर कि क्या वह इस घटना के विपरीत कोई कार्यवाही पुलिस अथवा कोर्ट में करने का विचार रखता है उसने उत्तर दिया, 'नहीं, मैं मज़दूरों का पक्ष लेते हुए सिर पर आने वाले कष्टों को चुपचाप सहन करना अधिक लाभकारी समझता हूं। मेरा आत्मत्याग ज़रूर रङ्ग लायेगा और सरमायादारों के कफन में कील का काम देगा'।"

मोहनलाल इस समाचार को पढ़कर दंग रह गया। वह सब बात सच्चाई से कितनी दूर थी और कितनी शरारत से भरी हुई थी, अनुमान लगाना कठिन था। और फिर वह समाचार अपमानसूचक था। समाचार के शीर्षक के आधार पर समाचार-पत्र के संपादक और मुद्रक पर मान-हानि का दावा किया जा सकता था। मोहनलाल के मन में शरारत सूझी। वह जल्दी जल्दी कपड़े पहन, टांगा ले कैनालरोड सेठ धन्नाराम की कोठी पर जा पहुँचा। सेठ धन्नाराम भी समाचार को पढ़कर आग-बबूला हो रहे थे। परन्तु वह यह सोचते थे कि गुलामरसूल की बात झूठी सिद्ध करने के लिये ठोस प्रमाण चाहियें। वह अभी इस बात पर सोच ही रहे थे कि मोहनलाल वहां पहुँच गया। मोहनलाल को सेठ साहब जानते थे। वह कई बार उनके पास कांग्रेस के लिये चन्दा लेने आया था। मोहनलाल को देख सेठ साहब ने पूछा, "आइये बाबू मोहनलाल, कैसे आना हुआ है?"

मोहनलाल ने समाचार-पत्र सम्मुख रख पूछा, "आपने यह पढ़ा है? इसमें कुछ आपके विषय में है।"

"हां।"

"आप इस विषय में क्या करने वाले हैं?"

"मेरे बस में होता तो समाचार-पत्र के दफ़्तर को आग लगा देता।"

"इससे तो यह सिद्ध होता है कि आपने ही गुलामरसूल को पिटवाया है।"

"नहीं, इससे यह सिद्ध नहीं होता। यह सारा का सारा समाचार आद्योपान्त झूठा और अपमानसूचक है। मुझे समाचार-पत्र पर क्रोध इस कारण आ रहा है कि मैं हज़ारों रुपये मासिक के विज्ञापन इस पत्र में छपवाता हूं। फिर भी इन दुष्टों ने मुझसे पहले पूछने तक का यत्न नहीं किया।"

"तो आप समाचार-पत्र पर मान-हानि का दावा क्यों नहीं करते?"

"कर तो दूं, परन्तु गुलामरसूल की बात को झूठा सिद्ध करने के लिये कोई ठोस प्रमाण होना चाहिये। हमें सिद्ध कर देना चाहिये कि वह अमुक कारण से पीटा गया है।"

"यह तो मैं आपको बता सकता हूं और इसे सिद्ध भी कर सकूँगा। मैं आंखों देखने वाले और घटना में भाग लेने वाले लोगों को उपस्थित कर सकता हूं।"

सेठ धन्नाराम खुशी में कुर्सी से कूदकर खड़े हो गये। वह बोले, "बहुत खूब! तो आप जानते हैं कि वह क्यों पीटा गया है?"

"जी हां।"

"पीटने वालों को पहचानते हैं?"

"वह भी आजावेंगे। अगर आप उनका पृष्ठ-पोषण करेंगे तो। डर है कि कहीं वह मर गया तो मामला संगीन हो जायेगा।"

"नहीं, वह मरेगा नहीं। मैंने अभी टैलीफ़ून से उसकी हालत के विषय में पूछा है। मालूम हुआ है कि मज़े में चाय पी रहा है। डाक्टर खन्ना को आप जानते हैं?"

"हां! वही जिनकी लड़की ने अभी लव-मैरेज की है?"

"हां, वही। डाक्टर साहब से मेरा परिचय है। गुलामरसूल रात से उनकी कोठी में ही पड़ा है। डाक्टर साहब से मैंने उसकी हालत पूछी

थी।"

मोहनलाल ने घटना का वृत्तान्त इस प्रकार सुनाया, "सेठ साहब, मेरी जान पहिचान की एक लड़की है। वह माल पर किसी काम से जा रही थी। गुलामरसूल ने उससे छेड़छाड़ की। उस लड़की ने पहले तो उसे एक चपत लगाई, फिर जूते से पीटने लगी। इस समय रास्ता चलते लोगों ने उसे पकड़ लिया और पीटना शुरू कर दिया। लोगों ने समझा कि कोई पठान किसी हिन्दू लड़की को भगाने का यत्न कर रहा था।"

"परन्तु वह लड़की कोर्ट में जाकर बयान दे देगी?"

"यदि बात इस सीमा तक पहुंची तो जरूर देगी। परन्तु मैं समझता हूं मामला इतनी दूर तक नहीं पहुँचेगा। आप समाचार-पत्र वालों को धमकावें तो वे आपका वक्तव्य छापने को तैयार हो जावेंगे। उस वक्तव्य में हम गुलामरसूल की करतूत खोलकर लिख देंगे।"

"क्या वे छापेंगे?"

"उनका बाप भी छापेगा। नहीं तो समाचार-पत्र पर मान-हानि का दावा चलाया जाये।"

"तो ठीक है। मैं सम्पादक को अभी टैलीफून से पूछता हूं।"

सेठ साहब ने सम्पादक के घर टैलीफून किया। वह स्वयं टैलीफून पर उपस्थित था। सेठ साहब ने कहा, "सेठ धन्नाराम बोल रहा हूं।... आपने मेरी बाबत जो समाचार छापा है, उसके विषय में।......वह सर्वथा झूठ है......क्या? गुलामरसूल ने खुद लिखवाया है?......

"वह तो बतायेगा ही। परन्तु आपने बिना जांच किये सरासर मेरे खिलाफ लिख दिया। इस पर आपके लिखने का ढंग ऐसा है कि उससे आप निपक्ष सिद्ध नहीं होते। वह केवल समाचार ही नहीं है, प्रत्युत आपकी टीका-टिप्पणी भी प्रतीत होती है। आपका यह वक्तव्य अपमानजनक है।

"आपके पास जैसा समाचार आया वैसा छाप दिया! क्या इससे आपका उत्तरदायित्व कम हो जाता है? झूठे, निराधार और बेहूदा

समाचार, विशेष रूप से जिनकी जांच आप कर सकते हैं, कैसे छाप सकते हैं ? मैं भी लाहौर में रहता हूं। आपने टैलीफून पर पूछ ही लिया होता। अगर मैं मान-हानि का दावा करूं तो आप अपनी नियत के साफ होने को सिद्ध नहीं कर सकियेगा।

"आप पूछते हैं कि मैं क्या चाहता हूं ? सुनिये या तो आपकी ओर से एक बयान छाप दिया जाय कि यह समाचार गलत था और आपको इसका शोक है। या आप एक ऐसे आदमी का वक्तव्य छाप दें, जो उस घटना का साक्षी है। यह आदमी गुलामरसूल के पीटे जाने का कारण जानता है और घटना की बातों को गवाहों से सिद्ध भी कर सकता है।

"आप उस वक्तव्य को पहले देखियेगा फिर बतायेगा ? परन्तु आपने मेरे विषय में तो बिना पूछगीछ के छाप दिया है।

"देखिये, मैं आपको चेतावनी देता हूं कि यदि कल के पत्र में वह वक्तव्य, पत्र के उसी स्थान पर जहां गुलामरसूल के पीटे जाने का समाचार छपा है, न छापा गया तो मैं कानूनी चाराजोई करने पर विवश हो जाऊंगा और फिर एक ओर तो आपसे क्षमा मंगवाऊंगा, मान-हानि के लिये पचास हजार रुपया लूंगा और भविष्य में आपके समाचार-पत्र में विज्ञापन देने बन्द कर दूंगा। यह मैनेजर से पूछ लेना कि मेरे विज्ञापन हजारों रुपये मासिक के होते हैं।

"हां, अभी एक घण्टे में वक्तव्य दफ्तर में पहुँच जायगा।"

इतना कह सेठ साहब ने टैलीफून बन्द कर दिया और मोहनलाल की ओर घूमकर बोले, "ये सम्पादक लोग भी कुत्ते की दुम की भांति टेढ़े होते हैं। बिना बल-प्रयोग के सीधे नहीं होते। हां, तो अब अपनी ओर से वक्तव्य लिख दें। मैं अभी टाइप करवाकर भेज दूंगा।"

मोहनलाल ने दो कालम का लम्बा वक्तव्य लिख दिया। उसमें गुलामरसूल के पीटे जाने के कारणों को सर्वथा स्पष्ट शब्दों में वर्णन कर दिया। अन्त में उसने लिखा, "गुलामरसूल अपने पीटे जाने का कारण जानता है और वह पुलिस में पीटे जाने की रिपोर्ट न लिखवाकर

उस कारण को प्रकट नहीं होने देना चाहता। मैं चुनौती देता हूँ कि वह मेरी बात को झूठी साबित करे। यदि वह कोर्ट में जाना चाहे तो मैं वहां भी अपनी बात सिद्ध कर सकता हूं। लोगों को ऐसे लीडरों से बचना चाहिये।"

वक्तव्य के नीचे मोहनलाल ने अपना पूरा परिचय, और काँग्रेस का मन्त्री होना भी लिख दिया था।

[८]

प्रेम ने जब विमला से सुना कि गुलामरसूल बुरी तरह पीटा गया है, और वह बेहोश, लोहू से लथपथ सड़क पर पड़ा है तो घबराकर भागी और उसी स्थान पर पहुँची जहां उसने विमला को गाड़ी में बैठाया था। वहां लोगों की भीड़ लगी थी। उसने मोटर से उतरकर एक से पूछा, "क्या है?"

एक ने गुलामरसूल की ओर संकेत कर कहा, "किसी औरत को छेड़ा था। लोगों ने पीट दिया है।"

गुलामरसूल बेहोश नहीं हुआ था। हां, चोट बहुत खा जाने से चलने में असमर्थ हो गया था। वह पटरी के किनारे पर सिर को हाथों से पकड़े बैठा था। खद्दर का थान पावों तले रौंधा हुआ समीप ही पड़ा था।

प्रेम उसके पास गयी। गुलामरसूल ने दयनीय दृष्टि से उसकी ओर देखा। प्रेम ने किसी की सहायता के लिये इधर उधर दृष्टि दौड़ाई। एक नवयुवक ने, जो साधारण सूती कपड़े का सूट पहने समीप खड़ा था, प्रेम से पूछा, "इसे कहां ले जाना है?"

प्रेम ने उस युवक को पहिचान लिया। वह बोली, "ओह, बाबू जगन्नाथ! जरा सहायता देकर मोटर में बैठा दीजिये।"

सब लोग अचम्भे में प्रेम की ओर देख रहे थे। उनको एक हिन्दू लड़की का पठान युवक की सहायता के लिये आना कुछ विलक्षण प्रतीत हो रहा था। पंजाब के वर्तमान वातावरण में यह बात लोगों को

नापसन्द थी।

जगन्नाथ ने और प्रेम ने आश्रय दे गुलामरसूल को मोटर की पिछली सीट पर लेटा दिया। मोटर की अगली सीट पर प्रेम मोटर चलाने के लिये बैठ गयी। जगन्नाथ, जो भूमि पर मोटर के पास खड़ा था, प्रेम से कहने लगा, "ऐसे आदमी के लिये आप सीमा से अधिक दयालु हो रही हैं।"

"यह हमारी पार्टी का प्रधान है।"

"इस समय प्रधान नहीं, प्रत्युत एक गुंडे का कार्य कर रहा था।"

"मैं ऐसा नहीं समझती।"

जगन्नाथ ने कन्धों को ऊंचे उठाकर असन्तोष प्रकट कर नमस्ते कही और अपने मार्ग पर चला गया।

यह कहानी, कि गुलामरसूल को हड़तालियों का नेता होने के कारण पीटा गया है, प्रेम ने अपने पिता को बताई थी। जब गुलामरसूल को लेकर वह कोठी में पहुंची तो डाक्टर साहब का उसके पीटे जाने का कारण पूछना स्वाभाविक ही था। प्रेम विमला की बात बताना नहीं चाहती थी। स्वाभाविक तौर पर इस कहानी को सुनने पर डाक्टर साहब में गुलामरसूल से सहानुभूति उत्पन्न हो गयी। उन्होंने उसके घावों पर मरहम-पट्टी की और ठहरने के लिये कोठी में स्थान दे दिया। डाक्टर साहब पुलिस में रिपोर्ट भी लिखवाना चाहते थे, परन्तु गुलामरसूल ने इनकार करते हुए कहा, "मैं इस मामले में पुलिस अथवा कोर्ट से न्याय की आशा नहीं करता।"

इस पर डाक्टर साहब ने समाचार-पत्र के सम्वाददाता को बुला कर गुलामरसूल के पीटे जाने का समाचार उसी रूप में जैसा प्रेम ने बताया था लिखा दिया। इस प्रकार गलत रिपोर्ट पत्र में छप गयी।

जब सेठ धन्नाराम ने समाचार-पत्र के सम्पादक को टैलीफून किया तो पहले तो वह अभिमानयुक्त भाव में बातें करता रहा, परन्तु ज्योंही उसे बताया गया कि समाचार-पत्र में हजारों रुपये मासिक के विज्ञापन

सेठ साहब के होते हैं तो उसके पांवों-तले से मट्टी खिसक गयी। वह सेठ साहब के आदमी का वक्तव्य छापने पर तैयार हो गया। पश्चात उसने समाचार-पत्र के मैनेजर से भी बात की और दोनों के परामर्श का यह परिणाम हुआ कि केवल मोहनलाल का वक्तव्य ही नहीं छपा, प्रत्युत सम्पादकीय लेख में उक्त झूठे समाचार के लिये क्षमा भी मांग ली गयी। इस डांट-डपट का एक परिणाम यह भी हुआ कि समाचार-पत्र की नीति मज़दूरों का पक्ष छोड़कर सेठ साहब के पक्ष में हो गयी।

[६]

समाचार-पत्र में पहले दिन का समाचार पढ़कर हड़तालियों को असीम क्रोध चढ़ आया। वे सहस्त्रों की संख्या में, अपने क्रोध का प्रदर्शन करने के लिये, सेठ साहब की कोठी के बाहर एकत्रित हो गये।

सेठ साहब समझते थे कि परिस्थिति अति भययुक्त है। तनिकमात्र के भड़काने से वे कोठी को आग लगा देंगे। अतएव वह, रामलाल और मोहिनी कोठी के सब से भीतरी कमरे में छुपकर बैठे रहे। बाहर केवल एक चपरासी था जिसकी परवाह न कर लोग कोठी की लॉन में फूलों की क्यारियों और गमलों को रोंदते और उलट-पलट करते हुए घूमते रहे।

हड़ताली शायद और भी ऊधम मचाते, परन्तु उनमें से कुछ लोग, जो सेठ साहब ने हड़तालियों में भेदिये छोड़ रखे थे, लोगों को अधिक हानि करने से रोकते रहे। जब उन्होंने देखा कि लोग काबू से बाहर हो रहे हैं, तो उन्होंने लोगों को कह दिया, "बन्दूकची पुलिस आ रही है। भाग जाओ। गोली चल जायेगी।"

इतना कह उनमें से कुछ भाग खड़े हुए। कुछ दूसरे लोगों को यह कह कि गुलामरसूल का समाचार लेना चाहिये लोगों को फिरोजपुर रोड की ओर ले गये।

जब सब लोग चले गये तो सेठ साहब ने समाचार-पत्र के संवाददाता को बुला अपनी कोठी की दुर्दशा दिखा दी और कहा, "यदि मैं चाहता तो पुलिस को बुला उन पर गोली चलवा देता। मेरा बङ्गला सन लाईफ

नापसन्द थी।

जगन्नाथ ने और प्रेम ने आश्रय दे गुलामरसूल को मोटर
सीट पर लेटा दिया। मोटर की अगली सीट पर प्रेम मोटर
लिये बैठ गयी। जगन्नाथ, जो भूमि पर मोटर के पास खड़ा
से कहने लगा, "ऐसे आदमी के लिये आप सीमा से बाहि
हो रही हैं।"

"यह हमारी पार्टी का प्रधान है।"

"इस समय प्रधान नहीं, प्रत्युत एक गुंडे का कार्य कर रहा

"मैं ऐसा नहीं समझती।"

जगन्नाथ ने कन्धों को ऊंचे उठाकर असन्तोष प्रकट क
कही और अपने मार्ग पर चला गया।

यह कहानी, कि गुलामरसूल को हड़तालियों का नेता होने
पीटा गया है, प्रेम ने अपने पिता को बताई थी। जब गुलाम
लेकर वह कोठी में पहुंची तो डाक्टर साहब का उसके पीटे
कारण पूछना स्वाभाविक ही था। प्रेम विमला की बात
चाहती थी। स्वाभाविक तौर पर इस कहानी को सुनने पर डा
में गुलामरसूल से सहानुभूति उत्पन्न हो गयी। उन्होंने उसके
मरहम-पट्टी की और ठहरने के लिये कोठी में स्थान दे दिय
साहब पुलिस में रिपोर्ट भी लिखवाना चाहते थे, परन्तु गु
इनकार करते हुए कहा, "मैं इस मामले में पुलिस अथवा के
की आशा नहीं करता।"

इस पर डाक्टर साहब ने समाचार-पत्र के सम्वाददात
कर गुलामरसूल के पीटे जाने का समाचार उसी रूप में ज
बताया था लिखा दिया। इस प्रकार ग़लत रिपोर्ट पत्र में छप

जब सेठ धन्नाराम ने समाचार-पत्र के सम्पादक को
तो पहले तो वह अभिमानयुक्त भाव में बातें करता रहा,
उसे बताया गया कि समाचार-पत्र में हजारों रुपये मासिक

थे। कुछ लड़कियां और औरतें भी थीं। लड़कियां प्रायः कॉलेजों में पढ़ने वाली थीं। गुलामरसूल प्रधान के स्थान पर बैठा था। उसके हाथों, सिर और मुख पर पट्टियां बंधी थीं। सब उपस्थित-गण उसे दिलचस्पी से देख रहे थे।

मोहनलाल का वक्तव्य छप चुका था। वे लोग जो उसके वक्तव्य को सत्य नहीं मानते थे गुलामरसूल को शहीद मानते थे। दूसरे जो मोहनलाल के वक्तव्य को ठीक समझते थे गुलामरसूल को प्रधान-पद से हटाना चाहते थे। इन लोगों की संख्या बहुत कम थी। प्रायः लोग सभा के प्रधान के साथ सहानुभूति रखते थे।

पार्टी के मन्त्री ने हड़ताल की अवस्था पर रिपोर्ट सुनाई। उसने बताया, "हड़ताल हुए दो सप्ताह हो गये हैं। सब हड़तालियों की संख्या पांच हज़ार एक सौ बारह है। कारखानों में पूरी हड़ताल है। कोई भी काली भेड़ नहीं बनी।"

इस पर सबने तालियाँ पीट दीं।

"मज़दूरों में पूर्ण रूप से एकता है। मज़दूरों की यूनियन ने निश्चय किया है कि इस मास के अन्त तक किसी को सहायता न दी जाये। महीना समाप्त होने पर अगले मास की पहिली तारीख़ से, वे लोग जो अकेले हैं, यूनियन से खोले गये सांझे भोजनालयों में भोजन करेंगे। ऐसे लोगों की संख्या तीन हज़ार के लगभग है। उनके लिये टिकट बना दिये गये हैं। ये बांट दिये जायेंगे, जिनको दिखाकर ये लोग बिना मूल्य खाना पायेंगे। जो लोग परिवारों के साथ रहते हैं उन्हें पांच आने रोज़ के हिसाब से सहायता दी जायेगी। वे लोग जो अपने बाल-बच्चों को गांव में भेजना चाहते हैं उन्हें रेल के टिकट के पैसे दिये जायेंगे। इस प्रकार यूनियन ने अपने अगले मास का हिसाब लगाया है। एक मास का खर्चा चालीस हज़ार के लगभग है। यूनियन ने हमारी पार्टी से प्रार्थना की है कि हम उसकी सहायता करें। हम उनके लिये लोगों में सहानुभूति उत्पन्न करें और यह चालीस हज़ार रुपया इकट्ठा करके दें।"

इन्शोरेंस कम्पनी में बीमा हुआ है। यदि उनकी ओर से कमिश्नर को टेलीफ़ून करवा देता तो निश्चय आज गोली चल जाती, परन्तु मैंने ऐसा नहीं किया। मुझे किसी को मरवाकर दुःख होता है। आखिर वे बेचारे भूले-भटके हिन्दुस्तानी ही तो हैं।"

अगले दिन समाचार-पत्र में मोहनलाल का वक्तव्य छपा और सम्पादक की ओर से पिछले दिन के समाचार के झूठे होने की बात छपी। साथ ही हड़तालियों के क्रोध में सेठ साहब की कोठी पर धावा और बङ्गले को हानि का समाचार छपा। लोगों को अपने व्यवहार पर और अपने नेताओं पर अविश्वास होने लगा। मोहनलाल का कांग्रेस-कमेटी का मन्त्री होना उसके वक्तव्य की सच्चाई की गारन्टी थी और फिर उसने चुनौती दी थी। साथ ही सेठ मन्नाराम ने उस दिन के समाचार-पत्र की सैकड़ों प्रतियां मजदूरों में बंटवा दीं। सेठ साहब के भेदिये भी लोगों के मन को दुर्बल करने का प्रयत्न कर रहे थे।

इस प्रकार हड़ताल की कमर तोड़ी जा रही थी। गुलामरसूल की चरित्रहीनता का समाचार पढ़ समझदार लोग हड़ताल तोड़ने पर तैयार हो गये। इक्का दुक्का सेठ साहब के पास पहुँचने भी लगे। वे कहते थे, "हज़ूर, हमसे भूल हो गयी है। हमें क्षमा कर दिया जाय और हमें हाज़िर होने की स्वीकृति दे दी जाय।"

सेठ साहब कहते थे, "एक-एक दो-दो के लिये कारखाने नहीं चलाये जा सकते। सब लोग इकट्ठे होकर आओ तो काम जारी हो सकता है।"

ये लोग फिर हड़तालियों में जाते और सीधे अथवा टेढ़े ढंग से उनको हड़ताल भंग करने को कहते।

[१०]

हड़ताल के विषय में और गुलामरसूल के पिट जाने के विषय में कम्यूनिस्ट पार्टी की बैठक हुई। लगभग दो सौ सदस्य उपस्थित थे। इसमें कारखानों के कारीगर, मज़दूर, कॉलेजों के विद्यार्थी, दूकानदारों के नौकर, टांगे चलाने वाले और कुछ पढ़े-लिखे विद्वान लोग उपस्थित

थे। कुछ लड़कियां और औरतें भी थीं। लड़कियां प्रायः कॉलेजों में पढ़ने वाली थीं। गुलामरसूल प्रधान के स्थान पर बैठा था। उसके हाथों, सिर और मुख पर पट्टियां बंधी थीं। सब उपस्थित-गण उसे दिलचस्पी से देख रहे थे।

मोहनलाल का वक्तव्य छप चुका था। वे लोग जो उसके वक्तव्य को सत्य नहीं मानते थे गुलामरसूल को शहीद मानते थे। दूसरे जो मोहनलाल के वक्तव्य को ठीक समझते थे गुलामरसूल को प्रधान पद से हटाना चाहते थे। इन लोगों की संख्या बहुत कम थी। प्रायः लोग सभा के प्रधान के साथ सहानुभूति रखते थे।

पार्टी के मन्त्री ने हड़ताल की अवस्था पर रिपोर्ट सुनाई। उसने बताया, "हड़ताल हुए दो सप्ताह हो गये हैं। सब हड़तालियों की संख्या पांच हज़ार एक सौ बारह है। कारखानों में पूरी हड़ताल है। कोई भी काली भेड़ नहीं बनी।"

इस पर सबने तालियाँ पीट दीं।

"मज़दूरों में पूर्ण रूप से एकता है। मज़दूरों की यूनियन ने निश्चय किया है कि इस मास के अन्त तक किसी को सहायता न दी जाये। महीना समाप्त होने पर अगले मास की पहिली तारीख से, वे लोग जो अकेले हैं, यूनियन से खोले गये सांझे भोजनालयों में भोजन करेंगे। ऐसे लोगों की संख्या तीन हज़ार के लगभग है। उनके लिये टिकट बना दिये गये हैं। ये बांट दिये जायेंगे, जिनको दिखाकर ये लोग बिना मूल्य खाना पायेंगे। जो लोग परिवारों के साथ रहते हैं उन्हें पांच आने रोज़ के हिसाब से सहायता दी जायेगी। वे लोग जो अपने बाल-बच्चों को गांव में भेजना चाहते हैं उन्हें रेल के टिकट के पैसे दिये जायेंगे। इस प्रकार यूनियन ने अपने अगले मास का हिसाब लगाया है। एक मास का खर्चा चालीस हज़ार के लगभग है। यूनियन ने हमारी पार्टी से प्रार्थना की है कि हम उसकी सहायता करें। हम उनके लिये लोगों में सहानुभूति उत्पन्न करें और यह चालीस हज़ार रुपया इकट्ठा करके दें।"

इसके पश्चात् प्रधान ने आम सदस्यों को सम्मति प्रकट करने के लिये आमंत्रित किया। एक आदमी खड़ा हो गया। यह वही आदमी था जिसने गुलामरसूल को गाड़ी तक ले जाकर बैठाने में प्रेम की सहायता की थी और जिसे प्रेम ने जगन्नाथ कहकर पुकारा था। वह आज खद्दर की धोती-कुर्ता पहने हुए था। उसने पूछा, "हमारी पार्टी का हड़तालियों से क्या सम्बन्ध है?"

पार्टी के मन्त्री ने उठकर उत्तर दिया, "हमने ही इन लोगों को अपने अधिकारों के लिये लड़ने के लिये तैयार किया है।"

"वे कौन से अधिकार हैं जिनके लिये वे लड़ रहे हैं।"

इस पर चारों ओर से आवाज़ आनी आरम्भ हो गई। "चुप करो, बैठ जाओ, समय व्यर्थ न गँवाओ।"

जगन्नाथ बैठा नहीं। चुपचाप लोगों का क्रोध शान्त हो जाने की प्रतीक्षा करता रहा। जब लोगों ने देखा कि वह उनके शोर से घबराया नहीं, तब कुछ शान्त हो मन्त्री का मुख देखने लगे।

मन्त्री ने जगन्नाथ की ओर देखकर कहा, "आप बैठ जाइये।"

"क्यों?"

"आपकी बात कोई सुनना नहीं चाहता।"

इस पर लोगों ने फिर 'आर्डर आर्डर' के नारे लगाये। परन्तु जगन्नाथ अटल था। जब लोग कुछ शान्त हुए तो उसने फिर कहा, "मैं कुछ कहना चाहता हूँ।"

"हम सुनना नहीं चाहते।" लोगों का उत्तर था।

"तो हम लोगों को सभा में बुलाया क्यों गया है?" जगन्नाथ ने ऊँची आवाज़ में कहा।

प्रधान ने मन्त्री को कुछ कहा। मन्त्री ने हाथ से लोगों को चुप रहने का संकेत कर कहा, "लाला जगन्नाथ की बात आप सुन लें। शान्ति से सुनिये।"

जगन्नाथ अभी तक अपने स्थान पर खड़ा था। वह कहने लगा,

"जब प्रधान ने हमारी सम्मति मांगी है तो उपस्थित सज्जनों को प्रधान के कथन का विचार कर मेरी बात सुन लेनी चाहिये। फिर मन्त्री महोदय को क्या अधिकार था कि वह मुझे कहें कि मैं बिना बात किये बैठ जाऊं। आप लोगों को ऐसा नहीं करना चाहिये। अब सुनिये। हड़ताल करने वालों को धोखा देकर हड़ताल में शामिल कराया गया है। सेठ धन्नाराम के कारखानों में मज़दूरों को कोई भी ऐसी तकलीफ़ नहीं जो किसी भी दूसरे कारखाने में उनको नहीं है। यों तो मज़दूरों और कर्मचारियों के लिये सर्वत्र कठिनाइयां हैं, परन्तु सेठ धन्नाराम के कारखाने में ये कुछ कम ही हैं। ऐसी अवस्था में उनको झूठ-मूठ की बातें बनाकर भड़का दिया गया है।"

उपस्थित लोगों में से किसी ने पूछा, "किसने भड़काया है?"

"मिस्टर गुलामरसूल और श्रीमती प्रेमदेवी ने।"

"बकवास बंद करो," कई लोगों ने क्रोध में कहा।

"मैं इन दोनों के विपरीत अविश्वास का प्रस्ताव करता हूँ।"

जगन्नाथ के समीप से ही एक आदमी ने उसकी बांह पकड़कर उसको बलपूर्वक नीचे बैठा दिया, परन्तु जगन्नाथ इस पर हटने वाला नहीं था। वह पुनः हिम्मत कर उठा और कहने लगा, "मैं नहीं समझता कि क्यों मुझे पूरी बात कहने का अवसर नहीं दिया जाता। क्या प्रधान के अनुचित कामों पर सभा में टीका-टिप्पणी नहीं हो सकती। मैं प्रधान से प्रार्थना करता हूँ कि मैंने जो प्रस्ताव किया है उस पर मुझे अपने विचार पूर्ण रूप से प्रकट करने का अवसर दिया जाय। जो लोग व्यर्थ में झगड़ा करते हैं उन्हें शान्त किया जाय। और यदि वह ऐसा नहीं कर सकते तो सभा करने की आवश्यकता ही क्या थी? जैसे उन्होंने अपनी ज़िम्मेदारी पर इतनी बड़ी हड़ताल करवा दी है, वैसे ही हमारी पार्टी का निर्णय भी घर बैठे ही दे देते। जब सभा बुलाई है तो दूसरे पक्ष की बात भी तो सुननी चाहिये।

"मैंने कहा है कि मिस्टर गुलामरसूल और श्रीमती प्रेमदेवी ने

का मूल्य अन्य गुणों से अधिक आंकने लगी है।

गुलामरसूल ने प्रेम के मुख को देख उसके मन के भावों को समझ लिया। उसने बात को टालने के विचार से कह दिया, "यों तो तुम भी कुछ कम सुन्दर नहीं हो, प्रेम! लेकिन बाहरी खूबसूरती और अन्दरूनी आलापन में मैं तमीज नहीं कर सकता। दोनों में कौन बड़ा है फैसला नहीं कर सकता। इसी से दोनों को पकड़े हुए हूं।"

प्रेम ने एक लम्बी सांस खैंची और चुपचाप मोटर चलाती गयी।

[१३]

प्रेम ने पार्टी के अन्दर तो गुलामरसूल की जीत करा दी, परन्तु जन-साधारण में, मोहनलाल के वक्तव्य के पश्चात, कम्यूनिस्ट पार्टी और उसके प्रधान की निन्दा होती ही रही। अपने पहले वक्तव्य के कुछ दिन पश्चात मोहनलाल ने एक दूसरा वक्तव्य निकाला। इसमें उसने सेठ धन्नाराम के कारखानों के विषय में लिखा था। लिखा कि वहां मजदूरों को क्या वेतन और क्या सुविधायें दी जाती हैं और वे सब दूसरे कारखानों से कितनी अधिक हैं। साथ ही मोहनलाल ने यह बताया कि कम्यूनिस्ट पार्टी के कुछ अनुभवहीन और स्वार्थी सदस्य, केवल अपना नेतापन स्थिर रखने के लिये, मज़दूरों को भ्रम में डाल हड़ताल को लम्बा कर रहे हैं। अन्त में मोहनलाल ने लिखा था, "मैं समझता हूं कि मज़दूरों की अवस्था का ठीक ठीक सुधार केवल स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात् ही हो सकता है।"

इस वक्तव्य ने तो लोगों के मन में हड़तालियों से रही-सही सहानुभूति भी मिटा दी। कम्यूनिस्ट पार्टी से तो लोग घृणा करने लगे। अतिरिक्त इसके सेठ धन्नाराम ने एक पैम्फलेट छपवाकर लाखों की संख्या में वितरण करवाया। इसमें उन्होंने आंकड़े देकर बताया कि वह अपने कारखानों में काम करने वालों को कितनी सुविधायें और कितना अधिक वेतन देते हैं। इस पत्रक में उन्होंने यह भी लिखा कि वे पचास आदमी क्यों और किस प्रकार निकाले गये थे। जब लोगों को यह पता चला कि वे

स्वयं इकट्ठा किया था। शेष अन्य स्वयंसेवकों ने मिलकर। वह समझती थी कि नया मास आरम्भ होने तक यदि वे चालीस हज़ार एकत्रित कर सके तो हड़ताल एक मास और चल सकती है और इससे सफल होने की आशा पचास प्रति शत बढ़ सकती है। परन्तु चालीस हज़ार अभी दूर था। बहुत कठिनाई से वह दस हज़ार तक पहुँच सकी थी।

यह हड़ताल के आरम्भ के दिनों की बात है। प्रेम एक दिन पार्टी के दफ़्तर से नीचे उतरी ही थी कि सेठ धन्नाराम की लड़की मोहिनी, जो मोटरकार में कहीं जा रही थी, उसे देख ठहर गयी। मोहिनी ने प्रेम से कभी नहीं कहा कि वह सेठ धन्नाराम की लड़की है। वह तो उसके पास एक विद्यार्थी के रूप में जाया करती थी।

मोटर खड़ी कर मोहिनी ने प्रेम से पूछा, "बहिन जी, कहां चलियेगा? आइये मोटर में ले चलूं।"

प्रेम ने कुछ सोचकर कहा, "आपके पास कितना समय है? हमें दो तीन स्थानों पर जाना है।"

"मैं तो बाज़ार जा रही थी। कोई आवश्यक काम नहीं है। आइये, ले चलूँगी।"

प्रेम और उसके साथ दो लड़कियां और मोटर में बैठ गयीं। मोहिनी मोटर चला रही थी, प्रेम उसके पास बैठी थी। प्रेम ने मोहिनी को कष्ट देने के लिये क्षमा मांगते हुए कहा, "मेरी गाड़ी आज मरम्मत के लिये गयी है और हम टांगे में जाना चाहती थीं। इससे केवल दो-तीन स्थान घूमने पर दिन भर खतम हो जाता। आपका बहुत धन्यवाद है। हमारा समय बहुत बच जायेगा। आपकी कुछ हानि तो नहीं हुई?"

"कुछ हानि नहीं हुई," मोहिनी ने कहा, "आप कहां चलियेगा?"

प्रेम ने एक सूची निकाली और पढ़कर बोली, "मुल्तान रोड पर। आप जानती है कि हम किस काम पर जा रही हैं?"

"नहीं।"

"आपको मालूम होगा कि सेठ धन्नाराम के कारखानों में मज़दूरों

"वह क्या ?" अविनाश ने पूछा।

"वह बात ऐसे ढंग से करते थे जो अतिरोचक प्रतीत होती थी।"

"तभी फट फट उत्तर दे रही थी।"

कान्ता हंस पड़ी और 'स्टिक्स' खाने लगी। रैस्टोरेंट से जब पेट पूजा कर निकले तो फिर वे लारेन्स गार्डन की ओर चल पड़े। इस समय बत्तियां जल गयी थीं।

[५]

आज जब अविनाश घर पहुँचा तो उसका पिता अभी घर नहीं आया था। उसने खाना कुछ दिखाने के लिये खा लिया और पुस्तक सामने रख पढ़ने का बहाना करने लगा। यथार्थ में वह विचार कर रहा था कि कान्ता की बातचीत का उसके पिता पर क्या प्रभाव हुआ होगा। जहां तक बात करने के ढंग का सम्बन्ध था वह कान्ता की जीत समझता था। परन्तु क्या पिता जी के विचारों में परिवर्तन हो गया होगा ? क्या वह उसे अपनी पुत्र-वधू बनाने को तैयार हो जायेंगे ? इन्हीं प्रश्नों के पक्ष-विपक्ष में वह सोच रहा था। विचार करते करते उसे नींद आ गयी। धीरे धीरे उसका मस्तक झुककर पुस्तक पर टिक गया। उसकी नींद खुली तो पिता के शब्द उसके कान में पड़े। पहले तो उसे ये स्वप्न में सुनाई देते प्रतीत हुए। धीरे धीरे उसे चेतनता होती गयी और उसे पिता के वाक्य अधिक और अधिक स्पष्ट सुनाई देने लगे। उसके मन में आया कि वह सोने का बहाना करता रहे ताकि पिता जी जो कुछ माता जी को बता रहे थे सुन ले। अतएव वह आंखें मूंदे सुनता रहा। पंडित जी अविनाश की माता को कह रहे थे, "बहुत चालाक लड़की है। यद्यपि आयु में अभी सोलह-सत्रह वर्ष की प्रतीत होती है, पर जानकारी में बहुत बड़ी आयु वालों के बराबर ही समझना चाहिये। हमारा अवि तो उसके सम्मुख सर्वथा बुद्धू प्रतीत होता है। एक बात जो मुझे उसकी पसन्द है वह उसका दृढ़ चरित्र है। उस छोकरी ने मुझे निरुत्तर कर दिया। मैं जो कुछ भी कहता था उसका तुरन्त ऐसा उत्तर

देती थी कि मेरा मुख बन्द हो जाता था।"

"तो तुम उसे पसन्द कर आये हो?"

"उसकी चतुराई के अतिरिक्त कई और बातें भी तो देखनी हैं। उसने अपने बाप का नाम बताने से इनकार कर दिया। इस पर मैंने सोचा नीति से काम लेना चाहिये। मैंने इनको जाने दिया।

"दोनों पहले तो चिड़ियाघर की ओर चले गये, पश्चात् लौटकर एलफिन्स्टन रैस्टोरेंट में चले आये। वहां खाना खाया। दाम लड़की ने दिये। मैं छुपकर उनका पीछा करता रहा। होटल से वे फिर बाग में जा बैठे। मैं छुपे छुपे उन्हें देखता रहा। वहां से दोनों पृथक पृथक हो गये। मैंने लड़की का पीछा किया। वह पञ्जाब जीमखाना क्लब में चली गयी। मैं बाहर एक पेड़ के पीछे छुपकर खड़ा रहा। चार पांच मिनट के पश्चात्, वह एक मोटरकार में बैठी हुई बाहर आई। गाड़ी वह स्वयं चला रही थी। प्रतीत होता है कि अवि से मिलने के लिये गाड़ी वह क्लब में छोड़ गयी थी। मैंने गाड़ी का नम्बर पढ़ अपनी पाकेट-बुक में लिख लिया है। कल पुलिस-दफ़्तर से मालूम हो जायेगा कि गाड़ी किसके नाम पर रजिस्टर्ड है।"

"तो इसका अर्थ यह हुआ कि किसी धनी की लड़की है।"

"यही तो बुरी बात है। एक धनी की लड़की को अपना नाम-धाम बताने में क्यों आपत्ति है? अवश्य दाल में कुछ काला है। मुझे तो कुछ षड्यन्त्र प्रतीत होता है।"

"तो शीघ्र ही इस षड्यन्त्र को प्रत्यक्ष कर देना चाहिये।"

"मैं कल इस रहस्य को खोल दूंगा।"

इस समय अविनाश ने नींद से जागने का बहाना किया। पिता उसे जागा देख चुप कर गया। जब पुत्र एक दो अंगड़ाइयां ले चुका तो पिता ने कहा, "अवि!"

"जी हां।" अवि ने चौंककर उत्तर दिया। वह यह प्रकट करना चाहता था कि उसने पिता की बातें नहीं सुनीं।

"देखा तुमने। यह लड़की कितनी धूर्त है। तुम्हें अवश्य उल्लू बनायेगी। और चाहे कुछ न हो, तुम्हारा समय तो वह व्यर्थ खो रही है। तीन चार घन्टे जो तुम सायंकाल आवारागर्दी करते हो उससे थक जाते हो और कॉलेज का काम नहीं कर सकते। देखो न! पढ़ने बैठे थे और नींद आगयी थी।"

"पिता जी, मैं अब अधिक नियम से पढ़ाई करूंगा। यह नींद तो खाने की मस्ती थी। मैं अब पढ़ने के लिये बिलकुल तरो-ताज़ा हूं।"

"हां, तुम्हें चाहिये कि कॉलेज से सीधे घर आया करो। कुछ खा-पीकर एक घन्टा घूमने चले गये। पश्चात् चार पांच घंटे नित्य अध्ययन करो। मैं कल से तुम्हें ऐसा ही देखना चाहता हूँ।"

"पिता जी, मैं यत्न करूंगा। मैं उससे मिलने के लिये कोई और समय निश्चित कर लूंगा।"

"उससे मिलने की कुछ आवश्यकता नहीं। मुझे तो वह कोई भारी जालसाज़ प्रतीत होती है।"

"नहीं पिता जी, ऐसा न कहिये। वह बहुत सीधी लड़की है। यथार्थ में उलटी गति से चलने वाले संसार को उसकी सीधी चाल उलटी प्रतीत होती है।"

"नहीं बाबा! तुम अभी अनुभवहीन हो। अब शीघ्र ही तुम्हें सब कुछ प्रतीत हो जायेगा। यह जो तुम विवाह कह रहे हो गुड़ियों के विवाह से अधिक कुछ नहीं है।"

"पिता जी, किसी दूसरे के कहने से क्या होता है? मैं और वह जब कहते हैं तब यह विवाह के अतिरिक्त और हो ही क्या सकता है?"

"अच्छा, अच्छा! अब पढ़ो। तुम इन बातों को छोड़कर अपनी पढ़ाई में चित्त लगाओ। इन बातों को मुझ पर छोड़ो। मैं सब भेद खोलकर दिन की भांति प्रकाशमय कर दूंगा।"

[६]

अगले दिन जब निश्चित स्थान पर अविनाश कान्ता से मिलने

आया तो उसके स्थान पर एक युवक को टहलते देख झिझक गया। एक क्षण के लिये उसे देखने के लिये ठहर आगे निकल गया। फिर उसे समझ पड़ा कि कान्ता के न आने में उसके पिता का हाथ हो सकता है, और वहां पर खड़े युवक का सम्बन्ध उससे अवश्य है। उसके मन में आया कि उसी से जाकर सीधे पूछ ले। इसी विचार से वह लौट आया, परन्तु समीप पहुंच उसका विचार बदल गया। दूर से तो वह उसी की ओर आ रहा था परन्तु समीप पहुँच उसने कदम दूसरी ओर बदल दिये और उस युवक के समीप से गुजर गया।

उस युवक ने जब उसे अपनी ओर आते देखा तो वह टहलते-टहलते खड़ा हो गया और प्रतीक्षा करने लगा, परन्तु जब अविनाश ने एकाएक अपने कदम बदले और उसके पास से निकल जाने लगा तो उसने उसे पुकारा, "ठहरो।"

अविनाश ठहर गया और युवक की ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखने लगा। युवक ने पूछा, "तुम अविनाशचन्द्र हो?"

"जी। क्यों?"

"मैं तुमसे मिलने आया हूँ।"

"क्यों? और आप कौन हैं?"

"जिसकी तुम प्रतीक्षा कर रहे हो उसका मैं भाई हूं।"

इस समय अविनाश ने युवक को ध्यानपूर्वक देखा और उसमें कान्ता की आकृति के कुछ २ चिन्ह देख लिये। अविनाश को सन्देह हुआ कि वह उससे लड़ने आया है। अतएव वह सचेत खड़ा हो पूछने लगा, "क्या कहना चाहते हैं आप?"

"केवल यह कि मेरी बहिन आज यहां मिलने नहीं आ सकती और इसमें उसका कुछ भी दोष नहीं है। उसने चिट्ठी भेजी है।"

उस युवक ने जेब से एक लिफाफा निकालकर उसे दे दिया। अविनाश लिफाफा ले जेब में डालने लगा था कि युवक ने कहा, "तुम उसके हस्ताक्षर पहिचानते हो क्या?"

"जी, कुछ कुछ।" अविनाश ने कान्ता को चन्दे की रसीद लिखते देखा था।

"तो इसे पढ़ लो। कुछ मेरे सम्बन्ध में भी लिखा है।"

अविनाश ने चिट्ठी खोल ली और पढ़ी। कान्ता ने लिखा था, "प्रिय अवि, सब भेद खुल गया है। तुम्हारे पिता सत्य ही बहुत चतुर जासूस हैं। उन्होंने मेरे पिता का पता ढूँढ निकाला है। इस कारण मैं नहीं आसकी। मेरे भाई मेरे साथ सहानुभूति रखते हैं। मैं उन्हें तुम्हारे पास भेज रही हूँ। वह तुम्हें मेरा पूर्ण परिचय और मेरा अपने पिता का नाम न बताने का कारण बतायेंगे। अभी और अधिक नहीं लिख सकती। मैं इस समय कोठी में कैद हूँ। कल भाई साहब तुमसे मेरी चिट्ठी का उत्तर लेने के लिये फिर मिलेंगे। तुम उसमें अपने साथ तमाम बीती बात को लिखकर भेजना। मैं भी शेष समाचार कल तक भेजूँगी।"

अविनाश ने चिट्ठी जेब में डाल ली और युवक का मुख देखने लगा। युवक ने पूछा, "क्या अब तुम मुझ पर विश्वास करते हो?"

"यों तो अविश्वास का प्रश्न ही नहीं उठता। मैंने अपनी जानकारी में कोई बात ऐसी नहीं की कि जिसके कारण मैं लज्जित होऊँ अथवा भयभीत। और अब तो इस चिट्ठी में आप पर विश्वास करने को लिखा भी है।"

"तो चलो मेरे साथ। हम एकान्त में बैठकर बातचीत करेंगे।"

दोनों के मिलने का स्थान था पंजाब पब्लिक लायब्रेरी के बाहर की सड़क। वे वहां से चलकर मारकेट के समीप चले आये। वहां एक मोटर खड़ी थी। दोनों सवार हो लारेन्स गार्डन में उसी स्थान पर जा पहुंचे जहां कान्ता से बातें हुआ करती थीं। वहां जब बैठ गये तो उस युवक ने कहना आरम्भ किया, "तुम सेठ धन्नाराम को जानते हो?"

"जी। क्यों?"

"वह मेरे पिता हैं।"

"आपके और कान्ता के पिता ?" अविनाश ने विस्मय में पूछा, "नहीं, यह नहीं हो सकता। वह तो हड़तालियों की सहायता के लिये चन्दा किया करती थी।"

"इस पर भी यह सत्य ही है। यही कारण था कि वह छुपकर मज़दूरों की सहायता करती थी और अपना नाम भी बदल रखा था। उसका असली नाम मोहिनी है। मैं और वह दोनो पूंजीवाद को समाज की उन्नति में बाधक समझते हैं। इससे हमारी सहानुभूति मज़दूरों से होनी स्वाभाविक है।"

अविनाश को कान्ता (मोहिनी) का व्यवहार अब सर्वथा स्पष्ट प्रतीत होने लगा। इस पर भी यह जानकर कि वह इतने धनी बाप की बेटी है, वह विस्मय में अवाक बैठा रामलाल का मुख देखता रहा। वह अभी भी इस बात पर विश्वास करने में संकोच कर रहा था कि सेठ धन्नाराम की लड़की सेठ साहब के कारखानों के हड़ताली मज़दूरों की सहायता के लिये चार चार, आठ आठ आने चन्दा करती थी। रामलाल अविनाश के विस्मय का कारण समझ रहा था। उसने बात को और स्पष्ट करने के लिये कहा, "आज बारह बजे के लगभग पं० विशम्भर-दयाल जी का कार्ड मिला। मैं उस समय पिता जी के पास ही बैठा था। हमने प्रोफ़ेसर साहब को भीतर ही बुला लिया। जब वह आराम से बैठ गये तो उन्होंने बताया कि मेरी बहिन की आपके साथ मित्रता हो गयी है। वह कहने लगे, 'ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों में परस्पर कुछ प्रेम भी हो गया है। शायद यह अभी बहुत घना नहीं है। मुझे इसका किसी भांति ज्ञान हो गया। अतएव मैंने यह उचित समझा है कि आपको सूचित कर दूं। यदि आप इसको रोकने की इच्छा रखते हों तो अभी समय है। आप रोक सकते हैं।'

"इस पर पिता जी ने प्रोफ़ैसर साहब का धन्यवाद किया और यह कहकर कि जो उचित समझा जायेगा किया जायेगा, प्रोफ़ैसर साहब को विदा कर दिया। जब वह चले गये तो मोहिनी को बुलाया गया।

"मोहिनी घर पर ही थी। वह आई तो पिता जी ने उससे पूछना आरम्भ किया, 'प्रोफैसर विशम्भरदयाल को जानती हो?"

"उसका उत्तर था, 'जी।'

'उनके पुत्र को भी जानती हो?'

'हां, पिता जी।'

'तुम उससे प्रेम करती हो क्या?'

'मैंने उनसे विवाह कर लिया है, पिता जी।' मोहिनी का उत्तर था।

"यह सुन हम दोनों चौंककर उठ खड़े हुए और कितनी ही देर तक मोहिनी का मुख देखते रहे। वह किंचितमात्र भी विचलित नहीं हुई। मैं उसकी धीरता देख चकित रह गया। मुझ में भी इतना साहस नहीं कि मैं अपने पिता से इतनी बात कह सकूं। पिता जी से पूर्व मुझे परिस्थिति की विषमता का बोध हुआ और मैं खिलखिलाकर हंस पड़ा। मोहिनी भी हंसने लगी। मैंने पूछा, 'तुमने उससे विवाह कर लिया है? कब?'

"उसका उत्तर था, 'पांच दिन हुए हैं।'

'कहां विवाह हुआ है?'

'लारेन्स गार्डन में।' उसने इसी स्थान का पता बताया।

"मैंने फिर पूछा, 'विवाह किसने कराया है?'

'उसी ने जो संसार भर के करोड़ों प्राणियों का नित्य कराता रहता है।'

'हम नहीं समझे,' पिता जी ने जरा डांटकर कहा, 'मोहिनी, ठीक ठीक बताओ। यह फौजदारी मामला है।'

"मोहिनी ने पिता जी की आंखों में देखते हुए कहा, 'यह मैं नहीं जानती कि यह फौजदारी है या कुछ और। मैं तो कहती हूं कि हमारा विवाह होगया है और हम दोनों की स्वीकृति से हुआ है।'

"पिता जी ने पूछा, 'मैं पूछता हूं, विवाह किसने कराया है? उस

पंडित, मुल्ला या पादरी का नाम बताओ जिसने यह जुरम किया है ?'

'पिता जी,' उसका उत्तर था, 'चिड़ा-चिड़िया, हिरन-हिरनी, कबूतर-कबूतरी, हंस-हंसनी और इसी प्रकार अन्य अनेकानेक जोड़ों का विवाह कौन करता है ?'

'तो तुम्हारा आशय यह है कि प्रोफेसर साहब के लड़के ने तुम्हें पतित किया है।'

"इस पर मोहिनी की गालें शरम से लाल होगयीं और उसने कुछ आवेश में कहा, 'आपकी बुद्धि कहां घास चरने गयी है ? मैंने यह नहीं कहा। ऐसी कोई बात नहीं है। हमने अभी विवाह किया है। मेरा गौना अभी नहीं हुआ।'

"इस बात को सुनकर तो मेरी हंसी छूट गयी। पिता जी भी हंसने लगे। एकाएक पिता जी ने गम्भीर भाव बनाकर कहा, 'हमारी बुद्धि घास चरने नहीं गयी, प्रत्युत तुम महामूर्ख लड़की हो। जिसे तुम विवाह कहती हो उसे हमारी भाषा में प्रेम होजाना कहते हैं।'

'ओह !' उसने अचम्भा प्रकट करते हुए पूछा, 'तो पिता जी, विवाह किसे कहते हैं ?'

'जब किसी रिति-रिवाज के अनुसार, साक्षियों के सम्मुख पति-पत्नी बनने का वचन दे दिया जाय तब।'

'तो इसमें पतित करने की बात कहां से आगयी ? विवाह, यदि आपका कहना ही ठीक माना जाय तब भी, इस बात की स्वीकृति नहीं देता कि पति-पत्नी इकट्ठे रहें। सहवास के लिये एक आयु तक पहुँचने की आवश्यकता है। यदि विवाह संरक्षकों की अनुमति से हो तो यह आयु कम रखी है और यदि संरक्षकों की अनुमति के विरुद्ध हो तो आयु बड़ी होनी ही चाहिये। प्रत्येक अवस्था में विवाह की रसम और सहवास की स्वीकृति की कम से कम आयु, दो पृथक पृथक बातें हैं। हमारा अभी विवाह हुआ है। चूंकि यह आपकी अनुमति से नहीं हुआ, इस कारण सहवास की आयु मेरे बालिग़-होने की आयु ही मानी जायगी। तब तक

मेरा गौना नहीं होगा।'

"पिता जी ये बातें सुन क्रोध से लाल-पीले हो रहे थे। उन्होंने पूछा, 'यह कानून तुम्हें किसने पढ़ाया है?'

"उसने उत्तर दिया, 'डाक्टर खन्ना की लड़की प्रेमदेवी जी ने।'

'ओह! उस वेहाया औरत ने यह नरक का मार्ग अब दूसरों को बताना आरम्भ कर दिया है। अच्छी बात, तुम अब घर से बाहर नहीं जा सकोगी। तुम अभी नाबालिग़ हो। तुम्हारी विवाह के लिये स्वीकृति भी स्वीकार नहीं हो सकती। तुम्हारे पढ़ाने का प्रबन्ध घर पर ही कर दिया जायेगा। चलो अपने कमरे में। घर से बाहर नहीं जाना।'

"मोहिनी अपने कमरे में चली गयी। अब वह वहां पर कैद है। मजेदार बात तो यह है कि वह न तो घर से भागने की इच्छा रखती है और न ही तुमसे सम्बन्ध-विच्छेद करना। दूसरी ओर पिता जी उसका विवाह कर देने की सोच रहे हैं।"

"आपकी सहानुभूति उससे है?"

"मैं भी लगभग उसी के विचारों का अनुयायी हूँ। अब जब मैंने तुम्हें देखा है तो यह एक और बात उसके पक्ष में हो गयी है। उसका चुनाव ग़लत प्रतीत नहीं होता।"

"और आपके पिता?"

"उनको मानना ही होगा। मैं यत्न करूंगा।"

अविनाश ने रामलाल से अगले दिन कॉलेज प्रयोग-शाला का पता बता दिया और उसकी बहिन की चिट्ठी का सविस्तार उत्तर देने का वचन दिया।

[७]

रात के समय सेठ धन्नाराम अपने पुत्र रामलाल से कह रहे थे, "डाक्टर खन्ना की लड़की हमारे पीछे हाथ धोकर पड़ी हुई है। एक ओर कारखानों में हड़ताल और दूसरी ओर मोहिनी को बरग़ला दिया है। यह तो ईश्वर की कृपा है कि मुझ में कुछ व्यापारिक बुद्धि है और

मैं इस हड़ताल से हानि उठाने के स्थान पर लाभ उठा रहा हूँ। परन्तु यह मोहिनी की बात बेढब है।"

"परन्तु पिता जी, क्या जाने इस मोहिनी के विषय में भी कोई लाभ हो जाय। ईश्वर के ढंग निराले हैं। इसमें भी प्रेम किसी अच्छी बात के होने में साधन हो सकती है।"

"इसमें लाभ तो कोई समझ में आता नहीं। मैं तो यही कह सकता हूं कि मेरे मुख पर कालख लगाकर रहेगी।"

"मैं ऐसा नहीं समझता। आप एक बार प्रोफैसर साहब के लड़के को देख लें। मैंने देखा है। आखिर आपने लड़का तो ढूँढना ही है। लड़का सुन्दर, समझदार, स्वस्थ और पढ़ा-लिखा है। और प्रोफैसर साहब भी विद्वान, अपनी समाज में प्रतिष्ठित और खाते-पीते हैं।"

"नहीं। एक ग़रीब आदमी का धनी से सम्बन्ध कभी भी ठीक नहीं।"

"पिता जी, हम पांच-दस लाख मोहिनी को देकर उन्हें भी धनी बना देंगे।"

"और वे दो साल में सब खर्च कर फिर निर्धन हो जायेंगे।"

"क्यों?"

"उन्होंने रुपया कभी रखा नहीं है। वे नहीं जानते कि यह कैसे रखा जाता है अथवा अधिक किया जाता है। तनखाहों पर पलने वाले केवल खर्च ही करना जानते हैं।"

"अविनाश को शिक्षा दी जा सकती है। दो चार वर्ष में उसे व्यापार में डालकर चतुर कर दीजिये।"

सेठ साहब निरुत्तर तो होगये थे, परन्तु माने नहीं। कहने लगे, "मुझे क्या आवश्यकता है कि किसी के लड़के को, उसकी रुचि के विपरीत, व्यापार की शिक्षा दूँ। मैं मोहिनी के लिये ही क्यों न किसी व्योपारी का और समृद्धिशाली का लड़का ढूंढूं?"

"परन्तु मोहिनी की प्रसन्नता का विचार भी तो करना है, पिता जी।"

"वह अभी बच्चा है। वह इन बातों को क्या जाने? जब उसका

विवाह होगया तो दो दिन में ही इस ब्राह्मण-लौंडे को भूल जायेगी।"

रामलाल को इस बात से संतोष नहीं हुआ। वह सोने से पूर्व मोहिनी से मिलने गया। मोहिनी भाई को देख उत्सुकता से अविनाश का हाल पूछने लगी। रामलाल ने उससे भेंट का सब वृत्तान्त बताया और पश्चात पिता जी का विचार भी बताया। मोहिनी ने कहा, "भैया, आप पिता जी से कह दें कि मैंने जब उनसे विवाह किया था तब बहुत विचार के पश्चात् और वकील से राय कर किया था। मैंने अपना व्यवहार भी वकील की सम्मति के अनुकूल बनाया है। मैं अब उस व्यवहार से विचलित नहीं हो सकती।"

"किस वकील से राय की थी?" रामलाल ने अचम्भे में पूछा।

"बाबू जगन्नाथ से।"

"अविनाश तुम्हें वहां ले गया था?"

"नहीं, प्रेमदेवी जी से मैंने अपने और उनके विषय में राय की थी। उन्होंने मुझे इस विषय पर अपनी सम्मति दी। जिस पर मैंने पूछा कि मैं अब अपना व्यवहार कैसा रखूं तो उन्होंने मुझे एक चिट लिखकर बा० जगन्नाथ के पास भेज दिया। मैंने उनको सब बात स्पष्ट बता दी। इस पर उन्होंने कहा कि यद्यपि कानून में ऐसी बात नहीं है कि एक नाबालिग लड़की अपने संरक्षकों को अपने विवाह करने में राय दे सके, परन्तु इस विषय पर हाईकोर्ट का रूलिंग लिया जा सकता है कि यदि कोई लड़की चाहे तो अपने बालिग होने तक अपना विवाह होने से रोक सके। उनकी सम्मति है कि एक नाबालिग अपने संरक्षक को, अपने विषय में किसी भी काम के करने से, बालिग होने तक, रोक सकता है। संरक्षक को यह बात कोर्ट में साबित करनी पड़ेगी कि यदि विवाह तुरन्त न किया गया तो अमुक हानि होने की सम्भावना होगी।"

"यदि पिता जी तुम्हारा विवाह किसी अन्य स्थान पर करने का विचार करें तो फिर क्या होगा?"

"मैं बाबू जगन्नाथ को सूचना भेज दूंगी और उन्होंने मुझे वचन

दिया है कि वह उस विवाह को रोकने के लिये हाईकोर्ट से इन्जंक्शन जारी करायेंगे।"

"इन सब के लिये खर्चा......बाबू जगन्नाथ क्या अपने पास से करेंगे?"

"नहीं। वह तो बहुत ही गरीब आदमी हैं। रुपये का प्रबन्ध प्रेमदेवी जी ने करने का वचन दिया है।"

रामलाल गम्भीर विचार में पड़ गया। उसमें पिता जी से झगड़ा करने का साहस नहीं था। वह अपने विषय में यह समझता था कि एक दिन उसे भी अपने विवाह के लिये पिता से झगड़ा करना होगा। उसकी अवस्था में एक बात मोहिनी से भिन्न थी। वह यह कि वह स्वयं और उसकी प्रेमिका भी बालिग थे।

[८]

अविनाशचन्द्र ने घर पहुंचते ही मोहिनी की चिट्ठी फिर पढ़ी और कलम-दवात ले उत्तर लिख दिया। उसने लिखा :—

प्रिये, पत्र मिला और मन की विचित्र अवस्था हो गयी है। तुम्हारे भाई ने अपना पूर्ण परिचय दिया है, उसके लिये धन्यवाद, परन्तु मैं समझता हूं यदि यह परिचय न मिलता तो अच्छा ही था। अब मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि तुम और तुम्हारे सम्बन्धी आकाश में विचरने वाले देवता हैं और मैं साधारण पृथ्वी पर चलने फिरने वाले प्राणियों में से हूँ। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि तुम मेरी पहुँच से दूर हो। जब से पत्र मिला है मैं इस बात पर विश्वास करने का प्रयत्न करता हूँ कि तुम मेरी हो और रहोगी, परन्तु प्रत्येक बार मुझे यही प्रतीत होता है कि मैं स्वप्न देख रहा हूं और शीघ्र ही यह स्वप्न भंग होने वाला है। सेठ धन्नाराम की लड़की एक गरीब ब्राह्मण के लड़के से विवाह करेगी, कुछ समझ में नहीं आता। रही मेरे पिता जी की बात। वह मेरे शीघ्र घर आजाने पर बहुत प्रसन्न हैं। वह समझ रहे हैं कि मेरी तुमसे भेंट नहीं हुई और यदि यही अवस्था रही तो कुछ दिनों में तुम मुझे और मैं

तुम्हें भूल जाऊँगा। मेरे मन में तुम्हारी स्मृति इतनी मधुर है कि मैं उसे मरण-पर्यन्त भूल नहीं सकता। मुझे अपने पर विश्वास है। मेरी स्मरण-शक्ति ढीली नहीं है। पर क्या तुम भी मुझे स्मरण रख सकोगी?

भाई रामलाल जी की बातें अति मनोरंजक थीं। मैं समझता हूँ कि वह भीतर और बाहर से एक समान हैं। उन्होंने सब कुछ मुझे बता दिया है। जहां तक तो हमारे पृथक रहने का सम्बन्ध है, मैं समझता हूँ हमें कोई हानि नहीं हो सकती। हां, यदि तुम्हारा विवाह करने का यत्न किया गया तो क्या होगा? मैं कुछ कर नहीं सकूंगा। इस विषय पर विचार करना चाहिये।

क्या कैद में तुम्हें भारी कष्ट है? मैं कैसे तुम्हारे कष्ट को बांट सकता हूँ?

तुम अपना पूर्ण समाचार भेजना, अन्यथा मुझे चिन्ता लगी रहेगी।

तुम्हारा अवि

इस प्रकार नित्य के समाचार रामलाल के हाथ जाते थे और आते थे। अविनाश का यह काम हो गया था कि वह रात को खाना खाने के पश्चात् एक लम्बी चिट्ठी मोहिनी के नाम लिख रखे और दूसरे दिन रामलाल के हाथ, जो नित्य मोहिनी की चिट्ठी लेकर प्रयोगशाला में आता था, भेज दे।

एक रात वह पत्र लिख रहा था। पण्डित जी समझ रहे थे कि वह अपने कॉलिज का काम कर रहा है, परन्तु नित्य उसे खाली खुले काग़ज़ों पर लिखते देख उन्हें सन्देह हो गया और आज पूछ ही लिया, "यह क्या लिख रहे हो?"

"चिट्ठी, पिता जी?"

"चिट्ठी किसको?"

"मोहिनी को।"

"और! इसे डाक से भेजते हो?"

"नहीं, एक दूत के हाथ।"

"और वह उत्तर भी लाता है?"

"जी हां। नित्य एक पत्र उसका लिखा आता है और एक मुझसे ले जाता है।"

पं० विशम्भरदयाल ने कुछ विस्मय से पूछा, "अवि, एक बात मेरी समझ में नहीं आ रही। तुम मुझसे न तो डरते हो और न ही झिझकते हो। मैं जब तुम्हारे जितना था तो अपने विवाह की बात सुन लज्जा के मारे छुपता फिरता था। तुम तो मेरे और अपनी माता के सम्मुख इस विषय पर ऐसे बातें करते हो, जैसे हलवाई की दूकान की मिठाई पर टीका-टिप्पणी कर रहे हो।"

"पिता जी, मुझे तो यह कोई लज्जा का विषय प्रतीत नहीं होता। समाज प्रणय को जितना लज्जा का विषय बनाता है उतना ही लोग इस विषय पर वार्तालाप करने से संकोच करते हैं। परिणाम यह होता है कि इसमें सुधार होना कठिन होगया है।"

"सुधार की क्या आवश्यकता है? जो प्रथा हमारे बाप-दादाओं के समय से चली आती है, वह सदियों के अनुभव से बनी है। उसमें परिवर्तन करने से हानि ही की सम्भावना है।"

"परिवर्तन तो, पिता जी, होते ही रहते हैं। परिवर्तनों को रोकने की शक्ति किसी में नहीं। हां, हम एक बात कर सकते हैं। वह यह कि हम परिवर्तन से बिगाड़ न होने दें। देखिये पिता जी, बाजा-गाजा, झंडी-फानूस, दहेज और अन्य व्यर्थ के खर्चे की बातें कितनी ही बढ़ गयी हैं। यदि आज से पचास वर्ष पूर्व एक मध्यम श्रेणी के परिवार में पचास-साठ रुपये में विवाह हो जाता था तो आज उसमें हज़ारों व्यय होते हैं। खर्चे के अतिरिक्त रीति-रिवाज भी बढ़ गये हैं। यह तो हुई विवाह की रसम के विषय की बात। इनमें परिवर्तन हो चुके हैं और हो रहे हैं। इसी प्रकार पति-पत्नी के सम्बन्ध में भी परिवर्तन हो रहे हैं। स्त्रियां सुसराल के घर के बड़ों से घूंघट करती थीं। अब सरे बाज़ार स्वसुर के साथ सिनेमा देखने जाती हैं। पहले औरतें घर बैठती थीं। अब बाज़ार में

[illegible]

"[illegible]"

[illegible]

[illegible] सम्भव हो भी जाता तो, पिता जी [illegible] दिवाला [illegible]। [illegible] बीस वर्ष नौकरी कर जो धन अपने किसी [illegible] के लिये एकत्रित किया है आतिशबाजी इत्यादि [illegible] की बातों में [illegible] जाता। सेठ साहब भी लाख दो लाख [illegible]। दर्जी के कपड़े-भूषण बनाते। रोग उत्पादक पदार्थों से दावतें खिलाई जातीं। नाई-भांट बेसुरे राग अलापते। एक दो दिन की [illegible] में [illegible] कर दी जाती। हमने शांतिपूर्वक लारेंस गार्डन के एक कोने में अपने को पति-पत्नी कहकर ये सब व्यर्थ और हानिकार बातों को एकदम समाप्त कर दिया है।"

प्रोफेसर साहब के मस्तिष्क में बात आ तो गयी थी, परन्तु उन्होंने कहा, "तुम्हारी बातें ठीक तो प्रतीत होती हैं, परन्तु समाज और राज-

नियम इसे विवाह नहीं मानेंगे। यदि यह विवाह अनियमित निश्चय कर दिया गया, तो तुम्हारी सन्तान का क्या होगा ? वह तुम्हारी सम्पत्ति की उत्तराधिकारी नहीं मानी जायगी।"

"मैं समझता हूं ये आशंकायें व्यर्थ की हैं। मैं आपकी सम्पत्ति लेने की आशा नहीं रखता, और जो कुछ मैं कमाऊँगा वह प्रायः व्यय हो जायेगा। यदि कुछ बच गया तो मैं अपनी कमाई की वसीयत कर दूंगा। और फिर कितना धन एकत्रित हो सकता है, जिसके उत्तराधिकारी बनाने के लिये मुझे इस प्रकार की वेहूदा रीति-रिवाज की दासता करनी पड़े ? यथार्थ में उत्तराधिकारी बनने का नियम तो पंगुओं के लिये होना चाहिये। एक स्वस्थ नवयुवक को भला क्यों अपने पिता की गाढ़े पसीने की कमाई पर आंख रखनी चाहिये ? रहा हमारे विवाह का नियमितपन। हमें इसकी परवाह नहीं। हम दोनों पति-पत्नी जब एक दूसरे से संतुष्ट हैं तो फिर समाज और राज-नियम क्या कर सकते हैं ? और यदि रीति-रिवाज के अनुकूल विवाह हो जाने पर भी हम झगड़ पड़ें तो समाज और राज-नियम किस प्रकार हमको बांधकर रख सकते हैं ? विवाह सम्बन्धी ये राज-नियम तो केवल मूर्खों के लिये होते हैं। एक बुद्धिशील मनुष्य के लिये ये नियम कुछ अर्थ नहीं रखते।"

निरुत्तर हो जाने पर प्रोफैसर साहब ने पूछा, "तुमने ये बातें कहां से सीखी हैं ? क्या ये कॉलेज में पढ़ाई जाती हैं ?"

"नहीं, कॉलेज के अतिरिक्त भी तो शिक्षा के कई स्रोत हैं।"

[६]

अगले दिन रामलाल ने पिता जी को समझाने का फिर यत्न किया। वह जब दोपहर का खाना खाने आये तो रामलाल भी वहां आ पहुँचा। मोहिनी अपने कमरे में खाना खा रही थी। "पिता जी," रामलाल ने कहा, "मेरा विचार है कि आप प्रोफैसर साहब के लड़के को एक बार देख लें।"

"क्यों ?" सेठ साहब ने अचम्भे में पूछा।

से बाहर क्यों न देख लिया जाय ?"

"मिलेगा क्यों नहीं ? मैंने एक लड़का चुन भी लिया है । [illegible] कल ला० भगवानदास ने देहली के सेठ रघुनन्दन के पुत्र घनश्याम का जिक्र किया था । मैंने उसके पिता से आज ही टेलीफोन पर बातें की थीं और मैंने उनको लाहौर आकर निश्चय करने को कहा है । मैंने अपने मन में तो निश्चय कर लिया है । वे लोग एक दो दिन में यहां आकर मोहिनी को देख शगन ले जायेंगे ।"

"परन्तु पिताजी, मोहिनी की स्वीकृति भी तो ले लेनी चाहिये ।"

"उसे क्या आपत्ति हो सकती है ? घनश्याम अपने पिता का इक-लौता पुत्र है । उसका पिता करोड़पति है । इस सब सम्पत्ति की मालकिन वह अकेली ही होगी ।"

"पिता जी, इतनी सम्पत्ति से उसे क्या लाभ होगा ? क्या अधिक धन रखने से वह कुछ अधिक खा-पहन सकेगी ?"

"तुम तो मूर्खों की सी बातें करते हो । क्या खाने और पहिनने के अतिरिक्त और कोई आवश्यकता नहीं होती ?"

"मैं तो समझता हूँ चार पांच सौ रुपया मासिक में एक परिवार भली भांति निर्वाह कर सकता है ।"

"यह तुम्हारी बात हो सकती है, परन्तु वह तो नौ हज़ार की गाड़ी में सवारी करना चाहती है। देखो, उसे जाकर तुम कह देना कि प्रोफ़ेसर साहब के लड़के का विचार छोड़ दे। मैं उसके लिये बहुत अच्छा प्रबन्ध कर दूंगा।"

"कह दूंगा, पर पिता जी, मुझे आशा नहीं कि वह माने।"

"उसे मेरी बात माननी चाहिये। वह नाबालिग है और मैं उसका संरक्षक हूं। एक नाबालिग को संरक्षक के कहने के अनुसार चलना चाहिये।"

"यह इस समय के लिये तो ठीक है, परन्तु, पिता जी, आप तो उसे जीवन भर के लिये, तब के लिये भी जब वह बालिग हो जायेगी, बांध रहे हैं।"

"कानून मुझे इस बात का अधिकार देता है।"

रामलाल पिता का दृढ़ निश्चय देख घबरा उठा। वह समय पाकर मोहिनी से मिलने गया और उसे पिता की पूर्ण बात बता दी। मोहिनी ने भाई से आग्रह किया कि जगन्नाथ से राय कर उचित कार्यवाई की जाय। रामलाल उसी शाम जगन्नाथ से मिलने गया, परन्तु वह घर पर नहीं था। अगले दिन भी उसने जगन्नाथ से मिलने का यत्न किया, परन्तु वह सफल नहीं हो सका।

उधर सेठ साहब ने रामलाल और मोहिनी को एक मत देख, शीघ्र ही मोहिनी की सगाई और विवाह करने का निश्चय कर लिया। उसने रामलाल के चले जाने पर देहली से टेलीफ़ून मिला फिर बातचीत की। दूसरी ओर सेठ रघुनन्दन जब टेलीफ़ून पर आये तो बातचीत होने लगी।

"मैंने कल आपसे बातचीत की थी.....घनश्याम के विवाह के विषय में.....आपने लड़की देखने आने को कहा था न!.........मैं चाहता हूं आप शीघ्र आजाइये.....हैं? ...क्या कहा...दहेज?... आप मुझे जानते हैं...मेरी हैसियत भी आपको विदित होनी चाहिये। मैं उसके अनुकूल दूंगा ही...हां...हां...अच्छी बात, यदि आप पहले

यह समझती थी कि उसके पिता प्रेम-वश ही इस विवाह के इच्छुक हैं और इसलिये सहयोग दे रहे हैं।

रामलाल ने सोच रखा था कि अपने विवाह से एक दिन पूर्व वह पिता को कहेगा। वह यह तो जानता था कि पिता जी इस विवाह को सुगमता से तो नहीं मानेंगे पर वह इस विवाह में बाधा नहीं डाल सकते। रामलाल और रज़िया दोनों बालिग थे। परन्तु अब मोहिनी का झगड़ा आरम्भ हो जाने से वह पिता को और चिढ़ाना उचित न समझ चुप कर रहा।

जिस दिन देहली के सेठ ने मोहिनी को देखने आना था, सेठ धन्नाराम की कोठी में बहुत सफाई और सजावट की जारही थी। मोहिनी जब सोकर उठी तो नित्य प्रति की भांति खिड़की में जाकर बाहर लॉन की हरियाली देख चित्त को प्रसन्न करने लगी। मोहिनी आजकल अपने कमरे में कैद कर दी गयी थी और बाहर की वस्तुएँ देखकर अपना मन बहलाया करती थी। आज जब उसने बाहर लॉन की ओर दृष्टि दौड़ाई तो माली को गमलों पर लाल गेरु का रंग करते देखा। फिर उसने और लोगों को कोठी को झाड़ते-फूँकते और नये परदे अथवा कालीन बिछाते पाया। उसके कमरे में भी सफाई होने लगी। इस सबसे मोहिनी को बहुत विस्मय हुआ। एक बार पहले भी, इसे कई वर्ष व्यतीत हो चुके थे, कोठी की ऐसे ही सफाई और सजावट की गयी थी। तब तो प्रान्त के गवर्नर वहां पर आमन्त्रित थे। अब भी, मोहिनी ने समझा, कोई बड़ा आदमी आने वाला होगा। उसने नौकर से पूछा, "आज क्या है?"

"सरकार, नहीं जानता। हमें आज्ञा हुई है कि दस बजे से पूर्व यह सफाई और सजावट का काम समाप्त कर दिया जाये।"

"कोई आने वाले हैं?"

"मुझे नहीं मालूम, सरकार।"

मोहिनी चुप रही। इसी समय उसकी बूआ प्रातःकाल की चाय और नाश्ता लाई। मोहिनी ने पूछा, "बूआ, आज क्या है?"

सवार हो चले गये। सेठ साहब अपनी सबसे बढ़िया पोशाक पहिने थे। मोहिनी ने समझा कि सेठ साहब गवर्नर बहादुर से मिलने गये हैं। ठीक साढ़े ग्यारह बजे सेठ साहब की कार लौट आई। गाड़ी में से सेठ साहब निकले और उनके पीछे दो व्यक्ति और थे। एक तो अधेड़ उमर के थे। धोती-कुर्ता पहने थे और ऊपर बहुत बढ़िया शाल लिये हुए थे। साथ एक सोलह-सत्रह वर्ष की आयु का लड़का था। वह लड़का पतलून, कोट, हैट, कॉलर, नकटाई, बूट अभिप्राय यह कि पूरी अँग्रेज़ी पोशाक पहने था। रङ्ग का बिलकुल काला, रूप-रेखा साधारण और कुछ ठिगने कद का था। उसने गाड़ी से उतरते ही टोप सिर से उतार लिया। बालों पर 'ब्रिलियैन्टाइन' लगी प्रतीत होती थी। वे तर्तीब से बैठे हुए थे और खूब चमक रहे थे।

गवर्नर के स्थान पर इन दो व्यक्तियों को देख मोहिनी को कुछ संशय हुआ, परन्तु निश्चय से कुछ कह नहीं सकती थी। वह अभी सुबह की बातों पर विचार ही कर रही थी कि नौकरानी ने आकर कहा, "सेठ साहब बुलाते हैं।"

मोहिनी को अचम्भा हुआ। कारण यह कि जब से वह कोठी में बन्द की गयी थी उसे कमरे के बाहर आने के लिये नहीं कहा गया था। सब उससे कमरे के भीतर ही आकर मिलते थे। वैसे ही जैसे वह बैठी थी नौकरानी के पीछे पीछे चली आई। वह उसे खाने के कमरे में ले गयी।

पिता जी को और दोनों महमानों को खाने की मेज़ पर बैठे देख वह एक क्षण के लिये दरवाज़े पर अटकी और फिर दृढ़ और निशंक भाव से भीतर चली गई। वह महमानों को नहीं जानती थी।

सेठ साहब ने मोहिनी को आया देख कहा, "आओ बेटी, आओ बैठो। रामलाल किधर गया है?"

मोहिनी बताना नहीं चाहती थी। वह चुपचाप एक कुर्सी पर बैठ गयी। सेठ साहब ने महमानों का परिचय कराने के लिये कहा, "तुम

सवार हो चले गये। सेट साहब अपनी सबसे बढ़िया पोशाक पहिने थे। मोहिनी ने समझा कि सेठ साहब गवर्नर बहादुर से मिलने गये हैं। ठीक साढ़े ग्यारह बजे सेट साहब की कार लौट आई। गाड़ी में से सेट साहब निकले और उनके पीछे दो व्यक्ति और थे। एक तो अधेड़ उमर के थे। धोती-कुर्ता पहने थे और ऊपर बहुत बढ़िया शाल लिये हुए थे। साथ एक सोलह-सत्रह वर्ष की आयु का लड़का था। यह लड़का पतलून, कोट, हैट, कॉलर, नकटाई, बूट अभिप्राय यह कि पूरी अँग्रेज़ी पोशाक पहने था। रङ्ग का बिलकुल काला, रूप-रेखा साधारण और कुछ ठिगने कद का था। उसने गाड़ी से उतरते ही टोप सिर से उतार लिया। बालों पर 'ब्रिलियैन्टाइन' लगी प्रतीत होती थी। वे तर्तीब से बैठे हुए थे और खूब चमक रहे थे।

गवर्नर के स्थान पर इन दो व्यक्तियों को देख मोहिनी को कुछ संशय हुआ, परन्तु निश्चय से कुछ कह नहीं सकती थी। वह अभी सुबह की बातों पर विचार ही कर रही थी कि नौकरानी ने आकर कहा, "सेट साहब बुलाते हैं।"

मोहिनी को अचम्भा हुआ। कारण यह कि जब से वह कोठी में बन्द की गयी थी उसे कमरे के बाहर आने के लिये नहीं कहा गया था। सब उससे कमरे के भीतर ही आकर मिलते थे। वैसे ही जैसे वह बैठी थी नौकरानी के पीछे पीछे चली आई। वह उसे खाने के कमरे में ले गयी।

पिता जी को और दोनों महमानों को खाने की मेज़ पर बैठे देख वह एक क्षण के लिये दरवाज़े पर अटकी और फिर दृढ़ और निशंक भाव से भीतर चली गई। वह महमानों को नहीं जानती थी।

सेठ साहब ने मोहिनी को आया देख कहा, "आओ बेटी, आओ बैठो। रामलाल किधर गया है?"

मोहिनी बताना नहीं चाहती थी। वह चुपचाप एक कुर्सी पर बैठ गयी। सेट साहब ने महमानों का परिचय कराने के लिये कहा, "तुम

इनको जानती हो, बेटी? यह हैं सेठ रघुनन्दनप्रसाद। आप दिल्ली के बहुत बड़े रईस और कारोबारी आदमी हैं। करोड़ों रुपयों का लेन-देन है। और यह हैं", नवयुवक की ओर संकेत कर कहा, "आपके सुपुत्र घनश्यामदास। अभी इस वर्ष मैट्रिक किया है और अब घर का काम-काज समझ-बूझ रहे हैं।"

इसके पश्चात सेठ धन्नाराम ने सेठ रघुनन्दन की ओर देखकर कहा, "मेरी बेटी मोहिनी यही है। एक ही लड़की है और जो कुछ भी मुझे देना-लेना है इसी लड़की को देना है।"

इस समय घड़ी ने बारह बजाये। बारह बजते बजते बैरे थालों में खाना परसा हुआ लेकर खाने के कमरे में चले आये। जब थाल सम्मुख रखे गये तो सेठ रघुनन्दन ने कहा, "हमें पसन्द है।"

सेठ धन्नाराम ने अर्थ भरी दृष्टि से मोहिनी की ओर देखकर कहा, "मुझे इस बात का विश्वास था कि आप नापसन्द नहीं करेंगे। अब मैं चाहता हूँ कि सायंकाल अपने कुछ मित्रों के सम्मुख सगन का नारियल-छुहारा दे दूं।"

मोहिनी के मन में प्रकाश होरहा था। उसकी समझ में आरहा था कि किस के सगन का नारियल-छुहारा दिया जाने वाला है। अतएव उसने इसे सुअवसर जान पूछा, "किस का सगन होगा, पिता जी?"

सेठ रघुनन्दन ने बहुत प्रेम-भरी दृष्टि से मोहिनी की ओर देखते हुए कहा, "बेटी, तुम्हारा और किसका?"

मोहिनी को छोड़ और सब हंस पड़े। घनश्याम भी अलग से सिर झुकाये हंस रहा था। मोहिनी कुर्सी से उठ खड़ी हुई और कहने लगी, "मेरा तो विवाह भी हो चुका है। अब सगन कैसा?"

सेठ धन्नाराम का मुख राख की भांति फीका पड़ गया और सेठ रघुनंदन के अचम्भे का वारापार नहीं रहा। दोनों चुपचाप मोहिनी का मुख देखते रह गये। मोहिनी इतना कह अपने कमरे में जाने के लिये घूमी कि उसके पिता ने कहा, "ठहरो, मोहिनी।"

मोहिनी घूमकर फिर पिता जी और महमानों की ओर देखने लगी। उसका पिता कुछ कहने को अभी सोच ही रहा था कि उसने क्रोध में कहा, "आप तो पिता जी सब जानते हैं।"

इस पर सेठ धन्नाराम ने कहा, "यह हंसी-मज़ाक छोड़ो, मोहिनी। अपने श्वसुर के सम्मुख कुछ तो लज्जा करो।"

मोहिनी को क्रोध आ रहा था। उसने नथुने फुलाते हुए कहा, "यह मज़ाक नहीं है। मैं सच कह रही हूं और आप जानते हैं कि मेरा विवाह हुए आज बारह-तेरह दिन हो चुके हैं।"

"यह झूठ है," सेठ धन्नाराम ने सेठ रघुनन्दन का शंका-समाधान करने के लिये कह दिया।

"परन्तु मैं जानता हूँ यह सत्य है," रामलाल ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा। रामलाल के साथ रज़िया भूषणों से लदी हुई और ज़रीदार कपड़े पहने हुए आई थी। सब लोग रामलाल और रज़िया को देखने लगे।

रामलाल जब अदालत से आया था तो उसने पिता जी की मोटर के ड्राइवर से पूछकर जान लिया था कि हवाई जहाज द्वारा देहली से दो आदमी आये हैं। वह समझ गया कि वे कौन होंगे। डाइनिंग हॉल के बाहर खड़े हो वह अपने पिता और मोहिनी की बातें सुन रहा था। जब उसके पिता ने मोहिनी की बात को झूठा कहा तो वह भीतर चला आया और मोहिनी की हिमायत करने के लिये बोल उठा।

सेठ धन्नाराम रामलाल के साथ एक नवविवाहिता वधू की भांति खड़ी लड़की को देख विस्मय में लीन हो गये। सेठ रघुनन्दन मोहिनी, रामलाल और सेठ धन्नाराम की बातों का अर्थ न लगा सकने के कारण विस्मय में भौंचक्के हो इन सबकी ओर देखने लगे थे।

रामलाल अपनी बांह में रज़िया की बांह डाले हुए कमरे में मोहिनी के समीप आ खड़ा हुआ। मोहिनी ने भाई की दूसरी बांह पकड़कर कहा, "भैया!"

रामलाल ने सान्त्वना देते हुए कहा, "घबराओ नहीं मोहिनी। मैं इनको समझा देता हूँ।"

इतना कह वह अपने पिता की ओर घूमकर कहने लगा, "पिता जी, पहले मुझे इनको परिचित कराना चाहिये। यह चौधरी सलीमुल्लाखाँ बार० एट० ला० की लड़की और मेरी धर्मपत्नी, श्रीमती रजिया हैं। आज सिटी मैजिस्ट्रेट की अदालत में मेरा इनसे विवाह हो गया है। मैजिस्ट्रेट ने हमें पति-पत्नी घोषित कर दिया है।"

अब रामलाल ने रजिया को सम्बोधन कर और अपने पिता की ओर संकेत कर कहा, "रजिया डियर! यह हैं मेरे पिता।"

रजिया सेठ साहब को पहिचानती थी। अब परिचय हो जाने के पश्चात् उसने दोनों हाथ जोड़, सिर झुका आदाबअर्ज कर दी।

सेठ धन्नाराम क्रोध में लाल-पीले हो रहे थे। वह कमरे से बाहर निकल जाना चाहते थे, परन्तु सेठ रघुनन्दन ने हाथ पकड़कर कहा, "ठहरो जी। कुछ समझ भी तो लेने दो।"

सेठ धन्नाराम ठहर गये। सेठ रघुनन्दन, जो अब खड़े हो गये थे, रामलाल से पूछने लगे, "तुम कौन हो?"

"मेरा नाम रामलाल है। ये मेरे पिता हैं।"

"तुमने बिना अपने पिता से पूछे अपना विवाह कर लिया है?"

"जी, आप ठीक समझ गये हैं। मैं अब बालिग हूँ और अपना विवाह करने में स्वतंत्र हूँ।"

"मगर तुम्हारी बीबी तो मुसलमान है।"

"जी।"

"ठीक है। तो तुम लोगों के साथ हमारा सम्बन्ध नहीं हो सकता," सेठ रघुनन्दन ने अपने पुत्र घनश्याम को बाँह से पकड़ उठाते हुए कहा।

इस पर रामलाल ने कहा, "अब आप लोगों से यहाँ रिश्ता करने वाला रह ही कौन गया है? हम दोनों भाई-बहिन का विवाह हो चुका है।"

सेठ धन्नाराम, जो सब बातें चुपचाप सुन रहे थे, फिर बोले, "यह बात ग़लत है। मोहिनी का विवाह नहीं हुआ। यह तो केवल प्रेम हो गया कहा जा सकता है। वह एक ब्राह्मण लड़के से विवाह करना चाहती है। मैं इसकी स्वीकृति नहीं दे सकता।"

सेठ रघुनन्दन बिना कुछ कहे घनश्याम को साथ ले डाइनिंग-हॉल से बाहर चले आये। उनके पीछे सेठ धन्नाराम भी चले आये। बाहर आ वह अपने महमानों को अपने निजी कमरे में ले गये।

[११]

खाने के कमरे में रामलाल, रज़िया और मोहिनी रह गये थे। रामलाल ने कुछ सोचकर कहा, "मोहिनी, चलोगी?"

"भैया जा रहे हो? कहां?"

"मैं अब अलग रहूँगा। मैंने फ़िरोज़पुर रोड पर एक कोठी भाड़े पर ली है।"

"मैं क्या करूं? समझ में नहीं आता। आप बाबू जगन्नाथ से मिले थे?"

"नहीं। मिल नहीं सका।"

"आप आज मिलकर मेरी रक्षा का प्रबन्ध कर दें। रुपये की आवश्यकता हो तो मेरा यह लॉकेट ले जायें।" इतना कह वह अपने गले का हार उतारने लगी।

रामलाल ने कहा, "रहने दो। मेरे पास रुपया है। मैं आज अवश्य मिलकर कुछ न कुछ करने का यत्न करूंगा।"

रामलाल रज़िया को वहीं छोड़ पिता जी के पीछे उनके कमरे में जा पहुँचा। दोनों सेठ बैठे गम्भीरता से बातें कर रहे थे। वे रामलाल का आया देख चुपकर गये। रामलाल ने कहा, "पिता जी, क्षमा कीजियेगा। मैंने आपके वार्तालाप में बाधा डाली है। मैं यह निवेदन करने आया हूँ कि मैं आज से फ़िरोज़पुर रोड पर रहने जा रहा हूँ। आशा है आप इसे बुरा नहीं मानेंगे।"

"मैं तुम्हें अब अपना पुत्र नहीं मानता। मैं तुम्हें अपने उत्तराधिकार से वंचित करने जारहा हूँ।"

"मुझे इस विषय में आपसे कुछ नहीं कहना। आप मुझे अपना कोई नहीं मानें, परन्तु मैं तो आपको अपना पिता मानता हूँ। भला पिता-पुत्र का प्राकृत सम्बन्ध कैसे टूट सकता है? रही आपकी धन-दौलत। इसको पाना मनुष्य के बनाये नियम से है। इसे आप तोड़ सकते हैं, परन्तु प्राकृत सम्बन्ध तो टूट नहीं सकता।" इतना कह रामलाल कमरे से बाहर निकल गया।

सेठ साहब को रामलाल के एक दिवालिये मुसलमान की लड़की से विवाह कर लेने से क्रोध आ रहा था और इसी क्रोध में वह सेठ रघुनन्दन को समझा रहे थे। वह कह रहे थे, "चौधरी सलीमुल्लाखां दिवालिया है और उसने मेरी जायदाद् में हाथ चलाने के लिये मेरे पुत्र को अपनी लड़की से फंसा दिया है। मैं पुत्र के स्थान अपनी लड़की मोहिनी को अपना उत्तराधिकारी बना दूंगा। रहा मोहिनी का विवाह। यह सर्वथा मिथ्या है। यह ठीक है कि उसकी मित्रता एक ब्राह्मण के लड़के से है, परन्तु अभी तक किसी प्रकार की खराबी नहीं हुई और यह मैं सिद्ध कर दूंगा। जहां तक कानून का सम्बन्ध है मैं उसका विवाह जिससे चाहूँ कर सकता हूँ। उसे मेरे किये पर सन्तोष करना होगा।"

सेठ रघुनन्दन जो खाने के कमरे से यह निश्चय कर निकले थे कि मोहिनी से घनश्याम का विवाह नहीं होगा अब मोहिनी को सेठ धन्नाराम की पूर्ण सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी होते देख लालच में फंस गये। वह सोचते थे कि करोड़ों रुपयों की जायदाद् सहज में ही मिल जायेगी। इस पर भी अपने धन के लोभ को छुपाने के लिये कुछ अकड़ कर बोले, "सेठ साहब, मोहिनी के विषय में दाल में कुछ काला अवश्य है। किसी प्रकार से बुरा न भी हुआ हो तब भी उसका किसी लड़के को प्रेम से देख लेना हिन्दू शास्त्र में नीच कर्म माना है। अब तो यदि दो बातें आप करें तो मैं मान सकता हूं। एक यह कि इस बात का ठोस

प्रमाण दें कि मोहिनी पतित तो नहीं हुई। दूसरे, मोहिनी आपकी उत्तराधिकारिणी नियम से मान ली जाय। अन्यथा इस प्रकार का बद-नामी वाला रिश्ता कौन मानेगा?"

सेठ साहब ने कहा, "मैं दोनों बातें अभी कर दूंगा, परन्तु एक बात मेरी भी है। वह आपको माननी होगी। वह यह कि मोहिनी का विवाह आज रात ही हो जाये।"

"यह कैसे हो सकेगा? इतने बड़े धनिकों की सन्तान का विवाह चुपचाप? लोगों को सन्देह हो जायेगा।"

"लोगों का मुख हम रुपये से बन्द कर सकते हैं। लोग निन्दा करने के स्थान सादगी के लिये हमारी प्रशंसा करेंगे। हम बड़े सुधारक समझे जावेंगे।"

"अच्छी बात," सेठ रघुनन्दन ने बात तय करते हुए कहा, "आप पहले मोहिनी के चरित्र का विश्वास करा दें। फिर अपने उत्तराधिकारी की बात तय करें। तब मैं तैयार हूं।"

"तो आप आइये।" इतना कह सेठ धन्नाराम ने अपनी मोटर निकलवाई और घनश्याम को वहीं कोठी में छोड़ सेठ रघुनन्दन को ले गवर्नमेंट कॉलेज में जा पहुँचे।

अविनाश कैमिस्ट्री की पढ़ाई कर कमरे से बाहर निकला ही था कि सेठ धन्नाराम ने उसे नमस्ते कर पूछा, "आप मिस्टर अविनाशचन्द्र को जानते हैं?"

अविनाश ने प्रश्नकर्ता की ओर ध्यान से देखा। उसके सामने एक पैंतालीस-छयालीस वर्ष की आयु का पुरुष, पांच फुट सात इंच लम्बा खड़ा था। उसका विशाल मस्तक, तीखा नाक, तीखी आंखें, और मुख दृढ़ता से भिचा हुआ था। अविनाश ने देखा कि वह पुरुष सफेद परन्तु बहुत बढ़िया पोशाक पहने है। बन्द गले का कोट, चूड़ीदार पायजामा, सफेद जुराबें और सफेद रङ्ग के साबर का ही लखनवी जूता पहने था। उसकी डाढ़ी-मूंछ सफा और सिर पर छोटे छोटे बाल थे जिनमें सफेद

वालों की संख्या भी पर्याप्त थी। प्रश्नकर्ता में एक विशेष प्रकार की दूसरों पर प्रभाव डालने की शक्ति थी जिससे वे उसका आदर करने पर विवश हो जाते थे।

अविनाश ने एक क्षण में ही यह सब देख लिया और उसे संशय होने लगा था कि यह महानुभाव मोहिनी के विषय में ही कुछ कहने-सुनने आये हैं। उसने सेठ साहब को पहले कभी नहीं देखा था। इससे सन्देह-निवारण के लिये बोला, "जी हां। क्या काम है?"

"मुझे उनसे मिलना है।"

"क्या काम है? बताइये, मेरा ही नाम अविनाश है।"

सेठ साहब ने सिर से पावों तक उसे देखा और अपने मन में उसके शरीर की गठन और सौन्दर्य का मुकाबिला घनश्याम से करने लगे। घनश्याम किसी प्रकार से भी अविनाश से टक्कर नहीं ले सकता था। ऊँचाई में घनश्याम ठिगना था, वर्ण में काला, रूप-रेखा में भद्दा और यों भी अप्रभ था। अविनाश गौर वर्ण, सुन्दर, गठित शरीर और आकृति वाला था। उसका विशाल मस्तक था और उसकी आंखों में एक विशेष ज्योति थी।

सेठ साहब को उसे दृष्टि से नापते-तोलते देख अविनाश ने मुस्कराते हुए पूछा, "आप क्या चाहते हैं?"

सेठ साहब ने सचेत हो पूछा, "आप पं० विशम्भरदयाल जी के पुत्र हैं?"

"जी हां।"

"आप मुझे जानते हैं?"

"जी नहीं।"

"मेरा नाम धन्नाराम है।"

अविनाश ने हाथ जोड़ नमस्ते की और कहा, "आज्ञा कीजिये। मुझसे आपको क्या काम है?"

"मेरे साथ आइये। मैं बताता हूं।"

सेठ साहब उसे कॉलेज से बाहर ले आये। वहाँ उनकी मोटर खड़ी थी। उसमें सेठ रघुनन्दन बैठे थे। "आइये, बैठिये। आपसे कुछ बातें करनी हैं," सेठ साहब ने कहा।

अविनाश को एक क्षण के लिये कुछ भय हुआ, परन्तु यह सोच कि वह दोनों सेठों को पछाड़ सकता है गाड़ी में बैठ गया। वह सोचता था कि उसने कुछ पाप तो किया नहीं। इस पर भी यदि पीटा जायगा तो क्या हो सकता है।

गाड़ी रेसकोर्स रोड पर ले जाकर खड़ी कर दी गयी। सेठ साहब ने ड्राइवर को कुछ दूर भेजकर अविनाश से कहा, "हम आपसे कुछ पूछना चाहते हैं।"

"कहिये।"

"आप मोहिनी को जानते हैं?"

"जानता हूं।"

"वह मेरी लड़की है।"

"जी हाँ।"

"उसका विवाह होने वाला है।"

"जी!" अविनाश के मुख का रंग पीला पड़ता जाता था।

"यह दिल्ली के करोड़पति सेठ हैं। इनका नाम सेठ रघुनन्दन जी है। इनके लड़के घनश्याम से निश्चित हुआ है।"

"हूं।"

"एक समय उसका विचार आपसे शादी करने का था।"

"हूं।"

"परन्तु आप जानते हैं कि वह एक करोड़पति की लड़की है। उसका केवल जेब-खर्च इतना है कि आपका वेतन कभी भी उतना होने की आशा नहीं। उसे पांच सौ रुपया मासिक जेब-खर्च मिलता है।"

"पांच सौ रुपया!" अविनाश ने अचम्भे में कहा।

"और उसकी गाड़ी जिसमें वह सवारी करती है नौ हज़ार रुपये की है।"

"ओह !"

"उसके हाथ में एक अंगूठी आपने देखी होगी। उसका दाम पचास हज़ार रुपया है।"

"मैं तो इतना कुछ नहीं कर सकता। मैंने परस्पर वचन करने के पूर्व ही उसे कहा था कि मुझे अपने पिता से एक कौड़ी भी नहीं मिलेगी और मेरा वेतन पांच सौ से अधिक कभी नहीं होगा। इस पर भी मुझे तो उसने यह कहा था कि वह ग़रीबी में रहना सीख लेगी।"

"ये सब बच्चों की बातें हैं। जो जन्म से आज तक सुख का जीवन व्यतीत करती रही है; जिसकी सेवा के लिये एक दो नौकरानियां सदा उपस्थित रहती हैं। एक दिन में ही गरीबी के जीवन से ऊब जायेगी। वह अभी बच्ची है, नाबालिग़ है और अपने भले बुरे को समझ नहीं सकती। परन्तु तुम तो पढ़े-लिखे समझदार नवयुवक प्रतीत होते हो। क्या तुम्हारे सुखमय जीवन के लिये यह ठीक नहीं कि तुम्हारा उससे विवाह न हो?"

अविनाश बात के इस प्रकार उपस्थित किये जाने से घबरा उठा। वह समझ गया था कि जब तक मोहिनी बहुत त्यागमय जीवन व्यतीत नहीं करेगी तब तक वह उसकी पत्नी बनकर नहीं रह सकेगी। इस पर उसने विचार किया कि बचपन में, अज्ञानता से दिये वचनों के ऊपर हठ कर उसे विवश करना ठीक नहीं। इस निर्णय पर पहुंच उसने गर्दन सीधी कर कहा, "देखिये साहब, जब हम परस्पर प्रेम करने लगे थे, तब मैं नहीं जानता था कि उसकी आर्थिक स्थिति कैसी है। हां, मैंने अपनी अवस्था उससे कभी नहीं छुपाई। उसने मुझे अपना परिचय कभी नहीं दिया। हमारे घर की सब अवस्था वह भली प्रकार जानती थी। इस पर भी वह मुझसे प्रेम करती गयी। उसे तो अपनी परिस्थिति पूर्णतः विदित थी। अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। हमारा परस्पर वचनमात्र हुआ है। यदि वह चाहे तो जहां चाहे विवाह करने के लिये स्वतन्त्र है। मैं उसे विवश नहीं कर सकता। मेरी पत्नी बनने से तो उसे भारी त्याग करना

पड़ेगा।"

"बहुत ठीक," सेठ साहब ने कहा, "मुझे आपसे ऐसी ही आशा थी। आप उसे इस विषय पर एक पत्र लिख दें जिससे उसे पता चल जाये कि वह अपना वचन, जो भविष्य में निभाना कठिन होगा, तोड़ने में स्वतंत्र है।"

अविनाश ने कुछ काल तक विचार कर कहा, "मैं समझता हूं पत्नी को जीवन में कभी भी पति से पृथक हो जाने का अधिकार है। पति-पत्नी के सम्बन्ध में सबसे घनिष्ट सम्बन्ध लैंगिक है। वह यहां पर अभी नहीं है। यदि वह समझती है और आप उसे समझा सकते हैं कि मेरी पत्नी बन उसे वह त्याग करना होगा जिसके लिये वह तैयार नहीं तो वह मेरे साथ किये वचनों को भूल सकती है। बताइये, मैं क्या लिख दूं?"

सेठ साहब ने कहा, "मैं कुछ नहीं कहूँगा। जो आप उचित समझें लिख दें।"

अविनाश ने लिख दिया:—

श्रीमती मोहिनी देवी जी, नमस्ते!

मुझे जो आशंका थी वह आज आपके पिता जी ने भी बताई है। वह यह कि आपका जीवन बहुत ही सुख-आराम का और खर्चीला है और आपको मेरी पत्नी बनकर रहने में भारी त्याग करना और कष्ट सहना होगा। मैं तो एम० एस सी० करके भी डेढ़ सौ रुपये मासिक वेतन से अधिक पाने की आशा नहीं करता। इस आय में आपकी नौ हज़ार की मोटर का पैट्रोल का खर्चा भी शायद नहीं निकल सकेगा। आप, सुना है, जेब-खर्च पांच सौ मासिक पाती हैं। इतना तो मेरा वेतन भी होने का नहीं। क्या इससे यह सिद्ध नहीं होता कि आप मेरे साथ सम्बन्ध जारी रखने तथा और घनिष्ट करने से पूर्व पुनः विचार कर लें? सब त्याग आपकी ओर से ही है। इस कारण आपको पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिये कि आप इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक सोच लें।

इसका अर्थ यह नहीं कि मैं आपसे प्रेम नहीं करता। जो भाव

आपने मेरे मन में भर दिये हैं वे मैं मरण-पर्यन्त नहीं भूल सकूँगा। परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं कि मैं आपको सुख और आनन्द में देखने की इच्छा नहीं रखता। यदि आप सेठानी बनना चाहती हैं तो मैं आपके मार्ग में बाधा नहीं डालना चाहता। मेरे पास आकर तो आपको मसजिद के चूहे की भांति रहना पड़ेगा।

आपने इतने दिन मुझसे प्रेम कर मुझ पर बहुत अहसान किया है। यह मैं जीवन भर नहीं भूल सकूँगा। इन बारह तेरह दिनों की स्मृति मेरे जीवन की एक सुनहरी रेखा बनी रहेगी। आपको जीवन में सुख, आनन्द और शान्ति भोग करते देख मुझे परम शान्ति मिलेगी।

पीछे के लिये धन्यवाद, भविष्य के लिये क्षमा।

विनीत अवि

सेठ धन्नाराम ने चिट्ठी लेकर जेब में रख ली और कहा, "आपको कहां छोड़ दूं?"

"यहीं।"

"क्यों? क्या कॉलेज नहीं जाइयेगा?"

"अब मैं आपके किसी एहसान को सहन नहीं कर सकता।" इतना कह अविनाश गाड़ी से नीचे उतर आया और शहर की ओर पैदल चल पड़ा। दोनों सेठ उसे जाता देख चकित रह गये। कुछ काल पश्चात उन्होंने ड्राइवर को बुला लिया और गाड़ी उसी ओर घुमा दी जिधर अविनाश जारहा था। गाड़ी जब उसके समीप पहुँची तो खड़ी कर दी गयी। सेठ साहब ने कहा, "मिस्टर अविनाशचन्द्र, मैं आपका बहुत कृतज्ञ हूँ। आओ बैठो, मैं आपको घर तक छोड़ आता हूँ।"

अविनाश ने आंखें उठाकर सेठों की ओर देखा। उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे। सेठ साहब ने बहुत ही नम्रता से कहा, "मुझे क्षमा कर दो। परन्तु मैं समझता हूँ आपके लिये भी यही अच्छा है।"

"अच्छी बात है। आप जाइये। अब जले पर नमक छिड़कने से क्या लाभ है? मैं पैदल ही जाना चाहता हूं।"

सेठ साहब ने गाड़ी चलाने की आज्ञा दे दी। चलते हुए उन्होंने कहा, "कभी मेरी सहायता की आवश्यकता हो तो मिलना।"

अविनाश ने कुछ उत्तर नहीं दिया और चलता गया। जब गाड़ी कुछ दूर निकल गयी तो सेठ धन्नाराम ने अपने साथी सेठ को कहा, "क्यों जी, यह बात तो ठीक है न। अब दूसरी घर जाकर कर दूंगा। मैं अपनी वसीयत लिख देता हूँ जिसमें अपनी पूर्ण स्थावर और जंगम सम्पत्ति का मोहिनी को उत्तराधिकारी लिख दूंगा।"

सेठ रघुनन्दन ने प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा, "और हमारी पूर्व निश्चित शर्त सवा लाख और पांच लाख की?"

"उसका चैक अभी आपको लिख दूंगा। चलिये पहले बैंक में ही चलें।"

[१२]

सेठ धन्नाराम ने अविनाश से चिट्ठी लिखवाई तो थी सेठ रघुनन्दन का संतोष करवाने के लिये, परन्तु इसे उन्होंने मोहिनी को भी दिखा दिया। वह आशा करते थे कि मोहिनी भी समझ जायेगी।

मोहिनी ने चिट्ठी पढ़ पिता को वापिस कर दी। सेठ साहब ने पूछा, "मोहिनी बेटी, अब क्या विचार है?"

"भला थूक कर भी कोई चाटता है। जो बात एक बार हो गयी सो हो गयी।"

"यदि कहीं भूल हो जाये तो उसे सुधारना नहीं चाहिये?"

"आपके विचार में भूल है न। मैं ऐसा नहीं मानती।"

"वह बहुत निर्धन है।"

"मैं जानती हूं। पहले भी जानती थी। रुपया-पैसा तो धूप-छांव की तरह होते हैं। मनुष्य को साधारण तौर पर रहने के लिये बहुत अधिक धन की आवश्यकता नहीं होती।"

"ये सब कहने की बातें हैं। मैं जानता हूँ कि तुम निर्धनता का जीवन व्यतीत नहीं कर सकोगी। मैंने ग़रीबी देखी है और इसके कष्टों

को जानता हूँ।"

"इस पर भी निन्यानवे प्रति शत लोग ग़रीबी में रहते हैं। जब ये सब लोग ऐसे रह सकते हैं तो मैं क्यों नहीं रह सकूंगी?"

"तुम्हें ऐसा जीवन व्यतीत करने का स्वभाव नहीं है।"

"अभ्यास करने से स्वभाव बन जाता है।"

"पर तुम्हें इसकी आवश्यकता ही क्या है?"

"आवश्यकता इस कारण है कि धनी बाप अपनी बेटी को कुछ देना नहीं चाहता।"

"देना तो चाहता हूं। जब तुम्हारी सगाई घनश्याम से होगी तो सवा लाख देने का और उससे विवाह के समय पाच लाख और देने का निश्चय हुआ है।"

"और यदि उससे विवाह न करूं तो?"

"करोगी क्यों नहीं? तुम्हें मेरा कहना मानना चाहिये।"

इतना कह सेठ साहब बाहर आगये। मोहिनी यह समझती थी कि अधिक से अधिक उसकी सगाई होगी और वह भी जल्दी से जल्दी अगले दिन। तब तक वह आशा करती थी कि जगन्नाथ कुछ कर देगा। परन्तु सेठ धन्नाराम अपनी घरेलू और व्यापार सम्बन्धी बातों में भी जल्दी निश्चय और कार्य करने का स्वभाव रखते थे। उनका कहना था कि पांव तले घास नहीं जमने देना चाहिये। उन्होंने सेठ रघुनन्दन को राज़ी कर विवाह का प्रबन्ध उसी रात कर दिया।

रात के आठ बजे के लगभग मोहिनी की बूआ उसके कमरे में आई और बोली, "चलो, पिता जी बुलाते हैं।"

मोहिनी समझी कि फिर बातचीत होगी। वह उठकर चल पड़ी। कोठी के भीतर एक सहन था। बूआ उसे उधर ही ले गयी। ज्योंही वह वहां पहुँची, उसके पिता ने उसकी बांह पकड़कर सहन में बनी वेदी पर ले जाकर खड़ा कर दिया। घनश्याम सिर पर सेहरा बांधे एक चौकी पर पहले ही बैठा था। समीप ही एक ओर चौकी पड़ी थी। मोहिनी को वहां

बैठने के लिये कहा गया। वह वहां से लौटने लगी तो सेठ साहब और एक और आदमी ने पकड़कर उसे बलपूर्वक वहां बैठा दिया। सेठ रघुनन्दन ने उसके गले में फूलों की माला पहिना दी। मोहिनी, जिसे तीन चार आदमी बल से पकड़े हुए थे, ज़ोर ज़ोर से चिल्ला उठी, "मैं विवाह नहीं करूंगी। मेरा विवाह हो चुका है।"

सम्मुख बैठे पण्डित ने वेद-मंत्र पढ़ने आरम्भ कर दिये।

"ओं प्रजापतये स्वाहाः। इदम् प्रजापतये इदनमम्।"

उठकर भाग जाने के यत्न में और चिल्ला चिल्लाकर कहने में कि उसका विवाह हो चुका उसे हंफनी चढ़ आई थी। उसकी आंखों से आंसू निकल रहे थे, परन्तु ब्राह्मण-देवता धड़ाधड़ मंत्र पढ़ते जाते थे। अन्त में उसने पढ़ ही दिया:—

ओं अमोऽहमस्मि सा त्वँसा त्वमस्यमोऽहं सामाहमस्मि ऋक्त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वं तावेव विवहावहै सहरेतो दधावहै। प्रजां प्रजनयावहै पुत्रान् विन्दावहै बहून्। ते सन्तु जरदष्टयः सं प्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतँ शृणुयाम शरदः शतम्।

विवाह की पूर्ण रीति मोहिनी को बलपूर्वक पकड़कर कराई गयी। समाप्त होने पर सबने वर और वधू के पिताओं को बधाई दी। मोहिनी इस नाटक को देख क्रोध से उतावली हो रही थी। उसने एक बार अंतिम यत्न करते हुए पंडित को सम्बोधन कर कहा, "अरे दुष्ट पापी! विवाहिता का दोबारा विवाह करने का पाप तुझे लगेगा।"

पंडित ने दांत दिखा हंसते हुए कहा, "देवी जी, ईश्वर की कृपा से सब ठीक होगा।"

मोहिनी की साड़ी का अंचल घनश्याम के दुपट्टे से बांध दिया गया। मोहिनी का हाथ घनश्याम के हाथ में पकड़ा कर पण्डित ने पाणिग्रहण का मंत्र पढ़ दिया। मोहिनी को उसका हाथ बर्फ समान ठंडा प्रतीत हुआ। उसने झटककर हाथ छुड़ा लिया और अपने कमरे की ओर चल पड़ी। घनश्याम उसके पीछे पीछे था और उन दोनों के पीछे

सेठ धन्नाराम और मोहिनी की बूआ थी।

मोहिनी चाहती थी कि भीतर से कमरे का दरवाज़ा बन्द कर ले और घनश्याम को बाहर ही छोड़ दे, परन्तु सेठ धन्नाराम ने सतर्कता से किवाड़ पकड़ लिया और दरवाज़ा बन्द होने नहीं दिया। सब लोग मोहिनी के पीछे भीतर घुस गये।

[१३]

जगन्नाथ लोहारी मंडी में एक मकान में रहता था। रामलाल पता कर वहां पहुँचा। जगन्नाथ रामलाल को जानता था। अतएव बहुत स्वागत कर बैठाया। जगन्नाथ की वकालत कुछ चलती नहीं थी। इसी कारण उसने थोड़ा सा सामान रखा हुआ था। वह अभी तक अविवाहित था। घर पर एक नौकर रखा हुआ था जो सफाई इत्यादि करता था। रोटी वह बाज़ार से खाता था।

रामलाल ने बैठकर बात आरम्भ की, "आप मोहिनी लड़की को जानते हैं?"

जगन्नाथ ने कुछ सोचकर कहा, "हां, याद है। एक लड़की को श्रीमती प्रेमदेवी ने मेरे पास भेजा था। वह नाबालिग़ थी और किसी लड़के से विवाह करने का वचन दे चुकी थी।"

"जी ठीक। मैं उसी के विषय में कुछ कहने आया हूँ।"

"तो आपसे उसने विवाह का वचन दिया है?"

"जी नहीं। वह मेरी बहिन है।"

"बहिन! सेठ धन्नाराम की लड़की! वह प्रेम की मित्र और हड़तालियों के लिये चन्दा करती है!" जगन्नाथ के विस्मय का वारापार नहीं रहा।

"जी, वह सब सत्य है। ओरियेन्टल कॉलिज के प्रोफेसर पं० विशम्भरदयाल के सुपुत्र अविनाशचन्द्र से उसका प्रेम हो गया है। परन्तु पिता जी उसकी सगाई देहली के सेठ रघुनन्दन के पुत्र घनश्याम से करना चाहते हैं। शायद कल सगाई होगी। आपके पास मुझे उसने भेजा है।

आपने उसकी सहायता करने का वचन दिया था।"

"हां, देखिये। मेरी योजना यह है कि सगाई हो जाने दी जाय। हिन्दू लॉ में सगाई की कुछ भी महत्ता नहीं है। सगाई के पश्चात मैं एक बैरिस्टर से हाईकोर्ट में विवाह में इन्जंक्शन की पेटीशन दिलवा दूंगा। इसमें मेरी युक्ति यह होगी कि एक नाबालिग लड़की यदि चाहे तो अपना विवाह अपने बालिग होने तक रोक सकती है। यह भार संरक्षक पर होगा कि वह साबित करे कि लड़की का विवाह यदि दो वर्ष तक रोक दिया जाय तो कोई भारी हानि होगी।"

"तो इसके लिये अभी कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं ?"

"नहीं। बात यह है कि संरक्षक का लड़की के किसी स्थान पर विवाह करने का निश्चय तब ही माना जा सकता है जब सगाई हो जाये।"

रामलाल ने वकील साहब का धन्यवाद करते हुए कहा, "मैं कल या परसों सगाई हो जाने के पश्चात सेवा में उपस्थित होऊंगा।"

इतना कह दस रुपये का एक नोट रामलाल ने जगन्नाथ की मेज़ पर रख दिया। उसका कोई मुन्शी नहीं था। जगन्नाथ ने रुपया लेने से इन्कार कर दिया। परन्तु बहुत आग्रह करने पर उसने कहा, "अच्छा यह रख लेता हूं। यदि मुकद्मा होगा तो फिर हिसाब में मुजरा कर दूंगा।"

"यदि आप ऐसा करेंगे तो निर्वाह कैसे होगा ? मैं तो पहले ही यहां बहुत सादगी देखता हूँ।"

"मुझे बहुत साज़ो-सामान की आवश्यकता भी नहीं। मैं बहुत कम मुकद्मे लेता हूँ। जब तक मुझे यह विश्वास नहीं हो जाता कि मेरे पास आने वाले का पक्ष सत्य है मैं उसके मुकद्मे में हाथ नहीं डालता, और सत्य पक्ष वाले प्रायः निर्धन होते हैं। वे अधिक फीस दे नहीं सकते। इस कारण मैंने अपनी फीस बहुत कम कर रखी है।"

रामलाल अगले दिन पिता की कोठी में दो कामों से पहुंचा। एक तो वह यह जानना चाहता था कि मोहिनी की सगाई कब होगी और दूसरे अपने विषय में जानना चाहता था कि सेठ साहब का व्यवहार

कैसा है। जब वह कोठी में पहुंचा तो उसने ड्राइंग-रूम में सेठ रघुनन्दन को क्रोध से उबलते हुए इधर से उधर और उधर से इधर चक्कर काटते देखा। घनश्याम एक कुर्सी पर आंखों में आंसू भरे बैठा था। रामलाल को कमरे में प्रवेश करते देख सेठ रघुनन्दन खड़े हो घूरकर उसकी ओर देखने लगे। रामलाल ने मुस्कराते हुए कहा, "सेठ जी, नमस्ते।"

सेठ रघुनन्दन आवेश में कुछ कहना चाहते थे, फिर कुछ सोच केवल नमस्ते का उत्तर नमस्ते में दे चुप कर रहे। रामलाल ने जब घनश्याम को रोते देखा तो पूछा, "घनश्याम जी, रोते क्यों हैं? क्या बात है?"

घनश्याम ने अपनी बात लज्जावश नहीं कही, परन्तु अब सेठ रघुनन्दन फूट पड़े और अपने को अधिक रोक नहीं सके। कहने लगे, "अपनी बहिन से पूछो। मैं उस छोकरी को ऐसा सीधा करूंगा कि नाक से लकीरें निकालेगी।"

"उसका आपसे क्या सम्बन्ध है? वह क्यों लकीरें निकालेगी?" रामलाल ने भी कुछ आवेश में कहा।

"वह? वह मेरी पुत्र-वधू है और उसने मेरे पुत्र का अपमान किया है।"

"अच्छा, यह बात है। बहुत अच्छी बात। जब वह आपकी पुत्रवधू बनेगी तब अपने पुत्र के अपमान का बदला ले लेना। आप कब तशरीफ ले जा रहे हैं?"

"जी साहब, पुत्र-वधू तो हो गयी। आज उसे सुसराल लिये जा रहा हूँ। वहां जाकर सब ठीक हो जावेगा। घनश्याम, उठो। तैयार हो जाओ। बाबू रामलाल अपनी बूआ से कह दो कि बहू को शीघ्र तैयार कर दें। देरी हो रही है।"

रामलाल इसका अर्थ नहीं समझ सका। वह विस्मय में पड़ा हुआ मोहिनी के कमरे में चला गया। वहां दो लठैत चौकीदार दरवाज़े पर खड़े थे। कमरे में मोहिनी अपने पलंग पर बैठी थी। समीप पहनने के

ज़रीदार कपड़े और भूषणों का डिब्बा रखा था। सामने बूआ खड़ी कुछ कह रही थीं। रामलाल को आते देख मोहिनी चौंककर बोल उठी, "भैया!"

रामलाल उसके पास आकर खड़ा हो गया। रामलाल ने पूछा, "क्या है मोहिनी?"

इसका उत्तर बूआ ने दिया, "इसका विवाह रात हो गया है। स्वसुर विदाई के लिये कह रहा है और यह तैयार नहीं होती।"

रामलाल सब बात समझ गया। वह जान गया कि पिता जी बाजी ले गये। विवाह रोका जा सकता है, रद्द नहीं किया जा सकता। ऐसी अवस्था में वह और जगन्नाथ किस प्रकार मोहिनी की सहायता कर सकेंगे? मोहिनी को अब क्या व्यवहार स्वीकार करना चाहिये? यह और अन्य अनेकों प्रश्न थे जो रामलाल के मस्तिष्क में आने लगे थे। उसे इस परिस्थिति में केवल एक ही उपाय सूझा। वह यह कि कुछ समय प्राप्त करना चाहिये। उसने मन में विचार किया कि मोहिनी की विदाई रोकनी चाहिये। ऐसा करने की एक योजना उसने अपने मन में बना ली। इससे उसने हंसते हुए मोहिनी के सिर पर हाथ रख आशीर्वाद देते हुए कहा, "बहिन, भाई का आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। अब जो हो गया सो ठीक है। जीवन एक जुए का खेल है। इसमें हारने वाले को हार मान ही लेनी चाहिये। उठो, तैयार हो जाओ।"

इस समय सेठ धन्नाराम भी वहां आ पहुँचे थे। वह रामलाल का मोहिनी को उपदेश सुन प्रसन्न हो रहे थे। सेठ साहब ने कहा, "हां, रामलाल ठीक कहता है। मोहिनी, कुछ समय के पश्चात् तुम अनुभव करोगी कि आज की तुम्हारी हार वास्तव में जीवन भर की जीत हुई है।"

एकाएक रामलाल पिता से बोला, "परन्तु पिता जी, विवाह तो हो गया। जो हुआ सो ठीक ही कहना चाहिये, परन्तु इसी समय आज ही विदाई देने में तो कुछ लाभ नहीं है। एक ओर तो मोहिनी को अपने भाग्य से सन्तोष कर लेने के लिये अवसर देना चाहिये। दूसरे कोई

अच्छा मुहूर्त देख दिल्ली से स्त्रियां आकर मोहिनी को ले जायें तो मैं समझता हूँ हमारे मान के अनुकूल होगा। सेठ रघुनन्दन जी का भी इसी में मान होगा।"

सेठ धन्नाराम को यह बात मन लगी। वह सोचने लगे कि मोहिनी की विदाई, कम से कम, तो धूमधाम से कर दी जाये। इस समय लड़की को पुरुषों के साथ भेजते हुए उन्हें ठीक प्रतीत नहीं हुआ।

सेठ रघुनन्दन को जब रामलाल ने हाथ जोड़ अति नम्रता से बात समझाई तो वह मान गये। परन्तु वह विश्वास करना चाहते थे कि स्त्रियों के आने पर मोहिनी झगड़ा नहीं करेगी। रामलाल उन्हें कहने लगा, "सेठ साहब, आपकी जीत हुई है और वह एक दो दिन में समझ जायेगी। अब उसके लिये चारा ही क्या है?"

सेठ रघुनन्दन मोहिनी के मुख से सुनकर विश्वास करना चाहते थे। सब लोग फिर मोहिनी के कमरे में चले आये। रामलाल सब के आगे था। उसने मोहिनी को आंख से संकेत करते हुए कहा, "मोहिनी बहिन, हिन्दू रीति से विवाह टूट नहीं सकता। अब तुम्हें सुसराल तो जाना ही है। वही तुम्हारा घर है। बताओ, तुम स्वसुर के साथ जाना चाहती हो या सास के साथ जाओगी?"

मोहिनी आंख का संकेत पा सोचने लगी कि उसके भाई के मन में कुछ बात है। उसने भी अवसर पाने के लिये कह दिया, "भैया, जैसी आज्ञा आप और पिता जी दें करूंगी।"

"शाबाश बेटी!" सेठ धन्नाराम ने कहा।

सेठ रघुनन्दन समझ गये कि बुद्धि ठिकाने आगयी है। वह रामलाल की राय, कि दिल्ली से स्त्रियां आकर मोहिनी को किसी शुभ मुहूर्त पर ले जायें, मान गये।

जब सेठ रघुनन्दन और घनश्याम विदा होगये तो सेठ धन्नराम ने रामलाल से कहा, "देखो, अब मोहिनी को तैयार कराना तुम्हारा काम है। मेरी तो वह मानती ही नहीं।"

"पिता जी, आपने किया तो ठीक नहीं, पर अब इसके लिये और कोई मार्ग भी नहीं। भला यह घनश्याम क्यों रो रहा था?"

"कहता था कि कल विवाह के बाद जब हम उसे मोहिनी के कमरे में छोड़ आये तो मोहिनी ने चांटे मार मार उसे कमरे से बाहर निकाल दिया। वह रात भर सर्दी में ड्राइंग-रूम में ठिठुरता रहा था।"

रामलाल की हंसी निकल गयी। सेठ धन्नाराम ने कहा, "इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। वे लोग इसे घर ले जाकर इस अपमान का बदला लेंगे।"

"इस बात में आपको अथवा सेठ रघुनन्दन को हस्ताक्षेप नहीं करना चाहिये। पति-पत्नी स्वयं निपट लेंगे।"

"तुम्हारी कैसी पटी?" सेठ धन्नाराम ने उत्सुकता से पूछा।

"मैं बहुत प्रसन्न हूं। मुझे चांटे नहीं पड़े।"

"अच्छा, मैं जानना चाहता हूं कि तुम अब काम करोगे या नहीं? मैंने तुम्हें अपनी वसीयत में नहीं रखा।"

"यथार्थ में मैं यही जानने आया हूँ कि आप मुझे फार्मेसी में नौकर भी रखेंगे या नहीं।"

"तुम नौकर के रूप में मैनेजर रह सकते हो। मैं तुम्हें अब मालिक नहीं बना सकता।"

"धन्यवाद! मुझे मालिक नहीं बनना।"

"मैनेजर बन तो तुम्हें अपने निश्चयानुसार पांच सौ मासिक ही मिलेंगे।"

"बस, मैं यही चाहता हूं।"

"इतने में अपनी बीवी के मां-बाप को कहां से खिलाओगे?"

"मैंने उनको खिलाने-पिलाने का जिम्मा नहीं लिया है।"

"अच्छी बात। कुछ दिन में पता चल जायेगा।"

[१४]

विवाह के कुछ दिन पश्चात रज़िया की मां और बाप उससे मिलने

आये। रामलाल फार्मेसी के दफ़्तर में गया हुआ था। मां ने इधर उधर की बातों के पश्चात् पूछा, "स्वसुर से कैसे पटी?"

"मुझे उनके साथ देख आग-बबूला होगये। जैसी कि हम आशा करते थे हमें यहां आते देख प्रसन्न हुए। अब पता चला है कि उन्होंने अपनी वसीयत में अपनी सारी जायदाद का मालिक लड़की को बना दिया है।"

बैरिस्टर साहब यह सुन चौंक उठे। कहने लगे, "यह तो कुछ न हुआ। हमने तो तुम लोगों से बहुत आशा लगाई हुई थी।"

रज़िया के लिये यह सर्वथा नई बात थी। उसने अचम्भे में पूछा, "अब्बाजान! क्या उम्मीद लगाई हुई थी?"

"हम तो समझ रहे थे कि तुम एक अमीर घराने में जा रही हो और हमारी उमर भर की ग़रीबी कट जायेगी।"

"अब तो उन्हें फार्मेसी की मैनेजरी के सिरफ़ पांच सौ मासिक मिलेंगे।"

"अगर यह बात है तो रज़िया उठो, चलो यहां से। हमने तुम्हें एक ग़रीब की बीवी बनने नहीं भेजा।"

रज़िया अपने बाप के विचार सुन चकित रह गयी। वह नहीं समझती थी कि उनके विवाह की स्वीकृति देने में कोई खुफिया कारण भी है। वह अपने मां-बाप से बहुत मोहब्बत करती थी, मगर साथ ही वह रामलाल को भी बहुत चाहती थी। उसकी अवस्था दो नावों में पांव रखने वाले की तरह थी। वह नहीं जानती थी कि किस तरह माता-पिता को समझावे।

मां ने कहा, "उठो बेटी, चलो यहां से। पांच सौ रुपये महीने के क्लर्क से तुम्हारा विवाह नहीं किया। अगर रामलाल को तुम्हारी ज़रूरत होगी तो वह अपने बाप को राज़ी कर तुम्हें ले जायगा।"

"अम्मी! इसमें उनका क्या कसूर है? वह तो मुझसे बेहद मुहब्बत करते हैं।"

"खाक़ मुहब्बत करते हैं। तुमसे शादी कर गरीबी की ज़िन्दगी बसर करने को कहते उसे शरम नहीं आती।"

"गरीबी और अमीरी से मुहब्बत का क्या ताल्लुक़ है, अम्मी?"

"तुम नहीं चलती तो मैं उसको कहूंगी। मैं आज ही उससे फैसला करके जाऊंगी। हमारी बेटी गरीबी की ज़िन्दगी बसर नहीं कर सकती।"

"पर अम्मी, मुझे तो कोई तकलीफ़ नहीं है।"

"हमें तो है न। रिश्तेदार इसलिये बनाये जाते हैं कि वक़्त पर काम आवें।"

रज़िया नहीं चाहती थी कि इस प्रकार की बेहूदा बातें उनसे कही जायें। इस कारण उसने क्रोध में कहा, "तो आपने मुझे रुपया वसूल करने का ज़रिया बनाया है?"

"कुछ समझो। हमारा लड़का भी तुम हो और लड़की भी तुम। हमें तुमसे लेते शर्म नहीं है।"

"कितना आपको मिल जाये कि आप मुझे मेरे हाल पर छोड़ देंगे?"

"हमारी कोठी बीस हजार पर गिरवी है," आप ने कहा, "वह छुड़ा दो और फिर कोई काम किसी कारखाने में जिससे कम से कम चार-पांच सौ की माहवारी आमदनी हो सके।"

"मैं उनसे कहूँगी, और अगर आपको इन बातों से आराम और तस्कीन मिलेगी तो मैं करने की कोशिश करूंगी।"

सायंकाल जब रामलाल आया तो वह बहुत निराश था। उसके निराश होने का कारण यह था कि कई दिन से सेठ साहब कारखानों की हड़ताल बन्द करने के लिये सालसों के डालने की बात पर सोच-विचार कर रहे थे। आज उन्होंने प्रेमदेवी से स्पष्ट कह दिया था कि हड़ताल बिना किसी प्रकार की शर्त के टूट जानी चाहिये। सालस नहीं डाले जावेंगे। रामलाल ने जब सेठ साहब को मनाने का यत्न किया तो उन्होंने कह दिया, "रामलाल, अब तुम मेरे पुत्र नहीं हो। केवल कारखाने के मैनेजर हो। यदि तुमको मेरा फैसला स्वीकार नहीं तो तुम मैनेजरी छोड़

सकते हो।" इस पर रामलाल ने मैनेजरी छोड़ देने का निश्चय कर लिया था।

रज़िया पति का यह निश्चय सुन अवाक् रह गयी। वह तो अपने माता-पिता के लिये कुछ करने को कहने वाली थी और यहां तो अपने व की भी चिन्ता हो गयी थी।



पाचवां भाग

हार

पहले दिन जब प्रेम और झंडासिंह सालस डालने का प्रस्ताव लेकर सेठ साहब के पास पहुँचे थे और सेठ साहब ने इस प्रस्ताव पर विचार करने के लिये अवसर मांगा था तो प्रेम और झंडासिंह बहुत निराश हुए थे। रामलाल के एक हजार रुपया नित्य मज़दूरों के खाने-पीने के लिये देने के वचन से उनका साहस फिर बंध गया था।

जब प्रेम और झंडासिंह चले गये तो रामलाल ने अचम्भे में सेठ साहब से पूछा, "आपने यह हड़ताल बन्द करने में विलम्ब क्यों किया है? मैं तो समझता हूँ कि आज हम सालसों के नाम तय कर लेते और कल से कारखाने खुल जाते।"

"मैं अभी कारखाने खुलवाना नहीं चाहता।"

"क्यों?"

"मैं इसमें कोई लाभ नहीं देखता।"

"लाभ तो है। मज़दूर बेचारे भूखों मर रहे हैं।"

"तो बिना सालस डाले काम पर क्यों नहीं आजाते?"

"हमें भी तो हानि हो रही है।"

"हमें लाभ होरहा है और यदि हड़ताल दो-तीन सप्ताह और चल गयी तो और भी भारी लाभ होगा।"

"हमें लाभ क्या होरहा है? करोड़ों रुपये की मशीनें बेकार पड़ी हैं। लाखों रुपये का कच्चा माल गोदामों में व्यर्थ पड़ा है। हमें तो लाभ तब हो सकता है जब मशीनें काम करती जायें।"

सेठ साहब ने मुस्कराते हुए कहा, "तुम अभी बिलकुल अनाड़ी हो। लो सुनो, मैं समझाता हूँ। जब प्रेमदेवी और गुलामरसूल ने मज़दूरों में जाकर यूनियन बनाने का प्रचार आरम्भ किया था मैं तभी समझ गया था कि हड़ताल होने की सम्भावना है। इससे लाभ उठाने के लिये

मैंने अपनी एक योजना बनाई। एक ओर तो मैंने माल बेचना बन्द कर दिया। बहुत कम माल निकालता था। इसका परिणाम यह हुआ कि माल का दाम बढ़ने लगा। दूसरी ओर मैंने कुछ मज़दूर ऐसे भर्ती किये जो मेरी ओर से कारखानों के कर्मचारियों में भेदियों का काम करने लगे। ये लोग जहां मुझे यूनियन की रहस्य की बातें बताते थे, वहाँ मेरे कहे अनुसार लोगों की राय बनाने में प्रोत्साहन देते थे। मैंने तब तक हड़ताल होने का न तो अवसर दिया था, न ही अपने भेदियों को हड़ताल के लिये आंदोलन करने को कहा, जब तक कि मेरे गोदाम माल से ठसाठस नहीं भर गये।

"ऐसा अवसर आया तो, जहां मैंने तुम्हें उन आदमियों को निकाल देने की राय दी जिनके निकालने के लिये तुमने मुझसे पूछा था, वहां मैंने भेदिये लोगों को यह कहा कि वे मज़दूरों में हड़ताल करने का आंदोलन करें। मेरी योजना सफल हुई। हड़ताल होगयी। इस समय माल का दाम और बढ़ गया। एक मारकीन का थान साढ़े नौ रुपये के स्थान बीस रुपये पर बिकने लगा। जो व्यापारी मुझसे सौ थान मांगता मैं उसे पचास देता। परिणाम में मारकेट में हलचल रही। आज मुझे प्रत्येक थान पर दस रुपये केवल हड़ताल के कारण अधिक मिल रहे हैं।

"मेरे गोदामों में केवल मारकीन के पांच लाख थान हड़ताल होने के समय थे। उनमें से साढ़े तीन लाख बेच चुका हूँ। पैंतीस लाख के लगभग लाभ केवल हड़ताल के कारण हो चुका है और यदि हड़ताल कुछ और लम्बी होजाय तो शेष डेढ़ लाख थान भी बिक जायेंगे। इससे पन्द्रह लाख का लाभ और हो सकता है।"

रामलाल इन आंकड़ों को सुन चकित रह गया। इस पर भी वह मज़दूरों की हालत की ओर देखकर कहता था, "पिता जी, ये लाखों तो आते-जाते ही रहते हैं। मनुष्यता के लिये हड़ताल बन्द कर देनी ही ठीक है।"

सेठ साहब टाल-मटोल करते जाते थे और दिन पर दिन व्यतीत हो रहे थे। इन्हीं दिनों में मोहिनी का अविनाश से प्रेम का विषय आ उपस्थित हुआ। साथ ही रामलाल ने रज़िया से विवाह कर एक और उलझन पैदा कर ली। सेठ साहब को बहाना मिल गया और उन्होंने सालसों के विषय को स्थगित कर दिया।

जब मोहिनी का विवाह हो गया और रामलाल बाप से पृथक फिरोज़पुर रोड पर जाकर रहने लगा तो मज़दूरों का पक्ष और ढीला हो गया। यदि सेठ साहब का शेष माल बिक जाता तो हड़ताल बन्द हो जाती। परन्तु बाज़ार में यह बात फैल गयी थी कि हड़ताल बन्द होने वाली है। इससे नयी ख़रीद बन्द हो गयी थी। परिणाम यह हो रहा था कि माल बिकना बन्द हो गया और सेठ साहब हड़ताल लम्बी और लम्बी करते जाते थे।

रामलाल के पास जितना नक़द रुपया था वह सब हड़तालियों के खाने का प्रबन्ध करने के लिये दिया जा चुका था। इस पर एक दिन पिता से झगड़ा हो गया। रामलाल कहता था कि हड़ताल बन्द कर दी जाय। सालस डाल लिये जावें। पिता घर के झगड़ों और माल न बिक सकने के कारण चिढ़ा हुआ था। कहने लगा, "देखो रामलाल, मैं तुम्हें पुत्र के अधिकार से वंचित कर चुका हूँ। अब तो तुम एक विभाग के मैनेजर मात्र हो। यदि तुम मेरी राय से सहमत नहीं हो तो मैनेजरी छोड़ सकते हो।"

रामलाल को भी क्रोध चढ़ आया। कहने लगा, "अच्छी बात है। मेरा त्याग-पत्र ले लिया जाय।"

इतना कह वह पिता के पास से उठ बाहर चला आया। प्रेम भी समीप बैठी यह झगड़ा सुन रही थी। वह भी उठकर रामलाल के साथ बाहर आगयी। रामलाल ने आंखो में आंसू भर कहा, "प्रेमदेवी जी, क्षमा करें। मेरे पास अब और रुपया नहीं है। मैं आपकी सहायता नहीं कर सकता।"

प्रेम वहां से निराश और हतोत्साह मुगलपुरा की ओर चल पड़ी। जब वह यूनियन के कार्यालय में पहुंची तो वहां तीन चार सौ मज़दूरों की भीड़ खड़ी थी। वे लोग रोटी माग रहे थे। उस दिन धनाभाव के कारण किचन बन्द कर दिये गये थे। प्रेम ने झंडासिंह से पूछा, "खाने को कुछ नहीं है क्या?"

"एक दाना भी नहीं, और यूनियन को एक पैसे का भी उधार नहीं मिल रहा।"

प्रेम उलटे पांव वहां से लौटी। मोटर में सवार हो अपने पिता के पास पहुंची। अब कई दिन से वह रात को भी घर नहीं जा सकी थी। लोगों को समझाने-बुझाने, किचन के लिये चन्दा एकत्रित करने, सेठ साहब से समझौते के लिये मिलने जाने, हड़तालियों के लिये ठीक वातावरण उत्पन्न करने के लिये समाचार-पत्रों में वक्तव्य देने में वह दिन-रात लगी रहती थी। कई राते वह यूनियन के दफ्तर में ही सोई थी।

आज कई दिन के पश्चात् डाक्टर खन्ना को प्रेम के दर्शन हुए। डाक्टर नाराज़ बैठे थे। एक तो लोग प्रेम और गुलामरसूल के अनुचित सम्बन्ध की कहानियां आकर सुनाने लगे थे। लोगों का कहना था कि वह रात गुलामरसूल के घर रहती है। दूसरे डाक्टर साहब का पुराना हृदय-रोग फिर जाग्रत हो उठा था। डाक्टर साहब बिस्तर में पड़े थे। प्रेम ने पूछा, "पिता जी, क्या बात है?"

डाक्टर ने कहा, "अवकाश पा गई हो प्रेम? मैं तो समझा था कि तुम मरने का समाचार पाकर ही आवोगी।"

"पिता जी, हड़ताल के झगड़े में ऐसी फंसी हूँ कि घर आना भी प्रायः कठिन हो जाता है।"

"बहुत बड़ी नेता बन गई हो अब। बाप की भी टोह लेने को अवसर नहीं है। अच्छी बात, जैसे मन करे करो। मगर एक बात मैं तुमसे पूछता हूँ। देखो प्रेम, सत्य बताना। झूठ कहने से तुम बच नहीं सकोगी।

आज रात तुम कहां सोई हो ?"

"क्यों, क्या बात है पिता जी ?"

डाक्टर उठकर बिस्तर पर बैठ गया। बिस्तर पर बैठते ही उसका दिल धड़कने लगा था। उसने पलंग के समीप रखी तिपाई पर से एक दवाई ले उसकी कुछ बूंदे मुख में उड़ेल लीं। जब धड़कन कुछ शान्त हुई तो कहने लगा, "मुझे कल रात ही एक आदमी ने बताया था कि रात भर तुम्हारी गाड़ी शेरांवाला दरवाजे के बाहर गुलामरसूल के मकान के सामने खड़ी रही है। तुम रात वहां रही हो ?"

"जी हां।"

"वहां उस घर में कोई और स्त्री रहती है ?"

"नहीं। पर पिता जी इससे क्या होता है ? मैं क्या अकेली किसी स्थान पर रह नहीं सकती ?"

"तुम जानती हो कि नगर भर में तुम्हारी बदनामी हो रही है ?"

"ये बातें सेठ धन्नाराम ने मुझे बदनाम करने के लिये फैलाई हैं।"

"और तुमने रात उसके घर रहकर उसे ऐसी बातें करने का अवसर दिया है।"

"मुझे मूर्ख लोगों की बेहूदा बातों की परवाह नहीं है।"

"इन मूर्ख लोगों में तुम मुझे भी गिनती हो ?"

"नहीं पिता जी, आप तो बहुत उदार हृदय रखते हैं। आपके विचार बहुत उन्नत हैं। आप ऐसी बातों की परवाह न करें।"

"देखो प्रेम, मैं चाहता हूँ कि तुम इस हड़ताल का झगड़ा छोड़ो। यह काम तो गुलामरसूल जैसे गुन्डों का है।"

"पिता जी, इस समय मज़दूरों को अकेले छोड़ देने में उन बेचारों की बहुत बुरी दशा होगी। मैं ऐसा नहीं कर सकती।"

"खैर, जैसे तुम्हारी इच्छा। परन्तु यह बात है बहुत बुरी। मज़दूरों को मिलकर हड़ताल तोड़ काम पर चला जाना चाहिये। सब लोग कह रहे थे कि तुम और गुलामरसूल ही उन्हें काम पर जाने से रोक रहे हो।"

प्रेम तो घर पर पिता जी से कुछ रुपया मांगने आई थी। हड़तालियों के लिये थोड़ा थोड़ा कर वह पहले कई बार मांग चुकी थी। अब पिता जी को बीमार और उन्हें हड़तालियों के विरुद्ध देख रुपया मांगने से झिझक गयी। वह बिना कुछ कहे अपने कमरे में चली गयी।

नगर में अन्य चन्दा एकत्रित करने वाले थक गये थे और एक पाई भी एकत्रित नहीं हो रही थी। रामलाल ने कह दिया था कि वह और सहायता नहीं कर सकता। इधर पिता जी ने भी अपने विचार प्रकट कर दिये थे। वह हताश अपने पलंग पर जाकर लेट गयी। आज वह अपनी परिस्थिति से हार गयी प्रतीत होती थी।

सायंकाल गुलामरसूल प्रेम से मिलने आया। डाक्टर खन्ना ने नौकरों से कह छोड़ा था कि उसके लिये प्रेम घर पर नहीं है। कुछ काल पश्चात् झंडासिंह आया। उसे भी नौकर वापिस करने वाले थे कि प्रेम ने कहीं से उसे देख लिया। वह बाहर आगयी।

झंडासिंह ने देखते ही हाथ जोड़ नमस्ते कह बात कहनी आरम्भ कर दी। वह बोला, "आज वहां यूनियन के दफ्तर में झगड़ा होगया है। कुछ लोग चाहते थे कि हड़ताल तोड़ कल सब लोग कारखानों में जा पहुँचें। अब्दुलग़नी कहता था कि नहीं जाना चाहिये। अभी एक हफ्ता और इन्तज़ार करना चाहिये। इस पर झगड़ा होगया और दोनों पक्ष के लोग इकट्ठे हो लड़ने लगे। किसी ने भीड़ में से अब्दुलग़नी को छुरी से घायल कर दिया है। देवी जी, अवस्था बहुत बिगड़ गयी है।"

प्रेम ने पूछा, "तो मामला पुलिस में गया है?"

"नहीं, अभी नहीं।"

प्रेम ने विचार किया कि उसे मुगलपुरा जा लोगों को समझाना चाहिये। वह कपड़े बदल अपनी मोटर में सवार हो मुगलपुरा जा पहुंची। छुरी चलने के पश्चात लोग अपने अपने घरों में चले गये थे। प्रेम ने घरों का चक्कर लगाना आरम्भ कर दिया। उसने देखा कि लोगों में भारी असन्तोष और दुःख है। जिनके बाल-बच्चे अभी मुगलपुरा में ही थे वे

बहुत मुसीबत में थे। बच्चे भूख से बिलख बिलख कर रोते थे।

लोगों की ऐसी अवस्था देख प्रेम का मन पसीज उठा और उसने सेठ साहब से मिलकर बिना शर्त के ही हड़ताल तोड़ देने का निश्चय कर लिया। मुगलपुरा से चल वह सेठ धन्नाराम की कोठी में पहुँची।

[२]

सेठ धन्नाराम ने रामलाल को कहने को तो कह दिया कि मैनेजरी छोड़ दे, परन्तु जब वह उठकर चला गया तो उन्हें शोक लगने लगा। मोहिनी अपने कमरे में बन्द रहती थी। रामलाल जो पहले कभी कभी कार्यवश आता था अब उसके आने की आशा भी कम हो गयी।

आजकल कारखानों के बन्द होने से उन्हें करने को कुछ काम नहीं था। उन्हें आज कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि वह खाली हैं। प्रेम और रामलाल के चले जाने के पश्चात् वह उठकर मोहिनी के कमरे में चले गये। वह मुख पर कम्बल ओढ़े लेटी थी। उन्होंने समझा सो रही है। वह वापिस लौट आने वाले थे कि उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि वह हिल रही है। उन्होंने आवाज़ दी, "मोहिनी !"

मोहिनी ने मुख से कपड़ा हटाया और बोली, "हां पिता जी।"

"लेट रही हो। स्वास्थ्य तो ठीक है ?"

"ठीक है।"

इस समय सेठ साहब ने मोहिनी की आंखों को देखा। वे लाल हो रही थीं और गालें आंसुओं से भीग रही थीं। उन्होंने चिन्ता प्रकट करते हुए पूछा, "तुम रो रही थी ?"

"जी।"

"क्यों ?"

"ऐसे ही।"

"देखो मोहिनी," सेठ साहब ने कुर्सी पर बैठते हुए कहा, "मैंने शुद्ध हृदय से तुम्हारे भले की बात की है। अब तुम ही मेरी पूर्ण सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी होगी। सुसराल में भी घनश्याम पिता की अकेली

सन्तान है। वह करोड़ों की सम्पत्ति भी तुम्हारी ही होगी। इससे अच्छी बात तुम क्या चाहती हो?"

"कुछ नहीं।"

"तो ठीक है?"

"हां।"

"शाबाश! तुम बहुत अच्छी लड़की हो। अब यह रोना-धोना छोड़ो। चलो मोटर में घुमा लाऊँ।"

"जी नहीं।"

"क्यों?"

"ऐसे ही।"

इन एक एक शब्दों के उत्तर ने सेठ साहब के धीरज को चूर चूर कर दिया। वह निराश हो वहां से चले आये। पश्चात् कुछ काल तक अपने कमरे में जा अपने आपको समझने का यत्न करने लगे। उनकी स्त्री को मरे पन्द्रह वर्ष हो चुके थे। तब से उन्होंने विवाह का नाम तक नहीं लिया था। दिन-रात रुपया कमाने में लगे रहे थे। उनके जीवन में क्लब के एक-दो घण्टे ही मनोरंजन के होते थे। शेष समय तो रुपया कमाने की धुन में व्यतीत होता था। अब उन्होंने अपनी निज के हिसाब की किताब निकाली। इसमें उनकी कुल सम्पत्ति का मूल्य पिछले मास की अंतिम तिथि तक गिनकर लिखा था। कुल स्थावर और जंगम सम्पत्ति दस करोड़ रुपये से ऊपर थी। ये आंकड़े तो संतोषजनक थे, परन्तु आज जो विचार मन में आया था वह इस सम्पत्ति के भोग करने वाले के बारे में था। मोहिनी इतनी सम्पत्ति लेकर भी प्रसन्न नहीं थी। रामलाल को यदि यह सम्पत्ति मिल जाये तो उसका स्वसुर इसे उड़ा देगा। तो क्या किया जाय यही प्रश्न उनके मन में आता था और इसका उत्तर कि उनकी वसीयत से सारी सम्पत्ति मोहिनी अर्थात घनश्याम के हाथ में जायेगी अति असन्तोषप्रद था।

सेठ साहब सोचते थे कि मोहिनी का विवाह हो ही गया है। जब

वह अपने घर में बसने लगेगी तो वसीयत बदल देंगे। परन्तु मोहिनी को न देकर किसको दें ? रामलाल को ? जैसे मोहिनी को देने का अर्थ है घनश्याम को देना, वैसे ही रामलाल को देने का अर्थ है चौधरी सलीमुल्लाखां को देना। इतना विचारकर वह अपने आपको आकाश में पाते थे और समझते थे कि वह निराधार शून्य में लुढ़कते हुए चले जाते हैं।

अपनी अवस्था से अति निराश हो वह एकाएक उठे, कोठी के बाहर आये और मोटर ले क्लब में जा पहुंचे। वहां अपने स्वभावानुकूल एक कोने में एक कुर्सी पर बैठ फिर विचार में लीन होगये। क्लब के सब बैरे जानते थे कि सेठ साहब बहुत कम लोगों से बोलते हैं। केवल सिगरेट पीते हैं। अतएव एक ने उनकी पसन्द के सिगरेटों का डब्बा उनके सम्मुख तिपाई पर ला रखा।

बैरे को सलाम करता देख सेठ साहब ने उसकी ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखा। बैरे ने कहा, "हजूर।"

सेठ साहब ने पूछा, "सब से बढ़िया ह्विस्की क्लब में कौन है ?"

बैरे ने हैरानी प्रकट कर उत्तर दिया, "स्कॉच।"

"लाओ।"

बैरा मुस्कराकर चला गया। सेठ साहब ने जीवन में दूसरी बार शराब पीने को मंगवाई थी। एक दिन पन्द्रह वर्ष हुए जब उनकी स्त्री का देहान्त हुआ था तब, और एक आज। अब जब सोडा और ह्विस्की बैरे ने मिलाकर सामने रखी तो उन्हें वह दिन स्मरण हो आया। इस घटना के स्मरण आते ही उन्हें अपने इस पन्द्रह वर्ष की भाग-दौड़ का जीवन नीरस, निष्फल और निष्प्रयोजन प्रतीत होने लगा।

आज सेठ साहब ने पी और जितनी वह पीना चाहते थे उससे अधिक पी। जब बाहरी संसार से अपने सम्बन्ध को भूलने लगे तो बैरे के सम्मुख एक सौ रुपये का नोट फेंक लड़खड़ाते क्लब से बाहर आ लॉन में बैठ गये और सिगरेट पीने लगे। वहां बहुत देर तक बैठे रहे। जब

सरदी लगने लगी तो उठ मोटर में सवार हो कोठी में पहुँच गये। इस समय रात के ग्यारह बज गये थे। वह अर्ध-चेतना की अवस्था में थे और अपने कमरे में जा रहे थे कि नौकर ने कहा, "हजूर, आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।"

"कौन?"

"वही। प्रेमदेवी जी।"

"बुलाओ।" सेठ साहब ने झूमते हुए कहा।

प्रेमदेवी सम्मुख आ खड़ी हुई। सेठ साहब ने अभी भी अस्थिर आवाज़ में कहा, "ओह! प्रेमदेवी। क्यों? इस समय क्या चाहती हो?"

"आप बैठ जावें तो अर्ज़ करूं।"

"अच्छी बात, आजाओ।" इतना कह वह उसे अपने कमरे में ले गये। प्रेम ने कभी शराब नहीं पी थी, पर वह समझ रही थी कि सेठ साहब पिये हुए हैं। इस कारण वह घबराई। वास्तव में वह भी आज मशीन की भांति काम कर रही थी। उत्साहहीन होने से उसका मस्तिष्क काम नहीं कर रहा था।

कमरे में पहुँच सेठ साहब ने उसे एक कुर्सी पर बैठाया और स्वयं अपने पलंग पर बैठ पूछने लगे, "इस समय आने की क्यों तकलीफ़ की है?"

"मैं आठ बजे से आपकी प्रतीक्षा कर रही हूं।"

"ओह! बहुत कष्ट हुआ। प्रेमदेवी, आज तुम बहुत भली प्रतीत होती हो। बताओ, क्या चाहती हो?"

"सुबह कारखाने खोलने की आज्ञा दे दीजिये।"

"बिना शर्त के?"

"जी।"

"हार गयी हो?"

प्रेम चुप रही। सेठ साहब ने प्रेम की आंखों में देखते हुए कहा, "देखो प्रेम, मैं आज एक विचित्र अवस्था में हूं। मैं तुम्हारे साहस की

सराहना करता हूँ। तुम में मुझे एक विशेष ज्योति प्रतीत होती है और मैं भौंरे की भांति उस ज्योति में लुढ़कता हुआ अनुभव करता हूं। मैं सहन् नहीं कर सकता कि तुम हार जाओ। बताओ, तुम क्या चाहती हो?"

प्रेम ने समझा कि सेठ साहब का मस्तिष्क शराब पीने के कारण खराब हो रहा है। इस पर भी उसने केवल यह ही कहा, "कल कारखाने खोलने की आज्ञा दे दीजिये।"

"तो हड़ताल निष्फल गयी?"

"जी।"

"मैं इसको सफल बनाने की शक्ति रखता हूं।"

"जी।"

"परन्तु उसके लिये मैं किसी के आश्रय की, किसी के पथ-प्रदर्शन की, किसी के प्रोत्साहन की, किसी के संकेत की अर्थात किसी के नेतृत्व की आवश्यकता अनुभव करता हूं।"

"ईश्वर के नाम पर......।" प्रेम कहते कहते रुक गयी। ईश्वर का नाम केवल आम भाषा के मुहावरे के कारण उसके मुख से निकल गया था।

सेठ साहब ईश्वर का शब्द सुन खिलखिलाकर हंस पड़े। "वह कहां हैं?" सेठ साहब ने पूछा।

"नहीं, भूल से उसका नाम मुख से निकल गया है। आज मेरा चित्त भी स्थिर नहीं है।"

"देखो प्रेम! आज मेरे मन में कुछ पुरानी बातें आ रही हैं। धन के पीछे दौड़ लगाते हुए मैं उन्हें भूल गया था। मेरे मन में भी उद्‌गार और भावनायें उठती थीं। मेरे मन में भी उमंगें जोश मारा करती थीं। मैं भी तब एक साधारण सी मन की भावना के लिये जीवन की बाज़ी लगा देने को तैयार हो जाता था। वह मन की अवस्था एक व्यक्ति के मेरे जीवन में उपस्थित होने के कारण थी। वह व्यक्ति गया और मेरी आत्मा सो गयी। मेरे में धन एकत्रित करने की लालसा जागी और

मन पर ज़ंग लगने लगा। आज एकाएक तुम्हें देख पुनः मेरे में उस व्यक्ति की याद हरी हो उठी है। जानती हो प्रेम, वह कौन व्यक्ति था ?"

"कौन था ?"

"वह मेरी स्त्री थी। वास्तव में वह मेरी सब कुछ थी। मैं उसके लिये संसार में, कोई भी बात हो, कर सकता था। उसकी मृत्यु के पश्चात मेरी आत्मा का दीपक बुझ गया। मैं देखता हूँ कि तुम उसे पुनः प्रज्ज्वलित कर सकती हो।"

"सेठ साहब, आप क्या बातें कर रहे हैं ?"

"मैं सत्य कह रहा हूँ। प्रेम, मेरा हाथ पकड़ लो......।"

प्रेम उठ खड़ी हुई और कहने लगी, "आपकी तबियत ठीक नहीं मालूम होती। आप आराम करें। मैं कल आपसे मिलूंगी।"

इतना कह प्रेम ने नमस्ते कह दी। सेठ साहब ने कहा, "ठहरो, तुम अभी मेरा आशय समझ नहीं सकी। खैर छोड़ो। कल मिल लेना, परन्तु जिस काम के लिये आई हो वह मैं अभी कर देता हूँ। क्या चाहती हो तुम ? कारखाने खुल जायें। लो मैं अभी आज्ञा देता हूँ।"

प्रेम खड़ी रही। सेठ साहब ने पलंग के समीप लगा हुआ बटन दबाया। बाहर घंटी बजी। नौकर आया। सेठ साहब ने कहा टैलीफून भीतर ले आओ। नौकर टैलीफून उठा लाया। टैलीफून का प्लग उस कमरे में लगा था। सेठ साहब ने टैलीफून लगा मुगलपुरा में मिस्टर मिचल चीफ इन्जीनियर से मिलाया। "हैलो......मिस्टर मिचल !...... मैं धन्नाराम बोल रहा हूँ......मैं आज्ञा देता हूँ कि कल हमारे सब कारखाने खुलेंगे। काम करने वालों की बस्ती में अभी घोषणा करवा दो कि मजदूरों की यूनियन की प्रतिनिधि श्रीमती प्रेमदेवी और कारखानों के मालिकों में समझौता हो गया है। कल सब लोग अपने अपने काम पर हाजिर हो जावें। साथ ही इसके यह भी घोषित कर दो कि जो लोग हाजिर होंगे उनको आधे महीने का वेतन पेशगी मिल सकेगा।"

प्रेम विस्मय में खोई हुई अवाक खड़ी देख रही थी। आज प्रातः-

काल ही सेठ साहब अपने पुत्र के इससे बहुत कम त्याग करने के लिये आग्रह करने पर उसे डांटने लगे थे। यह दिन भर में क्या हो गया? प्रेम को हड़ताल के झंझट में फंसे होने के कारण सेट साहब के घर की बातों का ज्ञान नहीं था। यदि इन दिनों वह जगन्नाथ वकील से मिली होती तो उसे सब बातों का पता चल गया होता और वह सेठ साहब के मन की अवस्था को भली भांति जान सकती। सेट साहब जब टेलीफून कर चुके तो बोले, "मैं समझता हूँ अब यह तुम्हारा काम है कि मजदूरों को मेरी घोषणा का पूरा फल प्राप्त हो सके।"

"यह तो हो जायेगा," प्रेम ने उत्तर दिया, "परन्तु आपने जो कहा है कि समझौता हो गया है, वह कहां हुआ है? कल जब यूनियन के सदस्य मुझसे पूछेंगे कि क्या समझौता हुआ है तो मैं क्या बताऊंगी?"

"जो कुछ मांगे मजदूरों की तुम उचित समझती हो लिख डालो। मैं नीचे हस्ताक्षर कर दूंगा।"

"आज तो मैं केवल बिना शर्त के यूनियन की हार मानने आई थी।"

"यूनियन, तुम ही तो हो। तुमने ही तो उसे बनाया है, तुम ही उसका मस्तिष्क हो, तुम ही उसको सींचकर जीवित रखने वाली हो। यदि तुम उसे छोड़ दोगी तो वह बालू की भीत की भांति एक दिन में भूमि पर आ गिरेगी। सो यूनियन की हार तुम्हारी हार नहीं है क्या?"

"मैं आज परिस्थिति से हार गयी हूं।"

"और यह मैं देखना नहीं चाहता। जब तक तुम अकड़ कर मुझसे शर्तें मनवाने के लिये आती थी मैं तुम्हारी कोई भी बात मानने में अपना अपमान समझता था। आज तुम मेरे सामने हार मानने आई हो इस कारण मैं तुमसे हार जाना अच्छा समझता हूँ। प्रेम! एक बात कहूं?"

"कहिये।"

"मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।"

"छीः, आप आज अपनी होश में नहीं हैं।"

"यह प्रेम सर्वथा पवित्र है।"

प्रेम ने समझा कि सेठ साहब शराब के नशे में बातें कर रहे हैं इस कारण उसने कहा, "अच्छी बात। मैं आपसे कल किसी समय मिलूंगी ताकि समझौते की शर्तों पर हस्ताक्षर हो सकें। मैं समझती हूँ कि इस समय आपसे कुछ लिखवा लेना धर्म और कानून दोनों के विचार से अन्याय और अनुचित होगा।"

"तुम समझती हो कि मैं शराब के नशे में हूं। यह बात ग़लत है। मैंने पी हुई है अवश्य, परन्तु मैं वेहोश नहीं हूँ। अच्छी बात है, कल आना। क्या चार बजे सायंकाल का समय ठीक रहेगा?"

"जी, मैं आऊंगी।"

इतना कह प्रेम वहां से चली आई। उसके मन में आया कि मुगलपुरा में यूनियन के सदस्यों से कह आवे कि कल कारखाने खुल जायेंगे। इस कारण सब लोग हाज़िर हो जावें। उसने घड़ी में समय देखा। रात के साढ़े बारह बजे थे। एक घन्टे में वापिस हो जाने का विचार कर उसने मोटर मुगलपुरा की ओर घुमा दी।

[३]

जहां प्रेम हड़ताल खोलने के लिये सेठ धन्नाराम से मिलकर उसकी मिन्नत-खुशामद करना उपाय समझती थी वहां गुलामरसूल दूसरा ही विचार रखता था। पिछली रात प्रेम ने गुलामरसूल से सेठ साहब के कारख़ाने खोलने से इन्कार करने की बात कही थी। गुलामरसूल उसी समय से अपने मन में एक योजना बनाने लगा था। उसने उस योजना को प्रेम से नहीं बताया। वह निश्चय से जानता था कि प्रेम स्त्री होने से उसकी योजना को स्वीकार नहीं करेगी। इससे उसने सब बात अपने मन में ही रखी।

जिस समय प्रेम रामलाल को लेकर सेठ साहब से सालस डालने के लिये आग्रह कर रही थी और सेठ साहब रामलाल को मैनेजरी छोड़ने को कह रहे थे, गुलामरसूल अपनी हड़ताल खोलने की योजना

की नींव रख रहा था। वह मुगलपुरा पहुँच यूनियन के दफ़्तर से दूर मज़दूरों में से कुछ जोशीले नौजवानों को एकत्रित कर बता रहा था, "देखो, मुझे पक्के जरिये से मालूम हुआ है कि जब तक सेठ साहब के गोदाम माल से खाली नहीं होते वह हड़ताल नहीं खोलेंगे। माल इसलिये नहीं बिक रहा कि माल के दाम बहुत बढ़ा रखे हैं। इस बढ़े हुए दाम पर लोग तब तक तो खरीदते रहे हैं जब तक उन्हें विश्वास था कि हड़ताल लम्बी होगी। अब बाजार में यह बात फैल रही है कि हड़ताल शीघ्र ही खुलने वाली है। सालस डालने की बातें हो रही हैं। इसलिये हड़ताल खुलने की आशा बाजार वाले कर रहे हैं।

"इस परिस्थिति में मजदूरों का सत्यानाश हो रहा है। मैं समझता हूँ कि यदि एक सप्ताह और ऐसी ही अवस्था रही तो भूख से हमारे लोग मरने लगेंगे। इसलिये हमें ऐसा मौका पड़ने से पहले ही कोई कार्यवाई करनी चाहिये। मैं आपसे कह रहा हूँ कि मजदूर भाइयों की मुसीबत कम करने के लिये सब से अधिक पुर असर तजवीज़ है गोदामों को खाली कर देना। मैं कहता हूं कि गोदामों को आग लगाकर भस्म कर देना चाहिये। न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी। हड़ताल जारी रखने की कोई ज़रूरत ही नहीं रह जायेगी।"

सब सुनने वाले इस साहस की बात को सुन चकित रह गये। गुलामरसूल ने कहना जारी रखा, "मुझे पांच-छः आदमी ऐसे मन चले चाहियें जो इस पाक काम के लिये जान तक देने के लिये तैयार हों। आप में से जो मेरा साथ इस काम में देना चाहते हैं हाथ खड़ा करें।"

वहां पर जितने भी युवक थे सब गुलामरसूल के विचारों को मानने वाले थे। सबने हाथ खड़े कर दिये। गुलामरसूल ने पांच पांच की मंडलियां बना उनको भिन्न भिन्न काम सौंप दिये। दिन भर ये लोग अपने अपने निश्चित काम को पूरा करते रहे। सबसे कठिन काम था आग लगाने का सामान गोदाम के पिछवाड़े एकत्रित करना और चौकीदारों को धोका दे फाटक के अन्दर घुसना। यह काम गुलामरसूल

ने अपने हाथ में रखा।

सेठ साहब से वार्तालाप के अंतिम समाचार जानने के लिये तीसरे पहर गुलामरसूल प्रेम से मिलने डाक्टर साहब की कोठी पर गया, परन्तु उससे मिल नहीं सका। पश्चात वह फिर मुगलपुरा जा पहुँचा और अपनी योजना को अंत तक ले जाने का यत्न करने लगा।

रात के ग्यारह बजे गुलामरसूल अपने साथियों सहित गोदाम की ओर चल पड़ा। सथियों को पीछे छोड़ वह अकेला अहाते के, जिसके भीतर गोदाम थे, फाटक पर पहुंचा। चौकीदार फ़ाटक के अन्दर थे।

गुलामरसूल ने फाटक खटखटाया। भीतर से आवाज आई, "कौन है?"

"फाटक खोलो। सेठ साहब आये हैं।"

फाटक खुल गया। दो चौकीदार थे। गुलामरसूल ने एक को कहा, "सेठ साहब की गाड़ी कपड़े के कारखाने के फाटक पर खड़ी हो गयी है। उसे धकेल कर लाना है। तुम जाओ और धकेलने वालों की सहायता करो।"

चौकीदार ने अपने साथी की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखा। दूसरे ने कह दिया, "तुम जाओ, मैं यहां ठहरता हूँ।"

इतना कह वह फाटक बन्द करने लगा। गुलामरसूल ने अपना हाथ उसके मुख पर रख एक घूंसा उसकी कुक्षी में लगाया। चौकीदार बेहोश हो भूमि पर गिर पड़ा। उसने बेहोश चौकीदार के मुख में कपड़ा ठूंसकर ऊपर से पट्टी बांध दी। पश्चात वह स्वयं फाटक पर खड़ा होगया और उसने अपने साथियों को भीतर जा गोदामों को आग लगाने के लिये कहा।

गुलामरसूल के साथी अपने अपने निश्चित स्थान पर खड़े हो गये। तीस आदमी पांच पांच की टोलियों में गोदामों के चारों ओर खड़े होगये। उनके हाथ में लाठियां थीं। दस आदमी पांच पांच की टोलियों में मिट्टी का तेल ले चारों ओर लकड़ी के सामान पर छिड़कने लगे। कुछ

आदमी ताला तोड़ मिट्टी का तेल ले गोदामों में घुस गये। इस सब काम में पांच मिनट से अधिक नहीं लगे। अब दियासलाई लगाते ही गोदाम मशालों की भांति जलने लगे। पूर्व इसके कि वह चौकीदार, जो सेठ साहब को ढूंढने कारखानों की ओर गया था, वापिस आवे गुलामरसूल और उसके साथी वहां से लापता होगये थे।

कारखानों का अपना आग बुझाने का प्रबन्ध था। आग का शोर मचते ही वहा आग बुझाने की कल आगयी और लोग आग बुझाने लगे। जिस समय मिस्टर मिचल द्वारा भेजे हुए लोग मज़दूरों की बस्तियों में घोषणा कर रहे थे, कि यूनियन और मालिकों में समझौता होगया है, गोदामों में लाखों की सम्पत्ति भस्मीभूत हो रही थी।

प्रेम अभी कारखानों से दो मील की दूरी पर थी कि उसे उस ओर का आकाश आग की ज्वालाओं से लाल हुआ दिखाई देने लगा। वह इसका अर्थ नहीं समझ सकी। जब वह मजदूर-बस्ती में पहुँची तो मज़दूरों में गोदाम को आग लग जाने की खबर फैल रही थी। मजदूरों के झुँड के झुँड आग की ओर जा रहे थे। प्रायः मज़दूर आग लगी देख प्रसन्न थे। प्रेम इस दुर्घटना के समाचार से बहुत शोक में थी। वह समझती थी कि शायद सेठ साहब क्रोध में कारखाने खोलने की आज्ञा वापिस ले लेंगे। आग लगने से सेठ साहब की हानि तो हुई, परन्तु मज़दूरों को तो कुछ लाभ नहीं होगा, ऐसा विचारकर प्रेम ने भी अपनी कार गोदामों की ओर घुमा दी। आग देखने वालों की बहुत भीड़ थी। इस कारण प्रेम को अपनी गाड़ी कुछ दूर ही खड़ी करनी पड़ी। वह पैदल चल वहां जा पहुँची। इस समय शहर की आग बुझाने की कल भी वहां पहुंच गयी थी। कुछ लोग आग बुझाने वालों की सहायता करने लगे। प्रेम देख रही थी कि आग बुझाने वालों के प्रयत्न का कुछ भी फल नहीं निकल रहा। माल मशालों की भांति जल रहा था और गोदामों को चारों ओर एक समान आग लगी हुई थी।

इस समय पुलिस वहां पहुँच गयी और वह अपने ढंग पर प्रबन्ध

करने लगी। लोगों की भीड़ को पीछे हटाते समय पुलिस उन लोगों को भी पीछे करने लगी जो कारखाने की आग बुझाने वाली मशीनों की सहायता कर रहे थे। प्रेम भी वहां खड़ी लोगों को आग बुझाने में सहायता देने में प्रोत्साहन दे रही थी। इन लोगों से पुलिस वालों का झगड़ा होगया। हाथा-पाई तक की नौबत आगयी। एक दो पुलिस के लोग घायल होगये और चार पांच की वर्दी फट गयी। बस फिर क्या था, पुलिस ने लाठी-चार्ज कर दिया। भीड़ जिसमें प्रायः कारखानों के मज़दूर थे पुलिस पर टूट पड़े। जो भी पुलिस वाला क्रोध से उबलते हुए लोगों के हाथ आया वह जलती आग में धकेल दिया गया। इस पर बंदूकची पुलिस पहुँच गयी। गोली चली। सैकड़ों घायल हुए। बीसियों मारे गये। बलवा शान्त हुआ और पुलिस ने कुछ लोगों को पकड़ लिया। इनमें प्रेम भी पकड़ी गयी।

[४]

सायंकाल जब प्रेम झंडासिंह के साथ मुगलपुरा चली गयी तो डाक्टर खन्ना ने देखा कि वह उनसे यह भी कहकर नहीं गयी कि कब तक लौटेगी। उसे विदित था कि उसका पिता बीमार है। इस पर भी वह चली गयी। डाक्टर साहब को आशा थी कि वह शीघ्र ही लौट आवेगी। इस आशा में वह लेटे हुए थे। नौकर आया और खाने के लिये पूछकर चला गया। वह सोच रहे थे कि दिल की बीमारी है एक दिन चुपचाप ही अंत हो जावेगा। प्रेम को अपना उत्तराधिकारी मान उन्हें मन में सन्देह हो रहा था। एक तो वह सार्वजनिक कामों में इतनी लीन थी कि उसे इस सम्पत्ति के प्रबन्ध को भी समय मिलेगा अथवा नहीं, यह प्रश्न था। इसके अतिरिक्त उसके चरित्र के विषय में जो बातें लोग उन्हें संकेतमात्र बता जाते थे उनके सत्य होने पर क्या उसे इतना धन दे देना उसको और पतन की ओर नहीं ले जावेगा, यह दूसरा प्रश्न था। वह इन विचारों में लीन थे कि नौकर भीतर आया और कहने लगा, "एक औरत प्रेमदेवी जी को पूछती है। मैंने जब कहा कि वह घर

पर नहीं हैं तो आपसे मिलने के लिये कहती हैं।"

डाक्टर साहब ने कुछ विचारकर कहा, "ले आओ।"

यह विमला थी। डाक्टर साहब उसे नहीं जानते थे। इस कारण बिना बैठने को कह पूछने लगे, "आप क्या चाहती हैं?"

"प्रेमदेवी से कुछ पूछना था।"

"वह तो घर पर नहीं है।"

"आपको मालूम हो तो आप ही बता दीजिये।"

"हाँ, क्या बात है?"

"मैं जानना चाहती हूँ कि बाबू बिहारीलाल का कोई पत्र आता है या नहीं।" इतना कहते कहते उसकी गालों पर लाली दौड़ गयी। बिहारीलाल का नाम सुन डाक्टर साहब को कुछ सन्देह हुआ। उसके विषय में कम्यूनिस्ट पार्टी का कोई भी सदस्य कभी भी पूछने नहीं आता था। इससे उन्होंने अनुमान लगाया कि यह कम्यूनिस्ट पार्टी अथवा हड़तालियों में से नहीं है। अवश्य कोई बिहारीलाल से निजी सम्बन्ध रखने वाली है। हो न हो वह बिहारीलाल की पहली स्त्री विमला हो। उन्होंने अपनी शंका-समाधान करने के लिये पूछ ही लिया, "क्या मैं आपका नाम जान सकता हूँ?"

विमला पहले तो कुछ झिझकी, फिर कुछ सोचकर बोली, "मेरा नाम विमला है।"

"विमला?" डाक्टर साहब ने विस्मय में पूछा और विमला को सिर से पांव तक देखने लगे।

विमला ने कहा, "जी हां। उनका समाचार, जब से वह गये हैं, बाबू मोहनलाल जी द्वारा सेठ धन्नाराम के यहां से मंगवा लिया करती थी। अब दस दिन से ऊपर हो गये हैं कि सेठ साहब को भी कोई समाचार नहीं मिला। मैंने समझा कि प्रेम बहिन को तो अवश्य चिट्ठी आती होगी। इससे पूछने चली आई हूं।"

डाक्टर साहब विमला को देख अति प्रभावित हुए। वह उसके

सौन्दर्य से चकाचौंध रह गये और विचारने लगे कि इसमें बिहारीलाल ने क्या दोष देखा है जो दूसरा विवाह करने पर राज़ी हो गया था। फिर एकाएक अपने व्यवहार को सुधारने के लिये समीप रखी कुर्सी की ओर इशारा कर बोले, "बैठिये न, विमलादेवी! मैं आपको जानता नहीं था। इसी से आपको ……।"

विमला ने बैठते हुए बात बीच में ही टोककर कहा, "जी हां, आपके दर्शन पहिली ही बार हुए हैं। मैं जब बीमार थी तब आपके विषय में पता चला था और मैं यहां आने से डरती थी। कल रात मुझे अति भयानक स्वप्न दिखाई दिया है और आज दिन भर चित्त घबराता रहा है। इसी से यहां आने की धृष्टता की है।"

"धृष्टता? नहीं कोई ऐसी बात नहीं। तुम मेरी लड़की के समान हो। वास्तव में मुझे विदित नहीं था कि बिहारीलाल का विवाह हो चुका है अन्यथा मैं प्रेम को उससे विवाह करने की स्वीकृति न देता। आप कहां रहती हैं?"

"मैं भाटी दरवाज़े के अन्दर नौवीं गली में रहती हूं।"

"वहाँ अकेली रहती हैं? बिहारीलाल का मकान है न वहां?"

"हां, मगर मैं भाड़े के मकान में रहती हू।"

"क्यों?" डाक्टर साहब ने विस्मय में पूछा।

"उन्होंने मकान छोड़ने को कहा था। मैंने छोड़ दिया है।"

"किस लिये?"

"प्रेम बहिन को अधिक अच्छी तरह मालूम है।"

"तो क्या मकान भाड़े पर चढ़ा रक्खा है?"

"नहीं, ताला लगा है।"

डाक्टर साहब सोच रहे थे कि इसे मकान से निकाल देने में कोई भारी कारण है अथवा केवल ईर्षा और द्वेष। विमला सोच रही थी कि इन बातों से डाक्टर साहब यह समझेंगे कि वह अवश्य लड़ाकी होगी जिससे दुखी होकर बिहारीलाल ने न केवल दूसरा विवाह कर लिया

है प्रत्युत उसे घर में से भी निकाल दिया है। इस पर भी वह चाहती थी कि उसके मुख से बिहारीलाल के विपरीत किसी प्रकार की भी बात न निकल जाये। जब डाक्टर साहब बहुत समय तक विचार-मग्न रहे तो विमला उठ खड़ी हुई और बोली, "तो जब प्रेम बहिन होंगी आऊंगी।"

डाक्टर साहब ने आग्रह कर कहा, "ठहरिये! वह अभी आती ही होगी। दिन भर तो वह घर में ही रही है।"

विमला फिर बैठ गयी। डाक्टर साहब ने उसे बातों में लगाये रखने के लिये पूछा, "बिहारीलाल से आपका कोई झगड़ा हो गया था?"

"नहीं। जहां तक मुझे ज्ञात है विवाह के पश्चात् दो वर्ष तक हम परस्पर बहुत ही हेलमेल से रहे हैं। पिछले जनवरी मास में उनकी नौकरी छूट गयी थी। उस काल में भी कोई झगड़े की बात नहीं हुई। लगभग पांच मास हुए कि वह कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य बने। उन्होंने मुझे भी सदस्य बनने को कहा था। मुझे यह बात पसन्द नहीं आई। मैंने कहा था, "जब आप सदस्य बन गये हैं तो मैं भी तो हो गयी। कारण यह कि मैं आपसे पृथक नहीं हूँ। मैं एक बार कम्यूनिस्ट पार्टी के जलसे पर भी गयी थी, परन्तु वहां पर एक सदस्य के ईश्वर तथा धर्म सम्बन्धी विचार सुन मेरी उस पार्टी से अरुचि हो गयी और मैं वहां नहीं गयी। मैं समझती हूं कि तब से ही उनका मेरे से मनमुटाव आरम्भ हुआ है। जब प्रेम बहिन से उनका परिचय अथवा प्रेम हुआ तो उन्होंने मुझे बता दिया था। परन्तु मैं समझती थी कि वह मेरा त्याग नहीं करेंगे। प्रेम बहिन से विवाह के दिन ही उन्होंने मेरा त्याग कर दिया। पीछे मैं बीमार हुई। उस समय प्रेम बहिन से परिचय हुआ और मैं उसकी मुझ पर श्रेष्ठता और जीत का कारण समझ गयी। वह मुझसे अधिक चतुर, योग्य और शिक्षित है।

"वह मुझे साठ रुपये महीना भेज देते थे, परन्तु मुझे न तो वे रुपये लेने रुचिकर थे और साथ ही मैं खाली बैठी बैठी थक गयी थी। मैंने खद्दर-भण्डार में स्त्री-विक्रेता के स्थान में नौकरी कर ली। एक दिन

कम्यूनिस्ट पार्टी के प्रधान गुलामरसूल वहां दो साड़ियां खरीदने आये। उसी समय प्रेम बहिन उनके संग वहां आ पहुँची। गुलामरसूल ने साड़ियां लीं और चला गया। उन्होंने और प्रेम बहिन ने कुछ कपड़ा खरीदा और उसी रात मेरे घर आने की इच्छा प्रकट की। मैंने सहर्ष उनको भोजन वहीं करने को कहा। सायंकाल जब मैं घर जा रही थी तो गुलामरसूल मार्ग में मिला और वही साड़ियों का बंडल और एक लिफाफा मुझे देकर बोला कि वह बंडल लिफाफे सहित लिफाफे पर लिखे पते पर चपरासी के हाथ भिजवा दूं तो उस पर बहुत कृपा होगी। उसने बताया कि लिफाफा और साड़ियां उसकी मंगेतर के लिये हैं। मैंने मान लिया। लिफाफा और साड़ियां ले लीं। मुझे घर पहुँच प्रेम बहिन और उनके लिये खाना तैयार करने की जल्दी थी। इस कारण मैंने लिफाफे पर पता नहीं पढ़ा। बंडल और चिट्ठी घर साथ ही ले गयी। मेरा विचार था कि अगले दिन भण्डार के चपरासी के हाथ गुलामरसूल की वस्तु लिफाफे पर लिखे पते पर भेज दूंगी।

"रात को वह प्रेम बहिन के साथ आये। मैं रसोईघर में खाना बना रही थी। वह बाहर बैठ गये। उन्होंने चिट्ठी और बंडल जो बाहर खाट पर पड़े थे देख लिये। चिट्ठी मेरे नाम लिखी हुई थी और बंडल मुझे भेंट किया गया था। इससे उन्हें सन्देह हो गया कि मेरा गुलामरसूल से सम्बन्ध है। वे मुझसे झगड़कर वहां से चले आये और पीछे मुझे मकान छोड़ देने के लिये लिख भेजा। मैंने उन्हें अपनी निर्दोषता सिद्ध करने के लिये लिखा था, परन्तु उसका कुछ भी परिणाम नहीं निकला। अब मैं बाबू मोहनलाल के मकान में रहती हूँ।

"इसके तीन चार दिन बाद गुलामरसूल मुझे माल पर मिला और अपने विषय में कुछ कहने ही लगा था कि मैं अपने क्रोध को न रोक सकी और मैंने उसके मुख पर एक चांटा लगा दिया। मैं जूता उतार उसे पीटने ही वाली थी कि सड़क पर घूमने वालों ने उसे पकड़ कर पीटना आरम्भ कर दिया। लोगों ने समझा कि उसने एक हिन्दू स्त्री से छेड़खानी

की है।

"मैं समझी थी कि इसमें गुलामरसूल का ही दोष है, परन्तु पीछे पता चला कि प्रेमदेवी गुलामरसूल से सम्बन्ध रखती है और मुझे उनकी दृष्टि में पतित करने के लिये ही साड़ियों का षडयंत्र किया गया था।"

"यह आपको कैसे पता चला?" डाक्टर साहब ने अचम्भे में पूछा। उन्हें प्रेम और बिहारीलाल पर क्रोध आरहा था।

विमला ने कहा, "गुलामरसूल ने अपनी चिट्ठी में लिखा था कि यदि मैं हरे रंग की साड़ी पहन मंगल के दिन भण्डार में आऊंगी तो वह मुझे देख प्रसन्न होगा। मंगल के दिन प्रेम और गुलामरसूल दोनों इकट्ठे भण्डार में आये। इससे मैं इस परिणाम पर पहुँची हूँ कि वे दोनों एक दूसरे की बात को जानते थे। वहां जब मैंने साड़ियां वापिस दीं तो वे साड़ियां प्रेम बहिन ने ले लीं, और फिर जब मेरा गुलामरसूल से झगड़ा हुआ तो प्रेम बहिन मोटर में सवार समीप ही मिल गयी। पश्चात जब मैंने उसे बताया कि गुलामरसूल बहुत बुरी भांति पिट रहा है तो वह भागकर उसके पास पहुंची और उसे अपनी मोटर में बैठा यहां कोठी में लाई और उसकी मलहम-पट्टी करवाई। और फिर उसे बदनामी से बचाने के लिये झूठा समाचार छपवा दिया कि कम्यूनिस्ट-पार्टी के प्रधान को कारखानों के मालिकों ने पिटवाया है।"

"आपकी बात से तो यह सिद्ध हुआ है कि बिहारीलाल को धोखा देने के लिये यह षडयंत्र किया गया है।"

"मैंने उनको चिट्ठी लिख अपनी सफाई दी थी। परन्तु उनका कोई उत्तर नहीं आया।"

डाक्टर साहब को सन्देह होगया कि शायद विमला का पत्र प्रेम ने रोक लिया हो। उन्हें प्रेम के व्यवहार से दुख हुआ और पुनः उनके हृदय की धड़कन आरम्भ होगयी। वह घबराने लगे। विमला से बोले, "बेटी, नौकर को आवाज़ देना कि थोड़ा गरम पानी ले आये।"

विमला बाहर गयी और नौकर को पानी लाने के लिये कह भीतर

आ पूछने लगी, "क्या बात है ? आपको क्या तकलीफ़ है ?"

"मुझे बहुत पुराना हृद्रोग है। कुछ दिन से प्रेम के विषय की बातें सुनकर यह रोग भयंकर रूप धारण करता चला जाता है और ऐसा प्रतीत होता है कि अब यह मुझे लेकर ही छोड़ेगा। प्रेम कई दिन से रात को भी नहीं आती। वास्तव में मुझे उसके व्यवहार से भारी निराशा हुई है। उसके इस व्यवहार में मैं भी अपराधी हूँ।"

विमला ने कहा, "आप इन बातों को छोड़िये। प्रेम बहिन अनजान नहीं है। वह अपना मार्ग आप ढूँढ लेगी।"

एकाएक डाक्टर साहब के मन में एक विचार आया। वह पूछने लगे, "विमला बेटी, तुम्हारे साथ बिहारीलाल ने बहुत ही अनुचित व्यवहार किया है। इस पर भी तुम्हें उसकी चिंता क्यों है ?"

"मैं उनसे प्रेम करती हूँ। इसके अतिरिक्त वह मेरे पति हैं। मुझे अपने व्यवहार को उनके प्रति स्वच्छ और स्नेहमय रखना है। चाहे वह कुछ भी हैं और चाहे वह कुछ भी करें।"

इस समय नौकर पानी ले आया। डाक्टर साहब ने एक प्याली में थोड़ा पानी ले उसमें दो बूँद दवाई की डाल पी लीं। फिर बोले, "मैं कम से कम प्रेम आने तक जीता रहना चाहता हूं। आज मैं मात्रा से अधिक दवाई ले चुका हूँ।"

विमला यह बात सुनकर घबराई। वह देख रही थी कि सत्य ही दवाई खाने से पूर्व डाक्टर साहब की आंखें पथराती जाती थीं। उसने चिन्ता का भाव प्रकट कर पूछा, "आपके पास इस समय कोई नहीं है। प्रेम बहिन कब तक लौटेगी ?"

"उसे आजाना चाहिये था। और फिर मैं सोचता हूं कि वह आकर भी क्या करेगी ? जब उसे मेरी चिन्ता नहीं तो मैं क्यों उसकी चिन्ता करूं ? हां, तुम्हें देरी हो रही है। तुम जा सकती हो। मुझे बिहारीलाल के विषय में कुछ पता नहीं। उसके पत्र अवश्य आते रहते हैं। कल आना। उससे पता चल जायेगा।"

विमला ने जाने से पूर्व पूछा, "आपकी तबियत कैसी है? आपको ऐसी अवस्था में अकेले छोड़ना क्या ठीक होगा?"

"तुम क्यों चिन्ता करती हो, बेटी? जिसे मेरे पास होना चाहिये, वह ही बिना बतायें चली गयी है और साथ ही अभी रात भर तो कुछ नहीं होगा। चिन्ता नहीं करो, तब तक वह आजायेगी।"

विमला चली गयी, परन्तु प्रेम नहीं आई। डाक्टर साहब रात भर प्रतीक्षा करते रहे। जिस जिस समय हृदय की गति घटने लगती वह दवाई की दो-चार बूंद गरम पानी में पी लेते। इससे दो तीन घण्टे के लिये अवस्था फिर सुधर जाती। इसी प्रकार करते करते दिन निकल आया। दो नौकर रात भर डाक्टर साहब की शोचनीय अवस्था देख उनके पास रहे।

डाक्टर खन्ना के मन पर विमला की आत्म-कथा का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा था। वह जानते थे कि प्रेम को अपने विवाह से पूर्व यह विदित था कि बिहारीलाल की स्त्री है। इस पर भी उसने बिहारीलाल को अपने प्रेम में फांसा। यदि वह चाहती तो विमला के साथ जो अन्याय होगा उसका विचार कर सकती थी। साथ ही उन्हें विश्वस्त आदमियों ने बताया था कि प्रेम का सम्बन्ध गुलामरसूल से है। इस बात को स्मरण कर तो उन्हें अपनी लड़की से घृणा होने लगी थी। अब जब प्रेम को विदित हो गया था कि उसका पिता बीमार है, तब भी वह बिना बताये चली गयी और रात भर नहीं लौटी। डाक्टर साहब ने मन में एक योजना बनाई जिससे वह अपनी सम्पत्ति की वसीयत कर देना चाहते थे। उन्हें विमला को देखने के पश्चात् पूरा विश्वास हो गया था कि बिहारीलाल ने प्रेम से, जो विमला से सौन्दर्य में और पति-भक्ति में बहुत कम थी, केवल उसके धन-दौलत के लिये विवाह किया है। धन को बिहारीलाल की पहुँच से दूर करने के लिये उन्होंने निश्चय कर लिया। बिहारीलाल के हाथ में यह सम्पत्ति छोड़ना उसके लोभ और अन्याय का उसे इनाम देना है। प्रेम को उत्तराधिकारी बनाये रखने का अर्थ है कि बिहारीलाल

को, जो उसका पति है, धन दिया जाये। इसके अतिरिक्त प्रेम स्वयं दुराचार के मार्ग पर चल पड़ी है। उसे इस चरित्र के रखते हुए यदि समृद्धिशाली बना दिया गया तो वह अनर्थ ही करेगी। ऐसा विचार कर डाक्टर खन्ना ने अपनी वसीयत लिखने का विचार किया।

दिन निकलते ही उन्होंने अपने दो-चार मित्रों को और वकील जगन्नाथ को बुला भेजा। दिन के दस बज गये थे। डाक्टर खन्ना से मिलने मोहनलाल आया। उस समय डाक्टर साहब की अवस्था और भी बिगड़ चुकी थी। मोहनलाल को देख वह बोले, "आप आये हैं? क्या काम है?"

"मुझे रात विमलादेवी ने बताया था कि आप बीमार हैं, इस कारण आपकी खबर लेने चला आया हूँ। विमलादेवी कहती थीं कि आप प्रेम की प्रतीक्षा में थे और आज समाचार-पत्र पढ़ मैंने अपना कर्तव्य समझा कि आपसे मिलूं।"

"समाचार-पत्र?" डाक्टर खन्ना ने अचम्भे में पूछा। डाक्टर साहब अपने झंझट में फंसे हुए समाचार-पत्र पढ़ना भूल गये थे। वह प्रातःकाल से अपने मित्रों को और वकील को बुलाने के प्रबन्ध में लगे थे। "क्या है समाचार-पत्र में?"

"तो आपने पढ़ा नहीं?"

"ज़रा पढ़कर सुना दो। मिस्टर मोहनलाल, मेरी अवस्था प्रति क्षण बिगड़ती जा रही है और अभी मेरे करने को बहुत कुछ है।"

मोहनलाल बाहर दफ्तर से उस दिन का समाचार-पत्र उठा लाया और सुनाने लगा, "सेठ धन्नाराम के गोदामों में आग लगा दी गयी। रात के बारह बजे एक आदमी, जो गुलामरसूल बताया जाता है, गोदाम के फाटक पर आया और चौकीदार को कहने लगा कि सेठ साहब की मोटर फेल हो गयी है। उसे धकेलने के लिये आदमी चाहियें। दो चौकीदारों में से एक उस तरफ गया जिधर मोटर खड़ी बताई गयी थी। उसके जाने के पश्चात् उस आदमी ने, जिसकी बाबत कहा जाता है कि गुलामरसूल था, दूसरे चौकीदार का मुख बंदकर बेहोश कर दिया।

पश्चात् बहुत से लोग गोदाम-घर में चले गये और उसे आग लगा दी।

"जब पुलिस आग बुझाने का प्रबन्ध कर रही थी, मजदूरों की एक पार्टी ने उसमें बाधा डालनी चाही। पुलिस ने लाठी चला दी। इससे मज़दूरों ने पुलिसवालों को पकड़ २ कर आग में धकेलना आरम्भ करदिया।

"दस पुलिस वाले जिन्दा जला दिये गये। इस पर बन्दूकची पुलिस आई और उसने गोली चला दी। एक सौ के लगभग मज़दूर मर गये हैं। पांच सौ से ऊपर घायल हुए हैं। एक हज़ार के लगभग मज़दूर पकड़ लिये गये हैं। इन पकड़े गयों में प्रेमदेवी भी है। गुलामरसूल लापता है। उसके वारंट निकल चुके हैं।" इसके आगे एक और समाचार था। यह सेठ साहब की ओर से भेजा गया था। रात के बारह बजे सेठ साहब और मज़दूरों की प्रतिनिधि प्रेमदेवी में समझौता हो गया था, जिससे सेठ साहब ने कारखाने खोलने की आज्ञा दे दी है।

डाक्टर साहब को इस समाचार से बहुत दुख हुआ। उनके मन में विश्वास होगया था कि प्रेमदेवी ने षडयंत्र किया है। एक ओर सेठ साहब से बातें करती रही है और दूसरी ओर गोदामों में आग लगवा दी है। मोहनलाल ने कहा, "प्रेम लोगों को उकसा रही थी कि पुलिस वालों को जलती आग में डाल दो। लोगों में यह बात मशहूर हो रही है कि प्रेम को फांसी का दण्ड होगा।"

इस समय डाक्टर साहब को फिर दौरा पड़ा। डाक्टर साहब ने समीप रखी बोतल में से बहुत सी दवाई मुख में उढ़ेल ली। इससे उनकी तबियत कुछ फिर स्थिर होगयी। इस समय जगन्नाथ वकील वहां आ पहुँचा। डाक्टर खन्ना ने उसे देखते ही कहा, "आपने बहुत देरी कर दी है। इसलिये जल्दी करिये। मेरे कोट की जेब में चाबियां हैं। संदूकची में मेरी सम्पत्ति की सूची बनी रखी है, उससे मेरी वसीयत लिख दें। और हां बा० मोहनलाल, अब आप आये हैं तो एक बात आप भी करें। टैलीफून से डाक्टर निरुला, मैजिस्ट्रेट बी० एन चोपड़ा, और स० जसवन्तसिंह गवर्नमेंट कन्ट्रैक्टर को यहां शीघ्र बुला लें।"

छठा भाग

वज़ीरस्तान में

बिहारीलाल बन्नू पहुंच वहां के डिप्टीकमिश्नर से मिल सरहद्दी पुलिस के एक दस्ते को सर्वे-पार्टी के साथ ले जाने की स्वीकृति लेने का यत्न करने लगा। इसमें डेढ़ मास के लगभग लग गया। इस काल में वह अपने दफ्तर में रामलाल को और अपनी स्त्री प्रेम को चिट्ठियां लिखता रहा था। आरम्भ में तो प्रेम के उत्तर आते रहे थे, परन्तु अब लगभग पन्द्रह दिन से उसका कोई पत्र नहीं आया था। इससे वह बहुत चिन्तित था।

अंत में सरहद की सरकार ने इस सर्वे-पार्टी के साथ लगभग पचास पुलिस वाले दिये जिनके पास बन्दूकें थीं और एक मशीनगन और सर्चलाईट का प्रबन्ध था। जब सब कुछ तैयार होगया तो बिहारीलाल इस सब पार्टी के साथ बन्नू से रवाना हो पड़ा। वहा से चलते समय उसने एक चिट्ठी प्रेम को लिखी। इसमें उसने लिखा :—

प्रिय प्रेम, तुम्हारा अंतिम पत्र आने के पश्चात यह चौथी चिट्ठी लिख रहा हूँ। मैं समझता हू कि तुम हड़ताल के झंझट में फंसे होने के कारण उत्तर नहीं दे सकी होगी। तुम्हारी अंतिम चिट्ठी से तो यह पता चलता है कि हड़ताल विफल जा रही है। मैं इस समय फिर लिखता हूँ कि हड़ताल करने से कुछ लाभ नहीं। मुझे रामलाल पर विश्वास है। वह बहुत निर्मल मन रखता है। उसे राय दोगी तो वह तुम्हारी सब बात मान जायेगा। हड़ताल बन्द कर दो और मजदूरों को काम पर जाने दो।

यह विमला के विषय में तुम क्या लिख रही हो? मैं समझता हूँ कि मैंने तो उसका कुछ नहीं और शायद अन्याय भी किया है, परन्तु बात यह है कि गुलाबलाल से उसके सम्बन्ध ने अथवा सम्बन्ध के सन्देह ने मुझे उत्तेजित कर दिया था। मैं उन्मुक्त प्रेम को मानने वाला हूं, परन्तु इसमें भी यह मानता हूं कि एक समय में प्रेम एक से ही हो सकता है

और वह भी लुकाव-छुपाव करने से प्रेम नहीं रहता। प्रेम में चोरी की तो कोई बात ही नहीं हो सकती।

मैं यह शुभ समाचार बताते हुए हर्ष अनुभव कर रहा हूं कि आज हमें पचास सरहद्दी पुलिस के लोग, हमारी पार्टी की रक्षा के लिये मिल गये हैं। यह मेरे मिशन का पहला कार्य सफलता से समाप्त हुआ है। अब कल हम खान के स्थान के लिये प्रस्थान करेंगे और आशा की जा सकती है कि हमारा काम शीघ्र ही समाप्त हो जायगा।

अब मैं एक सप्ताह तक तुम्हें नहीं लिख सकूँगा। इसका कारण यह है कि जहां हम जारहे हैं वहां से डाक आने का प्रबन्ध नहीं है। हमें अपने विशेष डाकिये का प्रबन्ध करना होगा। यह प्रबन्ध महीने में एक दो बार से अधिक नहीं हो सकेगा।

आशा है तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक होगा।

तुम्हारा उत्कृट प्रेमी, बिहारीलाल।

[२]

बिहारीलाल जब बन्नू से चल टक्की पर कैम्प गड़वा रहा था, तो स्थान की भयंकरता देख उसका दिल बैठा जा रहा था। साथ ही प्रेम के अंतिम पत्र में उसने पढ़ा था कि विमला के विषय में उसका सन्देह निराधार था। प्रेम ने लिखा था कि गुलामरसूल के अपने स्वीकार करने और अन्य प्रमाणों से यह बात स्पष्ट हो गयी है कि वे साड़ियां विमला को भेजी गयी थीं। वे उसने स्वीकार नहीं की थीं। विमला तो उसे देवता मानती है। मन, वचन और कर्म से भी वह अपने पतिव्रत धर्म पर स्थिर है इत्यादि***। बिहारीलाल इस स्पष्टीकरण से प्रसन्न तो था, परन्तु वह प्रेम को यह नहीं बताना चाहता था कि वह इतनी सुगमता से सन्तुष्ट हो गया है। प्रेम के मन पर वह अंकित कर देना चाहता था कि गुलामरसूल से वह घृणा करता है और उससे सम्बन्ध रखने वाले से वह किसी प्रकार का सरोकार रखना नहीं चाहता। इसी कारण उसने प्रेम को लिखा था कि वह गुलामरसूल से प्रेम करने को सहन नहीं कर

सकता।

बिहारीलाल को अब क्रोध नहीं रहा था। इस कारण वह गम्भीरता से इस विषय पर विचार कर सकता था। उसके मन में यह बात अब सर्वथा स्पष्ट हो चुकी थी कि विमला निर्दोष थी और उसे अपने व्यवहार पर शोक होता था। परन्तु वह प्रेम के विषय में शंकित होने से अपने हृदय की कोमलता को प्रकट होने नहीं देता था।

उसे लाहौर से आये डेढ़ मास से ऊपर हो चुका था और वह मन ही मन सोच रहा था कि यहां काम चालू हो जाये तो एक बार लाहौर घूम आये। सबसे कठिन समस्या तो यह हो गयी थी कि ढक्की के स्थान से पत्र अथवा तार नहीं भेजी जा सकती थी। वह एक प्रकार से सभ्य संसार से विछिन्न हो गया था। प्रेम के पत्र से हड़ताल की शोचनीय अवस्था भी उसे विदित हो गयी थी। इस विषय में भी उसे भय लग रहा था कि प्रेम कहीं किसी झगड़े में न फंस जाय। वह वहां जाकर उसे इससे बाहर कर देना चाहता था। वह मन में सोच रहा था कि ढक्की में कैम्प लग जाये और काम चालू हो जाये तो वह एक सप्ताह के लिये वहां से अनुपस्थित हो सकेगा। इस कारण कैम्प लगवाने और कार्य आरम्भ करवाने में वह दिन रात लगा हुआ था।

कैम्प एक नाले के किनारे कुछ ऊँचे स्थान पर लगवाया गया था। लगभग पचास खेमे थे। इन खेमों में खाइयां खोदी गयी थीं। रात को बैठने और सोने का स्थान इन खाईयों में बना था। इन खाईयों में से ही एक खेमे से दूसरे तक जाने का मार्ग था। बिना खाईयों से बाहर निकले पूर्ण कैम्प में घूमा जा सकता था।

नाले के पार ऊंची २ पहाड़ियां थीं, जिन पर घास तक का भी चिन्ह नहीं था। नाले का पानी अति वेग से बह रहा था और पत्थरों से टकरा टकराकर घोर नाद करता जाता था। नाले को पार करना कठिन था। यद्यपि वह गहरा नहीं था इस पर भी पानी के वेग के कारण पांव नहीं जम सकता था।

खेमे लगाने का काम तो पहिले दिन ही खतम हो गया था और दूसरे दिन सर्वे आरम्भ हो गयी थी। बिहारीलाल दूसरे दिन काम से अवकाश पा नीचे नाले के किनारे तक उतर गया। अति सुहावना दृश्य था। यद्यपि आसपास पहाड़ियों पर और नाले के किनारे पर हरियाली का चिन्हमात्र भी नहीं था तो भी वेग से बहते हुए जल में से पत्थरों से टकराने के कारण उठती हुई फुहार और उसमें सूर्य-किरणों से बनते हुए इन्द्रधनुष एक अद्भुत दृश्य उपस्थित करते थे। बिहारीलाल इसे देख मुग्ध रह गया।

मीलों तक निर्जन स्थान था। नाले के पार और इस ओर उनके अपने कैम्प के लोगों के अतिरिक्त कहीं भी किसी मनुष्य का वास प्रतीत नहीं होता था। बिहारीलाल ने विचार किया कि यहां भला कोई डाका डालने वाला क्यों आवेगा और कहां से आवेगा। साथ ही सर्वे का काम बहुत वेग से हो रहा था।

सायंकाल कार्यकर्ताओं का सम्मेलन हुआ। अगले दिन का कार्यक्रम निश्चय किया गया और खाईयों में घुसकर सब सो गये।

तीसरे दिन, जिस समय सब लोग अपने अपने कार्य पर लग गये थे तो बिहारीलाल पहले दिन की भांति नाले पर दिल बहलाने के लिये उतर गया। वह प्रेम और विमला के व्यवहार पर विचार करने लगा। लगभग दो घंटे व्यतीत हो चुके थे कि एकाएक नाले के पार पहाड़ियों के पीछे से धुआं उठता हुआ दिखाई दिया। बिहारीलाल इसे देख चकित रह गया। उसे यह बताया गया था कि आसपास कोई गांव नहीं है। इससे उसने यह अनुमान लगाया कि कोई यात्री बन्नू जाने वाले होंगे। उसका मन किसी अनिश्चित भय से कांप उठा। वह नाले से खेमे में लौट आया और वहां उसने सिपाहियों के जमादार को वह धुआं दिखाया और उसे सचेत रहने को कहा।

यद्यपि कैम्प के लोग इस धुंए को कुछ भी महानता नहीं देते थे तो भी बिहारीलाल इसे अच्छे लक्षण नहीं समझता था। वह सोच रहा था कि

यदि ये मुसाफिर हैं जो धुंआ कर रहे हैं तो अब तक तो उनको बन्नू की ओर निकल जाना चहिये था। सायंकाल को धुंआ उसी स्थान से उठता हुआ फिर दिखाई दे रहा था।

इस रात बिहारीलाल को नींद नहीं आई। कैम्प में पूर्ण रूप से शान्ति थी। केवल सन्तरियों के पहरा बदलने का शब्द एक एक घन्टे के पश्चात् आता था। रात के दो बजने में कुछ मिनट थे जब एकाएक कैम्प के एक कोने से एक सन्तरी के ज़ोर से पुकारने का शब्द हुआ, "कौन है?"

इसके उत्तर में गोली चलने का शब्द हुआ और बाद में आवाज आई 'हा! हा!' यह किसी घायल के कराहने की आवाज़ थी। तुरन्त ही जमादार ने सीटी बजाई जिससे कैम्प में हलचल मच गयी। कार्बाइड लैम्प की सर्चलाइट बनाई गयी थी। उसके जलाने में दो मिनट से ऊपर लगे। इस काल में गोलियों के चलने का शब्द होता रहा। गोलियां दोनों ओर से चल रही थीं। बीच बीच में घायलों के कराहने का शब्द भी हो जाता था।

जब सर्चलाइट जली और उससे चारों ओर का दृश्य देखा गया तो प्रतीत हुआ कि कैम्प चारों ओर से घिरा हुआ है और धड़ाधड़ गोलियां चलाई जा रही हैं। कैम्प के सिपाही भी गोलियां चला रहे थे, किन्तु घेरा डालने वालों की संख्या अधिक होने से कैम्प की स्थिति भययुक्त प्रतीत होती थी। सर्चलाइट के प्रकाश में मशीनगन अभी चलने भी नहीं पाई थी कि दसियों गोलियां उसे आकर लगीं और सर्चलाइट चकनाचूर हो गयी और पुनः अंधेरा हो गया। इस पर भी मशीनगन चलाई गयी। इस समय आक्रमण करने वालों ने घोर नाद किया और कैम्प में घुस आये। अब मित्र-शत्रु में भेद नहीं था और हाथापाई की लड़ाई होने लगी।

[३]

ज्योंही बिहारीलाल को यह विदित हुआ था कि लड़ाई आरम्भ हो

गयी है, वह अपना पिस्तौल हाथ में ले खाई के भीतर से सर्चलाइट के समीप आ खड़ा हुआ था। सर्चलाइट के प्रकाश में उसने भी देखा कि आक्रमण करने वालों की संख्या बहुत अधिक है। जब सर्चलाइट पर गोलियों की बौछार पड़ी तो उसमें से एक गोली बिहारीलाल के कन्धे पर लगी। अपने घायल होने का अनुभव होते ही वह भूमि पर बैठ विचार करने लगा। इसके पश्चात जब आक्रमण करने वालों ने घोर नाद किया और कैम्प में घुसकर हाथापाई करने लगे तो बिहारीलाल ने समझ लिया कि सब कुछ व्यर्थ गया है। वह वहां से उठा और खाई में जा पहुंचा और भूमि के नीचे ही नीचे कैम्प के एक सिरे पर जा पहुँचा। वहां का सन्तरी घायल पड़ा था। इस समय लड़ाई कैम्प के अन्दर हो रही थी। गोलियां चलने का शब्द हो रहा था। घायलों की चीख-पुकार, आक्रमणकारियों के नारे और अंधेरे में भाग-दौड़, ये सब इतनी घबराहट पैदा करने वाली बातें थीं कि बिहारीलाल को सुध नहीं रही कि वह किधर जा रहा है। खाई से निकल वह भूमि पर पेट के बल रेंगने लगा। वह कुछ पग ही गया होगा कि किसी ने सामने से आवाज दी, "किधर जाता है?"

बिहारीलाल ने देखा कि साढ़े छः फुट लम्बा काला सा साया खड़ा है। बिहारीलाल के लिये विचार करने का समय नहीं था कि यह मित्र है अथवा शत्रु। उसने तुरन्त पिस्तौल उस साये पर चला दी। साया वहीं ढेर हो गया। इस पर बिहारीलाल ने फिर रेंगना आरम्भ किया। उसी साये ने अथवा किसी और ने गोली चलाई। यह बिहारीलाल के बूट के तले पर आकर लगी। तले को चीरकर गोली पांव में घुस गयी। तले की रुकावट के कारण गोली आधी ही पांव में घुस सकी थी। बिहारीलाल के पास समय नहीं था कि पांव की ओर ध्यान दे। वह वहां से कहीं दूर चला जाना चाहता था। जब तक सांस तब तक आस की बात थी। एक क्षण के लिये वह चुप लेट गया। पश्चात फिर रेंगने लगा। कन्धे के घाव से भी रक्त बह रहा था और दुर्बलता बढ़ती जाती थी। वह नहीं जानता था कि कितनी दूर जाने पर सुरक्षित हो सकेगा और उतनी दूर

वह पहुँच भी सकेगा अथवा नहीं।

कुछ दूर जाने पर उसे प्रतीत हुआ कि गोलियों का शब्द पीछे रह गया है। उसने कुछ देर लेटे रहना ही उचित समझा। कन्धे के घाव पर हाथ रख उसने देखा कि वह रक्त से लथपथ है। कुछ देर लेटे रहने के पश्चात् उसने फिर रेंगना आरम्भ किया। वह; जिधर से गोलियों का शब्द आ रहा था, उससे दूसरी ओर जाने लगा। अब मार्ग ढालू आगया था। उधर जाना ही बिहारीलाल को सुगम प्रतीत हुआ। जब वह कुछ और दूर चला गया तो उठकर भूमि पर बैठ गया। अब उसने बूट उतारा। गोली भी पांव से निकल गयी और पांव के घाव से रक्त निकलने लगा। वेदना भी तीव्र थी और खड़ा होना कठिन था। ऐसी परिस्थिति में उसने यही उचित समझा कि कहीं आड़ में हो छुप जाये और दिन निकलने पर कहीं अन्य स्थान पर जाने का यत्न करे।

इस समय कैम्प में आग लग गयी। इससे सब स्थान प्रकाशमय हो गया। बिहारीलाल के लिये यह अच्छा हुआ। उसे छुपने को स्थान मिल गया। वह एक बड़ी सी चट्टान के पास पहुंच चुका था और उसी चट्टान के नीचे एक गढ्ढा था। वह उसी में उतर गया और चट्टान का ढासना ले लेट गया।

कैम्प की ओर से शोर कम हो रहा था और इधर बिहारीलाल को, बहुत रक्त बह जाने से तथा मेहनत करने से, शिथिलता आ रही थी। ज्योंही वह लेटा कि उसे आधी नींद और आधी अचेतनता हो गयी।

कैम्प को आग लगा आक्रमणकारियों ने शेष कैम्प वालों को मौत के घाट उतार, लूट का माल एकत्रित कर, खच्चरों पर लाद, मुर्दा लाशों को नाले में बहा अपना रास्ता पकड़ा। सूर्य निकलने से पूर्व कैम्प के मैदान में राख और रक्त के अतिरिक्त और कुछ नहीं रह गया था। सामान भी कुछ बचा था सब उठा लिया गया था।

बिहारीलाल चट्टान के नीचे बेहोश पड़ा था। सूर्य निकलने पर जब उसे होश आई तो वह प्यास से आकुल हो रहा था। उसने उठने का यत्न

किया, परन्तु उसकी एक बांह और टांग बेकार हो चुकी थीं। रक्त शरीर से इतना निकल चुका था कि हिलने की भी शक्ति नहीं थी। कई बार उसने उठकर गढ़े से निकलने का विचार किया, परन्तु सफल नहीं हो सका। उसमें अब रेंगने की भी शक्ति नहीं रही थी। जब वह हिलने में भी असमर्थ रहा तो समझा कि अंत समय आ पहुंचा है।

अंत समय का विचार आते ही उसे प्रेम और विमला की याद आने लगी। वह सत्य ही प्रेम से अगाध लगाव रखता था। उसकी स्मृति में उसकी आंखें भीग गयीं। एकाएक उसे विचार आया कि उसकी मृत्यु के पश्चात प्रेम को ग़ुलामरसूल की पत्नी बनने में बाधा नहीं रहेगी। इस पर विमला की याद आई। उसे विश्वास था कि वह दूसरा विवाह नहीं करेगी। कारण यह कि वह ऐसे समाज में रहती है और ऐसे संस्कारों में पली है जहां विचार तथा आचार-भ्रष्ट होने की सम्भावना होने पर भी विवाह उचित नहीं समझा जाता। इससे उसे विमला पर दया आने लगी। वह अब उसके प्रति अपने व्यवहार पर पश्चाताप करने लगा। प्रेम को डांटने के लिये विमला को डांटना अब उसे निरर्थक प्रतीत हुआ, और उसे इसका पश्चाताप लगने लगा। विमला को तो इस कारण डांटा गया था कि प्रेम उसे न छोड़ जाये। प्रेम पर यह स्पष्ट हो जाये कि ग़ुलामरसूल से सम्बन्ध रखने वाले को वह किसी प्रकार भी पसन्द नहीं कर सकता। परन्तु अब जब वह समझता था कि उसका अंतकाल आ पहुंचा है वह इस सब आयोजना को निरर्थक पाता था। उसके मरने के पश्चात प्रेम को उसका न तो डर रहेगा और न किसी प्रकार की समाज की ओर से अपमान की बात। उसने विवाह-विच्छेद तो किया नहीं। केवल विधवा हो जाने पर दूसरा विवाह किया है। जब अंत इस प्रकार होना था तो फिर विमला को डांटने की आवश्यकता ही क्या थी।

इस प्रकार विमला के प्रति अपने व्यवहार को स्मरण कर बिहारीलाल को बहुत शोक हुआ। वह चाहता है कि उसे एक बार फिर अवसर मिले

तो वह विमला के प्रति अपने कठोर व्यवहार का प्रतिकार कर सके। उसे यथाशक्ति सुख और आराम पहुँचा सके। परन्तु आंखों के सम्मुख अन्धेरा आता जाता था। क्षण प्रति क्षण चेतना विलुप्त होती जाती थी। उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मानों वह बहुत थका हुआ है और सो रहा है। प्यास का कष्ट था, परन्तु चेतना लुप्त होने के साथ साथ वह कष्ट भी कम होता जाता था।

इस समय उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि प्रेम उसके पास खड़ी है और उसकी ओर विशेष प्रकार से घूर घूरकर देख रही है, मानों वह परीक्षा कर रही है कि वह मर गया है या नहीं। उसके मुख से ऐसा प्रतीत होता था कि उसे उसके मरने का विश्वास हो गया है। वह कुछ क्षण तक बिना किसी भी भांति का उद्‌गार प्रकट किये खड़ी रहकर, गुलामरसूल की बांह में बांह डाले, लौटी जा रही है। बिहारीलाल उसे बुलाना चाहता था। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि वह पुकार रहा है, 'प्रेम, प्रेम!' प्रेम ने आवाज़ सुन ली। वह लौटी, परन्तु बिहारीलाल के अचल शरीर को देख बोली, 'बेचारा मर गया है!' इतना कह वह चली गयी।

इसके बाद उसकी आंखों के सम्मुख एक काला पर्दा आगया। बिहारीलाल यह अनुभव कर रहा था कि वह अब ऐसे स्थान पर है जहां न सूर्य है, न चन्द्र। घटाटोप अन्धेरा है, इतना कि हाथ पसारे भी नहीं सूझता। बिहारीलाल यह अनुभव कर रहा था कि वह इस अन्धकार में चल रहा है, पर टांगों से नहीं। वह देखता है, पर आंखों से नहीं। वह सुन रहा है, पर कानों से नहीं। उसकी इन्द्रियां उसके साथ नहीं। उसे विश्वास हो रहा था कि वह अब पृथ्वी पर नहीं है। वह आकाश-मण्डल के किसी कोने में घूम रहा है। वह सोचता था कि क्या मरने के पश्चात् भी आत्मा रहती है। वह जब जीवित था तब तो ऐसा नहीं मानता था। तो क्या उस समय वह भूल कर रहा था? तो क्या अब वह नरक में विचर रहा है? वह अति वेग से भागा जा रहा था। क्यों और किधर, यह वह नहीं जानता था और न ही जानने का अवकाश था। उसे ऐसा

प्रतीत होता था कि कोई शक्ति उसे धकेलती लिये जा रही है। उसने रुकने का यत्न किया, परन्तु वह यत्न एक सूखे पत्ते के यत्न के समान था जो बलवान आंधी के झकोरों में फंसा हुआ हो।

एकाएक उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई चमकती हुई वस्तु दूर दिखाई दे रही है। वह उस वस्तु की ओर बढ़ रहा है। ज्यों ज्यों समीप पहुंचता जाता है, वह स्वयं भी दैदीप्यमान होता जाता है, और उस उज्ज्वल वस्तु की गोदी में समा रहा है। यह सब कुछ उसे आंखें बन्द होने पर भी दिखाई दे रहा है। वह वस्तु क्या है, वह समझ नहीं सका था। अब उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि उस उज्ज्वल वस्तु के भीतर बर्फ की तरह शीतलता व्याप्त हो रही है। फिर उसे प्रतीत हुआ कि वह उज्ज्वल वस्तु हाथ भी रखती है। उसके मस्तक पर तुषार के समान वे लग रहे थे। इससे उसे सुख प्रतीत हो रहा था। धीरे धीरे श्वेत बादल सा एक ओर हट गया और उज्ज्वल वस्तु का मुख भी दिखाई देने लगा। उसे वह मुख विमला का प्रतीत हुआ। तो क्या वह भी मर गयी है? यह कैसे हुआ? क्या उसका मुझसे प्रेम इतना प्रबल है कि मरणोपरान्त भी वह मेरे पास चली आई है?

अब उसकी विचार-धारा रुक गयी। कारण यह कि उस उज्ज्वल वस्तु का मुख उसके मुख के समीप आने लगा था। उसने, जो विमला प्रतीत होती थी, अपने होंठ उसके होंठों पर रख दिये। विहारीलाल उठकर इस समस्या का स्पष्टीकरण करना चाहता था, परन्तु निर्बलता से विवश था और उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वह उज्ज्वल वस्तु उसे अपने में समेट रही है। उसी समय उसे उन होंठों से यह शब्द सुनाई दिया, 'बच जाओगे, घबराओ नहीं।'

'बच जाओगे!' तो क्या वह मरा नहीं है? उसने आंखें खोलने का यत्न किया। नहीं खुल सकीं। उसने हिलने का यत्न किया और उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि उसका शरीर उसके साथ नहीं है। इस समय उसे दो व्यक्ति बातें करते सुनाई दिये। एक कह रहा था, "अम्मी, यह **जीता**

है। इसके होंठों में सुर्ख़ी आती-जाती मालूम होती है।" दूसरे ने उत्तर दिया, "तुम्हारे अब्बा दवाई घोट रहे हैं। पिलाते ही होश आजायेगी।"

इसके पश्चात् फिर कुछ काल तक शांति रही। एक बार फिर उसने अनुभव किया कि किसी के होंठ उसके होंठों से लगे हैं। इससे उसके शरीर में स्फूर्ति आती प्रतीत होती थी। इसके पश्चात् किसी ने उसके मुख में कसैला सा पानी ठेल दिया। उस पानी के भीतर जाते ही उसके शरीर का भारीपन लुप्त होने लगा। हृदय में कुछ मामूली सी आग सुलगती प्रतीत हुई और शरीर में रक्त का संचार होने लगा। अब बिहारीलाल ने फिर आंख खोलने का यत्न किया। इस बार उसे कुछ कुछ सफलता मिली। आंखें खुलीं और एक अति सुन्दर मुख का प्रतिबिम्ब उसकी आंखों में पड़ा। यह मुख विकसित कमल की भांति खिल रहा था। आंखें खुलती देख वह बोली, "अब्बाजान, वह होश में आगया है।"

समीप खड़े एक वृद्ध पठान ने पश्तो में कुछ कहा। यह सुन एक स्त्री गढ़े में उतर आई। उसके हाथ में एक साफ कपड़ा था। वह कपड़ा फाड़ दिया गया और बिहारीलाल के कन्धे पर दवाई लगाकर पट्टी कर दी गयी। पश्चात् पांवों में भी मरहम-पट्टी की गयी।

इस समय तक बिहारीलाल अपनी हालत को समझने लगा था। वे लोग अजनबी थे। वह उसी गढ़े में था जहाँ वह रात को छुपा था। उसका सिर एक युवा लड़की की गोदी में रखा था। दूसरे लोग इस लड़की के माता-पिता प्रतीत होते थे।

घांवों पर दवाई लगने से बिहारीलाल को बहुत आराम अनुभव हुआ। उसने शुक्रिया कहने का यत्न किया। उसके होंठ फड़के, परन्तु आवाज़ नहीं निकल सकी। उसकी आंखों में याचना का भाव देख वृद्ध पठान ने हाथ से संकेत कर कहा, "कुछ ज़रूरत नहीं है। अजनबी की मदद करना हमारा फ़र्ज़ है।"

बिहारीलाल की आंखों से कृतज्ञता के आंसू बहने लगे।

[४]

एक दृढ़ बांस के साथ कपड़ा बांधकर बनाई पालकी में लेटा हुआ, बिहारीलाल चार मज़बूत पठानों से उठाया हुआ, बहुत ही टेढ़े-मेढ़े और ऊंचे-नीचे मार्ग पर ले जाया जा रहा था। उठाने वाले पठान बीच बीच में पश्तो में बातें करते जाते थे जो बिहारीलाल बिलकुल नहीं समझ सकता था। उसे लेटे लेटे कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि उसकी पालकी के पीछे कुछ अन्तर पर दो स्त्रियां भी पश्तो में बातें कर रही हैं। उनकी बातों में कहीं कहीं एक आध अंग्रेजी अथवा हिन्दुस्तानी का शब्द भी सुनाई पड़ता था। इससे उसने अनुमान लगाया कि वे शिक्षित स्त्रियां हैं। स्वयं उसे ज्वर हो गया था। उसका कन्धा और पांव बंधा था, परन्तु पीड़ा नहीं होती थी।

उसकी आंखों के सम्मुख उस लड़की का कमल-समान मुख, जिसकी गोदी में चेतनता प्राप्त करते समय उसका सिर रखा था, बार बार आता था। वह उसे स्वर्गीय देवी सी प्रतीत होती थी। अभी भी उसके सौन्दर्य तथा सुहृदयता ने उसके मन पर अपनी स्वर्गीय छाप डाल रखी थी। वह मन में सोच रहा था कि ये कौन लोग हैं? क्या डाका डालने वालों के सरदार हैं? क्या वे उसे रुपया प्राप्त करने के लिये उठाकर ले जा रहे हैं और उसे जीवित रखने का यत्न कर रहे हैं? उसे छुड़ाने के लिये कौन रुपया देगा? क्या प्रेम उसे छुड़ाने का यत्न करेगी? क्या सेठ धन्नाराम उसके लिये चाराजोई करेंगे? उसे सेठ साहब पर कुछ भी आशा नहीं थी। प्रेम से अभी भी वह आशा लगाये हुए था। परन्तु यदि किसी कारण से उसको छुड़ाने के लिये रुपया न मिल सका तो फिर ये लोग उसे मार डालेंगे। उसने सुन रखा था कि पठान लोग मनुष्य के रक्त से मुमयाई बनाकर खाते हैं। क्या उसे इसी काम के लिये प्रयोग में लाया जायेगा? ज्वर-ग्रस्त मस्तिष्क के विचार प्रायः अद्भुत होते हैं। बिहारीलाल को केवल ज्वर ही नहीं था, प्रत्युत रात की भयपूर्ण घटनाओं ने भी उसको विचारशून्य कर रखा था।

अतएव अपने पकड़े जाने को स्मरण कर उसके मन में अति भयानक बातें आने लगती थीं। उसे ऐसा प्रतीत होता था कि एक कच्ची मट्टी के बने मकान के सहन में एक लकड़ी की टिकटिकी से पांव बांधकर उसे लटकाया हुआ है। उसके सिर के नीचे कोई औषधि गरम की जा रही है और उसके सिर से रक्त की बूंदे टपक टपक कर कढ़ाई में गिर रही हैं। समीप एक भयानक आकृति वाला मनुष्य हाथ में छुरी लिये खड़ा है और देख रहा है कि रक्त बहना बन्द न हो जाये।

ऐसे समय में उसे उस कमल-मुखी का स्मरण हो आता था। पीछे आती हुई स्त्रियों के वार्तालाप का शब्द और उनमें अंग्रेजी भाषा के शब्दों का समावेश उसे इन विचारों से निकाल अपने उज्ज्वल भविष्य का चित्र चित्रण करने में सहायक होता था।

इसी प्रकार वह चलता जाता था। सूर्य अस्त हो रहा था और अन्धेरा बढ़ता जाता था। अब पालकी में लेटे-लेटे उसे ऐसा प्रतीत होने लगा कि मार्ग समतल है। उसे झटके नहीं लग रहे थे। एकाएक उसको उठाने वाले खड़े हो गये। किसी ने पश्तो में कुछ कहा। उसकी पालकी भूमि पर रख दी गयी। वही बूढ़ा पठान, जिसने उसके औषधि बांधी थी, अब समीप आया और उसके माथे पर हाथ रखकर बोला, "ठीक है। बच जाओगे।" बिहारीलाल के मुख से निकल गया, 'पानी।'

इस पर उसने पश्तो में कुछ कहा। तुरन्त ही दो आदमियों ने उसे उठाया और घर में, जिसके सम्मुख पालकी रखी थी, ले गये। मकान कच्ची मट्टी का बना हुआ था। चहारदीवारी के अन्दर थोड़ा सा खुला स्थान था और फिर मकान था। मकान के पहले कमरे में से, जो बैठक मालूम होती थी, पार कर भीतर एक कमरे में ले जाकर उसे एक चारपाई पर लेटा दिया गया। चारपाई पर बहुत ही मुलायम बिस्तर किया हुआ था। बिहारीलाल ने फिर पानी मांगा। उठाकर लाने वाले जिधर से आये थे उधर को ही बिना बोले लौट गये। कमरे में काफी अन्धेरा था। छत्त में एक गोल सूराख था और प्रकाश उसमें से आता

था, परन्तु यह कमरे में की वस्तुओं को देखने के लिये पर्याप्त नहीं था।

बिहारीलाल ने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। वह सब वस्तुओं को भली भांति देख नहीं सका था। रात हो चली थी और छत्त के सूराख़ में से बहुत ही धीमा प्रकाश आ रहा था। कमरे की दीवारें अन्धेरे में छुपी हुई थीं। बिहारीलाल को सख्त प्यास लगी हुई थी और उसने फिर पुकारा, "पानी।"

इस समय तक उसको उठाकर लाने वाले कमरे से बाहर जा चुके थे, और जाते समय वे किवाड़ भीच गये थे। बिहारीलाल के पानी मांगने पर कमरे के एक कोने में कुछ हिलता हुआ मालूम हुआ। कोई बिहारीलाल की ओर आता हुआ दिखाई दिया। यह कोई औरत थी जो बुर्क़ा पहने हुए थी। चारपाई के समीप पहुँच बुर्के में से चांदी के समान सफेद हाथ बाहर निकला और बिहारीलाल के माथे पर आकर टिक गया। उस अन्धेरे में भी वह हाथ दिखाई देता था। वह उसकी कोमलता को अनुभव कर रहा था।

'बुख़ार है' बुर्के के भीतर से आवाज़ आई। बिहारीलाल ने फिर कहा, "पानी। प्यास लगी है।" इस पर वह बुर्क़ा फिर उसी कोने में विलीन हो गया जिसमें से आया था।

कुछ काल पश्चात् एक बूढ़ी औरत एक हाथ में दीपक लिये और दूसरे हाथ में एक प्याला लिये आई। यह बुर्क़ा नहीं पहने थी और उसी कोने में से दाख़िल हुई थी जिसमें बुर्के वाली विलीन हुई थी। वहाँ दीवार में दरवाज़ा था। उस औरत ने दिया दीवार में एक आलने में रख दिया और प्याला लेकर खाट के समीप आकर खड़ी हो गयी। वह पश्तो में कुछ कहने लगी। बिहारीलाल ने उठने का यत्न किया, परन्तु उठ नहीं सका। इस समय उसी कोने वाले दरवाज़े से वही बुर्के वाली फिर दाख़िल हुई और बोली, "ठहरो, हिलो नहीं।"

वह समीप आ हाथ का सहारा दे उसे उठाने लगी। उस बूढ़ी औरत ने कुछ कहा, जिसके उत्तर में बुर्के वाली ने तेज़ी में कुछ उत्तर

दिया और वह बूढ़ी चुप कर गयी। उसके हाथ के सहारे से बिहारीलाल कुछ २ उठ पाया। बूढ़ी के हाथ से प्याला ले उसने बिहारीलाल के मुख से लगाते हुए कहा, "पी लीजिये। यह कावा है। बुख़ार तो दवाई की वजह से है। घबराने की कोई वजह नहीं।"

कावा खूब गरम था। बिहारीलाल ने सरूकी भरकर कहा, "शुक्रिया।"

वह बूढ़ी औरत अब कमरे से बाहर चली गयी थी। बुर्के वाली औरत, जो बिहारीलाल पर झुककर उसे बैठने में सहारा दे रही थी, धीरे से कान में बोली, "ज़रूरत नहीं।"

"मैं कहां हूँ?" बिहारीलाल का पहला प्रश्न था।

"यह हमारा गांव है। इसे अब्बाजान ने बसाया है और इसे हम नख़लिस्तान कहते हैं। आसपास के सब इलाके से यह ज़्यादा ज़रख़ेज़ है; इसी लिये इसका यह नाम रखा है।"

"आपके अब्बाजान कौन हैं?"

"जिन्होंने आपके ज़ख़्मों पर दवाई बांधी थी। वह हकीम हैं और इस इलाके के सरदार के खानदानी तबीब (पारिवारिक चिकित्सक) हैं।"

"आपने मुझे कहां पाया था?"

"हम कल बन्नू से चले थे। आज ढक्की गांव से चलकर जब हम टीले पर पहुँचे तो बहुत से खेमे जले हुए दिखाई दिये। वहां खून के निशान भी थे। हमने समझा कि वहां भारी लड़ाई हुई है। टीले से जब हम नीचे उतर रहे थे तो एक नौकर ने आपको गड़हे में पड़ा देखा। अब्बाजान ने समझा कि आप मारे गये हैं। इस पर भी उन्होंने इतमिनान कर लेना मुनासिब समझा। वह गड़हे में उतर गये। आपके दिल की हरकत देख मायूस हो ऊपर चढ़ने लगे थे कि आपका पांव हिला। मैंने गड़हे के बाहर खड़े देख लिया था और मैंने अब्बाजान को बताया। उन्होंने लौटकर फिर देखा और उम्मीद न रखते हुए भी कोशिश करने लगे। मैं भी गड़हे में कूद पड़ी और आपको देखने

लगी। उस वक्त आपका चेहरा ऐसा मालूम होता था, मानों किसी बहुत ही लायक बुततराश ने संगमरमर को काटकर बनाया हो। यूनानी खूबसूरती भी आपके सामने फीकी दिखाई पड़ती थी। मैंने आपका सिर गोदी में ले मसलना आरम्भ किया। अब्बाजान ने नौकरों को पानी लाने को कहा। पानी लाया गया और आपके होठों को लगाया गया। उस पानी ने मोजिज़ा किया। आप पानी के कई घूंट पी गये। आपका दिल हरकत करने लगा। आप में ज़िन्दगी के आसार आते देख अब्बा-जान दवाई घोटने के लिये बाहर चले गये। खुशकिस्मती से उनकी दवाइयों की सन्दूकची साथ थी और उसका नतीजा यह हुआ कि आपकी जान बच गयी।"

बिहारीलाल इस समय तक क़ावा पी चुका था। उसके शरीर में शक्ति आ चुकी थी, और उठकर बैठते हुए कहने लगा, "मैं आपका बहुत अहसानमन्द हूँ, मगर…।" वह आगे कुछ नहीं कह सका।

"मगर क्या?"

"मैं बहुत ग़रीब आदमी हूँ। आपकी इनायतों का बदला…।"

बात बीच में ही काटकर बुर्के वाली ने कहा, "दे सकोगे।"

"कैसे?" बिहारीलाल ने धीरे से पूछा। वह बुर्के को भेदकर पुनः उस कमल-मुखी के दर्शन करना चाहता था।

"यह कभी फिर बताऊंगी," इतना कह वह सीधी खड़ी हो गयी। पहले चारपाई के समीप फर्श पर बैठी थी। अब जब खड़ी हुई तो बिहारीलाल की आंखें ऊपर को उठ गयीं। उसने बुर्का एक तरफ कर अत्यन्त प्रेम भरी दृष्टि से बिहारीलाल की ओर देखा। वह अवाक मुख उसकी ओर देखता रह गया। वह मुस्कराई और फिर बुर्का ठीक कर, उसी दरवाज़े से जिससे आई थी, भाग गयी।

[५]

इस दृष्टि ने बिहारीलाल को विश्वास दिला दिया कि उसके होठों का चूमा जाना स्वप्न नहीं था। किसी कारण यह लड़की उससे प्रेम

करने लगी है। वह उसके विषय में और अधिक जानने के लिये व्याकुल हो उठा, परन्तु कोई उपाय नहीं था। उसमें तो हाथ हिलाने की भी शक्ति नहीं थी। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि वह एक अजनवी मुसलमान के घर पर था। वह यहां के रहन-सहन के ढंग से परिचित नहीं था। अतः वह पुनः खाट पर लेट गया और अच्छे अवसर की प्रतीक्षा करने लगा।

रात को उसे शोरवा खाने को मिला। पश्चात् वह सोगया। जब उसकी नींद खुली तो छत के सूराख में से बहुत प्रकाश आ रहा था। इससे उसने अनुमान लगाया था कि दोपहर हो गयी है। इस समय उसे ज्वर नहीं था। उसका शरीर हलका हो गया प्रतीत होता था। चित्त अति प्रसन्न था। वह उठकर खाट पर बैठ गया और अपने पांव का घाव देख रहा था कि वह वृद्ध पठान वहां आ पहुँचा। उसने उसकी नाड़ी-परीक्षा की और सन्तोष प्रकट करते हुए कहा, "तुम्हारी तबियत बहुत ठीक है।"

पश्चात् उसकी पट्टी खोली और घावों को देखा। कन्धे से गोली आरपार हो गयी थी। पिछले दिन की औषधि लगाने से घाव में पीब नहीं पड़ी थी और वह भरना आरम्भ हो गया था। पांव का घाव तो लगभग ठीक हो गया था। दोनों घावों पर नई दवाई लगाकर पुनः पट्टी बांध दी गयी। पट्टी बांधते हुए हकीम साहब ने पूछा, "ये चोटें कैसे लगी हैं?"

इस पर बिहारीलाल ने अपनी कम्पनी का और अपना परिचय दिया और पीछे डाके वाली रात का पूर्ण वृत्तान्त सुना दिया। इस पर हकीम साहब ने कहा, "ज़रूर यह अलिगुल की कारवाई है।"

"वह कौन है?"

"यहां के सरदार का छोटा भाई है। सरदार का नाम शेरगुल है और करखाना बनाने की इजाज़त उसी ने दी थी। यह अलिगुल अपने भाई से बग़ावत किये हुए है। उसने बहुत साथी इकट्ठे कर लिये हैं। मालूम

होता है कि उसी ने डाका डाला है।"

"कम्पनी की बहुत हानि हुई है।"

"इसकी कौन परवाह करता है?"

"परन्तु आप कौन हैं?"

"मैं सरदार साहब का खानदानी तबीब हूं। मेरी खिदमत के सिला में मुझे यह पूरी वादी मिली है। मैंने यहां यह गांव बसाया है और इस इलाके में काश्त करवाता हूं। खुश-किस्मती से एक नाला मेरे इलाके से ऊंची सतह पर बहता है। मैंने वहां से पानी लेकर आबपाशी का इन्तज़ाम कर लिया है। अब यह ज़मीन सोना उगलने लगी है। मेरी एक ही औलाद है, वह लड़की जिसने कल तुम्हें दवाई पिलाई थी। वह बन्नू में पढ़ती थी। मैं उसे वहां से लारहा था कि रास्ते में तुम मिल गये।"

"मैं आपकी महरबानी के लिये आपका निहायत मशकूर हूं। इस सब के लिये मैं आपको क्या दे सकता हूं? हकीक़त में आपने मेरी जान बचाई है और इसकी कीमत कौन दे सकता है? मैं उमर भर आपके अहसान में दबा रहूँगा।"

"नहीं, इस बात की कुछ जरूरत नहीं। तुम हमारे महमान हो और एक पठान अपने महमान के लिये क्या कुछ नहीं कर सकता? फिर तुम मुझे बहुत अज़ीज़ मालूम होते हो। तुम्हारे कोई मां-बाप है?"

"नहीं, फौत हो चुके हैं।"

"कितना पढ़े हो?"

"सायंस में एम० एस सी० किया है।"

"ओह! तब तो तुम बहुत ही लायक आदमी हो। तुम हमारे लिये बहुत ही मुफीद साबित हो सकते हो।"

"हां, अगर मैं कोई ख़िदमत-सरंजाम दे सकूँ तो जान तक हाज़िर है।"

"अच्छी बात है। अभी तो तुम एक महीने तक हिलजुल नहीं सकते। कंधे का ज़ख्म बहुत बड़ा है। इसके ठीक होने तक तो तुम हमारे महमान रहोगे।"

इसके पश्चात् हकीम साहब उठकर चले गये। अब वही बुढ़िया, जो पिछली रात कावा लाई थी, उसके मुंह-हाथ धोने को पानी ले आई और पीछे पीने के लिये फिर कावा दे गयी। इससे बिहारीलाल को बहुत लाभ हो रहा था। वह उठकर खाट पर बैठा था और किसी प्रकार की दुर्बलता अनुभव नहीं कर रहा था। वह अपने भाग्य को सराहता था। कैसे वह कैम्प में गोलियों की बौछार को चीरता हुआ निकला, कैसे वह गड़हे में छुप गया, कैसे इन लोगों का वहां से गुज़र हुआ। यदि ये लोग एक-आध घण्टा देरी से पहुँचते तो क्या वह मर न गया होता? कैसी भगवान...। भगवान शब्द के उसके मन में आने से वह रुक गया। सोचता था, "भगवान? नहीं, भगवान कोई नहीं है। यह सब आकस्मिक घटना है, जिससे प्रकृति ने बिना प्रयोजन के उसकी जान को बचा लिया है। मैं विमला से भगवान के होने पर झगड़ा किया करता था, अब इस विपदा के समय में उसकी याद क्यों आई है? यह मेरे मन की दुर्बलता है। कई पुश्तों के संस्कारों ने मुझे भी आ दबाया है। छीः छीः यह मुझे क्या होगया है? भगवान नहीं हैं।" वह ज़ोर ज़ोर से चिल्ला उठा।

उसके चिल्लाने की प्रतिध्वनि में कोई हंसता हुआ सुनाई दिया। बिहारीलाल चौंक उठा, परन्तु शीघ्र ही अपने आपको काबू में कर हंसने लगा। पहले हंसने वाली हकीम साहब की लड़की थी। बिहारीलाल को भी हंसते हुए देख वह समीप आ कहने लगी, "यह किसको पुकार रहे थे आप?"

"पुकार नहीं रहा था। बाहर निकाल रहा था।"

"बाहर? किसको? यहां तो कोई नहीं था।"

"बात यह थी," बिहारीलाल ने कुछ इतमिनान से कहा, "मेरे दिमाग़ में खुदा आ घुसा था। मैं इसे निकाल रहा था। कल मैंने बहुत मुसीबत देखी है न, और उसके डर ने मेरे दिमाग़ में यह बात पैदा कर दी थी कि खुदा ने मुझे बचाया है। यह बात ग़लत थी। मैं इस ख़याल को निकाल रहा था।"

"तो क्या आपको खुदा ने नहीं बचाया ?"

"नहीं, मुझे आपने और आपके वालिद साहब ने बचाया है। इसमें खुदा कहां से आगया ? मुझे आप लोगों का शुक्रगुज़ार होना चहिये।"

"हम लोग भी उसी के बंदे हैं।"

"तो क्या अलिगुल उसका बंदा नहीं है ? उसने तो मुझे मार ही डाला था।"

"नहीं, वह शैतान का पैराओ है। आप उसकी बाबत नहीं जानते। वह बहुत ही खराब आदमी है।"

बिहारीलाल ने मुस्कराते हुए कहा, "आप बैठियेगा नहीं ?"

"जी।" वह कोने में पड़े एक सरकंडे के स्टूल को ले आई और खाट के समीप रखकर बैठ गई। बिहारीलाल ने कहा, "यह शैतान और खुदा की बातें तो मैं नहीं जानता। हां, आपकी महरबानी की बात जानता हूँ और अगर आपने खुदा के इशारे पर मेरी मदद की है तो वाक़ई वह बहुत अच्छा आदमी है।"

"आप खुदा को नहीं मानते ?"

"खुदा जैसा हिन्दुओं, मुसलमानों या इसाईयों की किताबों में लिखा है, वहम है, और उसकी हस्ती को मानने की ज़रूरत नहीं।"

"तो इन्सान नेकी की राह पर कैसे चल सकता है ?"

"नेकी करने से अपनी भलाई होती है। नेकी खुदा के डर से करने की ज़रूरत नहीं है।"

"इन्सान की आदत है कि बिना डर के कोई काम नहीं करता।"

"हां, यह तो मैं भी मानता हूँ। लेकिन नेकी न करने से खुदा को नुकसान होने का जो डर है।"

"मैं नहीं समझी।"

"गुनाह और सवाब खुदा ने मुकर्रिर नहीं किये। यह इन्सान अपनी मजलसी हालत देखकर करता है। इन्हें कानून कहते हैं। यही कानून कुछ अर्से बाद खुदाई अहकाम (ईश्वरीय आज्ञा) माने जाते हैं। ये वक्त

वक्त पर बदलते रहते हैं। अगर हम कानून को न मानें तो सोसाइटी बिगड़ जायेगी और इससे हम ही तकलीफ़ पायेंगे।"

"तो क्या कुरान-शरीफ़ में जो बातें लिखी हैं वे खुदा की तरफ़ से नहीं है ?"

"ये उतनी ही खुदा की तरफ से है जितनी हिन्दुओं की गीता में लिखी बातें परमात्मा की तरफ से हैं।"

"इस में क्या सबूत है कि ये खुदा की तरफ से नहीं हैं ?"

"मसलन हज़रत साहब ने लिखा है कि एक मरद चार बीवियां कर सकता है। यह उस वक़्त के अरब लोगों के रिवाज को ठीक करने के लिये था। उस ज़माने में अरब कई कई बीवियां कर लेते थे। हज़रत साहब ने तादाद मुकर्रिर कर लोगों में सुधार किया मगर अब यह सुधार हिन्दुस्तान और दूसरे मुलकों में सुधार नहीं बल्कि पिछड़ी हुई बात मानी जाती है। लोग किसी भी मरद या औरत को एक वक़्त में एक से ज़्यादा शादियां करने की इजाज़त नहीं देना चाहते। चार तक शादियों की बात उस वक़्त की अरब की मजलसी हालत के ख्याल से ठीक थी। अब वहां की और दूसरे मुल्कों की मजलसी हालत में यह बात ठीक नहीं मानी जा सकती। अगर कुरान शरीफ़ में खुदा की बातें होतीं तो वे सब वक्तों के लिये और सब लोगों के लिये ठीक होतीं। ऐसा नहीं है।"

लड़की बहुत गम्भीर विचार में डूब गयी थी। बिहारीलाल के बता चुकने के कितनी ही देर बाद तक भी वह चुपचाप बैठी रही। उसे चुप देख बिहारीलाल ने पूछा, "आप क्या सोच रही हैं ?"

एकाएक चौंक कर बोली, "यही कि मैं तो अपने खाविंद की अकेली बीवी बनकर रहना चाहती हूँ।"

"क्यों ?"

"मै अपने ख़ाविंद को अपनी चीज बनाकर रखना चाहती हूं। अपनी, बिलकुल अपनी, बिना किसी दूसरे के दखल के।"

अगर आपका ख़ाविंद मुसलमान हुआ और उसने दूसरी शादी कर

ली तो आप क्या कर सकेंगी ?"

"मैं नहीं जानती।" वह फिर गम्भीर विचार में पड़ गयी। बिहारी लाल ने बात बदलने के लिये कहा, "आप छोड़िये इस फिकर को। 'किबल अज़ मर्ज़ वा वेला।' बीमार होने से पहले दवादारु। आपकी शादी जब होगी तब देखा जायेगा।"

इस पर लड़की ने पूछा," आपकी शादी हो चुकी है क्या ?"

"हां।"

"ओह !" लड़की के मुख से निकल गया और वह फिर चुपकर गयी। बिहारीलाल ने बात बदल ही दी, "आपसे मैं कुछ पूछ सकता हूं।"

मुझसे ?" उसने एक आह भर कर पूछा।

"हां, आपका नाम क्या है ?"

"नरगिस।"

"आप बन्नू में कहां पढ़ती थीं ?"

"पहले तो लड़कियों के सरकारी स्कूल में। फिर एक ट्यूटरैस रखी हुई थी। मेरे चाचा अंग्रेज़ी सरकार के नौकर हैं। मैं उनके घर रहती थी। उनका एक लड़का है यूसफ़। वह भी सरकारी नौकर है। उसकी शादी हो चुकी है। दो बच्चे भी हैं। उसने मुझसे शादी करने का इरादा ज़ाहिर किया था। अब्बाजान माने नहीं और मुझे खुद जाकर वहां से ले आये हैं।"

"मिस्टर यूसफ़ क्या काम करते हैं ?"

"महकमा जंगलात में एक बड़े अफसर हैं। बहुत बड़ी तनखाह पाते हैं। ऊपर से भी भारी आमदनी है।"

"तो अब्बाजान माने क्यों नहीं ?"

"मैंने मन्जूर नहीं किया। मैंने बताया है न कि मैं खाविन्द की अकेली बीवी बनकर रहना चाहती हूं।"

"आखिर क्यों ? मिस्टर यूसफ़ काफी अमीर होंगे। वह दो क्या कई

बीवियां रखने की तौफ़ीक़ रखते होंगे ?"

"मरद इन बातों को नहीं समझ सकते। न ही मैं बयान कर सकती हूँ।"

"ठीक है।"

"क्या ठीक है ?"

"मै भी ऐसा ही महसूस करता हूँ। मैं समझता हूँ कि यह हसद है।"

"कुछ भी हो। मेरी यही खसलत है। और मैं समझती हूँ कि निन्यान्वे फ़ीसदी औरतें यही चाहती हैं।"

इस वक्त एक और औरत कमरे में चली आई। उसने भी बुर्का पहिना हुआ था। नरगिस ने उसे देख बिहारीलाल से कहा, "अम्मी है।"

बिहारीलाल ने बायां हाथ उठाकर कहा, "सलामालैकुम।" दाहिना कन्धा जख़्मी था।

"वालेकुम सलाम," बुर्के में से आवाज आई।

अब कुछ देर तक इधर उधर की बातें होती रहीं। बाद में मां ने लड़की से कहा, "अब्बाजान के लिये बिस्तर तैयार कर दो। उन्हें सरदार साहब ने बुलाया है।"

"सरदार साहब कहां रहते हैं ?" बिहारीलाल ने झिझकते झिझकते पूछा।

नरगिस की मां ने बताया, "यहां से चालीस मील का फासला पड़ता है। हकीम साहब तीसरे पहर यहां से चलेंगे। रात होने तक दस मील निकल जायेंगे। वहां मेरे वालिद साहब रहते हैं। रात उनके पास रहेंगे। कल सुबह चलकर शाम तक मंजिल पर पहुंच जावेंगे।"

"तो हकीम साहब कब तक लौटेंगे ?"

"मालूम नहीं क्या काम है ? आठ दस दिन तो लग ही जायेंगे।"

नरगिस चली गयी थी और हकीम साहब खुद आगये थे। कहने लगे, "मैंने तुम्हारी दवाई का इन्तजाम कर दिया है। मेरा एक शागिंद (शिष्य) है। वह दवाई लगा जाया करेगा, और तुम्हें यहां कोई तकलीफ नहीं होगी। इन्शाअल्ला मेरे लौट आने तक तुम बहुत अच्छी

तरह होगे।"

"यहां से लाहौर चिट्ठी भेजने का क्या इन्तजाम है?"

"ख़ास आदमी चिट्ठी लेकर बन्नू जाता है। यह मेरे लौट आने पर ही हो सकेगा।"

बिहारीलाल उदास था। वह चाहता था कि प्रेम को चिट्ठी लिखे और अपने जीवित रहने का समाचार भेज दे।

[६]

बिहारीलाल की अवस्था सुधर रही थी। दिन प्रति दिन उसके घाव भरते जा रहे थे। पांव तो बिलकुल ठीक हो गया था और वह अब उठकर इधर उधर घूम सकता था। कंधा अभी बंधा था। हकीम साहब का शिष्य नित्य दवाई लगा पट्टी बांध जाता था। खाने को बकरे के मांस का शोरबा और बहुत मोटी मोटी तन्दूर में पकी रोटियां मिलती थीं। बिहारीलाल आधी रोटी से अधिक कभी नहीं खा सका। हकीम साहब ने अपने निज के खाने के लिये कुछ सब्जियां भी लगवा रखी थीं। कभी कभी वे भी मिल जाती थीं।

दिन पर दिन बीतते जाते थे और हकीम साहब के आने का कोई समाचार नहीं था। बिहारीलाल का चित्त उदास रहने लगा था। नरगिस की संगति में तो उसे जीवन कुछ कुछ आनन्दमय प्रतीत होता था, परन्तु अन्य समय पर वह अपने जीवन को नीरस पाता था। यह बात उस पर अब सर्वथा स्पष्ट हो चुकी थी कि नरगिस उससे प्रेम करती है। वह यह भी भांप गया था कि नरगिस की मां इस रहस्य को जानती है। परन्तु वह स्वयं अपने मन से प्रेम के प्रभाव को मिटा नहीं सकता था। प्रेम में कुछ बात थी जो वह विमला और नरगिस में नहीं पाता था

विमला से उसका विवाह हुआ था। लगभग दो वर्ष तक वे इकट्ठे रहे थे और उस काल में वे एक दूसरे से ऐसा मेलजोल और व्यवहार रखते थे जैसे एक मशीन के दो पुर्जे अपनी अपनी धुरी पर घूमते हुए एक दूसरे को घुमाते रहते हों। निर्जीव सम्बन्ध था उनका।

प्रेम से वह लगभग चार मास सम्बन्ध रख चुका था। वे चार मास उसके लिये ऐसे व्यतीत हुए थे, जैसे शराबी शराब के नशे में सब संसार को भूलकर एक ही धुन में लीन रहता है। प्रेम की आंखों में शराब का नशा था जो उसके मस्तिष्क को सदैव चढ़ा रहता था।

नरगिस इन दोनों से भिन्न थी। वह उसकी ओर आकर्षित होता था, परन्तु वह आकर्षण केवल शारीरिक था। वह उसे देख कामातुर हो उठता था, परन्तु उसके आंखों से ओझल होते ही वह अपनी विकृत मानसिक अवस्था पर पश्चाताप करने लगता था।

बिहारीलाल अपनी इन तीनों अवस्थाओं पर घन्टों ही बैठा विचार किया करता था। कौन सम्बन्ध ठीक है? कौन अवस्था अच्छी है? विमला, प्रेम अथवा नरगिस कौन वाञ्छनीय है?

वह यह सोचा करता था। इसी विचार-धारा में लीन वह अपनी खाट पर बैठा था। रात का समय था। दीवार पर आलने में रखा तेल का दीया जल रहा था। दीये का प्रकाश बहुत धीमा था। सर्दी पर्याप्त थी और गुदमा अपने शरीर पर लपेटे, सिर झुकाये वह दीपक की ओर देख रहा था।

"क्या सोच रहे हैं आप?" खाट के समीप खड़ी नरगिस ने पूछा।

"ओह! आप हैं?" बिहारीलाल ने चौंककर नरगिस की ओर देखते हुए पूछा। उसने बुर्का नहीं पहना हुआ था। एक कुर्ता, जो उसके शरीर की रेखाओं को भली भांति स्पष्ट कर रहा था, और सलवार पहने हुए थी। सिर पर केवल एक रूमाल रखा था। उसके गज़ भर लम्बे बाल कमर से नीचे तक लटक रहे थे। इस प्रकार वह अपने पूर्ण सौन्दर्य का प्रदर्शन कर रही थी।

एक क्षण के लिये उसका यह रूप देख बिहारीलाल डरा, परन्तु दूसरे ही क्षण उसकी मानसिक प्रवृत्ति बदल गयी। नरगिस खाट पर ही बैठकर कहने लगी, "आप क्या सोच रहे थे? मुझे आध घन्टे से ऊपर हो गया है कि मैं आपके पीछे खड़ी आपको देख रही थी। आप उस

दीये में क्या देख रहे थे ?"

"उस दीपक की लपट कितनी सुन्दर है। जब हिलती है तो ऐसा मालूम होता है कि किसी परी की कमर में लोच पड़ गयी है। उस लपट से निकलता हुआ धुंआ किसी खूबसूरत हूर के लम्बे २ बालों से समानता खाता है। कितनी चमक है उसमें ? क्या सुनहरी रङ्ग है। मगर उसमें उंगली रखते ही जल जायेगी।"

"ओह ! आप तो फ़िलॉसफर मालूम होते हैं।"

"ऐसी सुनसान जगह पर, ज़ख़मी होकर हफ़्तों से पड़ा होना किसी पत्थर को भी फ़िलॉसफर बना देगा। मेरी बात छोड़ो। आप इस वक़्त आधी रात गये यहां कैसे ?"

"मुझे नींद नहीं आती थी। उठकर घूमने लगी। अम्मी सो रही हैं। इस परेशानी में आपके कमरे में चली आई। आपको एक टक दीये की ओर देखते हुए देख समझी हूँ कि आप भी परेशान हैं। आपसे बातें कर कुछ वक़्त काटने के लिये यहां ठहरी थी, मगर आप तो उस दीये की लपट में ऐसे मस्त थे कि इधर नज़र ही नहीं करते थे। आख़िर बुलाना पड़ा।"

"मुआफ़ करियेगा। मैंने देखा नहीं था। आपको सरदी लग रही होगी। आप यह ओढ़ लें।"

बिहारीलाल ने अपने शरीर से गुदमा उतारकर नरगिस को देने के लिये आगे कर दिया।

"नहीं ! नहीं ! आप रखिये। कुछ इतनी सरदी नहीं है।"

बिहारीलाल ने आग्रह किया। इस पर नरगिस ने गुदमे का एक भाग अपनी टांगों पर डाल लिया।

नरगिस ने हाथों को गुदमे में छुपाते हुए कहा, "आप वतन लौट जाने के लिये बेचैन हो रहे होंगे ?"

"कम से कम अपने जीते होने की ख़बर वहां भेजना चाहता हूँ। कोई वहां मेरे लिये परेशान हो सकता है।"

"कौन है वह ?"

"क्या बताऊँ ? कई हैं जिनसे उन्स है।"

"यहां भी कोई आपसे लगाव रख सकता है।"

"सच कहती हैं आप ?" बिहारीलाल समझता था। फिर भी वह इसे अचम्भे की बात ही प्रकट करना चाहता था।

"तो क्या आपको शक है ?"

"यह एक इतनी बड़ी बात है जिसके लायक मैं अपने आपको नहीं समझता। कौन है वह महरबान जो मुझ जैसी नाचीज़ को आंखों की पलकों पर उठाने को तैयार हुआ है ?"

"एक है, जो दिन-रात आपकी बाबत सोचा करता है। जो मुहब्बत की लपट में उंगली डालने से नहीं डरता। जो लपट की खूबसूरती को देखता है और उसके जला देने के वसफ़ को भी जानता है। इस पर भी परवाने की तरह उसी तरफ भागा चला जाता है।"

"बहुत कोतः अन्देश है," बिहारीलाल ने मुस्कराते हुए कहा। वह अपने पूर्ण शरीर में से विद्युत की चिंगारियां निकलती अनुभव कर रहा था। वह इस समय नरगिस की सम्मोहिनी शक्ति के प्रभाव में आ चुका था। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि नरगिस उसके समीप खिसक आई है। अब वह सर्वथा उसके साथ सटकर बैठी थी। बिहारीलाल ने एक अन्तिम यत्न करते हुए कहा, "नरगिस, इसका नतीजा जानती हो ?"

नरगिस ने बिहारीलाल के गले में बांह डालकर कहा—

"न पूछिये परवाने से शमा में कूदता है क्यों ?
उसे तो खाक होकर ही रोशनी दोचन्द करना है॥"

किसी ने दीपक बुझा दिया।

[७]

बिहारीलाल अपने आचरण पर बहुत लज्जित था। उसने महमान-ग़री के नियमों का उल्लंघन किया था। वह अपने मन ही मन इस पाप का प्रायश्चित करने के विषय में सोच रहा था। कई प्रकार के विचार

उसके मन में आ रहे थे। सबसे उग्र विचार तो आत्मघात कर लेने का था। वह विचार करता था कि नरगिस चाहे कितनी ही मूर्ख हो, वह तो पढ़ा-लिखा समझदार आदमी है। उसने तो दुनिया देखी है। हकीम साहब को अगर यह मालूम होगया तो वह गोली मार डालेंगे। क्या यह अच्छा न होगा कि उनको पता चलने से पूर्व ही वह इस ग़लती का प्रायश्चित कर डाले ?

दूसरी ओर प्रेम के साथ दग़ा करने की बात मन में आती थी। वह सोचता था कि यदि वह चाहता है कि प्रेम उससे बेवफ़ाई न करे तो उसके लिये भी आवश्यक है कि उससे वफ़ादारी का व्यवहार करे। वह समझता था कि उसने अपने आपको अपवित्र कर लिया है। इस अपवित्र शरीर को स्थिर रखने की आवश्यकता नहीं।

जिस दृष्टि-कोण से भी वह देखता था वह अपने आपको इस संसार में रहने योग्य नहीं पाता था। वह समझता था कि उसने कोई ऐसी बात कर डाली है जिसने उसे अपनी ही दृष्टि में छोटा कर दिया है।

आत्मघात कर लेने का निश्चय कर वह इसके लिये साधन ढूंढने लगा। गले में रस्सी डालकर मर जाना ठीक होगा। रस्सी कहां से लाई जाये। खाट की दावन नहीं थी। वह एकदम बुनी हुई थी। बिस्तरे की चादर को फाड़कर रस्सी बट ले। इसमें समय लगेगा। कहीं कोई देख न ले। इस समय उसे अपने पास एक पिस्तौल होने की याद आई। वह हकीम साहब के पास रखा था। क्या नरगिस उसे ले आयेगी ? यदि वह मिल जाता तो बहुत सुगमता से इस संसार से बाहर हुआ जा सकता था। फांसी पर लटकने में पीड़ा बहुत होगी। कनपटी के समीप पिस्तौल रख चला देना आसान होगा।

वह इसी प्रकार के विचारों में डूबा हुआ था कि हकीम साहब का शिष्य मरहम-पट्टी करने आया। उसके मन में एक विचार आया। उस ने पूछा, "हकीम साहब संखिये का इस्तेमाल करते हैं या नहीं ?"

शिष्य ने कहा, "हां, ख़ास ख़ास बीमारियों में किया जाता है।"

"आपके पास कुछ थोड़ा सा होगा ?"

"मेरे पास तो नहीं है। हकीम साहब की संदूकची में है और उसकी चाबी नरगिस की मां के पास रहती है।"

"आप उनसे थोड़ा मांग दीजिये। मैंने एक दवाई बनानी है।"

"कहूँगा।"

बात यहीं समाप्त होगयी। मरहम पट्टी समाप्त हो गयी और शिष्य चला गया। नियमानुसार नरगिस की मां आगयी। वह उसकी खैरियत पूछने आया करती थी। उसने आते ही आज परेशानी में पूछा, "आज आपने दूध क्यों नहीं पिया ?"

"तबियत नहीं करती थी। मुझे आज कुछ भी खाने को नहीं चाहिये।"

"फ़ाकों से काम नहीं चलेगा। जब तक ज़खम पुर नहीं हो जाता खुराक तो खानी ही पड़ेगी।"

"मगर जब भूख न हो तो क्या करूं ?"

"तो ज़रा मकान के बाहर टहल लिया करें न। अब तो आप चलने फिरने लगे हैं।"

"हां, मगर छोटे हकीम साहब कहते थे कि यहां इधर उधर घूमना खतरे से खाली नहीं। येहां तो वही अकेला घूम सकता है जिसकी जान का बदला लेने वाले पीछे मौजूद हों। किसी की जान को तब ही इज्ज़त से देखा जाता है जब उसकी तरफ उंगली उठाने वाले की आंख फोड़ डालने वाले मौजूद हों।"

"तो क्या आपका हमारा महमान होना काफी नहीं ?"

"छोटे हकीम साहब कहते थे नहीं।"

"ओह ! तो आप मकान के सहन में तो बखूबी घूम सकते हैं।"

"मगर मेरी वजह से आप लोगों को दिक्कत होगी।"

"नहीं, तुम नहीं समझते। हम लोग तो तुम्हें अब घर का आदमी मानते हैं। हकीम साहब जाते वक्त कह गये थे कि वह आपको अपना

लड़का बनाने का इरादा रखते हैं।"

"यह तो उनकी निहायत मेहरबानी है। मगर मैं अपने को इसके लायक नहीं समझता। मुझ नालायक की तमाम बातें अगर वह जान जायें तो मुझसे नफ़रत करने लगेंगे।"

"नहीं, नहीं, ऐसी बात न कहो, बेटा। तुम तो फरिश्ता हो।"

बिहारीलाल का सब शरीर कांप उठा। वह फरिश्ता है? उफ़ ये लोग कितने धोखे में हैं। ये समझते हैं कि वह नरगिस का ख़ाविन्द बनने के काबिल है। जो कुछ पिछली रात हुआ है उसे तो मनुष्यता से भी बहुत छोटा व्यवहार कहा जा सकता है।

नरगिस की मां ने उसकी कंपकपी को नहीं देखा था। वह कुछ और इधर उधर की बातें कर यह कहकर चली गयी, "नरगिस अभी सोकर उठी है। गुसल वग़ैरा करने के बाद आयेगी और तुम्हें अहाते में घूमने के लिये ले जायेगी।" बिहारीलाल का शरीर पसीने से तर-बतर हो रहा था। वह निश्चय नहीं कर सका कि क्या करे।

जब वह दोपहर का खाना खाकर हटा ही था तो नरगिस वहां आ पहुँची। उसका मुख आत्म-तुष्टि से दैदीप्यमान होरहा था। वह अति प्रसन्न थी और आनन्द में हिलोरें ले रही प्रतीत होती थी। बिहारीलाल नीचे मुख किये हुए बैठा रहा और बिना ऊपर आंखें उठाये उसने कहा, "तशरीफ़ रखिये।"

नरगिस बिहारीलाल का मुर्झाया हुआ मुख देखकर चिन्ता में पड़ गयी। उसके कहने पर वह बैठ गयी, परन्तु उसकी चिन्ता मिटी नहीं। उससे जब नहीं रहा गया तो पूछने लगी, "क्या बात है? आपकी तबियत तो ठीक है?"

उसने आंखें ऊपर उठाकर नरगिस के मुख की ओर देखा और कहा, "नरगिस, मैं बहुत शरमिन्दा हूं।"

"क्यों?"

"इसके पूछने की ज़रूरत है क्या?"

"मैं तो समझती हूँ, शरमिन्दा होने की कोई वजह नहीं है।"

"मैं आपके बाप के घर महमान हूँ। मुझे कोई ऐसी बात नहीं करनी चाहिये थी जिससे उनकी बेइज़्ज़ती हो।"

"आपने उनको बेइज़्ज़त करने की कौन सी बात की है?"

"आप नहीं जानतीं?"

"छोड़िये इन बातों को। आप सहन में घूमने चलियेगा?"

"क्या करूं, कुछ समझ में नहीं आता।"

"अम्मी ने कहा है कि आपको बाहर धूप में घूमने के लिये ले जाऊं। आप परेशान क्यों हैं? मैं जानती हूँ कि अब्बाजान वही चाहते हैं जो हम।"

"क्या?"

"हमारी शादी।"

बिहारीलाल इससे गम्भीर विचार में डूब गया। वह मन ही मन सोच रहा था कि बहुत बुरी भांति इस मोहजाल में फंस गया है। वह उठा और धीरे धीरे नरगिस के साथ कमरे से बाहर निकल गया। कई कमरे लांघकर वे सहन में पहुंचे। यह बहुत खुला था। इसके एक तरफ तो मकान था और तीनों तरफ पन्द्रह फुट ऊंची दीवार।

मकान में कितने कमरे थे और उसमें कितने लोग रहते थे, वह नहीं जानता था। वही बूढ़ी औरत जो उसके लिये खाना लाया करती थी सहन में एक तरफ खड़ी कुछ कपड़ों को सूखने के लिये धूप में डाल रही थी। उसके अतिरिक्त उसे और कोई नौकर दिखाई नहीं दिया। सहन के एक कोने में एक शहतूत का पेड़ था। नरगिस बिहारीलाल को वहीं ले गयी और वहां दोनों ज़मीन पर छाया में बैठ गये। बिहारीलाल ने बैठते बैठते एक लम्बी सांस छोड़ी। नरगिस ने इसे देख लिया और पूछा, "क्या आपको रात की बात पर अफसोस हो रहा है?"

"मैंने महमानदारी के कायदों को तोड़ा है।"

"बहुत भारी जुरम किया है आपने," नरगिस ने मुस्कराते हुए कहा।

बिहारीलाल ने मुख नीचे किये हुए और बिना नरगिस के मुख की मुस्कराहट देखे कहा, "मैं इस गुनाह का प्रायश्चित करने का इरादा रखता हूँ।"

"यह क्या होता है ?"

"किसी गुनाह के असर को दूर करने के लिये जो किया जाये।"

"किस पर बुरा असर हुआ है ?"

"मेरे अपने पर, आप पर, आपके वालदैन पर और जिस किसी को भी यह बात मालूम होगी।"

"और इस असर को कैसे दूर करियेगा ?"

"मेरा इरादा है कि इस नालायक जिसम को तबाह कर दूं। मैं खुद-कशी कर लूंगा।"

बिहारीलाल के मुख का रंग पीला हो रहा था। नरगिस इसे देख और उसका निश्चय सुन कांप उठी। उसके मुख से भी प्रसन्नता के चिन्ह मिट गये। वह अवाक मुख देखती रह गयी। दोनों कितनी ही देर तक एक दूसरे का मुख देखते रहे। अंत में नरगिस ने शांति भंग की, "तो आपके ख्याल से हमने बहुत भारी गुनाह किया है ?"

"अच्छा बताओ। अगर तुम्हारे वालिद साहब को पता चल जाये तो वह क्या करेंगे ?"

"आपको गोली मार खतम कर डालेंगे, यही समझते हैं न आप ?"

"बेशक।"

"और इसी डर के मारे आप पहिले ही मर जाना चाहते हैं ?"

"मैं डरता नहीं हूँ।"

"डरते नहीं तो और क्या है ? डर से आपका दिमाग खराब हो रहा है। आप सीधी बात क्यों नहीं करते ? मुझसे निकाह पढ़ा लें।"

"मगर आप ही ने तो कहा था कि अपने खाविन्द की अकेली बीवी बनकर आप रहना चाहती हैं पर मेरी तो दो शादियां पहले हो चुकी हैं।"

"बस। इतनी सी बात पर मरने के लिये तैयार होगये थे ?"

"नहीं और भी बात है।"

"क्या वह बताने की नहीं है?"

"मै खुदा को नहीं मानता।"

"इससे शादी का क्या ताल्लुक है।"

"मैं किसी मज़हब पर विश्वास नहीं रखता।"

"इसकी क्या ज़रूरत है?"

"मैं किसी रसूल पर ईमान नहीं रखता।"

"तब तो ठीक है। मैं ही आपका रसूल बन जाऊंगी।"

"मैं फ्री लव (उन्मुक्त प्रेम) में विश्वास रखता हूँ।"

"तो क्या तीन बीवियां पर आपको सबर नहीं है। अभी एक और के लिये गुंजायश भी तो है।"

इस पर तो बिहारीलाल के मुख पर भी मुस्कराहट दौड़ गयी। शीघ्र ही उसने फिर गम्भीर होकर कहा, "मगर नरगिस, मैं मुसलमान नहीं हूँ।"

"लोगों को दिखाने के लिये बन जाना।"

"यह तो धोखा होगा।"

"बेवकूफों के साथ ऐसा ही सलूक करना चाहिये।"

"मगर मेरा ज़मीर नहीं मानता।"

"ज़मीर की बात आपने ठीक कही है। क्या बेवकूफों से बचकर रहना ज़मीर को पसन्द नहीं?"

"देखो नरगिस, मैं मुसलमान नहीं बन सकता।"

"आपको मुसलमान बनने को किसने कहा है? मैं तो यह कहती हूँ कि लोगों को अपनी तसल्ली कर लेने दो। वे यह चाहेंगे कि आप एक बार कलमा पढ़ दें। मन से आप जो चाहें मानें।"

"जी नहीं चाहता।"

"तो आपका मन मरने को चाहता है। मैं आपको मरने नहीं दूंगी। मैं आपसे मुहब्बत करती हूँ और ज़रा गौर करो इसकी खातिर क्या कुछ करना चाहती हूं। मैं खाविन्द की अकेली बीबी बनना चाहती थी, मगर

आपके लिये मुहब्बत ने मेरे इस इरादे को बदल दिया है। मैं मुसलमान हूँ मगर आपको अपना मज़हब रखने में एतराज नहीं करती।"

"यह क्यों नरगिस ?" बिहारीलाल की आंखों में फिर कामुकता की मादकता छाती जाती थी।

"सिरफ इसलिये कि मैं आपसे इतनी ज़्यादा मुहब्बत करती हूँ कि अगर आप उसका एक हिस्सा भी बदले में दे सकियेगा तो मैं खुश रह सकूंगी।"

बिहारीलाल निरुत्तर था। वह मन में सोचता था कि उन्मुक्त प्रेम का यही तो प्रयोजन है। फिर भी उसने बात पक्की कर लेने के लिये पूछा, "मान लो कि मेरी शादी आपसे हो जाये और शादी होने के पहले मुझे मुसलमान बनने को कहा जाय और मैं कलमा पढ़ने से इन्कार करूं तो क्या होगा ?"

"कलमा पढ़ देने से कोई मुसलमान थोड़े ही होता है। ऐसा तो बेवकूफ लोग मानते हैं। हां, अगर आपका मन मुसलमान बनने को पसन्द करे तो बात दूसरी है।"

"अगर आप इस उम्मीद में शादी कर रही हों कि मैं बाद में इस्लाम को पसन्द करने लगूंगा तो मैं कह देता हूँ कि यह उम्मीद झूठी है। मैं लामज़हब हूँ। मैं शख़सी आज़ादी में यकीन रखता हूँ। दुनिया का कोई भी मज़हब इस आज़ादी को देने वाला नहीं है।"

"तो आप हिन्दू किस तरह हैं ?"

"हिन्दू कोई मज़हब नहीं है। हिन्दू एक कौम का नाम है। इसमें किसी भी मज़हब के मानने वाले या किसी भी मज़हब के न मानने वाले शामिल हैं। हिन्दुस्तान को अपनी जन्मभूमि, पुण्यभूमि और मातृभूमि मानने वाले को हिन्दू कहते हैं।"

"हिन्दुस्तान किसे कहते हैं ?"

"हिन्दुकुश से लेकर सिंगापुर तक और हिमालय से लेकर लंका तक इसकी हद है।"

"तो हम लोग भी आपके हिन्दुस्तान में हैं?"

"हां। मगर आप हिन्दू तब ही हो सकते हैं जब आप इस सरज़मीन को अपनी पाक ज़मीन भी मानें।"

"पाक से आपका क्या मतलब है?"

"जिसकी भलाई और रसूख़ के लिये अपना सब कुछ न्योछावर कर सकें।"

"यह जज़बा (मनोद्गार) तो बहुत अच्छा है। तो मुसलमान भी हिन्दू हो सकते हैं?"

"हां।"

"मगर ऐसा माना नहीं जाता।"

"इसलिये कि वे खुद ऐसा बनना नहीं चाहते। उनके मन में मक्का और मदीना ज़्यादा इज़्ज़त वाली जगाहें हैं। अरब और टर्की के लिये उनके दिल में ज़्यादा जज़बात हैं। हिन्दुस्तान के लिये इतने नहीं।"

"मक्का और मदीना तो उनके लिये मज़हबी कीमत रखते हैं।"

"ठीक है। उनका मुकाबला होना हो तो अयोध्या और मथुरा से हो सकता है। हिन्दुस्तान से उनको तरजीह नहीं दी जा सकती। टर्की और अरब तो हम लोगों के लिये किसी तरह भी पाक स्थान नहीं हो सकते।"

"जो लोग मज़हब को बड़ी बात मानते हैं उनके लिये उनकी मज़हबी जगाहें, उनके हम-मज़हब और वे मुल्क जहां उनके हम-मज़हब रहते हैं, हमेशा इज़्ज़त की चीज होंगे।"

"इसमें तो कोई एतराज़ की बात नहीं है। मगर जब भी मुल्की बातों की चर्चा हो, हमें हिन्दुस्तान को इन सब मे ऊंचा समझना चाहिये। मसलन् अगर अरब या किसी दूसरे इस्लामी मुल्क के लोग हिन्दुस्तान पर हमला कर दें तो मुसलमानों को उनकी हिमायत नहीं करनी चाहिये। अगर वे ऐसा करते हैं तो वे हिन्दू नहीं बन सकते।"

"इस्लाम की तरक्की के लिये किसी मुसलमानी मुल्क की हकूमत

हिन्दुस्तान में कायम होना शायद जरूरी है।"

"सियासी ताकत का मज़हब की तबलीग़ (वृद्धि) के लिये इस्तैमाल करना ठीक नहीं।"

"मुसलमान इसे पसन्द करते हैं।"

"इसी लिये मुसलमान हिन्दू नहीं हैं और मैं मुसलमान नहीं हूं।"

"मैं तो आपकी बात समझती हूं, मगर आम मुसलमान इसको नहीं समझते। इस्लाम जहां एक मज़हब है वहां यह एक सियासी निज़ाम भी है।"

"हिन्दू लोग मज़हब को सियासियात से अलग रखना चाहते हैं।"

"मुझे इन बातों से सरोकार नहीं। मैं आपसे मुहब्बत करती हूं और वह इतनी ज़बरदस्त है कि मेरे मज़हब से भी ऊपर है।"

"तो आप भी हिन्दू हैं।"

"मगर मैं नमाज़ पढ़ती हूँ, रोज़े रखती हूं, कुरान-शरीफ़ पर ऐतकाद रखती हूँ और हज़रत साहब को रसूल मानती हूँ।"

"इससे क्या होता है? अगर आप हिन्दुस्तान के मुफाद (लाभ) को दुनिया के इस्लामी या ग़ैर इस्लामी दूसरे मुल्कों से आला और पहले मानती हैं तो आप हिन्दू हैं।"

"तब तो बहुत अच्छी बात है। आप भी ऐसे ही हिन्दू बन जाइये।"

"हिन्दू तो मैं हूँ ही। हां, मुसलमान नहीं हूँ, न बनूंगा।"

"आप कुरान-शरीफ़ एक बार सुनकर देखिये।"

"मेरी एक बीवी कट्टर सनातन-धर्मी है।"

"वह क्या होते हैं?"

"पुराणों में एक किसम का मज़हब बयान किया है। वह उसको मानती है।"

"मसलन क्या करती है?"

"ठाकुर पूजती है। व्रत रखती है। तिलक-छापा लगाती है। वह यह मानती है कि खुदा कभी २ इन्सान की शक्ल में आकर गुमराह लोगों

को राह पर लाता है। वह मानती है कि खुदा की तसवीर की पूजा करने से बहिश्त मिल सकता है।"

"यानी वह बुत-परस्त है।"

"हां, मगर उसने मुझे कभी नहीं कहा कि मैं भी उसी तरह परमात्मा की पूजा करूं।"

"तो उसका अपना एतकाद (विश्वास) कमज़ोर है।"

"नहीं, यह बात नहीं। वह अपनी बात को बहुत मज़बूती से मानती है। मगर. जब मैं कहता हूँ कि परमात्मा को नहीं मानता तो वह इसकी परवाह नहीं करती।"

"आप उससे मुहब्बत करते हैं ?"

"नहीं।"

"आपकी उससे शादी किस तरीके से हुई है ?"

"उसके धर्म के मुताबिक।"

"तो अब मेरे मज़हबी तरीके के मुताबिक कर लीजिये।"

"मुझे एतराज़ नहीं, मगर शादी के पहले आपका मज़हब कबूल करने की बात नहीं मान सकता। उसके साथ शादी करने पर मुझे उसका मज़हब मानना नहीं पड़ा।"

"आपकी दूसरी बीबी किस मज़हब को मानती है ?"

"मेरे मज़हब को, यानी किसी मज़हब को नहीं।"

"लामज़हबों की शादी कैसे होती है ?"

"सिर्फ यह कह देने से कि हमारी शादी होगयी है।"

"कोई रसम अदा नहीं होती ?"

"न। न ही कुरान, अंजील, पुराण या वेद पढ़े जाते हैं।"

"तो यह शादी कैसे हुई ?"

"जैसे बकरा-बकरी, मोर-मोरनी, चिड़ा-चिड़िया वग़ैरा लाखों जानवरों की होती है।"

"मगर वह शादी तो टूट भी जाती है।"

"मैं चाहता हूँ कि हमारी शादी भी मुहब्बत कम हो जाने पर टूट सके।"

"अगर खाविन्द तोड़ना चाहे और बीवी तोड़ना न चाहे तब क्या हो?"

"तब वही हो जो उस वक्त होगा जब बीवी शादी तोड़ना चाहे और खाविन्द तोड़ना न चाहे।"

"वाह! यह तो वही बात हुई। यही तो मैंने पूछा है। एक शख्स शादी तोड़ सकता है या नहीं?"

"नहीं।"

"तब तो ठीक है। मैं राज़ी हूं। मैं जानती हूं कि मैं आपसे कभी रिश्ता नहीं तोड़ूँगी॥"

"नरगिस! यकीन है तुम्हें?"

"बिलकुल।"

[८]

लगभग दो मास तक हकीम साहब घर से बाहर रहे। जब वह लौटे तो बिहारीलाल बिलकुल स्वस्थ हो चुका था। उसके कंधे की पट्टी भी खोल दी गयी थी। वह अब हाथ में बन्दूक ले हकीम साहब के खेतों में घूमने जाया करता था। उस गांव के रहने वाले उसकी बातों को भली भांति समझ नहीं सकते थे। इस पर भी संकेत से वह उनको अनेकानेक बातें बताता और समझाता रहता था। ऊंचे खेतों में पानी कैसे चढ़ाया जा सकता है। खेतों में से घास निकाल देना चाहिये। पत्तों से खाद कैसे बनाई जाती है इत्यादि। परिणाम यह हो रहा था कि लोग उसको पसन्द करने लगे थे।

हकीम साहब से गांव वालों ने बिहारीलाल की लियाकत और सर्वप्रियता का ज़िकर किया। घर पर नरगिस की मां ने नरगिस की शादी के लिये ज़ोर दिया। नरगिस की स्वीकृति की बात भी हो गयी। इस प्रकार हकीम साहब ने आने के लगभग एक मास के भीतर बिहारीलाल से इस

विषय पर बातचीत की। बिहारीलाल का उत्तर था, "मेरी जान के आप मालिक हैं और फिर नरगिस इतनी प्यारी लड़की है कि उससे शादी मेरी आलाकिस्मत होगी।"

बात तय हो गयी। निकाह की तारीख निश्चय कर दी गयी। बिहारीलाल और नरगिस की इच्छा के अनुकूल निकाह की रसम चुपचाप मना ली गयी, और उसमें बिहारीलाल को कलमा तक भी खुद नहीं पढ़ना पड़ा। मुल्ला ने ही सब कुछ पढ़कर समाप्त कर दिया।

निकाह के दूसरे दिन से दावतों का प्रबन्ध किया गया। गांव के सब बच्चे-बूढ़े, जवान मर्द-औरत और हकीम साहब के सम्बन्धी कई दिन तक दावतें करते रहे। पुलाव, मांस, मिठाइयां और भांति भांति के पकवान हर रोज़ बनते थे और खाये जाते थे। हकीम साहब और उनकी बीवी बिहारीलाल जैसे दामाद को पाकर अति प्रसन्न थे। बन्नू वालों को भी निमंत्रण गया था, परन्तु यूसफ के मना करने पर वहां से कोई नहीं आया। हकीम साहब ने वहां के सरदार को भी आमंत्रित किया था और वह अपने पूरे परिवार सहित हकीम साहब के गांव में महमान बनकर आया। सरदार स्वयं था। उसका लड़का था। सरदार की दो पत्नियां थीं और लड़के की स्त्री थी। सरदार के दूसरी बीवी से दो बच्चे भी थे।

जब ये लोग आये तो सब ऊंटों पर सवार थे। औरतें परदेदार डोलियों में, जो ऊंटों पर रखी हुई थीं, बैठी थीं। मर्द ऊंटों पर काठियों पर बैठे हुए थे। साथ पचास के लगभग पैदल बन्दूकची भी थे। ज्योंही ये लोग हकीम साहब के गांव में पहुंचे, हकीम साहब अपने सब लोगों को साथ लेकर स्वागत के लिये गांव से बाहर चले आये और बहुत आदर-सत्कार से सरदार साहब के ऊंट की डोरी अपने हाथ में पकड़कर अपने मकान के सामने ले आये जहां बिहारीलाल, गांव के कुछ दूसरे लोगों के साथ, दरवाज़े पर स्वागत के लिये खड़ा था। सरदार ऊंट से नीचे उतरा तो हकीम साहब ने अपने दामाद का परिचय कराया। दूसरे

ऊंट पर से सरदार का लड़का उतरा। जब वह बिहारीलाल के सामने आया तो दोनों अवाक मुख एक दूसरे को देखते रह गये। एकाएक बिहारीलाल के मुख से निकल गया, "गुलामरसूल, तुम!"

"हां," कहते हुए गुलामरसूल ने आगे बढ़कर बिहारीलाल को गले लगा लिया। गले लगाते समय गुलामरसूल ने पूछा, "हम दोस्त हैं या दुश्मन?"

बिहारीलाल ने तुरन्त कह दिया, "दुश्मनी की कोई वजह नहीं।"

"तो ठीक है।"

इसी समय बिहारीलाल को गुलामरसूल के प्रश्न पर अचम्भा हुआ, और उसके मस्तिष्क में प्रेम के गुलामरसूल से सम्बन्ध के संदेह वाली घटना दौड़ गयी। वह मन में सोच रहा था कि गुलामरसूल ने यह प्रश्न क्यों पूछा है। क्या वास्तव में प्रेम गुलामरसूल की रखेल बन चुकी है और वह मन में डर रहा है कि उसे उनके सम्बन्ध का पता न चल गया हो। वह गुलामरसूल के मन की बात जानने के लिये व्याकुल हो रहा था। इस पर भी इस अवसर को उचित न जान बिहारीलाल चुप रहा।

हकीम साहब ने दोनों को परस्पर बातें करते देख आगे आ पूछा, "हजूर, इनको जानते हैं क्या?"

"हां," गुलामरसूल ने हकीम साहब की ओर देखते हुए कहा, "मैं पंजाब में इनसे कई बार मिला हूँ।"

बिहारीलाल चुप रहा। सब लोग मकान के भीतर बड़े कमरे में बैठाये गये और दावत का प्रबन्ध होने लगा। औरतों को मकान के पिछवाड़े से भीतर ले जाकर ज़नाने कमरों में बैठाया गया और जशन होने लगा।

बिहारीलाल गुलामरसूल को इस स्थान पर देखने की स्वप्न में भी आशा नहीं कर सकता था। वह तो जानता था कि वह एबटाबाद का रहने वाला है। जहां वह यह जानने के लिये उत्सुक था कि उसका वहां के सरदार से क्या सम्बन्ध है वहां वह लाहौर के समाचार जानने के लिये

भी व्याकुल हो रहा था। खाना खाते समय उसने कुछ घनिष्टता प्रकट करते हुए पूछा, "आपका घर तो एबटाबाद में था।"

"नहीं, वहां मेरे ननिहाल हैं। मां फौत हो गयी तो मैं वहां उनके पास रहने लगा था। इधर अब्बाजान ने दूसरी और फिर तीसरी शादी कर ली थी। मेरे नाना ने ही मुझे पढ़ने पेशावर भेजा था। मेरी पढ़ाई के बाद मेरी वहीं घर में शादी कर दी। मेरी अपनी बीवी से बनती नहीं थी, इसलिये मैं वहां से चला आया था। इस बीच में नाना भी फौत होगये और मेरी बीवी यहां अब्बाजान के घर चली आई थी। अब अन्दाज़न तीन महीने से मैं यहां आया हुआ हूँ।"

"लाहौर आपने कब छोड़ा था?"

"सीधा वहां से यहां ही आया था।"

"प्रेम का क्या हाल था?"

"बहुत मज़े में थी।"

"हड़ताल का क्या हुआ?"

"उसके खतम होने से पहले ही मैं वहां से चला आया था।"

"हड़ताल बीच में ही छोड़ आये थे?"

गुलामरसूल ने टालने के विचार से बात बदलकर प्रश्न पूछ लिया, "आप अपनी तीसरी बीवी को लेकर लाहौर जायेंगे?"

बिहारीलाल ने फिर कहा, "आपको लोगों को मंझधार में छोड़ नहीं चला आना चाहिये था।"

"प्रेमदेवी मुझसे अधिक योग्यता रखती हैं और उनके वहां रहते लोगों को हानि पहुंचने की सम्भावना नहीं है।"

इसी प्रकार की बातें होतीं रहीं और दोनों एक दूसरे के मन की बात न जान सके।

इस समय एक नौकरानी ज़नानख़ाने से आई और हकीम साहब के कान में कुछ कहने लगी। हकीम साहब लोगों के सम्मुख खाना खा रहे थे। नौकरानी की बात सुन उनका मुख गम्भीर होगया।

कुछ सोचकर उन्होंने गुलामरसूल के पास आ पश्तो में कुछ कहा जिसके सुनते ही गुलामरसूल उठ खड़ा हुआ और हकीम साहब के साथ भीतर ज़नानखाने की तरफ़ चल पड़ा। बिहारीलाल नहीं समझा कि क्या होगया है।

हकीम साहब गुलामरसूल को लेकर नरगिस के कमरे में पहुँचे। गुलामरसूल की बीवी वहां बेहोश पड़ी थी। सब महमान औरतें हकीम साहब के निजी कमरे में दावत खा रही थीं। छोटी बेगम बहुत थकावट अनुभव कर रही थी, इस कारण उसे नरगिस अपने कमरे में आराम करने के लिये ले गयी थी। वहाँ जाने के कुछ ही काल पश्चात् वह बेहोश होगयी। नरगिस ने नौकरानी को भेज हकीम साहब को बुलाया था। वह अपने साथ गुलामरसूल को भी लेते आये। नरगिस को यदि मालूम होता कि छोटे सरदार भी आ रहे हैं तो वह पर्दा कर लेती। इस कारण जब वह आया तो नरगिस उसे देख वहां से भाग खड़ी हुई। इस पर भी गुलामरसूल ने उसे देख लिया। देखते ही वह उस पर मोहित होगया। जहां तक शारीरिक सौन्दर्य का सम्बन्ध था गुलामरसूल की अपनी बीवी नरगिस के मुकाबिले में कुरूप कही जा सकती थी। वह एक बड़े सरदार की बेटी होने से विवाह में ले ली गयी थी।

गुलामरसूल जब इस्लामिया कॉलिज पेशावर से बी० ए० पास कर आया था तभी उसका विवाह हो गया था। विवाह तो हो गया परन्तु गुलामरसूल को अपनी बीवी की सूरत पसन्द नहीं आयी और वह घर से निकल गया। बाप और नाना दोनों रुपये भेजते थे और वह कभी पेशावर, कभी काबुल और कभी रूसी तुर्किस्तान में घूमता रहता था। एक साल से उसने लाहौर में डेरा डाला हुआ था। वहां गोदामों को आग लगवाने के सम्बन्ध में जब उसके वारंट निकले तो भागकर अपने घर आगया। आठ साल के पश्चात् वह घर पहुँचा था। उसकी बीवी जो आठ साल में अच्छी खासी युवा स्त्री हो गयी थी उसे वापिस आया देख अति प्रसन्न हुई और प्रत्येक प्रकार से उसे प्रसन्न करने लगी थी। उस

दिन जब गुलामरसूल की मातायें हकीम साहब के यहां पर आईं तो उस ने भी यहा आने का हठ किया ।

हकीम साहब ने गुलामरसूल को त्रसित नेत्रों से नरगिस की ओर देखते हुए देख लिया था, परन्तु इस बात को वह भूल गये । कारण यह कि छोटी बेगम बेहोश खाट पर पड़ी थी । हकीम साहब ने नाड़ी देखी और फिर बाहर बैठक में आ एक डिब्बे में से कुछ दवाई ले जाकर बेहोश बेगम के मुंह को खोल जबान पर रख दी । कुछ ही सैकण्डों के बाद उसने आंखे खोल दीं । अब फिर हकीम साहब ने नाड़ी की परीक्षा की । कुछ सोचकर वह छोटे सरदार से कहने लगे, "यह हामला है । इन्हें ऊंटनी पर सवार कर नहीं लाना चाहिये था ।"

गुलामरसूल ने केवल यह पूछा, "अब ?"

"अब इसे आराम करने दें । कल तक इनकी थकावट दूर हो जायेगी । तब इन्हें पालकी में ले जाइयेगा ।"

अब हकीम साहब ने एक प्याला दूध का मंगवाया और उसमें एक दवाई डालकर बेगम की नौकरानी से बोले, "घूंट घूंट कर इसे पिला देना ।" यह कह वह बाहर बैठक में महमानों के पास चले गये ।

जब वह चले गये तो गुलामरसूल ने अपनी औरत से पूछा, "यह लड़की कौन थी, जो मेरे आते ही भाग गयी है ?"

उत्तर नौकरानी ने दिया, "हजूर, हकीम साहब की लड़की है जिनके विवाह पर हम लोग आये हैं ।"

"ओह ! अच्छा उसे बुला लाओ तो ।"

नौकरानी कुछ झिझकी, परन्तु गुलामरसूल के डांटकर कहने पर बुलाने चली गई । जब वह चली गयी तो अपनी बीवी से कहने लगा, "यह गजब की खूबसूरत है । तुम क्या समझती हो ?"

बेगम तो दूध और दवाई से अपने में कुछ ताकत अनुभव करने लगी थी । उसने भी [illegible] दृष्टि से अपने पति की ओर देखने लगी । गुलामरसूल ने उत्तर न पा फिर पूछा, "उनसे यह ज्यादा खूबसूरत है या नहीं ?"

"जी है," कांपते हुए बेगम ने उत्तर दिया।

"तो उसे मैं अपनी बीवी बनाऊँगा।"

"यह कैसे हो सकता है? वह दूसरे की औरत है।"

इस समय नरगिस बुर्का पहिन वहां आ पहुँची। वह बेगम की खाट पर बैठ उसकी तबियत का हाल पूछने लगी। बेगम अभी उत्तर देने ही वाली थी कि गुलामरसूल जो समीप ही खड़ा था कहने लगा, "यह चांद को पर्दे में छुपाने की कोशिश क्यों की जा रही है?"

नरगिस समझ तो गयी थी कि उसे सम्बोधन किया जा रहा है, परन्तु कुछ उत्तर नहीं दिया और बेगम की ओर देखती रही। इस समय नौकरानी कमरे से बाहर निकल गयी और गुलामरसूल ने भीतर से किवाड़ को बन्द कर सांकल चढ़ा दी। नरगिस यह सब देख रही थी, परन्तु चुपचाप बैठी थी। गुलामरसूल नरगिस के समीप बैठने ही लगा था कि वह उठ खड़ी हुई। गुलामरसूल दरवाज़े की ओर पीठ कर नरगिस का मार्ग रोक कर खड़ा हो गया और कहने लगा, "मेरी जान! क्यों हलाक कर रही हो। एक नज़र इधर भी देख लो। आखिर उस हिन्दू लौंडे में क्या खूबी देखी है हज़ूर ने?"

"हट जाओ," नरगिस ने डांटकर कहा।

गुलामरसूल ने उसे अपनी प्रबल भुजाओं में दबोच लिया और नरगिस ने अपने बुर्के में से हाथ निकाला। उसमें चमचमाती छुरी थी। पूर्व इसके कि गुलामरसूल उसका हाथ पकड़ सकता उसने छुरी गुलामरसूल के पेट में घुसेड़ दी। हा... कर गुलामरसूल भूमि पर ढेर हो गया। नरगिस ने भागकर दरवाज़ा खोला। छोटी बेगम की नौकरानी बाहर खड़ी थी। नरगिस ने दरवाज़े में खड़े २ कहा, "हकीम साहब को जल्दी बुला लाओ।"

नौकरानी नरगिस की घबराहट का कारण यह समझी कि बेगम फिर बेहोश होगयी होगी। वह भागती हुई बैठक में गयी और हकीम साहब को बुला लाई। हकीम साहब आये तो नरगिस अभी भी दरवाजे में

खड़ी थी। उनको भीतर कर उसने दरवाज़ा बन्द कर लिया।

नौकरानी जब नरगिस को बुलाने गयी थी तो उसने पूछा था कि किसने बुलाया है। जब नौकरानी ने बताया कि छोटे सरदार ने तो उसे कुछ सन्देह हो गया। वह अपने पिता के कमरे में गयी और वहां से एक तेज़ छुरी ले अपनी मां का बुर्क़ा पहिन चली आई थी। गुलामरसूल की हरकत से जब उसे विश्वास होगया कि बचने का कोई और उपाय नहीं तो उसने छुरी का प्रयोग कर ही दिया।

हकीम साहब को भीतर कर नरगिस ने गुलामरसूल को दिखाते हुए कहा, "यह मैंने किया है।"

"क्यों?"

"अपनी असमत बचाने के लिये।"

हकीम साहब को गुलामरसूल का भागती नरगिस को देखना याद आगया। उन्होंने होंठों पर उंगली रख बेगम और नरगिस दोनों को चुप रहने का संकेत कर कहा, "अच्छा हुआ जो तुमने छुरी पेट में ही रहने दी है। अभी जान बचाने की कोशिश की जा सकती है। हकीम साहब दरवाज़े के बाहर आ अपनी दवाइयों का बक्सा भीतर उठा लाये और नरगिस को कहा, "अपनी नौकरानी को बुला लाओ।"

स्वयं उन्होंने बिना छुरी पेट से निकाले एक दवाई घाव पर छिड़कनी आरम्भ कर दी। देखते देखते घाव से बहता हुआ रक्त जमना आरम्भ हो गया। अब हकीम साहब एक हाथ से छुरी खेंचते जाते थे और दूसरे हाथ से वही दवाई घाव पर छिड़कते जाते थे। धीरे धीरे छुरी बाहर आगयी और रक्त बरफ़ की भांति घाव में ही जम गया। इसका परिणाम यह हुआ कि रक्त बहना बंद हो गया।

अब हकीम साहब ने गुलामरसूल की नाड़ी देखी। इस समय कुछ आशा थी और उन्होंने गुलामरसूल के मुख में एक औषधि डाली। इस से नाड़ी में कुछ गति प्रतीत होने लगी। इस परिणाम से हकीम साहब और उत्साहित हुए। अब उन्होंने अपनी नौकरानी को रुई-पट्टी लाने

को कहा । स्वयं संदूकची में से एक तेल निकालकर घाव में भरने लगे । अब ऊपर रूई रख पट्टी बांध दी । एक और खाट मंगवाई गयी और बिस्तर बिछा उसे उस पर डाल दिया गया।

जब इतना कुछ कर चुके तो उन्होंने नरगिस की ओर अत्यंत प्रेम भरी दृष्टि से देख कहा ," मैं समझता हूं तुम और बिहारीलाल अभी यहां से भाग जाओ, वरना तुम दोनों के लिये अच्छा नहीं होगा । सरदार साहब को अगर पता चल गया तो वह बिहारीलाल को कत्ल करवा तुम्हें अपने हरम में दाखिल किये बिना नहीं मानेंगे ।"

"अब्बाजान !" नरगिस, जो अब अपने काम की भयानकता को समझी थी, कांप उठी परन्तु हकीम साहब ने उसकी घबराहट की परवाह न कर कहा , "बेटी नरगिस, तैयार हो जाओ । मैं बिहारीलाल को अभी भेजता हूँ । साथ ही तुम लोगों को बन्नू तक पहुँचाने के लिये सिपाही तैयार कर देता हूँ ।"

"परन्तु अब्बाजान, आप ?"

"मेरी फिकर न करो । अगर छोटा सरदार जीता रहा तो मेरी जरूरत रहेगी और मेरा कुछ भी बिगाड़ नहीं होगा ।"

नरगिस अनिश्चित मन वहां खड़ा रह गयी । हकीम साहब के बाहर जाने के तीन चार मिनट पीछे बिहारीलाल भीतर आया और नरगिस की ओर देखने लगा । वह सब कुछ समझ गयी और तुरंत बिहारीलाल के साथ बाहर चली आई । दोनों मकान के पिछवाड़े अस्तबल में पहुंचे । वहां हकीम साहब स्वयं दस और पठानों के साथ खड़े थे । बारह घोड़े तैयार किये जा रहे थे । देखते देखते घोड़े तैयार हो गये और सब लोग हाथों में भरी हुई बन्दूकें लिये हुए घोड़ों पर सवार हो रवाना होगये । हकीम साहब उन्हें तब तक देखते रहे जब तक वे घाटी पार कर पहाड़ियों के पीछे नहीं छुप गये ।

[६]

हकीम साहब के घर के भीतर जब यह भयानक घटना हो रही थी,

बाहर बैठक में दावत खूब ज़ोर-शोर से खाई जा रही थी। खाना-पीना इतना स्वादिष्ट था कि खाने वाले संसार की अन्य सब बातों को भूल गये थे। बड़े सरदार ने गुलामरसूल को भीतर जाते देखा था और जब हकीम साहब छोटी बेगम को होश में ला वापिस बैठक में आये थे तो उन्हें पूछा था। हकीम साहब ने कह दिया था कि छोटी बेगम की तबियत कुछ ख़राब हो गयी थी, मगर ठीक होगयी है। इसके उपरान्त सरदार फिर खाने में लीन होगया। वह स्वादिष्ट वस्तुओं का बहुत शौकीन था। वह एक एक चीज़ खाता था और अपने समीप वालों के सम्मुख उसकी प्रशंसा करने लगता था। इस समय हकीम साहब दुबारा भीतर चले गये अब के हकीम साहब गये तो बहुत काल तक नहीं आये। सरदार ने खूब पेट भर खाया था और इसके पश्चात् गाने और नाच का प्रबन्ध था। नाच और गाना अभी चल रहा था कि हकीम साहब आये। सरदार के कान में उन्होंने कहा, "हज़ूर, लड़का जख़मी हो गया है।"

"कैसे ?" सरदार ने चौंककर पूछा।

"आप भीतर चलिये।"

सरदार घबराकर हकीम साहब के पीछे पीछे हो लिया। वह उसे वहां ले गये जहां गुलामरसूल अभी तक बेहोश खाट पर पड़ा था और छोटी बेगम घबराहट और डर के मारे एक कोने में खड़ी थी। सरदार ने गुलामरसूल को देखा। उसके पेट पर पट्टी बंधी थी। सरदार ने क्रोध में उबलते हुए पूछा, "यह कैसे हुआ है ?" उन्होंने यह समझा कि बेगम ने अपने पति को ज़ख़मी किया है।

हकीम साहब ने बेगम की ओर संकेत कर कहा, "मैं यहां नहीं था। आप जानती हैं, बतावेंगी।"

सरदार ने घूरते हुए बेगम से पूछा, "यह क्यों किया है तुमने ?"

"मैंने नहीं किया," डरते हुए बेगम ने उत्तर दिया, "मुझे थकावट की वजह से बेहोशी होगयी थी। नरगिस मेरी ख़िदमत कर रही थी जब साहब आये। मुझे जब होश आई तो नरगिस चली गयी थी। हकीम

साहब दवाई दे रहे थे और साहब चुपचाप खड़े थे। हकीम साहब दवाई दे चले गये। साहब ने पूछा, 'वह लड़की जो मेरी ख़िदमत में थी कौन थी?' नौकरानी ने बताया हकीम साहब की लड़की है। इस पर ख़िदमतगारिन को बोले, 'उसे बुला लाओ।' मैंने कहा था कि वह दूसरे की औरत है। इस पर भी वे इसरार करते रहे। ख़िदमतगारिन नरगिस को बुला लाई। वह अब बुर्क़ा पहने थी। साहब ने उसे बुलाने की कोशिश की मगर वह नहीं बोली। तब उसे पकड़कर बग़लगीर करने लगे। उसी वक़्त नरगिस ने बुर्के से हाथ निकाला और इनके पेट में घोंप दिया।"

सरदार के क्रोध का ठिकाना नहीं था। वह हकीम साहब से क्रोध में बोला, "कहां है नरगिस?"

बेग़म ने फिर जवाब दिया, "हकीम साहब ने उसे भगा दिया है।"

सरदार ने गरजते हुए कहा, "ओ, बेवफ़ा! हकीम के बच्चे। क्या हमारे सलूक का बदला तुम और तुम्हारे लोगों ने यह दिया है। ओ, असग़र," सरदार ने ज़ोर से पुकारा, "ओ असग़र, इधर लाओ हमारी बन्दूक।"

असग़र बाहर बैठक में नाच देख रहा था। आवाज़ सुन भागा हुआ आया। पूछने लगा, "हजूर।"

"हमारी बन्दूक लाओ! इस पाज़ी हकीम की लौंडी ने हमारे साहबज़ादे को मार डाला है।"

असग़र बन्दूक लाने चला गया, परन्तु हकीम साहब, जो अभी तक चुपचाप खड़े थे, बोले, "हज़ूर, लड़का अभी मरा नहीं है। मैंने दवाई दे उसे बेहोश कर रखा है।"

"नहीं मरा?" अचम्भे में सरदार ने पूछा।

"जी नहीं। अभी दम है और शायद ठीक इलाज होने से बच सकता है।"

"तुमने बेहोश क्यों कर रखा है?"

"ताकि दर्द महसूस न करे।"

इस समय असग़र बन्दूक ले आया था। वह भरी रखी थी। सरदार ने बन्दूक हाथ में ले ली और हकीम साहब से पूछा, "अब ?"

"मैं मरने को तैयार हूँ।"

"साहबज़ादे का इलाज कैसे होगा ?"

"जब तक जीता हूँ तब तक की ही बात तो बता सकता हूँ। बाद की बात मैं क्या कह सकता हूँ ?"

"अच्छी बात है। तुम हमारे कैदी हो। तुम्हारे घर के लोग भी कैदी रहेंगे। अगर साहबज़ादे को कुछ हुआ तो तुम लोगों की खैर नहीं।"

इतना कह सरदार कमरे से बाहर चला आया और असग़र को आज्ञा दी, "देखो, हकीम साहब के मकान का घेरा डाल लो और यहां से न कोई आदमी बाहर जाये, न बाहर से भीतर आये।" जशन बन्द कर दिया गया।

परन्तु हकीम साहब ने इसका पहले ही प्रबन्ध कर रखा था। हकीम साहब के दो सौ के लगभग बन्दूकची वहां पहले ही तैयार खड़े थे। असग़र जब बाहर हुक्म सुनाने गया तो अपने पचास आदमियों के मुकाबिले में दो सौ को देख चुप रह गया।

सरदार ने, जब तक गुलामरसूल राज़ी न हो जाये, वहीं रहने का निश्चय किया। गुलामरसूल की चिकित्सा होने लगी। तीन दिन के बाद गुलामरसूल ने आंखें खोलीं और अपने बाप, हकीम साहब, और असग़र को सामने देख प्रश्न भरी दृष्टि से देखने लगा। हकीम साहब ने कहा, "ठीक हो जाओगे। अभी आप सब लोग मेरे ही महमान हैं।"

गुलामरसूल कुछ और ही बात पूछना चाहता था, परन्तु उसमें बोलने की शक्ति नहीं थी। चुप कर रहा। एक सप्ताह और इस प्रकार निकल गया। अब घाव लगभग भर गया था। इस पर भी हकीम साहब उठने और चलने फिरने की स्वीकृति नहीं दे रहे थे। गुलामरसूल छटपटा रहा था। इसलिये कि वह शीघ्र ही ठीक हो पता करे कि नरगिस कहां है। नरगिस का सौन्दर्य उसके मन पर अंकित हो चुका था और

वह उसे अपनी बीवी बनाने के लिये बेताब हो रहा था।

एक दिन सरदार अकेला गुलामरसूल के पास बैठा था। गुलामरसूल ने सुअवसर जान पूछ लिया, "वह कहां गयी है?"

"कौन?"

"हकीम साहब की लड़की।"

"वह अपने ख़ाविन्द के साथ लाहौर जा पहुँची है।"

"उसका खाविन्द काफ़िर है। वह मुसलमान नहीं है।"

"ठीक कहते हो?"

"अब्बाजान मैं उसे जानता हूँ। उसकी दो बीवियां पहले हैं।"

"हकीम साहब तो कहते थे वह मुसलमान है और उसका नाम रशीदअहमद बताया था।"

"हकीम साहब ने दीन के साथ दग़ा किया है। आपको उसे हुक्म देना चाहिये कि नरगिस को वापिस बुलाये।"

"वह इस तरह से नहीं आयेगी।"

"आप मुझे हुक्म दें तो मैं उसे पकड़ लाऊँ।"

"पहले ठीक हो जाओ। कहीं ऐसा न हो कि ज़ख्म फट जाये और जान के लाले पड़ जायें।"

सरदार समझता था कि हकीम साहब और उनकी औरत उसके कैदी हैं परन्तु हकीम साहब अपने गांव में ऐसा प्रबन्ध किये हुए थे कि सरदार का कोई भी आदमी बाहर नहीं जा सकता था। जब तक तो गुलामरसूल खाट पर लेटा रहा तब तक तो कोई झगड़ा नहीं हुआ, परन्तु ज्योंही सरदार और गुलामरसूल के विदा होने का समय आया तो नख़लिस्तान के पूरे गांव में खिंचाव बढ़ गया। गांव के सब युवा लोग बन्दूकें ले हकीम साहब के मकान के बाहर पंक्ति बांध खड़े होगये। जब सरदार के आदमी रवाना होने को तैयार होगये तो सरदार ने कहा, "हकीम साहब, आप और आपके घर वाले सब हमारे कैदी हैं।"

"क्यों?"

"इसलिये कि तुमने अपनी लड़की की शादी एक काफिर के साथ कर दी है।"

"यह झूठ है।"

"यह सत्य है और अगर तुम अपने आपको बेगुनाह साबित करना चाहते हो तो लड़की और दामाद को यहां बुलाकर काज़ी के सामने पेश करो।"

"मुझे उनको लेने के लिये खुद जाना होगा।"

"तुम जा सकते हो, मगर तुम्हारी बीवी हमारी कैद में रहेगी।"

"मुझे कुछ एतराज़ नहीं है, मगर वह अपने आपको आपका कैदी नहीं मानती। वह सरदार रमजानअली की बेटी है और अपने को आपके मातहत नहीं समझती।"

"तो हम उसे जबरदस्ती साथ ले जायेंगे।"

"तो ले जाइये।"

"हकीम, तुम बहुत गुस्ताख हो गये हो।"

इतना कह सरदार ने हकीम साहब को गोली मार देने के लिये बन्दूक तानी ही थी कि किसी ने बन्दूक की नाली उठाकर छत की ओर कर दी। यह हकीम साहब के गांव का दारोग़ा था। सरदार ने घूरकर उसकी ओर देखा और अपने आस-पास अपने साथियों की ओर देखा। उसे यह देख अचम्भा हुआ कि उसका हर एक आदमी हकीम साहब के दो-दो आदमियों में कैद है। उसने शरमिन्दा हो पूछा, "हकीम के बच्चे! क्या हम तुम्हारे कैदी हैं?"

"नहीं! आप मेरे महमान हैं। मैंने आपकी खिदमत करने का कौल दिया है मगर मेरी औरत और लड़की ने नहीं। ये सब लोग मेरी औरत, सरदार रमज़ानअली की लड़की, का हुक्म बजा रहे हैं।"

सरदार चुप कर गया। हकीम साहब ने अपनी बात जारी रखी और कहा, "हां, अगर आप अमन-चैन से अपने यहां लौट जाना चाहें तो मैं आपके जाने देने की सिफारिश कर सकता हूं।"

सरदार ने बन्दूक को फिर हकीम साहब पर सीधी करना चाहा, मगर दो मजबूत आदमियों ने उसकी बाहों को पकड़ लिया। उसी वक्त नरगिस की मां बुर्का पहने हुए बैठकखाने में आगयी। उसके हाथ में पिस्तौल था। यह वही था जो बिहारीलाल के समीप गड़हे में पड़ा हकीम साहब को मिला था जब बिहारीलाल कैम्प से घायल हो वहां पड़ा था।

नरगिस की मां ने डांटकर कहा, "ख़बरदार, जो झगड़ा किया। तुम मेरे कैदी हो।"

"क्यों ?"

"पहले, तुम्हारे लड़के ने मेरी लड़की की असमतबर्दा करने की कोशिश की और फिर तुमने मेरे खाविन्द को गोली से मारने की कोशिश की है।"

"बेगम !" हकीम साहब ने कहा, "ये मेरे आक़ा हैं। मैंने इनका नमक खाया है। मैं सिफ़ारिश करता हूँ कि इन्हें छोड़ दिया जाय और इन्हें घर जाने की इजाज़त दे दी जाय।"

"और आपने जो इनके लड़के की जान बचाई है उसका मुआविज़ा।"

"खुदा देगा।"

"हज़रत," नरगिस की मां ने पिस्तौल नीचे कर कहा, "मैं आपकी बात से इन्कार नहीं कर सकती। ये लोग जा सकते हैं।"

सरदार चला गया। गुलामरसूल और बेगमें भी। पश्चात् हकीम साहब और सरदार का परस्पर का सम्बन्ध टूट गया। सरदार यह तो समझता था कि हकीम साहब बहुत ही उपयोगी व्यक्ति हैं। जब भी अंग्रेजी सरकार से झगड़ा होता था हकीम साहब को बात सुलझाने के लिये भेजा जाया करता था। इसके अलावा वह बहुत ही माहिर हकीम थे। गुलामरसूल के घाव को ठीक करने में तो उन्होंने कमाल हो कर दिखाया था, परन्तु गुलामरसूल अपने वालिद के कान भरता रहता था। इससे सरदार नाराज़ होने पर भी हकीम साहब को न तो कोई हानि पहुंचाना चाहता था, न पहुँचाता था।

सातवां भाग

नागरिक अधिकार रक्षक समिति

जगन्नाथ वकील ने डाक्टर खन्ना की चल और अचल सम्पत्ति की सूची बनाई और उसके नीचे अपने, डाक्टर साहब के और मोहनलाल के हस्ताक्षर करवा वसीयत लिखने के लिये डाक्टर साहब के पलंग के समीप कुर्सी पर बैठ गया। उस समय डाक्टर साहब के मित्र भी वहां आ पहुंचे थे। डाक्टर खन्ना लिखवाने लगे, "मैं अपनी पूर्ण सम्पत्ति का स्वयं मालिक हूँ। यह सब मेरी अपनी पैदा की हुई है। मुझे अधिकार है कि मैं इसे जिस तरह चाहूँ खर्च करूं। मैं अपने पूरे होश हवाश में यह लिखता हूँ कि मेरी पूर्ण सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी, पं० बिहारीलाल की स्त्री, विमलादेवी हो। मैं अपनी लड़की प्रेमदेवी, पं० बिहारीलाल की दूसरी स्त्री, के लिये इसी सम्पत्ति में से डेढ़ सौ रुपया महीना उसके जीवन-काल तक के लिये देना चाहता हूं। विमलादेवी चाहे तो यह रुपया मासिक उसे दे दिया करे या इतनी जायदाद पृथक कर दे जिससे उतनी आय उसे मिलती जाय। प्रेमदेवी के मरणोपरान्त यह डेढ़ सौ रुपया भी अथवा वह सम्पत्ति जिससे यह रुपया प्रेमदेवी को मिलना है पुनः विमलादेवी की सम्पत्ति होगी।

"मेरे नौकरों को दो दो सौ रुपया मेरे मरने पर मेरी सेवा सुश्रूषा के कारण वेतन से अतिरिक्त दे दिया जाय।"

इतना लिखाकर डाक्टर साहब ने हस्ताक्षर करने के लिये जगन्नाथ से कागज़ मांगा।

डाक्टर निरुला ने डाक्टर साहब का हाथ पकड़ लिया और कहा, "यह आप क्या कर रहे हैं?"

डाक्टर साहब ने अचम्भे से अपने मित्र डाक्टर की ओर देखते हुए कहा, "जो उचित समझता हूँ वही कर रहा हूँ।"

"आप प्रेम से नाराज़ क्यों हो रहे हैं? मैं समझता हूँ उसके जीते

जी आपको उसे ही वारिस रखना चाहिये। पीछे के लिये जो चाहें करें। इससमय वह मुसीबत में है और आपका यह व्यवहार उसे और भी दुखदाई होगा।"

"मैं जानता हूँ। इस आग लगाने के मामले में वह कहां तक दोषी है मैं नहीं जानता और न ही मेरे पास इस बात को जानने के लिये अवसर है। किन्तु यह बात स्पष्ट है कि उसने दो चार काम ऐसे किये हैं जिससे इतनी भारी सम्पत्ति का उसे मालिक बनाना मुझे उचित नहीं जान पड़ता। उसको मैंने एम०. बी० बी० एस० पास कराया है। इसके अतिरिक्त अब डेढ़ सौ रुपया महीना उसे जीवन भर के लिये दे रहा हूं। मैं समझता हूं कि यदि वह अपने दिमाग़ को सही रखेगी तो आनन्द में जीवन व्यतीत कर सकेगी।"

इस पर मिस्टर बी०एन० चोपड़ा ने कहा, "मान लो कि प्रेम से आप को बहुत निराशा हुई है और आप उसे अधिक धन देना उचित नहीं समझते, परन्तु विमला कौन है? इसे आप इतना कुछ क्यों दे रहे हैं? आप क्या किसी प्रकार उसके एहसान में है?"

"एहसान नहीं। प्रेम के व्यवहार से सबसे अधिक हानि उसे पहुँची है और विमला के पति बिहारीलाल ने उसे छोड़कर प्रेम से उसके रुपये के लिये विवाह किया है। मैं यह रुपया प्रेम के स्थान विमला को देकर प्रेम की आंखों के सम्मुख स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि बिहारी लाल उससे नहीं प्रत्युत उसके धन से प्रेम करता था।"

"यह भी माना। परन्तु क्या विमला के स्थान पर यह धन किसी सार्वजनिक संस्था को किसी लोक-हित के कार्य के लिये नहीं दिया जा सकता?"

"किसको दे दूं?" डाक्टर ने पूछा।

"भाई, यह आर्यसमाज है, कांग्रेस-कमेटी है और अनेकों ही अन्य संस्थायें हैं। जिसमें आपकी रुचि हो देसकते हैं।"

"मुझे इन संस्थाओं के कार्य पर विश्वास नहीं है। कांग्रेस एक

राजनीतिक संस्था होते हुए भी अपना निर्माण-कार्य ऐसा बनाये हुए है जो लोगों को राजनीति से दूर ले जाने वाला है। आर्यसमाज एक वैदिक संस्कृति और धर्म का प्रचार करते हुए भी अवैदिक शिक्षा और संस्कृति के प्रचार पर अपनी पूर्ण शक्ति लगा रही है……।"

बात बीच में ही काटकर मिस्टर चोपड़ा ने कहा, "डाक्टर साहब, आप कम से कम आर्यसमाज के लिये ऐसी बात नहीं कह सकते। इस समय उत्तरी भारत में तो इसके समान ईमानदार और उपयोगी काम करने वाली और कोई संस्था आपको नहीं मिलेगी।"

"ईमानदारी पर मैं संदेह नहीं कर रहा। हां, संस्था के संचालकों की बुद्धिमत्ता पर संदेह कर रहा हूँ। यह डी० ए० वी० कॉलेज, स्कूल और अन्य शिक्षा-सम्बन्धी काम ही तो आर्यसमाज के कार्य हैं। क्या ये सब संस्थायें देश की बेड़ियों को सुदृढ़ करने वाले क्लर्क, वकील, तहसीलदार, थानेदार अथवा अन्य सरकारी कर्मचारी नहीं बना रहीं। क्या यही वैदिक संस्कृति, धर्म और आदर्श है?"

इस समय जगन्नाथ वकील भी कहने लगा, "डाक्टर साहब, एक योजना मैं भी रखता हूं। कहें तो बताऊं।"

"वकील साहब, आप अपनी योजना विमलादेवी को ही बताइयेगा। मैंने निश्चय कर लिया है कि वही मेरी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी बनेगी।"

इसके आगे कहने को कुछ नहीं रहा। इस पर भी मोहनलाल ने कहा, "परन्तु एक प्रार्थना मेरी भी है। वह यह कि यदि विमलादेवी ने आपका उत्तराधिकारी बनना स्वीकार न किया तब। शायद इसमें वह अपना अपमान समझे।"

"इसमें अपमान की कौन बात है मिस्टर मोहनलाल? वह मेरी लड़की के समान है।"

"उसे बुलाकर पूछ लीजिये।"

"बुलाइये। परन्तु मैं नहीं कह सकता कि तब तक जी सकूंगा अथवा

नहीं। आप सब वसीयत पर साक्षी के रूप में हस्ताक्षर कर दें। मैं चाहता हूँ कि, बाबू मोहनलाल, आप मेरी ओर से विमला को कह दें कि मैंने उसे अपनी लड़की मानकर यह सब भार सौंपा है।"

डाक्टर साहब इस सब वार्तालाप से बहुत दुर्बल हो गये थे। उन्होंने फिर दवाई की बोतल उठाई और मुख में उंड़ेल ली। डाक्टर निरुला ने दवाई के पीने की मात्रा देख बहुत अचम्भा प्रकट करते हुए कहा "मिस्टर खन्ना, क्या कर रहे हैं आप ?"

डाक्टर खन्ना ने सब उपस्थित लोगों को वसीयत पर साक्षी करने का आग्रह किया। विवश सबने हस्ताक्षर कर दिये। डाक्टर खन्ना ने अपने हस्ताक्षरों के नीचे लिख दिया, "मैं वकील जगन्नाथ को अपनी वसीयत को कार्य में लाने वाला नियत करता हूँ।"

मोहनलाल मोटर ले विमला को बुलाने चला गया। डाक्टर निरुला यह कहकर कि वह अभी दस मिनट में लौट कर आते हैं किसी रोगी को देखने चले गये। मिस्टर चोपड़ा जाने के विषय में सोच ही रहे थे कि डाक्टर खन्ना ने, जो अब फिर पलंग पर लेट गये थे, एक अंगड़ाई ली और प्राण छोड़ दिये।

[२]

बन्नू के समीप ढकी पर सेठ धन्नाराम की सर्वे-पार्टी पर डाका पड़ने का समाचार विमला को विदित हो गया था। उसे यह भी पता चला था कि कैम्प के डेढ़ सौ आदमियों में से केवल दो सिपाही बचकर आये हैं, और शेष लोगों के विषय में सरकार का यह विचार है कि वे मारे गये हैं और उनकी लाशें जलाकर भस्म कर दी गयी हैं।

विमला अत्यन्त शोक में थी। इस समय वकील जगन्नाथ विमला के घर गया और उसे वसीयत सुनाई। विमला सुन पहले तो अति विस्मित हुई। पश्चात् उदासीनता प्रकट कर बोली, "मुझे यह सम्पत्ति नहीं चाहिये।"

"तो फिर क्या किया जाये ? यदि विमलादेवी जी, आप इसका

चार्ज नहीं लेंगी तो मुझे विवश हो यह मामला अदालत में ले जाना पड़ेगा और मैं समझता हूँ कि पैंतालीस लाख से ऊपर की यह सम्पत्ति सरकार अपने आधीन कर लेगी।"

"तो मैं क्या करूं?"

"यह कानून से और हर प्रकार से आपकी है। आप जो चाहें इससे कर सकती हैं।"

"सरकार अपने आधीन कर इसे क्या करेगी?" विमला ने पूछा।

"कानून तो यह है कि वह इसे सरकारी कोष में सम्मिलित कर ले। परन्तु सरकार क्या करेगी, यह मैं अभी नहीं बता सकता।"

"मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता। आखिर मैं इसे लूं ही क्यों? मैं इसकी हक़दार किस प्रकार हूँ? बाबू जगन्नाथ, मैं क्या करूं मैं नहीं जानती।"

"तो मैं एक राय दूं," जगन्नाथ ने कहा।

"हां बताइये।"

"मेरी राय में यह सम्पत्ति आप स्वीकार कर लें। इसे आप लोक-सेवा के कार्य में लगावें। लोक-सेवा की मेरी एक योजना है। यदि आप इस उत्तराधिकार को स्वीकार कर लें तो आपको बताऊं। और हां, अभी तो प्रेम का मुकद्मा लड़ना है। यदि वह छूट जाये तो क्या ही अच्छा हो।"

"उसके छूट जाने की क्या कुछ भी आशा है?"

"हां, कल सिटी मैजिस्ट्रेट की अदालत में सेठ धन्नाराम का बयान हुआ है। उसमें उन्होंने कहा है कि प्रेमदेवी रात के साढ़े बारह बजे तक उनके घर पर थी। जब उन्होंने अपने चीफ़-इन्जीनियर को कारखाने खोलने की आज्ञा दी थी उस समय प्रेम वहां उपस्थित थी। मिस्टर मिचल, चीफ़ इन्जीनियर का बयान हुआ है कि सेठ साहब का हुक्म टैलीफ़ून से साढ़े बारह बजे उन्हें मिला था। आग लगाई गयी थी बारह बजे। इससे एक बात तो स्पष्ट होगयी है कि प्रेमदेवी ने आग

नहीं लगवाई। इसके अतिरिक्त सेठ धन्नाराम एकाएक प्रेमदेवी को छुड़ाने में सिर-तोड़ यत्न कर रहे हैं। यदि डाक्टर साहब की सम्पत्ति आप अपने हाथ में कर लें तो उसका मुकदमा तो डाक्टर साहब के रुपये से ही लड़ना चाहिये। मैं चाहता हूं कि आप इसे स्वीकार कर लें और मुकदमे के पश्चात् फिर विचार कर सकती हैं। नहीं तो प्रेमदेवी को वापिस ही कर दीजियेगा।"

विमला यद्यपि समझी नहीं थी तो भी मुकद्मा लड़ने के लिये उसने वारिस बनना स्वीकार कर लिया। नियमानुसार चार्ज लेने के पश्चात् विमलादेवी ने बाबू जगन्नाथ को ही पूर्ण सम्पत्ति का मैनेजर निश्चित कर दिया।

[३]

सिटी मैजिस्ट्रेट की अदालत में सेठ धन्नाराम के कारखानों में आग के मुकद्मे की प्रारम्भिक जांच हो रही थी। पुलिस की ओर से मुकद्मे को जो रूप दिया गया था वह इस प्रकार था : प्रेम और गुलामरसूल कम्यूनिस्ट पार्टी के कर्मचारी हैं। इन्होंने सेठ धन्नाराम के कारखानों के मज़दूरों की यूनियन बनाई। कुछ लोग यूनियन का काम दिन-रात करते थे और कारखानों का काम मन लगाये बिना करने पर भी वेतन चाहते थे। रामलाल जनरल मैनेजर काश्मीर फार्मास्युटिकल कम्पनी ने पचास ऐसे आदमियों को निकाल दिया। परिणाम में कारखानों में हड़ताल हुई। हड़ताल करने वाले जब भूखों मरने लगे और इस पर भी हड़ताल बिना शर्त के खोलने पर राज़ी नहीं हुए तो मज़दूरों में यह चर्चा फैला दी गयी कि सेठ साहब के गोदाम माल से ठसाठस भरे हैं। जब तक वे ख़ाली नहीं होंगे सेठ साहब मज़दूरों की बातें नहीं मानेंगे। इन गोदामों को खाली करने के लिये गुलामरसूल, प्रेमदेवी और उनके साथ एक सौ और आदमियों ने यह षड़यन्त्र किया कि कारखानों को आग लगा दी जाय। इस प्रयोजन से गोदाम के फाटक पर पहरा देने वाले चौकीदारों को धोका दे गुलामरसूल अपने साथियों सहित भीतर आगया और मट्टी

का तेल छिड़क आग लगा दी। गुलामरसूल के साथियों में प्रेम भी थी। जहां ये लोग आग लगा रहे थे वहां आग बुझाने वाले इञ्जिनों को काम करने से रोकते भी थे। पुलिस ने इन लोगों को आग बुझाने की मशीनों के समीप से हटाना चाहा तो झगड़ा होगया। प्रेमदेवी अहाते की दीवार पर खड़ी हो मज़दूरों को भड़काने लगी। मज़दूर पुलिस पर टूट पड़े। लोगों ने पुलिस के दस्ते पर प्रभुत्व पा लिया और उनमें से सात आदमियों को जलती आग में झोंक दिया। पीछे बन्दूकची पुलिस आई। उसने बलवा शान्त किया और मौके पर मुलज़िमों को पकड़ा है। प्रेमदेवी तो पकड़ ली गयीं, पर गुलामरसूल लापता है।

प्रेमदेवी को हवालात में ही पता चल गया था कि उसके पिता का देहान्त होगया है और जायदाद के विषय में वह वसीयत कर गये हैं। वकील जगन्नाथ उस वसीयत को पूरा करने के लिये नियुक्त हुआ है। प्रेमदेवी के पकड़े जाने के दूसरे दिन ही एक बैरिस्टर ने उससे मिलने की स्वीकृति पा ली थी और वह उससे मिला था। प्रेमदेवी को उसके पिता की मृत्यु का समाचार उसी बैरिस्टर ने दिया था। इस पर उसने पूछा, "आपको मेरे पास किसने भेजा है?"

बैरिस्टर ने बताया, "सेठ धन्नाराम ने।"

प्रेम ने अचम्भे में पूछा, "क्यों?"

"आपके मुकद्दमे की पैरवी करने के लिये।"

"मगर उन्होंने क्यों?"

"यह तो मैं भी नहीं समझ सका, प्रेमदेवी जी। हां, इतना उन्होंने कहा था कि उन्हें विश्वास है कि यह आग लगवाना आपका काम नहीं और वह चाहते हैं कि आप छूट जायें।"

"आप कितनी फीस ले रहे हैं?"

"मेरे साथ इस मुकद्दमे में पहली अदालत में पेश होने के लिये दस हज़ार रुपया और यदि सेशन में जाना पड़े तो बारह हज़ार और।"

"ओह! परन्तु मैं समझती हूं कि इतना तो मैं आपको दे सकूँगी।"

"इसमें से पेशगी दो हज़ार तो मुझे आज मिल भी गया है।"

प्रेमदेवी को सेठ साहब की आग वाली रात की बातें याद आ रही थीं और वह कांप उठी। बैरिस्टर ने यह नहीं देखा। प्रेम ने फिर पूछा, "आप समझते हैं कि मैं छूट सकूँगी?"

"जी, मेरा विचार है कि यदि सेठ साहब का बयान ठीक होगया और उनकी सहायता से कारखाने के मज़दूरों की साक्षियां ठीक ढंग से होगयीं तो आप अवश्य छूट जायेंगी।"

"सेठ साहब सत्य सत्य साक्षी करेंगे?"

"जी, वह प्रत्येक प्रकार से सहायता देने का वचन दे रहे हैं।"

इसके पश्चात् पुलिस ने अदालत में अपने गवाह उपस्थित किये। यों तो सब बात पुलिस वालों की कहानी की पुष्टि में मिलती जाती थी, परन्तु जब सेठ धन्नाराम की साक्षी हुई तो सब चकाचौंध रह गये।

सेठ धन्नाराम ने अपने बयान में कहा, "जिस रात गोदामों को आग लगाई गयी थी, उससे पहले दिन आप मेरे पास दोबारा आई थीं। एक बार दिन के दस बजे के लगभग आप मुझसे कहती थीं कि सालस डालकर हड़ताल खोल दी जाय। मैं सालस डालने उचित नहीं समझता था। मैं चाहता था कि मजदूर बिना शर्त के काम पर चले आवें। कारखाने खोल दिये जावेंगे, और उसके बाद में जो कष्ट मज़दूरों को है उसका निवारण कर दिया जायेगा।

उस समय आपने मेरी बात नहीं मानी, परन्तु सायंकाल आठ बजे आप फिर आईं। मैं उस समय घर पर नहीं था। आप मेरी प्रतीक्षा करती रहीं। मैं घर पर ग्यारह बजे के बाद पहुंचा था। आप साढ़े बारह बजे तक मेरे पास रहीं और मेरे अपने चीफ इन्जीनियर मिस्टर मिचल को टैलीफ़ून पर कारखाने खोलने की आज्ञा देने के कुछ बाद तक रहीं। बाद में आप चली गयीं।"

जिरह किये जाने पर सेठ साहब ने कहा, "आपने मुझे बताया कि लोग इतने भूखे हैं कि यदि उनको कल खाने-पीने को न मिला तो

एक दूसरे को मार-मारकर खाने लगेंगे। इस कारण आप तो बिना किसी शर्त के हड़ताल खोलने के लिये तैयार थीं, परन्तु मैंने लोगों की तकलीफ का अनुमान लगाकर यह आज्ञा दे दी थी कि जो लोग हाज़िर हों उन्हें आधे-आधे महीने का वेतन पेशगी दे दिया जाय।"

सेठ साहब ने यह भी बताया, "मुझे मेरे नौकरों ने बताया था कि आप सायंकाल आठ बजे से मेरी कोठी में बैठीं मेरी प्रतीक्षा करती रही थीं।"

पुलिसवालों ने तो मुकद्मा सीधा ही समझा था और उन्होंने सेठ साहब को अपनी ओर से पेश किया था, परन्तु जब उन्हें प्रेम के पक्ष में गवाही करते देखा तो चकराये।

जिस दिन सेठ साहब की गवाही हुई थी जगन्नाथ भी अदालत में उपस्थित था। मुकद्मे के पश्चात जगन्नाथ प्रेमदेवी से मिला और उसने उसके पिता की वसीयत के विषय में बताया, "आपके पिता ने अपनी पूर्ण सम्पत्ति विमला के नाम लिख दी है। आपके लिये केवल जीवन भर के लिये डेढ़ सौ रुपया मासिक देने को लिखा है। परन्तु विमलादेवी डाक्टर साहब का रुपया नहीं लेना चाहती। कल मैं विमलादेवी को वसीयत पर साक्षी करने वाले लोगों के सामने वसीयत सुनाकर उसे चार्ज देने का यत्न करूंगा। इसके अतिरिक्त जहां तक पता चला है बिहारीलाल बन्नू के समीप सरहद्दियों से मारा गया है।"

इसके पश्चात् मुकद्मे के विषय में जगन्नाथ ने अपनी सेवायें उपस्थित कर दीं। प्रेम ने उत्तर में कहा, "मैं अब गरीब होगयी हूँ, इसी लिये आप कहते हैं न ?"

"प्रेमदेवी, कुछ समझो। यह बैरिस्टर साहब से आपने कितने में फैसला किया है ?"

"इससे आपको क्या मतलब ?"

"मेरा विचार है कि जितना भी आपके मुकद्मे पर खर्च हो आपके पिता की सम्पत्ति में से व्यय किया जाय।"

"पिता जी को वसीयत लिखने से पूर्व इतना तो विचार कर लेना

चाहिये था।"

"उन्हें आपके व्यवहार पर क्रोध आया हुआ था और वास्तव में आपका व्यवहार ही उनकी अकाल मृत्यु का कारण हुआ है। इस पर भी जो भूल उनसे हुई है वह मैं समझता हूँ विमलादेवी सुधार देगी।"

"विमला तो, आप कहते हैं न कि, सम्पत्ति लेना नहीं चाहती।"

"मैं उसे कल समझाऊंगा। यदि उसने चार्ज नहीं लिया तो मुझे अदालत में सब सम्पत्ति जमा करनी पड़ेगी और अदालत जायदाद का कोई वारिस न होने पर इसे ज़ब्त कर लेगी। उस अवस्था में तो आपका मुकदमा भी नहीं लड़ा जा सकेगा। यदि वह जायदाद ले ले तो मैं किसी न किसी तरह उसे मना लूंगा कि यह खर्चा अनुचित नहीं है।"

"मैं समझती हूँ कि आप मेरे लिये यह कुछ न करें। मैं विमला का एहसान सिर पर नहीं लेना चाहती।"

"आख़िर मुकदमे में जो कुछ व्यय हो रहा है वह कहीं से तो आना ही चाहिये न। बिहारीलाल की भी, जहां तक मुझे विदित है, कुछ अधिक सम्पत्ति नहीं है।"

"मैं उनकी जायदाद से भी कुछ लेना नहीं चाहती। वह भी एक स्वप्नमात्र था जो समाप्त होगया है।"

"अच्छी बात, मैं कल आपसे जेल में मिलने का यत्न करूंगा।"

उसी सायंकाल प्रेम से मिलने के लिये सेठ धन्नाराम जेल में पहुँचे।

प्रेम अपनी परिस्थिति पर विचार कर रही थी। ज्योंही उसे विदित हुआ था कि उसके पिता ने उसे केवल डेढ़ सौ रुपया मासिक दिया है वह अपने में एक विशेष घबराहट अनुभव कर रही थी। डेढ़ सौ रुपये महीने का तो वह पैट्रोल फूंक दिया करती थी। वह सोच रही थी कि अब कैसे निर्वाह होगा। इसके साथ बिहारीलाल की मृत्यु के समाचार ने उसे एक और कठिनाई में डाल दिया था। वह विधवा बनकर रहे अथवा पुनः विवाह कर ले। गुलामरसूल से उसका प्रेम होगया था। परन्तु यह प्रेम वैसा नहीं था जैसा बिहारीलाल से था। बिहारीलाल को वह अपने जीवन-

पर्यन्त का साथी समझती थी, परन्तु गुलामरसूल को एक अस्थाई संगी। कुछ दिन के शारीरिक विलास में वह उसके जीवन में आ पहुंचा था और अब वह वहां नहीं था। वह सोचती थी कि अब भविष्य में वह कैसे रहेगी। किसको अपने जीवन का साथी बनायेगी।

ये विचार उसके मन में न आते यदि बैरिस्टर उसे छूट जाने की आशा न दिलाता और सेठ साहब की साक्षी उसके अनुकूल न हो जाती। अब तो वह यह सोच रही थी कि शायद एक दो और पेशियों में उसे छोड़ दिया जायेगा।

इसी प्रकार के विचारों में वह लीन थी कि सन्तरी ने आकर कहा, "सेठ धन्नाराम मिलने आये हैं। आप जेलर की बैठक में आ सकती हैं।"

"सेठ धन्नाराम?" उसने अचम्भे में पूछा। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि उसकी समस्याओं का उत्तर सेठ साहब में है। वह उठी और सन्तरी के साथ जेलर के कमरे में चली आई। वहां सेठ साहब बैठे थे। प्रेमदेवी जब वहां पहुंची तो जेलर उठकर दूसरे कमरे में चली गयी। सन्तरी कमरे के बाहर ही रह गया था। प्रेम ने अचम्भे में पूछा, "आप कैसे आसके हैं? मुझे तो केवल मेरे सम्बन्धी ही मिल सकते हैं।"

"यह जेलर मेरे मित्र डाक्टर भटनागर की स्त्री है। डाक्टर भटनागर ने इनसे कह दिया और मुझे मिलने का अवसर मिल गया। मैं तो पहले भी आकर मिल सकता था, परन्तु मैं चाहता था कि पुलिस का गवाह बनकर ही आपके मुकदमे में आऊं। इससे पुलिस का मुकदमा ढीला पड़ जायेगा। यदि मैं आपकी ओर से पेश किया जाता तो गवाही में वह बल न रहता जो अब है। इसी प्रकार मैंने पुलिस के अन्य गवाहों को भी ठीक कर रखा है और ठीक साक्षी के समय पुलिस को पता चलेगा कि उनका मुकदमा ढीला हो गया है। आज मेरी साक्षी समाप्त हुई है और मैं मिलने चला आया हूं।"

"परन्तु आप यह सब क्यों कर रहे हैं? आपको तो मेरे कारण बहुत हानि पहुंची है।"

"मुझे हानि नहीं हुई और आप तो जानती हैं कि...... छोड़ो इस बात को। मैं आपको इस मुकदमे से छुड़ाकर रहूँगा।"

"कारखानों का क्या हो रहा है?"

"उस रात के निश्चयानुसार दूसरे दिन कारखाने खुल गये थे। पहले दिन लोग डरे हुए थे इस कारण उपस्थिति कुछ कम रही, परन्तु अगले दिन से ही कारखाने पूरे बल से काम करने लगे हैं। मैंने मज़दूरों को आधे मास का वेतन पेशगी दे दिया है। रामलाल को पुनः फार्मास्युटिकल कम्पनी का जनरल मैनेजर बना दिया है और उसे मज़दूरों की अवस्था सुधारने में पूरी स्वतंत्रता दे दी है।"

"ये सब परिवर्तन आप में कैसे हुए हैं?"

"मेरी आत्मा सो रही थी। उसे प्रेम तुमने जगा दिया है।"

प्रेम ने उत्तर नहीं दिया। सेठ साहब ने पूछा, "आपको यहां कुछ कष्ट तो नहीं हो रहा?"

"नहीं, कुछ विशेष नहीं।"

"मैंने आज़ मिसेज़ भटनागर के पास दो सौ रुपया जमा करा दिया है और जब यह रुपया समाप्त हो जायेगा पता लेता रहूंगा। आपके खाने का प्रबन्ध मैंने माल पर एक होटल से करा दिया है। वहां से आपके लिये नित्य दो समय खाना आजाया करेगा। यदि किसी विशेष वस्तु की आवश्यकता हो तो होटल के नौकर से ही कह दिया करें। वह अगले दिन ले आया करेगा।"

"आपको बहुत कष्ट हो रहा है।"

[४]

सेठ धन्नाराम को प्रेम के व्यवहार से सन्तोष हुआ था। आरम्भ में जब प्रेम और गुलामरसूल कारखानों में हड़ताल कराने का यत्न कर रहे थे, सेठ साहब प्रेम का नाम सुनते ही क्रोध से उबलने लगते थे। पश्चात् जब उनके भेदिये प्रेम के चरित्र के विषय में बताते थे तो वे उसके नाम से घृणा करने लगे थे और मन में निश्चय कर चुके थे कि

इस लड़की को नाकों चने चबवायेंगे। हड़ताल हुई और उसके बाद मोहिनी के व्यवहार में प्रेम का हाथ देख तो वे उतावले हो उठे। इस समय टालस टालने की बातचीत आरम्भ हुई और प्रेम, जिसे वे दूर से ही जानते थे, समीप आने लगी। पहले तो सेठ साहब यह देख प्रसन्न हुए कि प्रेम उनके सम्मुख नाक रगड़ने पर विवश हुई है और वह उसे अपमानित करने का यत्न करते थे। परन्तु प्रत्येक बार जब प्रेम उनसे मिलती थी तो उनकी अन्तरात्मा पर एक प्रभाव पड़ता रहता था। यह प्रभाव धीरे २ प्रबल होता गया। इस प्रभाव के उत्पन्न करने में प्रेम का मज़दूरों की सेवा का दृढ़ सकल्प मुख्य था।

सेठ साहब सोचते थे कि यह लड़की कितनी दृढ़ निश्चय वाली है। वह मज़दूरों की खस्ता हालत से परिचित होने पर भी अपनी पूर्ण शक्ति, धन और योग्यता से उनके उत्साह को बांधे हुए थी। एक नेता के अन्दर यह गुण, कि भीड़ पड़ने पर चंचल अथवा भयभीत न हो उठे, अत्यावश्यक है। मन में सेठ धन्नाराम उसके प्रति अधिक और अधिक सहानुभूति अनुभव करने लगे थे।

इस समय उनका रामलाल से झगड़ा हुआ। उन्होंने उसे अपने उत्तराधिकार से वंचित कर दिया। दूसरी ओर यद्यपि मोहिनी का विवाह सेठ साहब ने अपने विचार से ठीक किया था, इस पर भी सेठ रघुनन्दन को धन लोभी देख असन्तोष अनुभव कर रहे थे। सेठ साहब समझते थे कि वह देहली वाले धन के लालच में प्रत्येक बात करने पर उद्यत हैं।

किसी परिस्थिति में उन्हें ऐसा अनुभव हुआ कि वह निराधार, निराश्रय संसार में विचर रहे हैं। उस दिन क्लब में शराब पी जब लॉन में सैर को सोचने लगे तो उन्हें ऐसा अनुभव हुआ कि प्रेम उन्हें इस गढ़े से उठा रही है। उसी रात जब उन्होंने प्रेम को सामने खड़े देखा तो उन्हें अपनी तुलना पर खेद हुआ और उसी समय से अपना मार्ग बदल दिया।

[illegible] मोहिनी को जान न सकती और प्रेम इसमें न पड़ती जाती

अथवा बिहारीलाल की मृत्यु का समाचार न मिलता तो न जाने प्रेम और सेठ धन्नाराम में क्या सम्बन्ध बनता। परन्तु इस परिस्थिति में सेठ साहब को प्रेम की सहायता करने और उससे सहानुभूति प्रकट करने का अवसर मिल गया। दूसरी ओर डाक्टर साहब की वसीयत ने प्रेम को विमला के आश्रित कर दिया था और वह सेठ साहब की सहायता के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं समझती थी।

जेल में प्रेम से पहली मुलाकात ही उन्हें बहुत आशा देने वाली सिद्ध हुई। प्रेम ने सेठ साहब की सहायता से इन्कार नहीं किया था। प्रेम की ओर से जब उन्हें आशा हुई तो वह मोहिनी के विषय में विचार करने लगे। सेठ रघुनन्दन का पत्र कई दिन से आया हुआ था, जिसमें मोहिनी को विदा करने के विषय में तारीख पूछी थी। सेठ साहब ने अब निश्चिन्त हो देहली वालों को उचित तिथि लिख दी और उस दिन की तैयारी के लिये सबसे पहले रामलाल को बुला भेजा।

रामलाल जब आया तो सेठ साहब ने कहा, "तुमने ही सेठ रघुनन्दन को आश्वासन दिया था कि उनकी स्त्रियां आवेंगी तो मोहिनी को विदा कर दिया जायगा। अब उनकी आने की तिथि नियत होगयी है। इस कारण तुम्हें मोहिनी को मनाकर वहां जाने के लिये तैयार कर देना चाहिये।"

रामलाल ने विपदा को टाल दिया था, परन्तु उसके पश्चात् उसे इस बात को सुलझाने का न तो अवसर मिला था और न ही उसे कोई मार्ग सूझा था। अतएव वह अब समय समीप आने पर घबरा उठा। वह अपने पिता के पास से उठ मोहिनी के कमरे में चला गया।

मोहिनी, जबसे उसका विवाह हुआ था, अपने कमरे से बाहर नहीं निकली थी। एक आध बार सेठ साहब उससे मिलने आये थे और वह खुलकर उनसे बोली नहीं थी। आज इतने समय पश्चात् भाई को देख वह बहुत उत्साह से मिली। पूछने लगी, "भैया, भाभी कैसी है?"

"सब ठीक है। तुम सुनाओ।"

"मैं तो मर गयी हूँ। मेरे लिये संसार शून्य-समान होगया है। मेरी अब जीने में रुचि नहीं रही।"

"तुम्हारे सुसराल की स्त्रियां तुम्हें लेने आ रही हैं। तुम्हारा क्या विचार है?"

"आप किसी वकील से राय करें। शायद कुछ हो सके।"

"जगन्नाथ का तो कहना है कि हिन्दू विवाह टूट नहीं सकता। एक नाबालिग़ का विवाह उसका संरक्षक कर सकता है और वह विवाह भी वैसा ही पक्का होता है जितना कि वर-वधू की इच्छा से किया हुआ विवाह।"

"तो कुछ चारा नहीं? मैंने देहली पहुँचने से पूर्व ज़हर खा मर जाने का निश्चय कर लिया है।"

"यह तो ठीक नहीं। मैं समझता हूँ कि इस झगड़े से बचने का कोई न कोई उपाय मिल ही जायेगा। मैं आज जगन्नाथ से फिर मिलूंगा और कल तक कोई बात निश्चय कर लाऊंगा।"

उसी दिन सायंकाल रामलाल जगन्नाथ के मकान लोहारी मंडी में पहुँचा। वह वहां नहीं था। उसे नौकर से पता चला कि वह डाक्टर खन्ना की कोठी फिरोज़पुर रोड पर गया हुआ है। रामलाल उसको मिलने के लिये उधर चल पड़ा।

[५]

सम्पत्ति का चार्ज विमला ने ले लिया था और उसका प्रबन्ध करने के लिये वकील जगन्नाथ को पांच सौ रुपया मासिक पर नियुक्त कर दिया था। विमला के मन में तो केवल यह बात थी कि जब तक प्रेम छूट नहीं जाती उसका मुकदमा लड़ने के लिये वह इस जायदाद के प्रबन्ध का भार सिर पर लेती है। प्रेमदेवी के छूटते ही वह सब सम्पत्ति उसे लौटा देगी। परन्तु जब जगन्नाथ ने एक वकील को उसका मुकद्मा लड़ने के लिये खड़ा किया तो प्रेम ने उसकी सेवाओं से लाभ उठाने से इन्कार कर दिया। प्रेम ने सेठ साहब द्वारा नियुक्त बैरिस्टर से भी कह दिया कि

विमला द्वारा नियुक्त वकील को मुकदमे में हस्ताक्षेप न करने दिया जाय। इस पर एक दिन विमला प्रेम से मिली और उसे बताया, "मैं तुम्हारे स्थान पर तुम्हारे पिता जी की सम्पत्ति नहीं लेना चाहती। मैं उस पर अपना कोई अधिकार नहीं मानती। इस कारण ज्योंही तुम बाहर आओगी यह ज्यों की त्यों तुम्हें वापिस कर दी जावेगी।"

प्रेम ने पूछा, "तुम मुझे क्यों वापिस करोगी?"

"क्योंकि यह तुम्हारी है।"

"यह मेरे पिता की थी। उन्होंने मुझे नहीं दी तो मेरी कैसे होगयी?"

"पिता की सम्पत्ति सन्तान को मिलती है। ऐसा नियम है।"

"यह नियम किसने बनाया है?"

"समाज ने।"

"यह नियम पूंजीवादी समाज ने बनाया है। मैं ऐसी समाज के क़ायदे-कानून को नहीं मानती। पिता जी ने यह तुम्हें दी है। यद्यपि यह भी कोई महत्ता की बात नहीं, तथापि समाज के नियम से तो अच्छी बात है। उन्होंने तुम्हें मुझसे अधिक उपयुक्त अधिकारी माना है। मैं उनके ऐसा समझने को ग़लत कहकर उनका अपमान नहीं करना चाहती।"

"प्रेम बहिन, यदि तुम्हारी बात मान भी लूं तब भी तो मुझे अधिकार है कि मैं जिसे चाहूँ इसे दे दूं। मैं इसे तुम्हें देती हूँ।"

"परन्तु मैं तुमसे यह लेना नहीं चाहती। मैं तुम्हारे एहसान के नीचे नहीं आना चाहती।"

"तब यह सरकारी खजाने को भरेगी। कारण यह कि मैं इसे नहीं लेना चाहती।"

प्रेम चुप रही।

जब जगन्नाथ को विमला के इस निर्णय का पता चला तो उसने एक दिन मोहनलाल को अपने दफ्तर फिरोज़पुर रोड पर बुला भेजा। विमला वहां पर कार्यवश आई हुई थी। जगन्नाथ ने सम्पत्ति को सरकार

के हाथ में जाने से बचाने के लिये यत्न करते हुए कहा, "वास्तव में इतनी बड़ी जायदाद का उत्तराधिकारी राज्य ही हो सकता है। किसी व्यक्ति के पास पहले तो इतनी सम्पत्ति एकत्रित ही नहीं होनी चाहिये और फिर यदि एकत्रित होगयी तो उसकी सन्तान अथवा किसी अन्य के पास वह विरासत में नहीं जानी चाहिये। सरकार को इसे लेकर लोकहित के कामों में प्रयोग कर देना चाहिये। कठिनाई यह है कि इस समय जो सरकार भारतवर्ष में स्थापित है वह विश्वास के योग्य नहीं। वह इस देश के लोगों के हित के लिये स्थापित नहीं है। प्रायः धन, जो टैक्स इत्यादि साधनों से सरकार के हाथ में जाता है, उसका बहुत ही न्यून अंश लोगों के हित के लिये प्रयोग होता है। अधिकांश विलायती अथवा गोरे कर्मचारियों के लाभ के लिये प्रयोग होता है। ऐसी परिस्थिति में मैं समझता हूँ कि कोई भी धन सरकार के हाथ में नहीं आना चाहिये। साथ ही जब भी कोई धन हमारे पास फालतू आजाये तो हमें वह स्वयं लोकहित के कार्यों में व्यय कर देना चाहिये। अतएव विमलादेवी जी, यदि आप समझती हैं कि यह धन आपको नहीं लेना चाहिये, तो ऐसा करने का ठीक उपाय है कि इसे आप लोक-हितार्थ व्यय कर दें।"

यह बात विमला के मन लगी। सरकार के पास गया धन देश तथा यहां के देशवासियों के हित के लिये प्रयोग होगा कहना कठिन है। इससे यह अच्छा ही होगा कि इसका एक ट्रस्ट बना दिया जाय जो इसको ठीक ढंग से व्यय करे। इतना समझ विमला ने बाबू जगन्नाथ के विचारों को स्वीकार कर लिया। इस पर जगन्नाथ ने अपनी योजना जिसमें वह इस धन का उपयोग करना चाहता था बताई। उसने कहा, "मैं वकील हूँ। इससे मेरी लोकहित की योजना कानून से सम्बन्ध रखती है। मैं समझता हूँ कि समाज के हित-साधन में दो बातें बहुत जरूरी हैं। एक तो यह कि लोकहित के कानून बनवाये जायें। बिना कानून बने कोई भी हित का कार्य चल नहीं सकता। यह ठीक है कि कानून बनने से पूर्व सुधार की भावना लोगों में उत्पन्न करनी होती है, परन्तु कोई भी सुधार केवल मात्र

प्रचार से प्रचलित नहीं हो सकता। सुधार को प्रचलित करने के लिये सरकारी कानून बनाना आवश्यक है। कानून बन जाने पर भी यदि सरकारी अफसर न चाहें तो सुधार नहीं हो सकता। सरकारी अफसर कई कारणों से कानून की पाबन्दी छोड़ सकते हैं। इसलिये उन कानूनों को कार्यरूप में लाने के लिये अफसरों को विवश करना यह दूसरी आवश्यक बात हो। जहां देश में विदेशी राज्य होने से अच्छे कानून बनवाने कठिन हैं वहां पर बने कानूनों को कार्यरूप में लाने के लिये अफसरों को विवश करना और भी कठिन है।

"एक उदाहरण से बात स्पष्ट हो जायेगी। रिश्वत लेना कानून से अपराध है। इस पर भी बड़े बड़े अफसर तक रिश्वत लेते हैं। कानून बनाने वालों ने तो बना दिया, परन्तु अमल में नहीं आता। वास्तविक सुधार तो तब ही हुआ समझा जाना चाहिये जब कानून का प्रयोग भी हो। एक और उदाहरण देता हूँ। जेल में कैदियों के लिये एक विशेष प्रकार का खाना देने का नियम है। इस पर भी जेल के कर्मचारी ही सब कुछ खा-पी जाते हैं और कैदियों को अत्यंत खराब खाना मिलता है। नियम और कानून बना देने से तो कोई सुधार नहीं होता। उस नियम का पालन सुधार के लिये आवश्यक है।

"कानून बनवाना अथवा सरकार को अच्छे कानून बनाने वाली बनाना राजनीतिक काम है और स्वराज्य प्राप्त करना इसमें प्रथम कार्य है। परन्तु जो कुछ कानून बन चुके हैं या स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात भी बनेंगे उनको कार्यरूप में लाने के लिये एक संस्था की आवश्यकता है। अतएव इस संस्था का काम ऐसे नागरिक अधिकारों की रक्षा करना होगा।

"एक नागरिक का अधिकार है कि बने कानूनों के अनुसार उसे सब सुविधायें मिलें। इस काल में यह एक स्वप्न ही है और स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात् भी कुछ काल तक बने हुए कानूनों का लाभ लोकमात्र को मिले, कठिन होगा। ऐसा कराने के लिये एक समिति बननी चाहिये। मैं चाहता हूं कि यह धन उस संस्था का कोष बन जाये। इस संस्था का

नाम नागरिक अधिकार रक्षक समिति (Association for the protection of civic rights of people) हो।

"जब सरकार विदेशी है, कर्मचारी लोभी और अत्याचारी हैं, और सरकार का आधार उनके आश्रय है, वहां पग-पग पर सर्वसाधारण के नागरिक अधिकारों का उल्लंघन हो जाना साधारण सी बात है। अनेकों ऐसी-बातें नित्य होती हम देखते हैं। परन्तु एक एक बात के लिये किसी व्यक्ति की शक्ति नहीं कि वह लड़ सके। इससे लोग अफसरों के अनियमितपन को सहन करते रहते हैं। उदाहरण के लिये आप समझें कि जानबूझ कर अथवा भूल से एक पुलिसमैन ने आपको बाइसिकिल पर चलते हुए चालान कर दिया है। वह लिख देता है कि आपने ट्रैफिक रूल तोड़ा है। आप अदालत में उपस्थित होते हैं। वहां बिना पूछगीछ किये आपको दो रुपये दण्ड हो जाता है। आप यह जानते हुए भी कि आप निर्दोष हैं दो रुपये दण्ड भोगना पसन्द करेंगे और दण्ड से मुक्त होने के लिये अपील नहीं करेंगे। जुर्माना तो दो ही रुपये हुए हैं और यदि मुकदमा लड़ा जाये तो हजारों नहीं तो सैकड़ों की चपत तो लग ही जायगी। आप व्यक्तिगत सुभीते और लाभ के लिये दो रुपये दण्ड देने में लाभ समझेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि एक ओर तो पुलिस कर्मचारी चालान करने में और दूसरी ओर मैजिस्ट्रेट दण्ड देने में लापरवाह हो जाते हैं। यह बात अब प्रायः सब सरकारी महकमों में उपस्थित है। कारण यह है कि न्याय का मूल्य न्यायालयों में बहुत अधिक है और दण्ड होता है थोड़ा। इससे लोग दण्ड देकर पीछा छुड़ाना उचित समझते हैं।"

विमला ने पूछा, "इस संस्था की सहायता के लिये क्या एक ट्रस्ट बनाना ठीक रहेगा? आप इसका एक विधान बनायें।"

मोहनलाल, जो यह सब योजना बहुत ध्यान से सुन रहा था, कहने लगा, "यदि आपने यह ट्रस्ट बनाया तो सरकार इस ट्रस्ट को जब्त कर लेगी। क्योंकि प्रायः सब सरकारी महकमों से इस संस्था का

झगड़ा रहेगा।"

"आप ठीक कहते हैं," जगन्नाथ ने कहा, "मेरी सम्मति यह है कि पांच छः आदमियों की, जिन पर विमलादेवी को विश्वास हो, एक कमेटी बना दी जाय। वह कमेटी इस धन का व्यय उचित कार्यों में करे।"

विमला, जो इस प्रकार की कानून-सम्बन्धी बातें नहीं समझ सकती थी, कहने लगी, "तो आप ही एक कमेटी बना लेवें।"

उसी समय मोहनलाल, जगन्नाथ, रामलाल, विमलादेवी और, यदि स्वीकार करे तो छूट जाने पर, प्रेमदेवी इस कमेटी के सदस्य बना दिये गये। जगन्नाथ इस कमेटी का मैनेजर बन गया। यह निश्चय कर लिया गया कि प्रत्येक खर्च की अंतिम मंजूरी विमला के हाथ में हो।

जब यह प्रबन्ध हो रहा था तो रामलाल जगन्नाथ की खोज में वहां आ पहुँचा। जगन्नाथ ने उसे देखते ही कहा, "लो आप बहुत ही उचित समय पर आये हैं। हमें आपकी एक भले काम के लिये आवश्यकता है।"

इतना कह जगन्नाथ ने नागरिक अधिकार रक्षक समिति की स्थापना और कार्य बताया।

रामलाल ने जब बात समझ ली तो प्रसन्नता से इसमें भाग लेने का वचन दिया। इस समय पहली बार रामलाल का परिचय विमला से हुआ। उसने सुन रखा था कि बिहारीलाल की दो स्त्रियां हैं। परन्तु उसने विमला के दर्शन नहीं किये थे। अब उसे उदारता से मुफ्त में पाये सब धन को वापिस करते देख चकित रह गया।

अब रामलाल ने जगन्नाथ को अपने उसके पास आने का प्रयोजन बताया।

[६]

मोहिनी के आत्महत्या करने का विचार जगन्नाथ को बताकर रामलाल ने पूछा, "क्या कोई कानूनी सहायता उसे नहीं मिल सकती?"

"देखिये मिस्टर रामलाल, कानून में सुधार मेरी शक्ति से बाहर की बात है। हां, इस अवस्था में मैं आपको जो कुछ करना उचित है

बताता हूँ। मेरे विचार में सेठ साहब ने सभ्यता और भलमनसाहत के नियमों को तोड़ा है। मोहिनी का व्यवहार ऐसा नहीं था कि जिससे उन्हें उसके चरित्र-भ्रष्ट हो जाने की आशंका होती। इस कारण विवाह के लिये इतनी जल्दी करनी सर्वथा अनुचित थी। इस अनुचित व्यवहार का, जिसे कानून की मंजूरी है, हम अनुचित व्यवहार से ही मुक़ाबिला कर सकते हैं। मैं राय देता हूँ कि उसे घर से भाग जाना चाहिये और दो वर्ष तक कहीं छुपकर रहना चाहिये। इन दो वर्षों के गुज़र जाने पर वह बालिग़ हो जायेगी। तब हम उसके विचारों की पूर्ति में सहायता करने का ढंग निकाल लेंगे।"

विमला, जो समीप ही बैठी थी, कहने लगी, "बा० रामलाल, यदि आप बुरा न मानें तो मैं एक प्रार्थना करूं। मैं आपकी बहिन का पूर्ण वृत्तान्त वकील साहब से सुन चुकी हूं।"

"जी, कहिये।" रामलाल ने उत्सुकता से पूछा।

"मैं मोहिनी के भाग जाने को उचित नहीं समझती।"

"क्यों?"

"घर से भागकर तो चरित्रहीन होने की ही सम्भावना है। अभी तक जिस व्यवहार को स्वीकार कर, अपने को पवित्र रख और घर से न भागकर जो उच्च चरित्रता उसने प्रकट की है, वह सब मट्टी में मिल जायेगी। उस जैसे आचार-व्यवहार को रखने वाली लड़की के लिये तो डटकर अपनी परिस्थिति का मुकाबिला करना अधिक अच्छा है। घर से तो वे भागते हैं जो विवाह को केवल विषय-वासना का सस्ता साधन समझते हैं। मैं चाहती हूं कि मोहिनी अपने को इस कोटि के लोगों से बाहर रखे। आदर्श व्यवहार रखने के पश्चात् यह घर से भागना शोभा नहीं देता।"

"तो वह क्या करे?" जगन्नाथ ने पूछा।

"उसके लिये दो मार्ग खुले हैं। एक तो हिन्दू-विवाह की पवित्रता को स्थायी रखने के लिये अपनी आहुति दे दे। अर्थात अपने सुसराल

में चली जाय और ज्यों-त्यों कर इस जीवन को व्यतीत करती हुई अगले जन्म में अपनी आकांक्षा की पूर्ति के लिये भगवान से प्रार्थना करे। एक दूसरा मार्ग भी है, परन्तु वह अति दुस्तर है। वह है सत्याग्रह का। अपने शरीर और आत्मा को पवित्र रखने के लिये चुपचाप सब कष्ट भोगे। अपने जीवन को एक लम्बी सत्याग्रह और तपस्या की कहानी बना दे।"

इस पर रामलाल बोल उठा, "आप स्त्री होकर भी ऐसा मार्ग क्यों बताती हैं जिसमें उसे अति दुख और कठिनाई झेलनी पड़े। घर से भाग जाना भी तो एक प्रकार का त्याग और विरोध है। क्या इसमें उसे शीघ्र ही सुख और शान्ति मिलने की सम्भावना नहीं?"

"बात यह है कि मैं समाज का सुधार चाहती हूँ, समाज का सत्यानाश नहीं। सुधार ऐसी परिस्थिति में घर से भाग जाने से नहीं होगा। यह तो घर में रहकर कुरीतियों का विरोध करने से ही हो सकता है। मान लो कि मोहिनी के पास ऐसे साधन हैं कि वह घर से भागकर भी चरित्रशील रह सकती है। इस पर भी यह उदाहरण समाज में उपस्थित करना कि खराब कानून का विरोध छुपकर हो सकता है अयुक्तिसंगत है। कानून बदलवाने का उपाय दुख और कष्ट सहकर लोगों में उसके बदलने के लिये उचित वातावरण उत्पन्न करना है।

"इसके अतिरिक्त यह बात भी विचारणीय है कि पिता के घर से भाग जाने का अर्थ है केवल पिता को दोषी सिद्ध करना। पिता ने तो केवल मिथ्या विचारों के आधीन ही यह विवाह किया है, परन्तु सेठ रघुनन्दन का व्यवहार शुद्ध लोभ के कारण है। वही मुख्य दोषी हैं और सत्याग्रह अथवा अन्य किसी प्रकार से विरोध उन्हीं के विरुद्ध होना चाहिये।"

"आप समाज को दुर्व्यवस्था से बचाने के लिये व्यक्तिगत लाभ का बलिदान कर देना उचित समझती हैं?"

"अवश्य। समाज की उन्नति व्यक्तिगत लाभ से ऊँची है।"

"तो इसका अर्थ यह है कि व्यक्तित्व का अन्त कर दिया जाये।"

"नहीं, ऐसा नहीं होगा। जो समाज उन्नत होगी उसमें ही व्यक्तित्व पनप सकता है।"

"समाज की उन्नति समाज के गले-सड़े रीति-रिवाजों को मानने से कैसे हो सकती है?"

"मैंने मानने को नहीं कहा। मैंने विरोध करने को कहा है। पर मुख्य दोषी के व्यवहार का विरोध उसके स्थान पर होना ही उचित है। परिस्थिति का विरोध उससे भाग जाने से नहीं, उसका मुकाबिला करने से होगा।"

रामलाल ने विमला की बातें सुन निराशा का भाव प्रकट करते हुए कहा, "विमलादेवी, आप अति कठिन मार्ग बताती हैं। किसी मनुष्य से तो इसका अनुसरण होना कठिन है। देखिये, पहला मार्ग, जो आपने बताया है, वह नहीं मानेगी। वह चुपचाप घनश्याम की स्त्री बनकर तो रह नहीं सकती। और आपका बताया दूसरा मार्ग तो ऋषि-मुनि भी अवलम्बन नहीं कर सकते।"

"इस पर भी हिन्दू समाज में अनेकों विधवाएँ और पतियों से त्यक्त स्त्रियां हैं जो यह सत्याग्रह और तपस्या जीवन-पर्यन्त करती रहती हैं। उनकी तपस्या ने ही इस समय तक हिन्दू-समाज का मुख उज्ज्वल किया हुआ है। और मोहिनी की तपस्या तो उनसे भी अधिक उपयोगी सिद्ध होगी। घर से भाग जाने में शायद मोहिनी के अपने जीवन में कुछ सुख की रेखा आसके, परन्तु समाज की अवस्था पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।"

अगले दिन जब रामलाल मोहिनी से मिलने गया तो उसके विचारों में भारी परिवर्तन हो चुका था। उसने मोहिनी को जगन्नाथ की सम्मति सुना दी और पश्चात् विमला का विरोध और मार्ग भी बताया। मोहिनी ने पूछा, "भैया, तुम मुझे क्या करने को कहते हो?"

रामलाल का उत्तर था, "विमला की युक्तियों में अधिक बल प्रतीत होता है, परन्तु यह तो कर सकने की बात है। तुम क्या कर सकोगी, यह

तो तुम ही बता सकती हो?"

"अच्छी बात है। मैं देहली जाऊँगी और वहां घनश्याम को अपने मन और शरीर पर अधिकार प्राप्त नहीं करने दूंगी। भारी संघर्ष होगा। शायद मारी-पीटी भी जाऊं। कुछ भी हो मैं प्रेम की अलख ज्योति को सजीव रखूंगी। यदि आत्मघात करना है तो अपने हाथ से न कर उनके ही हाथ से यह हत्या होने दूंगी।"

"यह कहना अति कठिन है कि वहां क्या होगा? वे लोग कितने निठुर और हृदयहीन सिद्ध होंगे और इस झगड़े का अन्त कहां होगा? हम लोग चाहते हैं कि तुम वहां पर जो कुछ बीते उससे हमें सूचित रखो।"

[७]

सिटी मैजिस्ट्रेट ने प्रेम और बहुत से अन्य मज़दूरों को छोड़ दिया। केवल पांच आदमियों को सैशन के सपुर्द कर दिया। मुकदमे में जहां सेठ धन्नाराम द्वारा नियुक्त बैरिस्टर पैरवी के लिये आता रहा, वहां जगन्नाथ मज़दूर-यूनियन की ओर से और विमला से नियुक्त एक बैरिस्टर प्रेम की ओर से उपस्थित होता रहा। वकीलों का इतना प्रबल जोड़ था कि मैजिस्ट्रेट को विवश हो प्रेम इत्यादि को मुक्त करना पड़ा।

जिस दिन मुकदमे का फैसला सुनाया गया सेठ धन्नाराम अपनी कार ले प्रेम को ले जाने के लिये उपस्थित थे, दूसरी ओर विमला स्वयं डाक्टर खन्ना की कार ले वहां पहुँची हुई थी। यूनियन के लोगों को पता चल गया था कि सेठ साहब कारखाने के लोगों को छुड़ाने में यत्न कर रहे हैं। इससे सेठ साहब अब उतने घृणा के पात्र नहीं थे जितना तब थे जब गुलामुरसूल माल पर पीटा जाकर डाक्टर खन्ना की कोठी में पड़ा था।

छूटने पर प्रेम जब बाहर निकली तो यूनियन के लोगों ने उसे पुष्प-मालाओं से लाद दिया। लोग बहुत प्रसन्न थे। विमला ने आगे बढ़कर उसे निर्दोष-सिद्ध हो जाने पर बधाई दी। सेठ धन्नाराम ने प्रेम से हाथ मिलाकर उसका अभिवादन किया। जब इधर-उधर की बातें हो चुकीं तो

विमला ने प्रेम से कहा, "बहिन, अब चलें।"

प्रेम ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा, "कहां ?"

"घर।"

"किस घर को।"

विमला ने डाक्टर खन्ना की कार की ओर संकेत कर कहा, "अपनी कार से अपने घर फिरोज़ पुररोड पर।"

"वह अब मेरा घर नहीं है। यह कार अब मेरी नहीं है।"

इसी समय सेठ धन्नाराम आगे बढ़कर प्रेम से कहने लगे, "प्रेम, चलो न अब।"

प्रेम विमला को छोड़ सेठ धन्नाराम के साथ मोटर में जा बैठी। विमला और जगन्नाथ मुख देखते रह गये। जब गाड़ी हिलने लगी तो प्रेम ने सबको हाथ जोड़ नमस्ते कह दी।

मार्ग में प्रेम ने सेठ साहब से पूछा, "आप मुझे किधर ले जा रहे हैं ?"

"जिधर प्रेम चाहे।"

"मैं ?"

"हां, कहो तो अपनी कोठी कैनाल रोड पर ले चलूं। वहां तुम्हारे लिये बहुत पर्याप्त स्थान है। और यदि वहां जाने की इच्छा न हो तो अभी किसी होटल में प्रबन्ध कर देता हूँ तब तक कोई बंगला खाली करवा दूंगा।"

प्रेम ने कुछ सोचकर पूछा, "आप मुझसे क्या चाहते हैं ? आपने मुझ पर धन व्यय किया है। स्वयं भी परिश्रम किया है और सबसे अधिक आपने अपनी विचारधारा को स्वार्थ की परिधि से बाहर कर सार्वजनिक बना दिया है। यह सब किस लिये ?"

"सब तुम्हारे लिये प्रेम! मैं तुमसे कुछ नहीं चाहता। प्रेमी प्रेम करता है। वह उसका प्रतिकार नहीं चाहता। तुम मुझे अपनी उंगली के संकेत से जिस ओर चाहो घुमा सकती हो। मैं बिना किसी अपने प्रयोजन के तुम्हारे कहनेमात्र पर चलूंगा।"

"सत्य कहते हैं आप ?"

"परीक्षा करके देख लो न ।"

"तो सुनिये, मैं आपके बंगले में चलकर रहना चाहती हूँ । वहां मेरे खुले रूप में जाकर रहने पर लोग मेरी और आपकी निन्दा करेंगे। बताइये आपको स्वीकार है ?"

"मुझे इससे अति प्रसन्नता होगी ।"

"लोग मुझे आपकी रखेल कहेंगे ।"

"इससे तो तुम्हें ही हानि होगी ।"

"मैं इससे नहीं डरती । जब मैं कोई काम करना उचित समझती हूँ तो उसे सरे बाज़ार करने से नहीं डरती । मुझे लोगों के कहने सुनने का भय नहीं है ।"

"तो फिर ठीक है । मैंने तो अब अपने आपको गौण समझ लिया है । तुम धुरी हो और मैं चक्र की परिधि हूं ।"

रामलाल मोहिनी को समझा-बुझाकर बाहर आया ही था कि सेठ साहब प्रेम को, जिसके गले में अभी भी फूलों की मालायें पड़ी थीं, साथ लिये हुए आ पहुंचे । रामलाल प्रेम को पिता जी साथ देख विस्मित हुआ । यथार्थ में वह जानता था कि विमला डाक्टर खन्ना की गाड़ी लेकर उसे लेने गयी हुई थी । वह उसके साथ न जाकर सेठ साहब के साथ आई है, इसका अभिप्राय वह नहीं समझ सका । इस कारण नमस्ते और बधाई देकर अचम्भे में उसे देखता रह गया ।

सेठ साहब ने उसे अचम्भे में देख मुस्कराते हुए कहा ," रामलाल, प्रेमदेवी ने हमारे यहां रहना स्वीकार किया है । मुझे यह बताते हुए अति हर्ष हो रहा है कि आज से आप इस घर कि मालकिन बनकर रहेंगी ।"

"मालकिन ?" रामलाल ने अचम्भे में पूछा ।

सेठ साहब ने विस्मय निवारण करने के लिये कह दिया, "हां, अर्थात् मेरी पत्नी ।"

रामलाल, जो प्रेम के प्रेम और विवाह के विषय में विचार नहीं

जानता था, प्रश्न भरी दृष्टि से प्रेम की ओर देखने लगा।

प्रेम ने मुस्कराते हुए पूछा, "आप हमारे इस विचार को कैसा पसन्द करते हैं ?"

मुझे इस बात के नापसन्द होने में कोई निजी प्रयोजन नहीं है। मैं तो पिता जी के स्वास्थ्य के विषय में सोच रहा हूँ। और......"

वह कुछ कहना चाहता था पर रुक गया। प्रेम ने वैसे ही मुस्कराते हुए कहा, "सेठ साहब का स्वास्थ्य अब मेरे ज़िम्मे है। हां, और दूसरी बात क्या ?"

"बन्नू से तार आया है। तार वहां के डिप्टीकमिश्नर ने भेजा है। वह यह कि मिस्टर बिहारीलाल जीते हैं। कल कराची-मेल से यहां पहुंच जावेंगे।"

"मैं यह सुनकर बहुत प्रसन्न हूँ। मैं उनसे मिलकर बहुत आनन्द अनुभव करूंगी।"

सेठ साहब इस समाचार से कुछ चौंक उठे और प्रश्न भरी दृष्टि से प्रेम की ओर देखने लगे।

प्रेम ने सेठ साहब की प्रश्न भरी दृष्टि का उत्तर उनकी बांह में अपनी बांह डालकर यह कहते हुए दिया, "आइये, भीतर चलें।"

रामलाल ने असन्तोष में कन्धों को ऊपर उठाया और कोठी के बाहर जाने के लिये घूम पड़ा। सेठ साहब ने पीछे से बुला लिया, "रामलाल, मोहिनी से मिले हो ?"

"जी हां। वह जाने के लिये तैयार है। कब विदाई होगी ?"

"कल सायंकाल की गाड़ी से। देहली से स्त्रियां कल सुबह की गाड़ी से आवेंगी।"

"वह तैयार है। मैं कल फिर हाज़िर हो जाऊंगा।" इतना कह रामलाल चला गया

सेठ साहब प्रेम को, एक कमरे में जो सर्वथा नये साज़-सामान से सजाया गया था, ले गये। वहां ले जाकर कहने लगे, "यह तुम्हारी बैठक है।" फिर उसके साथ लगे एक कमरे में ले गये।

"यह है सोने का कमरा," उन्होंने कहा।

अब वह उसे पुनः बाहर के कमरे में ले आये। वहां बैठाकर पूछने लगे, "प्रेम, अब क्या विचार है?"

"आपने बाबू रामलाल से यह क्यों कहा है कि मैं आपकी पत्नी बन कर रहूंगी?"

"तो क्या तुम्हें यह स्वीकार नहीं है? मैंने तो ऐसा ही समझा था।"

"मैंने केवल यह कहा था कि लोग ऐसा समझेंगे। जहां तक पति-पत्नी होने का सम्बन्ध है वह तो आपसे मैंने न स्वीकार किया है और न अस्वीकार। पूर्व इसके कि इस विषय में कोई बात हो हमें कई बातों को समझ लेना चाहिये।"

सेठ साहब ने हंसते हुए कहा, "मैंने इस आयु में बहुत सी नयी बातें तुमसे जानी हैं। यदि कोई और बात है तो वह भी बता दो। मैं आशा करता हूं कि समझ जाऊंगा। बताओ, कुछ रुपये-पैसे के विषय में बात है?"

"छीः। आपके मन से अभी तक धनी होने की बू नहीं गयी। मुझे इस विषय में कुछ नहीं कहना। मैं तो यह बताना चाहती हूँ कि विवाह, प्रेम और स्त्री-पुरुष के परस्पर सम्बन्ध में मैं पूर्ण स्वतन्त्रता को मानती हूँ।"

"कुछ व्याख्या से समझाओ तो मैं समझ सकूंगा। केवल सिद्धान्त के प्रतिपादन से बात स्पष्ट नहीं होती।"

"तो सुनिये। मैं बिहारीलाल की पत्नी थी। हमारा किसी भी रीति से विवाह नहीं हुआ था। साथ ही हम में यह वचन था कि हम में से कोई भी जब भी चाहे दूसरे को छोड़ सकता है। साथ ही यदि एक पार्टी दूसरे को छोड़ना चाहे और दूसरी न छोड़ना चाहे तो दूसरी पार्टी पहले को बाध्य नहीं कर सकती कि प्रचलित अर्थों में पहिली पार्टी सतीत्व अथवा पत्नीव्रत धर्म पर स्थित रहे। वफ़ादारी के अर्थ विशाल अर्थों में लेने चाहियें। मैं बिहारीलाल की पत्नी रहते हुए भी गुलामरसूल से

सम्बन्ध रखती थी।"

"क्या बिहारीलाल को यह बात विदित था?" सेठ साहब ने पूछा।

"मैं समझती हूँ कि उन्हें सन्देह था, परन्तु उन्होंने कभी पूछा नहीं।"

"क्या तुम एक की बनकर नहीं रह सकती?"

"मैं वचन नहीं दे सकती।"

"यदि तुम मुझे छोड़ना चाहो तो क्या तुम मुझे स्वयं पहले बता दोगी?"

"हां, इस बात का वचन देती हूँ।"

"परन्तु मेरा तो मन कहता है कि तुम मरणपर्यन्त मेरे पास ही रहो।"

"यदि आप ऐसा चाहते हैं तो आपको ऐसा बनना पड़ेगा कि मैं आपसे प्रेम करती रहूँ।"

"मैं तुम्हें कैसे प्रसन्न रख सकता हूं?"

"यह जानना आपका काम है।"

"अच्छी बात, मैं यत्न करूंगा।"

"एक बात और भी है। वह भी मैं आपको पहले ही बता देना चाहती हूँ।"

"हां, बता दो।"

"मुझे कुछ दिन चढ़ गये हैं।"

"हूं!" सेठ साहब ने बहुत अचम्भे में पूछा, "कितने?"

"मुझे जेल गये आज लगभग तीन मास हुए हैं। लगभग इतना ही काल हो गया है।"

"तो यह सन्तान बिहारीलाल की नहीं होगी।"

"नहीं।"

"इसे मैं किस की समझूं?"

"गुलामरसूल की।"

सेठ साहब अपने स्थान से उठ गम्भीर विचार में डूबे हुए कमरे में इधर से उधर और उधर से इधर घूमने लगे। प्रेम भी कुछ समय

तक चुपचाप अपने कथन का प्रभाव देखती रही। जब सेठ साहब कमरे में चक्कर काटते रहे और प्रेम से कुछ नहीं बोले तो प्रेम को बहुत निराशा हुई। वह अपने स्थान से उठकर बोली, "तो मैं जाऊं ?"

"जाओ !" सेठ साहब ने एकाएक खड़े होकर अचम्भे में पूछा, कहां ?"

"कहीं तो रहूंगी ही।"

"नहीं प्रेम, मैं तुमसे प्रेम करता हूँ और इस प्रेम का प्रतिकार कुछ नहीं चाहता। मैं केवल एक बात चाहता हूं कि तुम मेरे पास रहो। मैं तो अपने सुख-दुख का साथी चाहता हूँ।"

"आप मेरी अवस्था और मेरे विचारों को जानकर भी कहते हैं कि मैं यहां रहूँ ?"

"हां।"

"आपका भारी अपमान हो सकता है।"

"यह तुम अपने व्यवहार से मान में बदल सकती हो।"

"पर बिहारीलाल अभी जीता है।"

"जब भी तुम्हारी इच्छा उसके पास जाने की होगी जा सकोगी।"

बात तय हो गयी।

[८]

इसके पश्चात् सेठ साहब ने प्रेम को मोहिनी से मिलाना उचित समझा। वह जानते थे कि दोनों का पूर्व परिचय है और वह यह भी जानते थे कि प्रेम और मोहिनी में प्रोफेसर साहब के लड़के से विवाह के विषय में बातचीत हो चुकी है। इस पर भी वह प्रेम से मोहिनी के भविष्य जीवन के विषय में लुकाव-छुपाव रखना ठीक नहीं समझते थे। सेठ साहब ने कहा, "मेरे घर से पूर्ण परिचय करने के लिये तुम्हें मेरी लड़की से भी मिल लेना चाहिये। कल उसकी विदाई है और फिर न जाने वह कब लौटेगी। तुम मोहिनी को तो जानती हो न ?"

"मोहिनी ? नहीं तो। जहां तक मुझे याद है मेरा आपकी लड़की से

परिचय नहीं है।"

"तो चलो मिल लें। वह तो तुम्हें जानती है।"

सेठ साहब परिचय न होने की बात सुन विस्मित अवश्य हुए थे परन्तु यह विचारकर कि प्रेम भूल गयी होगी उसे मोहिनी के सम्मुख ले जाकर बात कराने का विचार किया। दोनों उठ मोहिनी के कमरे में चले गये। मोहिनी अपने विचारों में लीन आरामकुर्सी पर ढासना लगाये, आंखें मूंदे पड़ी थी। उसे सेठ साहब के कमरे में आने का पता नहीं चला। सेठ साहब कुछ देर तक उसे इस प्रकार लेटे देखते रहे। जब देखा कि उसे उनके आने का पता नहीं चला तो सेठ साहब ने आवाज़ दी, "मोहिनी! बेटा, देखो यह कौन आई है?"

मोहिनी ने आंखें खोल दीं। सेठ साहब तो उसके समीप खड़े थे, परन्तु प्रेम दूर दरवाज़े पर खड़ी रह गयी थी।

मोहिनी ने पहले सेठ साहब को देखा, पश्चात् उन्हें दरवाज़े की ओर संकेत करते देख उधर घूमी। पहले उस ओर उसकी पीठ थी। मोहिनी और प्रेम दोनों ने एकदम एक दूसरे को पहचाना। मोहिनी ने कहा, "प्रेम बहिन जी?"

प्रेम ने कहा, "ओह! तुम?"

सेठ साहब ने ओह का शब्द सुन पूछा, "तो तुम इसे जानती हो?"

"हां। यह आपकी लड़की है? इसको तो मैं जानती हूँ।"

मोहिनी कुर्सी से उठ खड़ी हुई और विस्मय से प्रेम की ओर देखती रह गयी। वह उसे सेठ साहब के साथ देखकर हैरान थी। वह तो दोनों को शत्रु के रूप में जानती थी। मोहिनी को विस्मय में चुप देख सेठ साहब ने प्रेम का हाथ पकड़कर, जो अब समीप आगयी थी, कहा, "मोहिनी, मैंने इनसे विवाह कर लिया है। यह अब मेरे पास यहां रहेगी।"

"विवाह?" मोहिनी के विस्मय का तो वारापार नहीं रहा। सेठ साहब ने प्रेम को कुर्सी पर बैठने को कह मोहिनी को बैठने को कहा।

स्वयं खड़े ही कहने लगे, "अब तुम कल दिल्ली जा रही हो। रामलाल फिरोज़पुर रोड पर रहता है। मैंने भी अपने लिये एक साथी ढूंड लिया है।"

प्रेम को कुछ धुँधला सा स्मरण था कि मोहिनी किसी युवक से विवाह करना चाहती थी और उसने उसे जगन्नाथ वकील के पास भेजा था। इसके अतिरिक्त उसे और कुछ स्मरण नहीं पड़ता था। वह क्या बात थी, जिसके लिये उसे वकील के पास भेजना पड़ा था, उसे याद नहीं पड़ता था।

मोहिनी को जब यह पता चला, कि प्रेम बिहारीलाल के मरने के समाचार के पश्चात् प्रथम अवसर पाते ही दूसरे से विवाह कर बैठी है, तो उसके मन में प्रेम के लिये अश्रद्धा, अविश्वास और कुछ कुछ घृणा उत्पन्न होगयी। वह तो समझ नहीं सकती थी कि एक आदमी से प्रेम कर कैसे एक स्त्री दूसरे से प्रेम कर सकती है और फिर दूसरे की भार्या बनना स्वीकार कर सकती है। उसके मन में जो प्रेम और विवाह का स्वरूप अंकित था वह इतना भावुकता से ओत-प्रोत था कि प्रेम का व्यवहार उसे अति घृणित प्रतीत होने लगा था।

प्रेम को वहां देख उसके मन में सबसे पहला विचार तो यह आया था कि वह अपनी समस्या उसके सम्मुख रखे। परन्तु अपने पिता से उसके विवाह कर लेने की बात सुन चुप कर गयी और रामलाल तथा विमला की योजना पर दृढ़ रहना ही उसने उचित समझा।

प्रेम ने मोहिनी को चुप देख पूछा, "मोहिनी! तुम्हारा विवाह हो गया है?"

"जी।"

"तुम प्रसन्न हो?"

"जी।"

"मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।"

"धन्यवाद।"

"तुम मेरे यहां आने पर नाराज़ हो ?"

"नहीं तो ।"

"तुम शोकग्रस्त प्रतीत होती हो ?"

मोहिनी ने बात बदल दी, "मुझे विश्वास है कि आप पिता जी के आराम का ध्यान रखेंगी ।"

सेठ साहब ने बात को बदल दिया और कहा, "प्रेम, आज ही जेल से छूटकर आई है और उसका तुम्हारी विदाई के समय यहां होना अच्छा ही रहेगा ।"

[६]

बिहारीलाल बन्नू पहुँचा तो सीधा वहां के डिप्टी कमिश्नर से मिलने गया। वहां उसने अपनी पूर्ण कथा बता दी। डिप्टी कमिश्नर बिहारीलाल को जीवित देख बहुत प्रसन्न हुआ। उसने एक तार काशमीर फार्मास्युटिकल कम्पनी के मैनेजर को और एक पंजाब सरकार को भेज दी।

बन्नू में उसने फौजियों का विशेष समारोह देखा। इससे उसने अनुमान लगाया कि वज़ीरस्तान को मुहिम जाने वाली है। वहां पूछगीछ करने से वह समझ गया कि उनके टक्की पर कैम्प को लूटने वालों को दण्ड देने के लिये यह मुहिम तैयार हो रही है।

अगले दिन वह लाहौर पहुँच गया। नरगिस के साथ होने के कारण बिहारीलाल डाक्टर खन्ना की कोठी पर नहीं गया। रेल के स्टेशन पर से वह सीधा स्टैन्डर्ड होटल में जा पहुँचा। वहां एक कमरा ले नरगिस को छोड़ वह फार्मास्युटिकल कम्पनी के दफ्तर में पहुंचा। वहां रामलाल को न पाकर वह सेठ धन्नाराम की कोठी में जा पहुंचा।

सेठ साहब की कोठी में उस दिन धूम थी। मोहिनी को विदाई कराने के लिये सेठ रघुनन्दन के घर की स्त्रियां आई हुई थीं। उनकी मह-मानदारी और मोहिनी के लिये कपड़े-भूषण तैयार करने में भाग-दौड़ लग रही थी। रामलाल उस दिन मोहिनी से मिलने आया तो साथ निर्मला और जगन्नाथ [illegible] को भी लेता आया। वह चाहता था कि

विमला, जिसकी राय से मोहिनी ने अपना व्यवहार निश्चय किया है, उससे मिल ले। जगन्नाथ वकील तो ऐसे ही मिलने चला आया था। वास्तव में वह जानना चाहता था कि प्रेम सेठ साहब की कोठी में है या नहीं। उसने अपने आने के इस प्रयोजन को बताया नहीं था।

कोठी में पहुँच रामलाल और विमला मोहिनी के कमरे में चले गये। जगन्नाथ सेठ साहब से ड्रायंग-रूम में बातें करने लगा। सेठ साहब ने पूछा, "आपको विमलादेवी ने जायदाद का प्रबन्धक नियत किया है?"

"जी हां। विमलादेवी का विचार है कि प्रेमदेवी से मिलकर डाक्टर साहब की सब सम्पत्ति उसे वापिस कर दे।"

"क्यों?"

"वह समझती है कि डाक्टर साहब ने विशेष परिस्थिति में वसीयत लिखी थी, जो अब नहीं रही। यदि वह इस समय जीते होते तो अवश्य इसे बदल देते। वह यही करना चाहती है। आप प्रेम का पता जानते हैं? यदि बता दें तो हम शीघ्र ही उससे मिलना चाहेंगे।"

सेठ साहब ने कुछ सोचकर कहा, "वह यहीं है। इस समय कोठी में है।"

"तब तो विमलादेवी उससे स्वयं मिल सकेगी। वह भी यहीं है।"

"जहां तक मैं समझता हूँ वह डाक्टर साहब की सम्पत्ति लेने की आवश्यकता अनुभव नहीं करती।"

"यह सब चल-अचल दोनों मिलाकर पैंतालीस लाख के लगभग है।"

"इस समय उसकी पहुँच में कई करोड़ की सम्पत्ति है।"

"कई करोड़ की?" जगन्नाथ ने अचम्भे में पूछा।

"हां, मैंने उससे विवाह कर लिया है।"

"विवाह! कब?"

"कल सायंकाल। कचहरी से आने के पश्चात्।"

"किस रीति से?"

"केवल मात्र वचन देने से।"

अब जगन्नाथ को मोहिनी की बात याद आगयी। वह तुरन्त कहने लगा, "मोहिनी के दिये वचन को तो आप विवाह नहीं मानते थे और अपने दिये वचन को विवाह मानते हैं। बहुत अचम्भे की बात है।"

"मेरे और मोहिनी में भारी अन्तर है। वह नाबालिग़ है। अब तो वह अपने सुसराल जा रही है और ऐसा प्रतीत होता है कि अपने भविष्य से सन्तुष्ट है।"

जगन्नाथ मोहिनी की योजना को सेठ साहब से कहना नहीं चाहता था। अतएव मुस्कराकर चुप कर रहा। सेठ साहब ने बात जारी रखी, "सेठ रघुनन्दन देहली के बहुत बड़े धनी आदमी हैं। घनश्याम उनका इकलौता बेटा है। बाप की पूर्ण सम्पत्ति का वही मालिक होगा।"

जगन्नाथ ने केवल इतना कहा, "यदि आप दो वर्ष ठहर जाते तो मैं समझता हूं बहुत ही अच्छा होता।"

"अपना अपना विचार है न......।"

बात बीच में ही रह गयी। इस समय बिहारीलाल वहां आ पहुंचा। जगन्नाथ, जो बिहारीलाल के जीवित होने का समाचार प्रातःकाल के समाचार-पत्रों में पढ़ चुका था, उसे देख अति प्रसन्नता से उससे मिला। सेठ साहब ने भी उसका अभिवादन किया। बिहारीलाल ने अपने और फ़ैग के साथ जो दुर्घटना हुई सब सविस्तार वर्णन कर दी, और सब बातें बता दीं। केवल नरगिस के विषय की कोई बात नहीं बताई। सब वृत्तान्त सुनकर सेठ साहब ने कहा, "आप रामलाल से मिल लें। वह यहीं भीतर है। अभी आता ही होगा।"

बिहारीलाल अभी बहुत सी बातें कम्यूनिस्ट पार्टी और हड़ताल सम्बन्धी जगन्नाथ से जानना चाहता था। इस कारण वह उठकर उसके पास जा बैठा। परन्तु पूर्व इसके कि वह कोई बात पूछ सके प्रेम भीतर के कमरे से बाहर आगयी। बिहारीलाल ने जब उसे देखा तो झेंप गया। कारण यह कि नरगिस से विवाह के बाद वह प्रेम से पृथक में मिल कर सब बात कहना चाहता था। उसने मन में निश्चय कर लिया था कि यदि

प्रेम ने नरगिस से उसके सम्बन्ध को पसन्द न किया तो वह लाहौर छोड़ कहीं अन्यत्र चला जावेगा। वह प्रेम से यहां मिलना नहीं चाहता था। प्रेम भी सेठ साहब के सम्मुख बिहारीलाल से सब बात नहीं बताना चाहती थी। दोनों एक दूसरे का अवाक् मुख देखते रह गये। बिहारीलाल ने ही बात आरम्भ की, "प्रेम, तुम यहां कैसे आई हो?"

प्रेम ने पूछा, "आप कब आये हैं?"

"तो तुम्हें मालूम नहीं था कि मैं जीवित हूँ।"

"यह समाचार तो कल ही मिला था। सुनाइये कोठी पर गये थे?"

प्रेम का विचार था कि वह जगन्नाथ के साथ आया होगा और जगन्नाथ ने पूर्ण कथा बता दी होगी। बिहारीलाल ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह सोच रहा था कि, कोठी क्यों नहीं गया, कैसे बताये। वह बात टालने का उपाय सोच रहा था।

बिहारीलाल की जान छूटी जब उसी समय रामलाल और विमला भी वहां आ पहुँचे। विमला उसे देख प्रसन्न-वदन उसके पास पहुँची और उसने झुककर चरण-स्पर्श किये, फिर हाथ जोड़ नमस्ते कर खड़ी हो गयी। बिहारीलाल ने कहा, "तुमने अपनी जंगलियों की बात नहीं छोड़ी। सबके सामने भी तुम्हें लज्जा नहीं आती?"

विमला चुप रही। वह नहीं जानती थी कि उसका क्रोध शान्त हुआ है या नहीं। सेठ साहब ने बात बदलने के लिये रामलाल से पूछा, "मोहिनी प्रसन्न है?"

"मालूम तो यही होता है।"

"सायंकाल सात बजे विदाई होगी। गाड़ी में सीटें रिजर्व हो चुकी हैं।"

रामलाल ने बिहारीलाल से कहा, "आप दफ़्तर में कब तक हाज़िर हो सकेंगे?"

"मैं यही पूछने आया हूं कि क्या मैं अभी तक काम पर नियुक्त हूँ?"

"हां, आप उन्हीं शर्तों पर हैं जिन पर बन्नू जाने के समय थे।"

"अच्छी बात। मैं कल काम पर उपस्थित हो जाऊंगा।"

इतना कह वह उठकर वहां से आने लगा तो विमला ने पूछा, "कहां ठहरे हैं आप ?"

"होटल स्टैन्डर्ड में।"

"आप फिरोजपुर रोड वाली कोठी पर क्यों नहीं गये ?"

विमला के इस प्रश्न से बिहारीलाल घबराया; फिर अपने आपको संभालकर बोला, "प्रेम से एक बात पूछकर वहां जा सकता हूँ।"

प्रेम इस उत्तर का आशय नहीं समझी। उसने बात टालने के लिये कह दिया, "उस कोठी की मालिक अब विमलादेवी है।"

"विमलादेवी ? क्या कह रही हो प्रेम ?"

"ठीक ही कह रही हूँ। पिता जी का देहान्त हो गया है और मरने से पूर्व उन्होंने वसीयत कर विमला को पूर्ण सम्पत्ति दे दी है।"

बिहारीलाल अवाक मुख खड़ा रह गया। विमला ने कहा, "परन्तु बहिन प्रेम, मैं वह वसीयतनामा तुम्हारे नाम बदल देने को तैयार हूँ। मैंने तो उस सम्पत्ति को हाथ भी नहीं लगाया।"

इससे तो बिहारीलाल को और भी अचम्भा हुआ। प्रेम ने फिर कहा, "वह तो मैं अब ले नहीं सकती।"

"क्यों ?" बिहारीलाल ने विस्मय में पूछा।

"जिनकी सम्पत्ति थी उन्होंने मुझे उसके योग्य नहीं समझा।"

"उन्होंने आपको इससे वंचित कर भूल की है।" विमला ने कहा।

"इस बात को इस प्रकार मानकर मैं अपने पिता का अपमान करना नहीं चाहती। विमला बहिन, मैं इसको वापिस लेना नहीं चाहती। आप जो कुछ इसका चाहें करें।" इतना कह उसने बिहारीलाल की ओर देखकर पूछा, "मैं आपसे कब मिल सकती हूँ ?"

"अभी चलिये मेरे साथ।"

प्रेम ने सेठ साहब की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखा। सेठ साहब ने उसके देखने का आशय समझकर कह दिया, "मेरी मोटर निकलवा लो।"

प्रेम ड्राइवर को कहने चली गई। बिहारीलाल ने विमला से पूछा,

"तुम कहां रहती हो ?"

"बाबू मोहनलाल के मकान में।"

"फिरोजपुर रोड पर क्यों नहीं ?"

"मैंने डाक्टर साहब की सम्पत्ति अपने लिये नहीं ली।"

"तो किसके लिये ली है ?"

"इस विषय में बाबू जगन्नाथ आपको बतावेंगे।"

"मुझे अपने घर की चाबी चाहिये।"

"वह बाबू जगन्नाथ के पास है। आप उनसे मांग सकते हैं।"

"उनके पास क्यों है ?"

"डाक्टर साहब की वसीयत के वही एक्ज़ीक्यूटर हैं और वहां पर कुछ था सब उनके अधिकार में है।"

"ये चाबियां भी उनके पास क्यों ?"

"प्रेम के पास थीं। वह जब कैद हुई तो चाबियां कोठी में थीं। वहां रे सामान के साथ वे भी उनके अधिकार में हो गयीं।"

"तो तुम वे चाबियां उनसे लेकर मुझे होटल में पहुचा सकती हो ?"

"जैसी आज्ञा हो।"

"तो सायंकाल ८ बजे स्टैंडर्ड होटल में आना, खाना वहीं खाना।"

इसी समय प्रेम आगयी थी। उसने बिहारीलाल से कहा, "मोटर ागयी है। चलिये।"

उनके चले जाने के पश्चात् सेठ साहब ने रामलाल से पूछा, मोहिनी अब क्या चाहती है ?"

"आपका आशीर्वाद।"

"अच्छी बात है। मैं उससे स्वयं मिल लेता हूं।"

इतना कह सेठ साहब उठ मोहिनी के कमरे में चले गये। अब ।यंगरूम में विमला, जगन्नाथ और रामलाल रह गये थे। जगन्नाथ ने हा, "बहुत ही चतुर औरत है।"

रामलाल ने अचम्भे में पूछा, "कौन ?"

"आपकी नई माता। आपके पिता ने प्रेम से विवाह कर लिया है।"

"हां, परन्तु देखें अब बिहारीलाल से कैसे पटती है?"

[१०]

नरगिस को यह पता था कि बिहारीलाल की दो स्त्रियां और भी हैं। विवाह के समय तो वह यह समझती थी कि बिहारीलाल पुनः पञ्जाब जायेगा ही नहीं और कभी गया भी तो पुनः उसके गांव में लौट आयेगा। परन्तु परिस्थिति ऐसी हुई कि उसे स्वयं वहां से भाग जाना पड़ा। बिहारीलाल का पंजाब लौट आना तो उसके भाग आने के कारण ही हुआ था। अब यहां आकर वह यह जानने के लिये बहुत उत्सुक थी कि उसकी सौतिनें किस प्रकार उससे मिलेंगी।

होटल में पहुंचने के पश्चात् स्नानादि से छुट्टी पा जब बिहारीलाल फार्मास्युटिकल कम्पनी के दफ़्तर आने लगा तो नरगिस ने पूछा, "आप अपनी पहली बीवियों से भी मिलेंगे?"

"अभी तो मैं उन लोगों के पास जा रहा हूँ जिनकी नौकरी करता था। वहां से बातचीत कर फिर अपनी दूसरी बीवी से मिलने जाऊंगा और यदि हो सका तो उसे यहां लेता आऊंगा। पहली बीवी से मेरा झगड़ा है। वह शायद नहीं मिलेगी।"

"और कब तक लौटियेगा?"

"बाद दोपैहर दो तीन बजे तक।"

बिहारीलाल के चले जाने के पश्चात् नरगिस कमरे का दरवाज़ा भीतर से बन्दकर सो गयी। रात भर के सफर के कारण वह बहुत थकी हुई थी। लगभग दोपैहर के दो बजे दरवाज़े के खटखटाये जाने से उसकी नींद खुली। उसने दरवाज़ा खोला और बिहारीलाल के साथ एक औरत को देख समझ गयी कि वह कौन है।

बिहारीलाल ने प्रेम को अभी तक नहीं बताया था कि वह एक और औरत विवाह कर लाया है। प्रेम ने दरवाज़ा खोलने वाली को देखा तो विस्मय में उसका मुख देखने लगी। बिहारीलाल ने परिचय कराया।

"नरगिस," उसने भीतर प्रवेश करते हुए कहा। इस समय प्रेम भीतर आगयी थी और नरगिस फिर दरवाज़ा बन्द कर रही थी। "नरगिस, देखो यह कौन साथ आई हैं? यह हैं," इस समय नरगिस प्रेम के पास आकर खड़ी होगयी थी, "मेरी दूसरी बीवी, प्रेम।"

"और," नरगिस की ओर संकेत कर प्रेम को बताया, "यह हैं नरगिस मेरी तीसरी बीवी।"

"आप तो मुग़ल बादशाह बनते जा रहे हैं," प्रेम ने मुस्कराते हुए कहा, "क्या दो से सन्तोष नहीं हुआ था?"

"प्रेम, तुम जानती हो कि मैं तो उन्मुक्त प्रेम का पुजारी हूं। मैं किसी के प्रेम को ठुकरा नहीं सकता। यह मेरी जान बचाने वाले एक खुदा-दोस्त हकीम की लड़की हैं। मैं घायल हो जब मरणासन्न एक गड्हे में पड़ा था तब इनके पिता और इन्होंने ही मेरी जान बचाई थी। फिर अपने घर ले जाकर एक मास पर्यन्त मेरी सेवा-सुश्रूषा करती रहीं। मैं इनसे प्रेम करता हूँ।"

"आपको इतनी सफाई देने की आवश्यकता नहीं। मुझे आपके इस विवाह को देखकर तथा और भी जो आप भविष्य में करेंगे उससे भी रोष नहीं होगा। मैं आपको इस विवाह पर बहुत बहुत बधाई देती हूं।"

बिहारीलाल ने समझा कि प्रेम यह सब नाराज़ हो क्रोध में कह रही है। उसने पूछा, "तो आपको मेरा यह विवाह पसन्द नहीं है क्या?"

"मैंने तो यह नहीं कहा। परन्तु विमला के लिये जो बात आप उचित नहीं समझते, वह अपने लिये कैसे उचित समझते हैं?"

"मैं लुकाव-छुपाव को समाज के विकास के लिये हानिकर समझता हूँ। देखो, विमला के और गुलामरसूल के विषय में चाहे भ्रम होगया हो, पर डाक्टर साहब, आपके पिता, के विषय में तो कोई भ्रम को स्थान ही नहीं रहा।"

"क्या कहा आपने?"

"यही कि मुझे सन्देह, नहीं नहीं, विश्वास है कि विमला ने डाक्टर

साहब पर अपना जादू चलाया है।"

इस समय तक सब कमरे में रखी कुर्सियों पर और पलङ्ग पर बैठ गये थे। प्रेम अपने पिता को इतना रसिक नहीं समझती थी। इस पर भी वह निश्चय से नहीं कह सकती थी। उसने बिहारीलाल के कहने का अभिप्राय समझ कहा, "यद्यपि मैं निश्चय से नहीं कह सकती, तो भी अपने पिता के स्वभाव और आयु के ज्ञान से यह कह सकती हूँ कि इस समय भी आप भूल कर रहे हैं।"

"मुझे तो कोई ऐसा माई का लाल दिखाई नहीं देता जो अपने जीवन भर की कमाई फोकट में किसी औरत को दे दे।"

प्रेम को सेठ धन्नाराम का बूढ़ी अवस्था में उससे प्रेम करना स्मरण हो आया और वह सन्देह में पड़ी हुई चुपकर गयी।

बिहारीलाल ने फिर कहा, "मुझे तो विश्वास हो रहा है कि विमला ने तुमसे अपना बदला ले लिया है। मुझे इससे रोष नहीं। मेरा कहना तो यह है कि वह यह आचरण लुकाव-छुपाव से क्यों करती है?"

"यदि पिता जी जीते रहते और विमला उनकी स्त्री प्रत्यक्ष रूप से बन जाती तो आप कैसा समझते?"

"न अच्छा, न बुरा। अच्छा इसलिये नहीं समझता कि यह सम्बन्ध प्रेम हो जाने से नहीं हुआ। एक पचपन वर्ष के बूढ़े से एक युवती को प्रेम नहीं हो सकता।"

"क्यों नहीं हो सकता? क्या प्रेम करने का अर्थ लैंगिक सम्बन्ध से ही है? मैं ऐसा नहीं समझती। मैं तो यह मानती हूं कि प्रेम तो किसी के गुणों से होता है। लैंगिक योग्यता एक गुण है। मनुष्य में अनेकों अन्य गुण हैं। यदि दूसरे गुण बहुत प्रबल हों तो बिना लैंगिक योग्यता के भी प्रेम हो सकता है।"

"छोड़ो इस बात को, प्रेम! मैं तो तुम्हें इनसे मुलाकात कराने लाया था। देखो यह सुन्दर है। विमला से अधिक या कम?"

"सुन्दर तो बहुत है। विमला से भी अधिक है। पर एक बार आपने

विमला को मुझसे अधिक सुन्दर होते हुए भी छोड़ दिया था।"

"उससे मेरे विचार नहीं मिलते थे। वह पूजा-पाठ, भगवान, रामायण, शास्त्र की चर्चा करती रहती थी। पांव को छूना, पद-रज सिर पर चढ़ाना, पति-भक्ति और पति के गले में फांस की भांति पड़े रहना पसन्द करती है।"

"तो क्या आप ऐसा नहीं मानतीं?"

"मानती हूँ, परन्तु फिर आप विमला से अधिक सुन्दर भी तो हैं।"

"आपकी युक्तियां कुछ ढीली पड़ती जाती हैं। यदि विमला से अधिक सुन्दर होने से इनके खुदा और इस्लाम को आप सहन कर सकते हैं तो विमला के मुझसे अधिक सुन्दर होने पर उसके भगवान और हिन्दुत्व को सहन क्यों नहीं कर सके?"

"पर मैं तुम्हें तो छोड़ नहीं रहा। तुम्हारी चतुराई और विचार-समानता ही तुमसे प्रेम करने में मुख्य कारण हैं।"

"परन्तु मैं आपको छोड़ रही हूं।"

बिहारीलाल पर घड़ों पानी पड़ गया। वह विस्मय में चुप कर गया। इस समय प्रेम को, जब वह पिता की सम्पत्ति से वंचित कर दी गयी थी, वह छोड़ना उचित नहीं समझता था। परन्तु यहां तो प्रेम ही छोड़ने को उद्यत होगयी थी।

"क्यों? क्या मैंने नरगिस से विवाह कर लिया है, इसलिये?"

"नहीं। मैंने किसी और से विवाह कर लिया है।"

"अच्छा! किससे?"

"सेठ धन्नाराम से।"

अचम्भे में बिहारीलाल कुर्सी से उठ विस्मय में प्रेम का मुख देखने लगा। प्रेम मुस्कराती हुई बिहारीलाल के विस्मय को देख आनन्द अनुभव करती रही। नरगिस, जो इस वार्तालाप को ध्यान से सुन रही थी, समझती थी कि प्रेम को उसके विवाह पर नाराज़गी है। उसने पूछा, "आप मेरे विवाह की वजह से नाराज़ हैं क्या?"

"नाराज़ नहीं हूँ।"

"तो फिर आप यह क्यों कहती हैं कि आपने दूसरा विवाह कर लिया है?"

"मैं झूठ नहीं कह रही। यह बात ठीक है।"

"कि आपने और विवाह कर लिया है?"

"जी।"

"तो आप इनसे मुहब्बत नहीं करती थीं?"

"करती थी। परन्तु अब इनसे ज़्यादा उनको करने लगी हूँ।"

"इनसे मुहब्बत कर क्या भला कोई फिर दूसरे से मुहब्बत कर सकता है? मैं तो समझती हूं कि आपकी मुहब्बत हकीकी नहीं होगी।"

प्रेम इससे कुछ शरमिन्दा तो हुई, परन्तु फिर पूछने लगी, "आप इनसे अज़हद मुहब्बत करती हैं क्या?"

"जी।"

"क्या आप भी आपसे उतनी ही मुहब्बत करते हैं?"

"यह देखना मेरा काम नहीं। मुझे तो अपनी मुहब्बत का पता है। यह इतनी है कि मैं अपने मन में यह इरादा रखने पर भी कि मैं अपने ख़ाविन्द की अकेली बीवी बनूंगी, इनके लिये यह इरादा छोड़ने पर भी तैयार होगयी हूं।"

"ओह! देखूंगी यह मुहब्बत कितने दिन तक रहती है।"

"अलहमदुल्लिला" "यह आप क्या कहती हैं? ऐसा कभी नहीं हो सकता।"

अब तक बिहारीलाल का चित्त स्थिर होगया था। उसके मन में प्रेम के लिये कुछ कुछ घृणा का भाव पैदा होगया था। उसने पूछा, "सेठ साहब ने तुम्हारे नाम कितनी सम्पत्ति लिख दी है?"

"मिस्टर बिहारीलाल, आपके मन में ये गन्दे विचार कब से आने लगे हैं? क्या मैंने कभी धन का लोभ किया है? आप विमला को भी इसी प्रकार की समझते हैं। स्त्रियों के लिये आप बहुत ओछे विचार

रखते हैं।"

"प्रेम, क्षमा करना। पर मैं ऐसा ही समझता हूँ। ये अपनी सन-धन और वस्त्र-भूषणों को अपने जीवन का ध्येय समझती हैं। संसार में धन इनका परम लक्ष्य है।"

"यह सत्य नहीं है," प्रेम ने क्रोध में कहा।

"आपके व्यवहार से तो यही सिद्ध होता है।"

"आप हैं लालबुझक्कड़। देखिये, मैं आपको अपने अन्तःकरण का चित्र खैंचकर बताती हूँ, शायद इससे आपका भ्रम दूर हो जाये। हड़-ताल के दिनों में मैंने यह अनुभव किया था कि सरकार और दूसरी जनता मज़दूरों के पक्ष में नहीं है। इसमें कारण यह है कि मज़दूरों के पक्ष में प्रचार-कार्य पर्याप्त नहीं होता था। प्रचार में कमी का कारण रुपया था। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इस समय की परिस्थिति में या तो मज़दूरों की सहायता के लिये सरकार को तैयार किया जाय या धनी-मानी लोगों को। सरकार को तैयार करना राजनीतिक संस्था का काम है। इसमें राष्ट्रीय-संस्था ही यत्न कर सकती है। मज़दूरों को उसमें सम्मि-लित हो जाना चाहिये। दूसरा ढङ्ग है धनी लोगों को मज़दूरों के अनुकूल बनाना। मैंने अपने उपायों से निराश होकर सेठ साहब को प्रेरणा करने का यत्न किया और यह मेरा व्यवहार भी इस प्रेरणा का एक भाग है।"

"ओह! तो तुम शहीद बन रही हो। शाबाश! मैं तुम्हारे प्रयत्न की सराहना करता हूँ।"

इस समय सायंकाल की चाय का समय होगया था। बिहारीलाल ने चाय मंगवाई और उसने प्रेम और नरगिस के साथ पी।

पश्चात् प्रेम उठ पड़ी और बोली, "मेरा और आपका मार्ग पृथक पृथक है। क्या अच्छा न होगा यदि हम परस्पर एक दूसरे को भूल जायें?"

"यत्न करूंगा," बिहारीलाल ने कहा।

प्रेम ने कहा, "विदा" और चल पड़ी।

"खुश रहो," बिहारीलाल का उत्तर था।

प्रेम के चले जाने के पश्चात् नरगिस ने बिहारीलाल से पूछा, "इसका क्या मतलब है?"

"बात साफ है। वह अब मेरे पास नहीं रहना चाहती।"

"इसने किससे विवाह कर लिया है?"

"सेठ साहब से जिनकी मैं नौकरी करता हूँ। करोड़ों रुपयों की उनकी सम्पत्ति है, और पचास वर्ष के बूढ़े हैं।"

"लाहौलविला! यह कैसी औरत है? मैं तो यह समझती हूँ कि कि आपसे उलफ़त हो गयी है तो अब और किसी से नहीं हो सकती। अगर आप नाराज़ हो छोड़ भी देंगे तब भी मेरी मुहब्बत ठंडी नहीं हो सकती।"

बिहारीलाल ने बात बदलकर कहा, "मेरी पहली बीवी भी आयेगी। वही जिसकी बाबत हम बातें कर रहे थे।"

"कौन? जिसे इसके वालिद ने अपनी कुल जायदाद दे दी है?"

"हां, मेरे यहां से चले जाने के बाद तो यहां इन्कलाब ही हो गया मालूम होता है। मालूम होता है कि मेरी पहली बीवी ने, मेरी दूसरी बीवी से अपने खाविंद को छीन लेने के बदले में उसके वालिद से मुहब्बत पैदा कर, उसकी जायदाद को छीन लिया है और दूसरी बीवी ने यह ज़ाहिर करने के लिये कि वह अपने वालिद की जायदाद को हेय समझती है उस से कई गुणा ज्यादा अमीर से विवाह कर लिया है।"

"इसका तो यह मतलब हुआ कि दोनों ही बेवकूफ़ हैं।"

[११]

मोहिनी को विदा करने के वक्त सेठ साहब, रामलाल, विमलादेवी और प्रेमदेवी और कुछ मोहिनी की सहेलियां उपस्थित थीं। सेठ साहब जिस बात से प्रसन्न थे वह यह थी कि दूसरी लड़कियों के व्यवहार के विपरीत उसकी आंखों में आंसू नहीं थे। परन्तु विमला और रामलाल इसे मोहिनी के दृढ़ निश्चय का सूचक समझते थे और इस दृढ़ निश्चय

के परिणाम से मन ही मन डर रहे थे।

विदाई बहुत धूमधाम से की गई। सेठ साहब और रामलाल स्टेशन तक छोड़ने गये। जब ये लोग कोठी से मोटरों में विदा हो गये तो विमला को बिहारीलाल की याद आई। विमला जब जाने लगी तो प्रेम ने पूछा, "विमलादेवी जी, कहां जाइयेगा ?"

"मुझे उनसे मिलने के लिये होटल में जाना है और फिर घर जाऊंगी।"

"ठीक है। वहां आपको उनकी तीसरी बीवी के दर्शन होंगे।"

"उन्होंने और विवाह कर लिया है क्या ?"

"हां, वजीरस्तान से ही एक पठान लड़की लाये हैं।"

विमला चुप रही और कैनाल रोड से फिरोज़पुर रोड और वहां से घर की चाबी ले स्टैंडर्ड होटल में जा पहुंची।

विमला जब कमरे में पहुँची तो वहां नरगिस को बैठा देख समझ गयी कि यह वही है जिसके विषय में प्रेम ने कहा था। विमला ने पूछा, "बाबू बिहारीलाल यहीं रहते हैं ?"

"हां, आइये। वह आने वाले ही हैं। साढ़े आठ बजे आने को कह गये थे। आप उनकी बीवी हैं न, आइये। वह आपके आने की बात कह रहे थे।"

विमला कमरे में जा पहुँची और नरगिस को सिर से पांव तक देख पूछने लगी, "आपसे उनका विवाह हुआ है ?"

नरगिस ने समझा कि प्रेम की भांति यह भी नाराज़ होगी। इस कारण वह चुप रही। विमला एक कुर्सी पर बैठ गयी और कुछ देर चुप रह पूछने लगी, "आपका नाम क्या है, बहिन जी ?"

"नरगिस।"

"बहुत सुन्दर नाम है। जैसा नाम है वैसा ही रूप है। वह देश कितना अच्छा होगा जहां नरगिस पैदा और विकसित हो सकता है ?"

"देश तो सुन्दर नहीं है। निहायत डरावना है और वहां के लोग

भी खूंखार हैं।"

"दिल नहीं मानता। खैर, आपसे मिलकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। आपकी इनसे भेंट कहां हुई थी?"

"मैं अपनी अम्मी और अब्बाजान के साथ बन्नू से अपने गांव नख-लिस्तान को जा रही थी कि इनको एक गड्हे में घायल पड़ा देखा। मैंने अब्बाजान से कहा कि कोई मुसाफ़िर है। अब्बाजान हकीम हैं। उन्होंने इन्हें देखा और दवाई दी। फिर ज़ख्मों पर दवाई लगाई, जिससे इनकी जान बच गयी। मैंने जब इनको घायल और बेहोश देखा था, तभी इनकी खूबसूरती ने मेरे दिल पर गहरा असर डाला था। तभी से मैं इन्हें मुहब्बत करने लगी थी।"

"और यह भी आपसे मुहब्बत करते हैं?"

"बहुत।"

"शुकर है भगवान का।"

"क्यों? आप ऐसा क्यों कहती हैं?"

"कुछ नहीं। कब तक आने को कह गये हैं?" विमला ने बात बदल दी।

अब नरगिस ने पूछा, "आपका नाम विमला है?"

"जी हां।"

"आपका इनकी दूसरी बीवी प्रेम के वालिद से क्या ताल्लुक था। वह आपको लाखों रुपयों की जायदाद दे गये हैं।"

"मैं उनसे केवल एक दिन मिलने गयी थी। असल में प्रेम बहिन से इनका हालचाल पूछने गयी थी, और डाक्टर साहब वहां मिल गये। वह मुझे बेटी बेटी कहकर पुकारते थे और अगले दिन जब उनका देहान्त हुआ तो अपनी वसीयत में मुझे वारिस बना गये।"

"उनका ख्याल है कि आपने डाक्टर साहब से नाजायज़ ताल्लुक बनाकर उनसे जायदाद ली है।"

"विमला के माथे पर त्योरी चढ़ गयी, परन्तु एक क्षण ही वह वहां रही। पीछे विमला ने मुस्कराते हुए कहा, "यह उनकी भूल है। एक बार

पहले भी उन्होंने ऐसी भूल की थी।"

"कब?"

"बन्नू जाने से पहले की बात है। एक आदमी था, जिसका नाम गुलामरसूल था। उसने मुझे एक चिट्ठी लिखी जिसमें मुझसे मुहब्बत ज़ाहिर की गयी थी। वह चिट्ठी इन्होंने देख ली जिससे यह समझने लगे कि मैं भी उससे मुहब्बत करती हूं। बस नाराज़ हो गये। मेरा विचार है कि अभी भी नाराज़ हैं। मगर उस वक्त भी वह भूल में थे।"

"आपने उन्हें बताया नहीं?"

"एक चिट्ठी लिखी थी, परन्तु उसका उत्तर नहीं आया।"

"तो आपने दोबारा नहीं लिखा।"

"तब तक वह बन्नू चले गये थे और वहां का उनका पता मालूम नहीं था।"

"उन्होंने यह बात मुझसे नहीं बताई।"

विमला चुप रही। नरगिस कुछ काल तक गम्भीरता से उसके मुख पर देखती रही। पश्चात् पूछने लगी, "आप तो अब बहुत धनी हो गयी हैं?"

"नहीं, मैं डाक्टर साहब के रुपये को नहीं ले रही।"

"क्यों?"

"वह मेरा नहीं है। मैंने उसके पाने के लिये कोई महनत नहीं की।"

"जब कभी किसी को किसी से मुहब्बत हो जाये तो वह क्या अपने महबूब को कुछ नज़र नहीं कर सकता?"

"कर सकता है और प्रेमिका भी उसके बदले में कुछ देती है। यहां तो मैंने कुछ नहीं किया। मैं इतने धन को पाने की हक़दार नहीं हूँ।"

"तो फिर इसे क्या करोगी?"

"इसे पुत्र के काम में लगा दूंगी। इसमें से एक पाई भी नहीं लेना चाहती। मैं अपने गुज़र के लिये नौकरी करती हूँ।"

"कितने रुपये माहवार मिलते हैं?"

"अस्सी रुपये। इनमें बहुत अच्छी तरह गुज़र हो जाता है।"

भी खूंखार हैं।"

"दिल नहीं मानता। खैर, आपसे मिलकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। आपकी इनसे भेंट कहां हुई थी?"

"मैं अपनी अम्मी और अब्बाजान के साथ बन्नू से अपने गांव नखलिस्तान को जा रही थी कि इनको एक गड्ढे में घायल पड़ा देखा। मैंने अब्बाजान से कहा कि कोई मुसाफ़िर है। अब्बाजान हकीम हैं। उन्होंने इन्हें देखा और दवाई दी। फिर ज़ख्मों पर दवाई लगाई, जिससे इनकी जान बच गयी। मैंने जब इनको घायल और बेहोश देखा था, तभी इनकी खूबसूरती ने मेरे दिल पर गहरा असर डाला था। तभी से मैं इन्हें मुहब्बत करने लगी थी।"

"और यह भी आपसे मुहब्बत करते हैं?"

"बहुत।"

"शुकर है भगवान का।"

"क्यों? आप ऐसा क्यों कहती हैं?"

"कुछ नहीं। कब तक आने को कह गये हैं?" विमला ने बात बदल दी।

अब नरगिस ने पूछा, "आपका नाम विमला है?"

"जी हां।"

"आपका इनकी दूसरी बीवी प्रेम के वालिद से क्या ताल्लुक था। वह आपको लाखों रुपयों की जायदाद दे गये हैं।"

"मैं उनसे केवल एक दिन मिलने गयी थी। असल में प्रेम बहिन से इनका हालचाल पूछने गयी थी, और डाक्टर साहब वहां मिल गये। वह मुझे बेटी बेटी कहकर पुकारते थे और अगले दिन जब उनका देहान्त हुआ तो अपनी वसीयत में मुझे वारिस बना गये।"

"उनका ख्याल है कि आपने डाक्टर साहब से नाजायज़ ताल्लुक बनाकर उनसे जायदाद ली है।"

"विमला के माथे पर त्योरी चढ़ गयी, परन्तु एक क्षण ही वह वहां रही। पीछे विमला ने मुस्कराते हुए कहा, "यह उनकी भूल है। एक बार

पहले भी उन्होंने ऐसी भूल की थी।"

"कब ?"

"बन्नू जाने से पहले की बात है। एक आदमी था, जिसका नाम गुलामरसूल था। उसने मुझे एक चिट्ठी लिखी जिसमें मुझसे मुहब्बत ज़ाहिर की गयी थी। वह चिट्ठी इन्होंने देख ली जिससे यह समझने लगे कि मैं भी उससे मुहब्बत करती हूं। बस नाराज़ हो गये। मेरा विचार है कि अभी भी नाराज़ हैं। मगर उस वक्त भी वह भूल में थे।"

"आपने उन्हें बताया नहीं ?"

"एक चिट्ठी लिखी थी, परन्तु उसका उत्तर नहीं आया।"

"तो आपने दोबारा नहीं लिखा।"

"तब तक वह बन्नू चले गये थे और वहां का उनका पता मालूम नहीं था।"

"उन्होंने यह बात मुझसे नहीं बताई।"

विमला चुप रही। नरगिस कुछ काल तक गम्भीरता से उसके मुख पर देखती रही। पश्चात् पूछने लगी, "आप तो अब बहुत धनी हो गयी हैं ?"

"नहीं, मैं डाक्टर साहब के रुपये को नहीं ले रही।"

"क्यों ?"

"वह मेरा नहीं है। मैंने उसके पाने के लिये कोई महनत नहीं की।"

"जब कभी किसी को किसी से मुहब्बत हो जाये तो वह क्या अपने महबूब को कुछ नज़र नहीं कर सकता ?"

"कर सकता है और प्रेमिका भी उसके बदले में कुछ देती है। यहां तो मैंने कुछ नहीं किया। मैं इतने धन को पाने की हकदार नहीं हूँ।"

"तो फिर इसे क्या करोगी ?"

"इसे पुन्न के काम में लगा दूंगी। इसमें से एक पाई भी नहीं लेना चाहती। मैं अपने गुज़र के लिये नौकरी करती हूँ।"

"कितने रुपये माहवार मिलते हैं ?"

"अस्सी रुपये। इनमें बहुत अच्छी तरह गुज़र हो जाता है।"

भी खूंखार हैं।"

"दिल नहीं मानता। खैर, आपसे मिलकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। आपकी इनसे भेंट कहां हुई थी?"

"मैं अपनी अम्मी और अब्बाजान के साथ बन्नू से अपने गांव नखलिस्तान को जा रही थी कि इनको एक गड्हे में घायल पड़ा देखा। मैंने अब्बाजान से कहा कि कोई मुसाफिर है। अब्बाजान हकीम हैं। उन्होंने इन्हें देखा और दवाई दी। फिर ज़ख्मों पर दवाई लगाई, जिससे इनकी जान बच गयी। मैंने जब इनको घायल और बेहोश देखा था, तभी इनकी खूबसूरती ने मेरे दिल पर गहरा असर डाला था। तभी से मैं इन्हें मुहब्बत करने लगी थी।"

"और यह भी आपसे मुहब्बत करते हैं?"

"बहुत।"

"शुकर है भगवान का।"

"क्यों? आप ऐसा क्यों कहती हैं?"

"कुछ नहीं। कब तक आने को कह गये हैं?" विमला ने बात बदल दी।

अब नरगिस ने पूछा, "आपका नाम विमला है?"

"जी हां।"

"आपका इनकी दूसरी बीवी प्रेम के वालिद से क्या ताल्लुक था। वह आपको लाखों रुपयों की जायदाद दे गये हैं।"

"मैं उनसे केवल एक दिन मिलने गयी थी। असल में प्रेम बहिन से इनका हालचाल पूछने गयी थी, और डाक्टर साहब वहां मिल गये। वह मुझे बेटी बेटी कहकर पुकारते थे और अगले दिन जब उनका देहान्त हुआ तो अपनी वसीयत में मुझे वारिस बना गये।"

"उनका ख्याल है कि आपने डाक्टर साहब से नाजायज़ ताल्लुक बनाकर उनसे जायदाद ली है।"

"विमला के माथे पर त्योरी चढ़ गयी, परन्तु एक क्षण ही वह वहां रही। पीछे विमला ने मुस्कराते हुए कहा, "यह उनकी भूल है। एक बार

पहले भी उन्होंने ऐसी भूल की थी।"

"कब ?"

"बन्नू जाने से पहले की बात है। एक आदमी था, जिसका नाम गुलामरसूल था। उसने मुझे एक चिट्ठी लिखी जिसमें मुझसे मुहब्बत ज़ाहिर की गयी थी। वह चिट्ठी इन्होंने देख ली जिससे यह समझने लगे कि मैं भी उससे मुहब्बत करती हूं। बस नाराज़ हो गये। मेरा विचार है कि अभी भी नाराज़ हैं। मगर उस वक्त भी वह भूल में थे।"

"आपने उन्हें बताया नहीं ?"

"एक चिट्ठी लिखी थी, परन्तु उसका उत्तर नहीं आया।"

"तो आपने दोबारा नहीं लिखा।"

"तब तक वह बन्नू चले गये थे और वहां का उनका पता मालूम नहीं था।"

"उन्होंने यह बात मुझसे नहीं बताई।"

विमला चुप रही। नरगिस कुछ काल तक गम्भीरता से उसके मुख पर देखती रही। पश्चात् पूछने लगी, "आप तो अब बहुत धनी हो गयी हैं ?"

"नहीं, मैं डाक्टर साहब के रुपये को नहीं ले रही।"

"क्यों ?"

"वह मेरा नहीं है। मैंने उसके पाने के लिये कोई महनत नहीं की।"

"जब कभी किसी को किसी से मुहब्बत हो जाये तो वह क्या अपने महबूब को कुछ नज़र नहीं कर सकता ?"

"कर सकता है और प्रेमिका भी उसके बदले में कुछ देती है। यहां तो मैंने कुछ नहीं किया। मैं इतने धन को पाने की हक़दार नहीं हूँ।"

"तो फिर इसे क्या करोगी ?"

"इसे पुन्न के काम में लगा दूंगी। इसमें से एक पाई भी नहीं लेना चाहती। मैं अपने गुज़र के लिये नौकरी करती हूँ।"

"कितने रुपये माहवार मिलते हैं ?"

"और डाक्टर साहब के रुपये से क्या करेंगी ?"

इस समय बिहारीलाल आगया। विमला को देख कहने लगा, "ओह ! तुम आगयी हो। बहुत अच्छा किया है। जान गयी हो यह कौन हैं ?"

"हां, प्रेम बहिन ने बताया था।"

"नरगिस, यह मेरी पहली बीवी है।"

"जी, मैं देखते ही समझ गयी थी।"

"ओह विमला ! बताओ यह कैसी हैं ?"

"बहुत खूबसूरत हैं। मैं आपको बधाई देती हूँ।"

"अच्छी बात है। मैं भी आपको मुबारिकबाद देता हूं।"

"मुझे ! भला क्यों ?"

"बहुत अच्छी मुर्गी फांसने के लिये।"

"मैं नहीं समझी !" विमला ने विस्मय प्रकट करते हुए पूछा।

"डाक्टर खन्ना कितनी सम्पत्ति छोड़ गये हैं ?"

"मैंने उन्हें नहीं फंसाया। वह स्वयं मुझे प्रेम के स्थान मान यह दे गये हैं, परन्तु मैं यह सब कुछ दान कर रही हूँ। मैंने अपना गुज़र अपनी नौकरी के वेतन से ही करना ठीक समझा है।"

"सत्य ? तुम अभी तक नौकर हो ? खद्दर-भण्डार वालों ने तुम्हें निकाला नहीं ?"

"जी नहीं। आपके पत्र के आने पर, जिसमें आपने मेरे पर लाञ्छन लगाया था, मैनेजर साहब ने जांच की थी और जब उन्हें विश्वास होगया कि आप भूल कर रहे थे तो उन्होंने आपकी चिट्ठी को फाड़ फेंका।"

"वहां से अब क्या मिलता है ?"

"अस्सी रुपये महीना।"

"ये लाखों रुपये छोड़कर नौकरी करोगी ?"

"ये लाखों रुपये मेरे नहीं हैं। मैंने वकील जगन्नाथ के कहने के अनुसार एक संस्था को यह सब धन दे दिया है। संस्था का नाम

'नागरिक अधिकार रक्षक समिति' है।"

"वह समिति क्या करती है?"

"लोगों के उन अधिकारों की, जिनको वे कानून से रखते हैं और जो प्रायः अफसरों की भूल, असावधानी अथवा स्वार्थ के कारण उनसे छीने अथवा हनन किये जाते हैं, रक्षा करने के लिये है।"

"इसकी क्या आवश्यकता है? सरकार ने ऐसे कामों के लिये कानून और अदालतें बना रखी हैं।"

"ठीक है, परन्तु अदालतों में न्याय इतना महंगा है कि एक साधारण व्यक्ति अन्याय सहन करना न्याय प्राप्त करने से अधिक सुगम पाता है।"

"तो इसमें आपकी संस्था क्या करेगी?"

"हम कुछ सांकेतिक (नमूने के तौर पर) मुकदमे लेकर, धन अपने पास से व्यय कर न्याययुक्त निर्णय लेते रहा करेंगे जिससे इन्तज़ामिया अफसरों को अन्याय करने का समय कम मिलेगा और साथ ही छोटी अदालतें भी निर्णय करते समय बहुत ध्यान रखा करेंगी।"

"इससे कुछ लाभ नहीं होगा। मुख्य कार्य स्वराज्य प्राप्त करना है।"

"ठीक है, पर हमारा विचार है कि स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात् भी ऐसी संस्था की आवश्यकता रहेगी। एक ओर तो यह काम है कि लोगों को अपने नागरिक अधिकारों का ज्ञान कराया जाये और दूसरी ओर यह संस्था सरकारी अफसरों के सिर पर अंकुश का काम करेगी। अभी तक तो मैं यह चाहती थी कि प्रेम बहिन इस जायदाद को मुझसे वापिस ले ले। परन्तु अब उसके इसे लेने से इन्कार करने के पश्चात् इस संस्था को मैंने अधिकार दे दिया है कि वह अपना काम आरम्भ कर दे। कल ही हम एक मुकदमा लड़ना चाहते हैं।

"एक मिस्टर पाल लोहारी मंडी में रहते हैं। वह कार्टल एण्ड कम्पनी में क्लर्क थे। एक मास हुआ है कि किसी ने एक चिट्ठी लिख दी थी कि वह बदमाश है और मुहल्ले वाले उससे बहुत तङ्ग हैं। पुलिस ने उसे बुलाकर जांच करनी आरम्भ की। उसे नित्य दस बजे बुलाकर

सायंकाल छोड़ देते थे। यह व्यवहार पन्द्रह दिन तक उसके साथ होता रहा। इस समय में उसकी नौकरी छूट गयी। इस पर उसने थानेदार के सामने जरा क्रोध में कहा, 'या तो मेरे पर मुकदमा करो या मुझे तंग न करो।'

"थानेदार ने गाली दी। इस पर उसने कहा, 'आपके इस गैर-कानूनी काम से मेरी नौकरी छूट गयी है और मैं हरजाने का आप पर दावा करूंगा।' इस पर मिस्टर पाल को एक पृथक कमरे में ले जाकर बुरी तरह पीटा गया।

"मिस्टर पाल के पास चोटों के लगने का डाक्टरी सर्टीफिकेट और थाने में पीटे जाने के साक्षी भी हैं। परन्तु एक चालीस रुपये माहवार का क्लर्क होने के कारण, वह भी अब नौकरी छूट चुकी हो, वह कुछ करने का साहस नहीं रखता। बाबू जगन्नाथ ऐसे मुकदमे बिना कुछ लिये करने के लिये मशहूर हैं, परन्तु वह भी तो बहुत धनी नहीं। इस कारण नागरिक अधिकार रक्षक समिति इस मुकदमे को लड़ रही है। हमारा विचार है कि इस मुकदमे को लड़ा जाय, कुछ समाचार पत्रों को इसमें रुचि दिलाई जाय और ऐसा आंदोलन खड़ा किया जाय कि थानेदार कम से कम लाहौर में ऐसी धींगा-मस्ती करने का साहस ही न कर सकें। हमारी संस्था, यदि हम मुकदमे में सफल हुए तो, इस मुकदमे की पूरी कार्यवाई छपवाकर प्रान्त भर के थानेदारों के पास भेजेगी। इसके साथ ही हम लोगों को ऐसे उपाय बतायेंगे कि जिससे वे ऐसे अन्याय से बच सकें।"

बिहारीलाल इस नयी प्रकार की लोक-सेवा करने के विचार से चकित रह गया। वह यद्यपि इस सेवा को इतना स्थायी प्रभाव रखने वाली नहीं समझता था, इस पर भी मन्दिर बनवाने, सबीलें लगवाने, हवन-यज्ञ करने इत्यादि कामों से उत्तम मानता था। उसने विमला से कहा, "यद्यपि मैं इससे अधिक उपयोगी काम करने को पसन्द करता, तो भी मैं तुम्हारे साहस पर तुम्हें बधाई देता हूं।"

"इसमें साहस की कौन बात है?" विमला ने बिहारीलाल से अपने

काम में दाद पाकर प्रसन्नता से देदीप्यमान होते हुए कहा, "मैं इस काम को राष्ट्र-सेवा में निर्माण-कार्य समझती हूं। मैं यह समझती हूं कि अच्छे अच्छे कानून बनवाने जहां राष्ट्र-सेवा है वहां उन कानूनों से लोगों को लाभान्वित करना भी राष्ट्र-सेवा है। दुर्भाग्य से अदालतों का ढंग ऐसा बन गया है और लोगों के लिये रोटी कमानी इतनी कठिन होगयी है कि लोग न्याय प्राप्त करने से अन्याय सहन करना सुगम समझने लगे हैं। इससे एक ओर तो लोगों की आत्मा मरती जा रही है और दूसरी ओर सरकारी अफसर निशंक भूल करने का स्वभाव बना रहे हैं।"

बिहारीलाल ने एकाएक बात बदलकर कहा, "खाना खाओगी न।"

"नहीं, आप खाइये।"

"क्यों?"

"एक समय आप भी तो परसा खाना छोड़ भाग आये थे।"

"तो तुम बदला लेना चाहती हो?"

"नहीं। बदला मैं आपसे लेने में न तो कोई लाभ समझती हूं और न ही अपना काम। मेरा तो यह प्रश्न है कि क्या आप अब मुझे अपने संग बैठकर खाना खाने योग्य मानते हैं?"

"क्या मतलब?"

"यही कि उस समय आप मुझे दुराचारिणी समझते थे, इसी से परसा खाना छोड़ चले आये थे। क्या अब वैसा नहीं समझते?"

"तुम क्या समझती हो?"

"मैं तो अपने व्यवहार में न तब और न अब कोई दोष पाती हूं।"

"तो फिर तुम तो मेरे साथ बैठकर खाना खाने के योग्य अपने को मानती हो?"

"ठीक, परन्तु यदि आप अभी भी वही विचार रखते हैं तो मैं आपको भ्रष्ट नहीं करना चाहती।"

इस पर बिहारीलाल चुप रहा। खाना आया। नरगिस और बिहारीलाल ने खाया। विमला चुपचाप सामने बैठे देखती रही। जब भोजन

समाप्त हो चुका तो विमला ने जेब से भाटी दरवाज़े वाले मकान की चाबी निकाल वहां मेज़ पर रखते हुए कहा, "क्या मैं अब जा सकती हूँ ?"

"फिर कब भेंट होगी ?"

"जब आप उचित समझेंगे ।"

विमला जाने से पूर्व बहुत ही सहिष्णुता से नरगिस से मिली। विमला ने कहा, "बहिन नरगिस, मैं दिल से चाहती हूँ कि जो सुख मेरे भाग्य में नहीं था वह तुम्हें मिले ।"

जब विमला चली गयी तो नरगिस ने बिहारीलाल से कहा, "आपकी यह बीवी दूसरे ढंग की है। ऐसा मालूम होता है कि इसके दिल में हसद और कीना नहीं है ।"

"यह तुमने बाहरी पॉलिशमात्र देखा है। भीतर से वह कुछ और है।"

"जब तक वह मेरे साथ ऐसा हमदर्दी से पुर सलूक रखती है, मन में वह चाहे कैसी हो मुझे उससे क्या ?"

[१२]

चौधरी सलीमुल्लाखां और रज़िया की मां जो आशायें रज़िया के विवाह से बांधे हुए थे वे सब कुटाली में ही रह गयीं। सेठ धन्नाराम ने रामलाल को अपनी जायदाद से पृथक कर उनके मनसूबों को ज्यों का त्यों धरा रहने दिया। जब रामलाल मैनेजरी से पृथक हो घर आ बैठा तब तो बैरिस्टर साहब के क्रोध का वारापार ही न रहा। वह नित्य अपनी लड़की से आकर लड़ जाते थे। रज़िया कहती, "अब्बाजान, इसमें मेरा क्या कसूर है ? हालात ही बदल गये हैं। और अगर आपने मुझे पहले बताया होता कि आप इस किस्म की उम्मीद लगाये बैठे हैं तो मैं उनसे इसके मुतल्लिक पूछगोछ लेती।"

इस पर रज़िया की मां ने एक दिन कह ही डाला, "काफ़िर से शादी भी की, अपना ईमान गंवाया और कुछ फ़ायदा भी न हुआ। जानती हो, मैंने अपने सब भूषण तुम्हें दे डाले थे।"

रज़िया नित्य के उलाहने सुन सुनकर थक गयी थी। उसने आज

क्रोध में पूछ ही लिया, "आप मुझे क्या करने को कहती हैं?"

"इस काफ़िर को छोड़ दो। हम कोर्ट में तुम्हारे तलाक़ का बन्दोबस्त कर देंगे।"

"और अगर मैं न छोड़ूँ तो?"

"तो हम तुम्हें छोड़ देंगे। हम कुछ खाकर मर जावेंगे। हम यह ग़रीबी की ज़लालत नहीं सहना चाहते।"

"आपको मैं इस समय कुछ दे नहीं सकती। हां, आपके ज़ेवर आप को लौटा सकती हूँ। कपड़े जो आपने दिये थे उनमें से कुछ तो ख़राब होगये हैं। बाक़ी आप ले जा सकते हैं।"

"तो दे दो," रज़िया की मां ने कहा।

रज़िया ने कहा, "अच्छी बात है। आज शाम से पहले यह सब आपके घर पहुंच जावेंगे।"

रज़िया यह सब चोरी २ अपने मां-बाप को देना नहीं चाहती थी। उसने सोचा कि रामलाल से कहेगी और वह ज़रूर उसका कहना मान सब कुछ जो उसके मां-बाप ने उसे दिया है वापिस कर देगा।

इस पर विश्वास करने के लिये बैरिस्टर साहब ने पूछा, "कौन देने आवेगा?"

"मैं उन्हें भेजूँगी।"

"अच्छी बात है। आज हमें हमारा सब खर्चा मिल जाना चाहिये। नहीं तो हम कल फिर यहां आकर झगड़ा करेंगे।"

रज़िया ने कहने को तो कह दिया कि उन्हें (रामलाल को) सब सामान देकर भेजेगी, परन्तु जब उसके माता-पिता चले गये तो उसे यह बात बहुत कठिन मालूम हुई। वह नहीं जानती थी कि किन शब्दों में अपने विचार प्रकट करे। अपनी कठिनाई को जान उसे अपने माता-पिता की कठोरता पर बहुत ही दुख हुआ। उसकी आंखें आंसुओं से भर आईं और वह बिलख २ कर रोने लगी।

सायंकाल जब रामलाल घर आया तो रज़िया का उतरा हुआ मुख

देख पूछने लगा, "रज़िया, क्या है ? तुम सूखकर आधी रह गयी हो।"

रज़िया ने कुछ उत्तर नहीं दिया, पर उसकी आंखें डबडबा आईं। रामलाल, जो कोठी के बरामदे में बैठा चाय की प्रतीक्षा कर रहा था, रजिया की आंखों को भरा हुआ देख चकित रह गया। वह समझा कि अवश्य कुछ बुरी बात हो गयी है। उसे बांह से पकड़कर वह भीतर कोठी में ले गया और बहुत प्यार से पूछने लगा, "क्या बात है रज़िया ?"

रज़िया कुछ बताती नहीं थी, पर रोती जाती थी। रामलाल के बहुत यत्न करने पर वह बोली, "अगर मैं आपको कोई ऐसी बात बताऊं जो आपको नापसन्द हो तो नाराज़ तो न होइयेगा ?"

"नाराज़! रज़िया कैसी बातें करती हो ? मैं तुमसे कभी नाराज़ हो सकता हूँ ? तुम अभी मुहब्बत के ठीक मायने नहीं समझती, इसी से ऐसी बातें करती हो। मैं तो मुहब्बत का एक ही मतलब समझता हूं। वह यह की अपने आपको महबूबा के सुख और आराम के लिये स्वाहा कर देना। बताओ तुम क्या चाहती हो ? जल्दी कहो। मुझसे तुम्हारे आसूं नहीं देखे जाते।"

"मुझे कहते शरम आती है। मुझे इस बात का पता भी नहीं था। जबसे मेरा विवाह हुआ है अम्मी और अब्बाजान यह कह रहे हैं कि उन्होंने मेरा विवाह एक अमीर घराने में कर अपनी माली हालत सुधारने की उमीद की थी और वे हमें ग़रीब देख बहुत अफसोस करते हैं।"

"मैं अब, इस हालत में जिसमें हूँ, उनकी मदद नहीं कर सकता। यह तो तुम जानती ही हो वरना मेरा अपना इरादा भी था कि उनको किसी अच्छे कारोबार पर लगा देता।"

"यह आपने पहले ही सोचा हुआ था ?"

"हाँ देखो, रज़िया जहां पानी होता है वहीं लोग पीने के लिये जाते हैं। रेगिस्तान में पानी की उम्मीद नहीं की जा सकती। मोहिनी के विवाह पर, जानती हो, मोहिनी के श्वसुर ने क्या मांगा था ? पांच लाख रुपया।"

"मगर वह लड़के वाले हैं। उनका मांगना सुहाता भी है। यहां तो

लड़की के बाप की बात बता रही हूं।"

"मैं लड़के और लड़की में कोई फरक नहीं मानता। अमीर को गरीब की मदद करनी ही चाहिये। मगर इस वक्त मैं खुद गरीब हूं। उनकी कैसे मदद करूं नहीं जानता।"

"वे तो अब यह चाहते हैं कि या तो मैं आपको छोड़ जाऊं या जो जेवर-कपड़े उनके यहां से लाई हूं उनको वापिस कर दूं।"

"तो तुम क्या चाहती हो?" रामलाल ने भय से कांपते हुए पूछा।

"मैं आपको छोड़ नहीं सकती। यह मेरे बस की बात नहीं।"

"तो ठीक है," रामलाल ने सुख का सांस लेते हुए कहा, "मैं उनका सामान वापिस कर देता हूं। अगर दिन फिर गये तो इससे कई गुणा ज़्यादा तुम्हें बनवा दूंगा।"

फिर कुछ सोचकर बोला, "अच्छा, तुम इसे रहने दो। मैं खुद जा कर उनसे तय कर आता हूँ।"

"क्या करियेगा?" रज़िया ने अचम्भे में पूछा।

"मैं उनसे पूछूंगा कि उनका कितने मोल का सामान था। उन्हें जितना वे कहेंगे दे आऊंगा।"

इतना कह रामलाल बाहर आ चाय पीने लगा। रज़िया भी सामने बैठी चाय पी रही थी। उसने कहा, "मुझे इस सब बात से बहुत दुख है।"

"दुख की कोई बात नहीं, रज़िया। तुम फिकर नहीं करो। मैं उन्हें राजी कर लूंगा। आखिर उनका कोई लड़का नहीं है और अगर तुम अपने पास से उन्हें कुछ दे देती हो तो इसमें कोई दुख या शरम की बात नहीं।"

जब रामलाल सलीमुल्लाखां बैरिस्टर की कोठी को जाने के लिये तैयार हुआ तो रज़िया ने पूछा, "मैं भी साथ चलूँ?"

"जैसे तुम्हारा मन करे।"

दोनों चल पड़े। पैदल ही वहां जा पहुंचे। चौधरी साहब दोनों को ख़ाली हाथ आते देख आगबबूला होगये। इस पर भी रामलाल के बात आरम्भ करने की प्रतीक्षा करने लगे। रज़िया की मां कुछ अधिक समझ-

दारी से पेश आईं। वह समझी कि जब आये हैं तो कुछ बात करने ही को तो आये हैं। पहले उनकी सुन ली जाये, पीछे बात करेंगे। उसने चाय इत्यादि के लिये पूछा। रामलाल ने कहा, "हम पीकर ही आ रहे हैं।"

कोठी के ड्रायंग-रूम में कुछ देर तक रामलाल रज़िया की मां से इधर-उधर की बातें करता रहा। चौधरी साहब मुख बनाये चुप बैठे रहे। अब रामलाल ने ही बात आरम्भ की। "आपने रज़िया को ज़ेवर-कपड़े वग़ैरा बनवाकर देने में बहुत खर्च कर दिया है, अम्मी?"

अम्मी इस प्रश्न से चकराईं। फिर कुछ सोचकर कहने लगीं, "हमारे पास जो कुछ नकद था सब लगा दिया है।"

"आपको ऐसा करना नहीं चाहिये था। मैंने तो कभी आपसे व्यर्थ का सामान बनवाने के लिये नहीं कहा। ख़ैर, जो कुछ हुआ सो हुआ। आपने विवाह पर कितना रुपया खर्च किया है?"

"बेटा, हमने समझा था कि लड़की सेठ साहब के लड़के से विवाह रहे हैं। कुछ तो देना ही चाहिये। फिर हमें उम्मीद थी कि विवाह के बाद तुम अपने वालिद साहब से कहकर चौधरी साहब को किसी अच्छे काम पर लगवा दोगे। मगर अब.......।"

कुछ सोचकर रज़िया की मां ने कहा, "हमारी उम्मीद पूरी नहीं हुई। और..." सिर नीचे कर आंखें फर्श पर गाड़कर बोली, "यहां तो गुज़र भी मुश्किल से हो रहा है।"

"अम्मीजान," रामलाल ने कहा, "सेठ साहब से तो मैं अभी कुछ कह नहीं सकता। मैं अपने लिये भी कुछ नहीं कहता तो किसी दूसरे की सिफ़ारिश कैसे कर सकता हूं। हां, इतना कर सकता हूं कि जो कुछ आपने खर्च किया है आपको दे दूं। आपने विवाह पर कितना रुपया खर्च किया है?"

चौधरी साहब ये सब बातें चुपचाप सुन रहे थे। उन्हें ख़याल आया कि कहीं रज़िया की मां कम खर्च न बता दे। उन्होंने बातों में दख़ल देकर कहा, "शादी पर पांच हज़ार रुपया, रज़िया की पढ़ाई पर दस हज़ार रुपया

और पांच हज़ार हम और लेंगे।"

रज़िया बाप के इतने अधिक दाम बताने पर बोल उठी, "अब्बा-जान! ..."

बाप ने उसे बोलने से रोकने के लिये बीच में ही कहा, "चुप रहो रज़िया। तुम्हें नहीं बोलना चाहिये।"

रज़िया की आंखों में आंसू भर आये। रामलाल ने उसके कान में कहा, "मेरी जान, घबराओ नहीं। सब कुछ ठीक होगा।"

उसने चौधरी साहब से कहा, "आपने क्या बताया है? रज़िया की तालीम पर दस हज़ार रुपया, शादी पर पांच हज़ार रुपया और पांच हज़ार और किस बात का?"

"यह रज़िया खुद का।"

"ओह! ठीक है। मुझे इसका तो ख्याल ही नहीं रहा था। सब बीस हज़ार आपको चाहिये।"

"हां फिलहाल! यों तो हमने उम्मीद लगाई हुई थी कि शादी के बाद हमारी कोठी, जो गिरवी पड़ी है, छूट जायेगी और मुझे कोई नौकरी मिल जायेगी।"

"देखिये बैरिस्टर साहब," रामलाल ने कुछ तेज़ी में कहा, "जब आप रज़िया के जिसम तक का दाम ले रहे हैं तो और क्या चाहिये आपको? अब आपका कुछ भी हक-हकूक उस पर नहीं रह जाता। लिखिये! बिल बनाइये और अभी सब रुपया लीजिये।"

चौधरी साहब रुपया पाने का नाम सुन फड़क उठे। उन्होंने फौरन एक कागज लेकर लिख दिया :—

'मिस्टर रामलाल!

कपड़े ज़ेवर वग़ैरा	५०००—०—०
खर्च तालीम पर	१००००—०—०
फुटकर मांग	५०००—०—०
कुल रुपया	२००००—०—०

नीचे चौधरी साहब ने दस्तखत कर दिये। रामलाल ने कहा, "आप यह भी लिख दें कि यह रकम वसूल पाई बज़रिया चैक सैन्ट्रल बैंक ग्राफ इंडिया नम्बर……, और आज की तारीख़ भी लिख दें।"

चौधरी साहब ने बहुत शान्ति से सब कुछ लिख दिया। रामलाल ने चैक-बुक निकाल बीस हज़ार रुपये का क्रॉस चैक देकर बिल और रसीद उठा जेब में रख ली।

अब खड़े होकर रामलाल ने कहा, "रज़िया, चलो चलें।" रज़िया घृणा के भाव में अपने माता-पिता को देख बिना सलाम किये कोठी से बाहर निकल आई। रामलाल ने दरवाजे के पास खड़े होकर कहा, "अगर आपने रज़िया को फिर तंग किया तो मैं इस सौदे को जाहिर कर दूंगा। हां, आप मुझसे मिल सकते हैं और मैं, यदि हो सका तो, आपकी और भी सहायता करूंगा।"

मार्ग में रज़िया ने कहा, "आप तो कह रहे थे कि आपके पास नकद रुपया नहीं है।"

"बैंक में तो इतना रुपया नहीं है, मगर इस अंगूठी को बेच कल रुपया जमा करा दूंगा। इसका दाम चालीस हज़ार पड़ चुका है।"

"इसे बेच दीजियेगा?"

"हां, चालीस हज़ार इस हीरे का दाम है, मगर तुम्हारे सामने तो यह कुछ भी नहीं। मैं तुम्हारी कीमत चालीस लाख से भी ज्यादा लगाता हूँ।"

"तब तो अब्बाजान ठगे गये हैं। उन्होंने तो पांच हज़ार ही लगाई है।"

"जवाहिरात की परख तो जौहरी ही कर सकते हैं। एक कुम्हार के लिये तो यह एक कंकर से अधिक नहीं।"

[१३]

इसके पश्चात् रामलाल कुछ काल तक खाली रहा। वह कोई छोटा-मोटा काम अथवा नौकरी कर लेने का विचार रखता था। इसी अवसर में प्रेम छूट गयी और मोहिनी की विदाई में सेठ साहब को रामलाल की

आवश्कता पड़ गयी। साथ ही सेठ साहब को रामलाल से झगड़ा करने में अपनी भूल भी प्रतीत होने लगी। उन्होंने रामलाल को बुलाकर पुनः फार्मास्युटिकल कम्पनी का मैनेजर नियुक्त कर दिया। यदि प्रेम अब पत्नी रूप में सेठ साहब के पास न रहती होती तो वह पुनः कैनाल रोड के बंगले में आकर रहने लगता। वास्तव में सेठ साहब ने एक बार कहा भी था, परन्तु रामलाल ने कह दिया, "मैं समझता हूं कि वहां रहना ही ठीक है।"

मोहिनी विदा हो देहली चली गयी। मोहिनी के विवाह और विदाई का समाचार-पत्रों में छपा था। दोनों मौकों पर सेठ साहब ने कई संस्थाओं को दान दिया था और मज़दूरों को विशेष बोनस बांटा था। इससे समाचार-पत्रों ने इन समाचारों को मोटे टाइप में छापा था।

अविनाशचन्द्र ने भी समाचार-पत्र में पढ़ा कि सेठ धन्नाराम की लड़की मोहिनी का विवाह देहली के सेठ रघुनन्दन के लड़के घनश्याम से हो गया है। इसके पश्चात वह एक दो दिन तक मोहिनी के पत्र की प्रतीक्षा करता रहा। जब कोई पत्र नहीं आया तो उसके मन में उदासी रहने लगी। अब वह ठीक समय पर कॉलेज जाता था और ठीक समय पर लौट आता था। उसने मित्रों के संग व्यर्थ का घूमना बन्द कर दिया था। सिनेमा में जाना और रैस्टोरेंट में खाना सर्वथा बन्द हो गया था। रात को पढ़ता रहता था। दिन भर कॉलेज में उपस्थित रहता था। परीक्षा के दिन समीप आगये थे और उसने निश्चय कर लिया था कि परीक्षा पास कर लेनी है।

मोहिनी के पत्र न लिखने का कारण वह समझ रहा था। उसने स्वयं उसे अपने साथ सम्बन्ध से मुक्त कर दिया था। ऐसी अवस्था में विवाह कर उसे भूल जाने में मोहिनी निरपराध है, इस प्रकार समझता हुआ भी वह स्वयं उसे भूल नहीं सकता था। रह रहकर उसे मोहिनी की याद आती थी और ऐसे अवसरों पर उसका ध्यान पढ़ाई से उठ जाता था।

इस प्रकार दो मास व्यतीत हो गये थे। पं० विशम्भरदयाल लड़के को दिन प्रति दिन दुर्बल होते देख रहे थे। पहले तो उन्होंने समझा कि

परीक्षा के दिन हैं। मेहनत अधिक करने के कारण दुर्बलता अनिवार्य ही है, परन्तु परीक्षा आने तक अविनाश की आंखें बीच में धसने लगीं। रात सोया सोया वह चौंककर उठ खड़ा होता था और फिर नींद न आने पर लैम्प जला पढ़ने लगता। एक रात पं० विशम्भरदयाल की जाग खुली तो उन्होंने देखा कि अविनाश के कमरे में लैम्प जल रहा है। घड़ी में समय देखा तो तीन बज चुके थे। वह सोचने लगे कि वह अभी सोया ही नहीं अथवा सोकर जाग उठा है। पण्डित जी ने लड़के के कमरे का दरवाज़ा खटखटाया। अविनाश ने दरवाज़ा खोलकर देखा कि पिताजी नंगे पांव, नंगे सिर, एक धोती और कुर्ता पहने खड़े हैं। उसने अचम्भे में पूछा, "पिता जी, क्या है?"

"तुम अभी सोये नहीं क्या?"

"अभी सो जाता हूँ, पिताजी। अभी देर नहीं हुई।"

"देर नहीं हुई! भाई, अब तो सवेरा ही होगया है। तीन बज चुके हैं।"

"ओह, मुझे ध्यान नहीं रहा। अभी सो जाता हूं।"

"सो जाओ बेटा। सोने से मस्तिष्क तरोताज़ा हो जाता है और फिर दुगुना काम हो सकता है।"

इतना कह पंडित जी ने पुत्र का हाथ पकड़ बिस्तर पर ले जाना चाहा। परन्तु ज्योंही उसे छूआ तो उनका शरीर कांप गया। अविनाश को ज्वर हो रहा था। "ओह! तुम्हें तो ज्वर हो रहा है," उन्होंने कहा।

"मामूली है। अपने आप ठीक हो जायेगा।"

इस समय कुछ हो नहीं सकता था। पंडित जी ने अविनाश को सुला दिया और स्वयं कुछ काल तक वहां बैठे रहे। अविनाश ने सोने का बहाना किया तो पंडित जी ने समझा कि सो गया है और लैम्प बुझा अपने कमरे में चले गये।

अविनाश को कई रात से नींद नहीं आ रही थी। इसी से उसे ज्वर होने लगा था। वह अब भी सो नहीं सका। प्रातःकाल पंडित जी फिर

आये। अविनाश उठकर कॉलेज जाने की तैयारी कर रहा था।

"स्वास्थ्य कैसा है ?" पंडित जी ने पूछा।

"ठीक है, पिताजी।"

परन्तु पंडित जी अविनाश की आंखों को गड्ढों में उतरती देख रहे थे। वह बोले, "चलो किसी डाक्टर-हकीम को दिखा आओ।"

"पिताजी, इसकी आवश्यकता नहीं। मैंने कुनीन खा ली है और ठीक हो जाऊंगा।"

पिता ने हाथ लगाकर देखा। ज्वर अब मालूम नहीं होता था। इससे उन्हें संतोष होगया और वह स्वयं भी कॉलेज जाने की तैयारी करने लगे।

दिन प्रति दिन अविनाश में शिथिलता बढ़ती जाती थी। नित्य रात को ज्वर हो जाता था। उसे केवल एक धुन सवार थी और वह थी परीक्षा पास करने की। परन्तु अवस्था उत्तरोत्तर बिगड़ती जाती थी।

अप्रैल मास में परीक्षा आरम्भ हुई। इन दिनों अविनाश की अवस्था अति शोचनीय होगयी थी। जब परीक्षा का प्रश्न-पत्र उसके सामने आता था तो वह समझता था कि पूरे पत्र का उत्तर वह जानता है परन्तु शिथिलता इतनी बढ़ गयी थी कि प्रत्येक दस मिनट के पश्चात् उसे पांच मिनट आराम करना पड़ता था। परिणाम-स्वरूप वह सब कुछ जानता हुआ भी आधे से अधिक प्रश्नों का उत्तर नहीं लिख सकता था।

प्रैक्टिकल की परीक्षा में तो अवस्था और भी खराब थी। उसके लिये तीन घंटा खड़ा रहकर काम करना कठिन था। परीक्षक ने अत्यंत कृपाकर उसे बैठकर काम करने के लिये स्टूल मंगवा दिया।

परीक्षा समाप्त कर तो अविनाश बिस्तर पर लेट गया। पंडित जी ने चिकित्सा के लिये एक वैद्य को नियुक्त कर दिया था। रोग-निदान था क्षय। भूख कम होगयी थी। परिणाम-स्वरूप शरीर क्षीण होता जाता था।

चिकित्सा आरम्भ होगयी, परन्तु लाभ कुछ नहीं हो रहा था। पं० विशम्भरदयाल को संदेह होने लगा था कि मोहिनी से विवाह न हो सकने की निराशा का रोग है। पर अब क्या हो सकता था ? जब कभी

पिता पुत्र को विवेक की बातें कहने लगता और कहता कि संसार की मोह-ममता झूठी है, तब ही अविनाश कह देता, "पिता जी, आपका भ्रम है कि मैं मोहिनी के वियोग में बीमार हूं। मैं जीना चाहता हूँ, परन्तु नहीं जानता कि कैसे ?"

एक दिन प्रातः पंडित जी वैद्य के यहां दवाई लेने गये हुए थे। उनके घर के नीचे एक मोटरकार आ खड़ी हुई। उसमें से उतर रामलाल और वकील जगन्नाथ घर का दरवाज़ा खटखटाने लगे। अविनाश की मां ने नीचे आकर पूछा, "आप क्या चाहते हैं ?"

"अविनाशचन्द्र से कुछ काम है।"

"आप कौन हैं ?"

"उसके मित्र।"

"वह सख्त बीमार है। नीचे नहीं आ सकता। आप ऊपर आ सकते हैं।"

यह समाचार सुनकर वे सन्न रह गये। धीरे धीरे ऊपर अविनाश के कमरे में पहुंचे। वह मुख पर चादर ओढ़े लेटा हुआ था। आनेवालों के पांव की आहट सुन उसने मुख से चादर हटाई। रामलाल को देख प्रश्न भरी दृष्टि से देखने लगा।

रामलाल और जगन्नाथ खाट के समीप कुर्सियों पर बैठ गये। अविनाश उठकर खाट पर बैठ गया। उसका शरीर अति दुर्बल होगया था। गालों में गड्ढे पड़ गये थे और आंखें अन्दर को धंस गयी थीं। उसकी ऐसी हीन दशा देख रामलाल का मुख फीका पड़ गया। उसको अविनाश का वह सुन्दर, सुडौल, ओजस्वी मुख स्मरण हो आया था। कठिनाई से उसने पूछा, "मिस्टर अविनाश, यह क्या है ? कब से बीमार हैं आप ?"

अविनाश ने उत्तर देने के स्थान प्रश्न किया, "आपका आना कैसे हुआ है ? शीघ्र बताइये। मेरा दिल बुरी तरह धड़क रहा है।"

इस पर जगन्नाथ ने धैर्य बंधाते हुए कहा, "कोई विशेष चिन्ता की

बात नहीं है। आप निश्चिन्त हो जायें तो बताते हैं।"

अविनाश ने मां की ओर विनय भरी दृष्टि से देखा। जगन्नाथ ने कहा, "माता जी, आप ज़रा दूसरे कमरे में चली जायें तो ठीक होगा।"

अविनाश की मां समझ गयी कि मोहिनी के विषय में कुछ कहना चाहते हैं। वह चुपचाप कमरे से बाहर चली गयी। जगन्नाथ ने कहा, "मोहिनी ने देहली से एक चिट्ठी नौकरानी के हाथ भेजी है। उसने लिखा है कि वह चिट्ठी आपको भी दिखा दी जाय। हम उस चिट्ठी को आज हाईकोर्ट में दाख़िल करने वाले हैं। इस कारण आपको पहले ही दिखा देना चाहते हैं।"

इतना कह जगन्नाथ ने एक चिट्ठी जेब से निकालकर अविनाश के हाथ में दे दी। चिट्ठी रामलाल को लिखी गयी थी। लिखा था :—

प्रिय भैया,

आपके कहने तथा विमलादेवी की सम्मति के अनुसार मैंने यहां आकर सत्याग्रह का अवलम्बन लिया। पहले ही दिन मिस्टर घनश्याम जब मिलने आये तो कहने लगे, 'आखिर आ ही गयी न।' मैंने कहा, 'आपके घर महमान बनकर, तुम्हारी स्त्री बनकर नहीं।' वह पूछने लगा, 'क्यों?' मेरा उत्तर था, 'क्योंकि मैं तुम्हारी बीवी नहीं हूँ। तुम लोगों ने षडयंत्र कर मुझे पकड़ा हुआ है। मेरा विवाह जो तुम्हारे साथ हुआ था सब धोखा था।'

वह बेचारा इन बातों को समझ नहीं सकता था। उसकी आयु और उसका अनुभव तथा शिक्षा इतनी कम है कि उसके मस्तिष्क में कोई नवीन विचार घुस ही नहीं सकता। उसने कहा, 'अब तुम हमारे घर में हो। यदि यहां तुमने मुझे पीटा तो मैं तुम्हें नौकरों से पिटवाऊंगा। यहां मेरा हुक्म चलता है, तुम्हारे बाप का नहीं।'

मैंने उसे समझाने के विचार से कहा, 'मेरे बाप और तुम्हारे बाप से भी ऊपर एक बड़ा बाप है जिसे लोग परमात्मा कहते हैं। मैं उसे संसार की शक्ति कहती हूं। उसका राज्य जैसे लाहौर में है वैसे ही यहां

है। उसी की शक्ति से मैं तुम्हें कहती हूं कि मैं तुम्हारी पत्नी नहीं हूँ और यदि तुमने पराई स्त्री को हाथ लगाया तो दण्ड पावोगे।'

इस पर उसने कहा, 'मेरी मां ने कहा है कि मैं तुमसे झगड़ा न करूं और प्रेम की मीठी मीठी बातें करूं, परन्तु तुम तो काटने को दौड़ती हो। देखो, यदि तुमने कुछ भी अनुचित कहा तो मैं हल्ला कर दूंगा और निःसन्देह पिता जी पिटवा देंगे। उन्हें लाहौर में किये गये अपमान का तुमसे अभी बदला लेना है।'

मैंने सोचा कि पहले ही दिन झगड़ा करने के स्थान तरकीब से काम लेना चाहिये। इस कारण मैंने कहा, 'रोटी खाकर आये हो। उसने इस प्रश्न का अर्थ न समझ कह दिया, 'हां। क्यों?'

मैंने मुस्कराते हुए कहा, 'मुख पर जूठन लगी है। मुख धो डालो।' मेरे बैड-रूम के साथ ही गुसलखाना है। वह उसमें मुख धोने चला गया। ज्योंही वह उसमें घुसा मैंने दरवाज़ा बन्द कर बाहर से चिटकनी चढ़ा दी। पश्चात् अपने कमरे का दरवाज़ा भीतर से बन्द कर लेट रही। श्रीमान् घनश्यामदास रात भर गुसलखाने में बन्द रहे। दरवाज़ा खूब खटखटाते रहे, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह शोर बाहर नहीं पहुँचा। घर के लोग मज़े में सोये रहे।

प्रातःकाल जब मैंने दरवाज़ा खोला तो घनश्याम गुसलखाने के एक कोने में दीवार का ढासना लिये सो रहा था। मैंने उसे जगाया। वह बेचारा बहुत थका हुआ था। मैंने जब उठाया तो नींद में झूम रहा था। मैंने उसे अपने बिस्तर में ले जाकर सुला दिया। इसके कुछ पश्चात् घनश्याम की माता आईं। वह अपने पुत्र को इस प्रकार लेटे देख लज्जा के मारे कुछ न कह वापिस चली गयी। घनश्याम के पिता आये। मुझे आशीर्वाद दे चले गये।

उस दिन घर में बधाइयां और बाजे बजते रहे। घनश्याम दोपहर के समय उठा और अपने आपको मेरे पलंग पर देख कितने ही मिनट तक रात की बातें स्मरण करने का यत्न करता रहा। अंत में उसने माथे पर

त्योरी चढ़ाकर कहा, 'मुझे यहां किसने लिटाया है ?'

'मैंने। मुझे तुम पर दया आगयी थी।'

वह क्रोध में उठकर बाहर चला गया। दूसरी रात वह आया तो कहने लगा, 'मैंने तुम्हारी करतूत अभी पिताजी से नहीं कही। यदि आज भी वैसे ही किया तो अच्छा नहीं होगा। मैंने कुछ उत्तर नहीं दिया और स्वयं गुसलखाने में चली गयी और भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लिया। यह रात सही-सलामत से नहीं गुज़री। घनश्याम की माता आईं। बहुत मुहब्बत की बातें कह चली गयी। मैंने दरवाज़ा नहीं खोला। रात के बारह बजे के लगभग घनश्याम के पिता और एक नौकर गुसलखाने का दरवाज़ा तोड़ भीतर घुस आये। मुझे बांह से पकड़कर कमरे में घसीट लाये और लगे गालियां देने। उनके क्रोध में बोलने के कारण घर भर के लोग जाग उठे और मेरे कमरे में चले आये। मैं बिना घूंघट काढ़े चुपचाप एक कोने में खड़ी रही। एक घण्टे भर की बकझक के बाद सब लोग चले गये। जाते समय बाहर से दरवाज़ा बन्द करते गये। पश्चात् घनश्याम का घूरना-धमकाना, अपनी योग्यता बघारना और फिर मिन्नत, खुशामद अथवा मुझ पर आसक्ति का वर्णन, होने लगा। इस प्रकार दिन के चार बज गये। घनश्याम अपनी असफलता से उदास हो रोने लगा। मैंने उस से कहा, 'तुम आदमी हो या गधे ?' इसका उत्तर था 'गधा।'

'इसी से तो कहती हूँ कि मेरा तुम्हारा विवाह होना अनुचित था। चुपचाप इस कमरे से निकल जाओ, नहीं तो बहुत दुर्दशा होगी।'

इस पर क्रोध में उसने दरवाज़ा खटखटाना आरम्भ कर दिया। घनश्याम के पिता आये और दरवाज़ा, जो उस दिन बाहर से बन्द था, खोल पूछने लगे, 'क्या है ?

घनश्याम ने झूठ कह दिया, 'यह मुझे खाने को दौड़ती है।'

फिर क्या था सेठ साहब ने मुझे लातों और मुक्कों से पीटना आरम्भ कर दिया। मैं न तो रोई और न ही मैंने शोर मचाया। चुपचाप मार सहती रही। मेरे सिर में चक्कर आया और बेहोश हो गयी।

जब मुझे चेतना हुई तो मैंने देखा की घनश्याम की माता मेरे मुख और आंखों को गीले कपड़े से पूंछ रही है। कमरे में और कोई नहीं था। समय दोपहर का हो गया था। अभिप्राय यह कि मुझे कई घंटे तक अचेतनता रही। होश में आने पर मुझे गाय का दूध और काली सी बदबूदार दवाई दी गयी। मैं एक क्षण के लिये झिझकी। मुझे संदेह हो रहा था कि कहीं विष तो नहीं दिया जा रहा। परन्तु दूसरे ही क्षण मुझे मरना सुखप्रद प्रतीत हुआ। उस समय मेरे सारे शरीर में तीव्र वेदना हो रही थी। मैंने बिना अरुचि प्रकट किये औषधि ले ली।

औषधि से तो कुछ लाभ नहीं हुआ। हां, समय व्यतीत होने पर पीड़ायें कम होने लगीं। उस रात और पांच छः दिन उसके पीछे मुझे न तो कोई मिलने आया और न ही मेरी अवस्था पूछने। एक नौकरानी थी जो मुझे दूध-रोटी दे जाया करती थी।

छः सात दिन पीछे की बात है। घनश्याम और उसके पिता कमरे में आये। बाप बोला, 'तेरा दिमाग़ ठीक हुआ है या नहीं?' मैंने उत्तर दिया, 'सो तो पहले भी ठीक था और अब भी है। मैं आपके लड़के की भार्या नहीं हूँ और न बनूंगी।'

'क्यों?'

'मेरा विवाह उससे नहीं हुआ। जो नाटक उस दिन आपने किया था उसे कोई भी बुद्धिमान विवाह नहीं कह सकता।'

'विवाह न सही। विवाह के बिना भी तो औरतें रखी जाती हैं।'

'मैं उन औरतों में नहीं हूँ।'

'तुम्हें वैसा बनना होगा।'

'नहीं तो।'

'नहीं तो पीट पीटकर मार डालूंगा।'

'मैं यही चाहती हूं। मेरा चित्त जीने को नहीं चाहता। परन्तु मैं आत्मघात नहीं करूंगी। मैं चाहती हूँ कि आपके माथे मेरे मारने का पाप लगे।'

'हिन्दुओं में प्रत्येक पाप का प्रायश्चित है। ब्राह्मणों को रुपया दे सब कुछ करवाया जा सकता है।'

'तो फिर डरते क्यों हो? देरी करने से लाभ?'

'मैं समझता था कि शायद समझ जाओ।'

'मैंने जो कुछ समझना है समझ लिया और अधिक समझाने से लाभ नहीं।'

सेठ साहब चले गये। घनश्याम वहीं खड़ा रहा। मैं चुपचाप वहीं बैठी रही जहां बैठी थी। वह मेरे समीप आ बैठा और कहने लगा, 'मुझे तुम्हें पिटते देख बहुत दुख हुआ था। परन्तु मैं कुछ नहीं कर सकता। पिता जी बहुत क्रोध करने वाले हैं। वह मुझे भी पीट दिया करते हैं।'

'तुम्हारे पिता तुम्हें मुबारिक हों। तुमने उस दिन झूठ क्यों बोला था कि मैं तुम्हें खाने को दौड़ती हूँ?'

'मुझे तुम्हारी मिन्नत-खुशामद करने के बाद क्रोध आ रहा था। मेरे मुख से एकाएक यह बात निकल गयी थी।'

'अच्छी बात! अब क्या चाहते हो?' मैंने पूछा।

'तुम्हारा प्रेम।'

'तुम जैसे गधों से प्रेम? तुम प्रेम के अर्थ नहीं समझते।'

'फिर वही बात। मुझे गालियां देती हो?' यह बात उसने ज़रा ज़ोर से कही। घनश्याम का पिता कमरे के बाहर खड़ा हमारी बातें सुन रहा था। वह तुरन्त भीतर आगया। अब उसके हाथ में चाबुक थी, और भीतर आते ही उसने चाबुक से मुझे पीटना आरम्भ कर दिया। दस बारह चाबुक से कठोर आघात कर वह यह कहते हुए बाहर चला गया, 'एक एक अपशब्द के लिये एक दर्जन चाबुक लगाई जायेंगी।'

पिता-पुत्र चले गये। तब से आज दिन तक कोई दिन खाली नहीं जाता जब मुझे चाबुक से नहीं पीटा जाता। अब तो मेरा शरीर मज़बूत होता जाता है और एक आध दर्जन चाबुक के आघात तो मुझे कष्ट भी नहीं देते। कोई न कोई बहाना रोज़ ढूंढ लिया जाता है और मुझे पीटा

जाता है। मुझे कई बार कहा जाता है कि मैं मर जाऊँ तो अच्छा हो। पिछला पांच लाख हज़म हो जाये और आगे लेने का मार्ग खुल जाये।

अब कल की बात है। एकाएक चार नौकरानियों से मेरे हाथ-पांव पलङ्ग के पायों से बंधवा दिये और फिर घनश्याम को मेरे पास सम्भोग करने को भेजा गया। वह जब मेरे समीप आया तो मैंने उसकी गाल पर मुख से काट खाया। इतने ज़ोर से कि वह चीखें मारने लगा। उसने अपने आपको छुड़ाने का यत्न किया। इससे उसकी गाल का कुछ मांस कट गया और उससे लहू बहने लगा। लड़के की चीखें सुन पिता भीतर चला आया और लड़के की गाल से लहू बहते देख, पिता उतावला हो मुझे पीटने लगा। मैं अचेत होगयी। ऐसा प्रतीत होता है कि अचेतनावस्था में मेरे साथ किसी ने दुराचार किया है। मुझे जब चेतना हुई तो दिन चढ़ने वाला था।

अब मेरे शरीर भर में पीड़ा हो रही है। मेरे मुख, सिर और शरीर के अन्य भागों पर घाव होगये हैं और उनसे लहू बह रहा है। मुझे अपने साथ दुर्व्यवहार का ज्ञान भी हो रहा है। मन में अब अपने आपसे ग्लानि हो रही है। अब अधिक सहन करने की शक्ति नहीं रही। मैं मर जाती तो बहुत अच्छा होता। आज तो कोई पूछने वाला भी नहीं आया। मैं सोच रही हूं कि मरने का कौन उपाय करूं। यहां से कूदकर मर जाने का भी उपाय नहीं। मैं एक कोठी में रहती हूं। कमरे के बाहर पहरा रहता है। बार बार सोचने पर यही उपाय समझ में आता है कि धोती का फन्दा बनाकर फांसी पर लटक जाऊं। मैंने यह वृत्तान्त लिख आपके पास मरने से पूर्व भेज देना उचित समझा है। आज कई घण्टे में यह लिख पाई हूँ। हाथ कांप रहे हैं और मस्तिष्क में चक्कर आ रहा है।

यह नौकरानी जो यह चिट्ठी ला रही है आज मेरे पास आई है। मुझसे सहानुभूति की बातें कर रही है। मैं नहीं जानती कि यह सत्य कहती है या झूठ। पर मेरे लिये अब डरने का कारण नहीं। मुझे तो अब जीना नहीं है। मैंने इसे कहा कि मुझे बाज़ार से अफ़ीम ला दो।

वह रोने लगी। बोली, 'मैं आपकी बात समझती हूँ। आपसे सहानुभूति रखती हूँ। परन्तु यह बात मैं अपने हाथ से नहीं कर सकती।' इस पर मैंने पूछा, 'चिट्ठी लेकर लाहौर जाओगी?' वह मान गयी है। मैंने यह चिट्ठी दो कारणों से लिखी है। एक यह कि पिता जी को पता लग जाये कि उन्होंने कितनी भूल की है और दूसरे प्रोफैसर साहब के सुपुत्र को मैं अपनी अंतिम प्रेम-भेंट, अपना जीवन, देने की सूचना देना चाहती हूँ। मैंने निश्चय कर लिया है कि अब जीवित नहीं रहूँगी। यह शरीर अब पतित होगया है। किसी काम का नहीं रहा। या तो अबके पीटी गयी तो शरीरान्त स्वयमेव हो जायेगा या यदि साधन मिल गये तो अपने हाथ से फांसी पर लटक जाऊंगी।

मैं पत्रवाहिका को यह पत्र दे रही हूँ। लाहौर पहुंचने के लिये रेल का भाड़ा और टांगा इत्यादि का खर्च और आपका पता लिखकर दे रही हूँ। इससे अधिक कुछ नहीं कर सकती। आप तक यह पत्र पहुंचाना नौकरानी की ईमानदारी पर निर्भर है।

आपकी बहिन, मोहिनी

अविनाश चिट्ठी पढ़ रोने लगा। उसने चिट्ठी वापिस कर दी और खाट पर लेट गया। जगन्नाथ ने कहा, "नौकरानी सायंकाल यहां पहुँची थी। मैंने एक बैरिस्टर से राय कर हाईकोर्ट में हेबियस-कार्पस की पेटीशन करने का निश्चय किया है। पेटीशन तैयार है और ग्यारह बजे कोर्ट खुलते ही इस चिट्ठी के साथ फाइल करना चाहता हूं। उम्मीद है कि हमारी प्रार्थना स्वीकार हो जायेगी और हाईकोर्ट से मोहिनी को कोर्ट में उपस्थित करने का हुक्म निकल कल प्रातः दिल्ली पहुंच जावेगा। यदि हमारे भाग्य अच्छे हुए और मोहिनी जीवित हुई तो हम उसे कष्ट से छुटकारा दिलवा सकेंगे।"

अविनाश चुप था। जगन्नाथ और रामलाल वहां से विदा हो हाईकोर्ट की ओर चल पड़े। उनके चले जाने के पश्चात् मां, जो साथ के कमरे में बैठी प्रतीक्षा कर रही थी, आकर बोली, "ये कौन थे बेटा

और यह चिट्ठी किसकी थी ?"

"मां ! एक, मोहिनी का भाई रामलाल है। दूसरा, एक वकील है। चिट्ठी मोहिनी की थी। मां, मैं आज दिल्ली जाऊँगा।"

"क्यों ?"

"वह बहुत कष्ट में है। मैं अभी जा रहा हूँ। शायद दस बजे की गाड़ी मिल जाय और मैं उसके लिये कुछ कर सकूं।"

"बेटा तुम बीमार हो और कैसे इतनी लम्बी यात्रा कर सकोगे ?"

"मां, मुझे रोको नहीं। मैं जाऊंगा। नहीं तो मेरे प्राण अभी निकल जायेंगे। मां, मैं आग्रह करता हूँ। मुझे जाने दो।"

मां की आंखों में आंसू छलकने लगे और वह मूर्तिवत खड़ी रह गयी। अविनाश खाट से उठा और कपड़े पहन तैयार होगया। अलमारी से रुपये निकाल जेब में रख प्रोफैसर साहब की छड़ी हाथ में ले मकान के नीचे उतर आया। उतरते समय मां ने माथे पर हाथ लगाया। वह आग की भांति जल रहा था। मां ने अंतिम यत्न किया, "अवि, तुम्हें तीव्र ज्वर है। तुम वहां पहुंच नहीं सकोगे।"

"मां, मैं जाऊंगा। पहुँच जाऊंगा। तुम मेरी चिन्ता न करो। दो दिन में लौट आऊंगा।"

समय नहीं था। साढ़े नौ बज रहे थे। बाम्बे-एक्सप्रेस दस बजे छूटती थी। सड़क पर पहुँच अविनाश ने तांगा किया और स्टेशन को चल पड़ा।

[१४]

हाईकोर्ट में उस नौकरानी के, जो पत्र लेकर आई थी, बयान हुए। उसने जज महोदय के प्रश्नों के उत्तर में कहा, "मैं दस वर्ष से सेठ साहब की नौकरी करती हूँ। वैसे तो सेठ साहब बहुत धर्मात्मा आदमी हैं। दान, पूजा, तीर्थ, मन्दिर इत्यादि की बहुत मानता होती है। सैकड़ों रुपये महीने का भिखारियों को अन्न बांटा जाता है। सेठानी जी हर मंगल के दिन हनुमान जी पर ग्यारह सेर लड्डू चढ़ाती हैं। प्रति रविवार

को सत्यनारारारण जी के मन्दिर में सात रुपये का प्रसाद चढ़ता है। घर में भी नौकरों के साथ उनका व्यवहार अच्छा है। परन्तु वह स्त्रियों को पुरुष की दासी मानते हैं। स्वयं वह रुपये के दास हैं।

"जब सेठ जी के लड़के का एकाएक लाहौर में विवाह हुआ तो सब घर वाले चकित रह गये। हम नौकरों में कानाफूसी होने लगी। इस जल्दी का कारण हर एक अपनी-अपनी समझ के अनुकूल लगाता था। नौकरों में यह बात फैल रही थी कि लड़की क्रिस्तान होने जा रही थी। इससे बचाने के लिये लड़की का विवाह एकदम कर दिया है। मैं सेठ साहब की विधवा बहिन की सेवा में रहती हूँ। मैंने इस जल्दी का कारण बहिन जी से पूछा तो उन्होंने कहा, 'भाई रुपये के बहुत लोभी हैं। पांच लाख के लालच में शीघ्र विवाह मान गये होंगे।' सेठ साहब ने अपनी बहिन का विवाह अजमेर के एक बूढ़े सेठ से रुपये के लालच में आकर कर दिया था। वह बूढ़ा विवाह के पश्चात् एक वर्ष के भीतर ही परलोक सिधार गया था और बहिन जी विधवा हो सेठ साहब के घर पर ही रहती हैं। बहिन जी ने अपनी यह कथा सुनाई और बताया, 'भाई ने मेरे विवाह के पूर्व मेरे नाम अजमेर वालों की आधी सम्पत्ति लिखवा ली थी। मेरे विधवा हो जाने पर भाई ने उन पर नालिश कर मुझे उनकी आधी सम्पत्ति दिलवा दी और वह लगभग तीस लाख रुपया इनके व्यापार में ही लग रहा है।

"जब बहू घर पर आई तो सब लोग प्रसन्न थे, परन्तु तीसरे दिन जब सेठ साहब ने उसे लातों और मुक्कों से मारा तो घर भर में फिर बहू के चरित्र की चर्चा होने लगी। नौकरानियों में यह बात फैल रही थी कि बहू दुराचारिणी है। हम सब लोग उससे घृणा करने लगे थे। इसके बाद बहू हर रोज़ पीटी जाने लगी। हम लोग देखते थे कि पीटे जाने पर उसने कभी सी तक नहीं की। उसने न तो कभी किसी को गाली दी, न पीटने वाले पर कोई दोषारोपण ही कभी किया। इससे नौकरों के विचार में परिवर्तन होने लगा। फिर हमें विदित हुआ कि बहू घनश्याम से सहवास नहीं करती।

इस पर बहिन जी ने बहू से बातचीत की। मैं वहां उपस्थित नहीं थी, परन्तु उन्होंने मुझे पीछे बताया कि बहू देवी है। उस बेचारी पर अत्याचार हो रहा है।

"परसों जो अत्याचार उस पर हुआ है उससे तो मेरे रोंगटे खड़े हो गये। मैंने सब बात जैसी एक नौकरानी से सुनी और बहिन जी को सुनाईं तो उन्होंने मुझे बहू के पास भेजा। मुझे उसके विचार जानने के लिये कहा। बहू को मुझ पर विश्वास नहीं होता था इस कारण मुझे बहुत बातें बनानी पड़ीं। अंत में उसने यह चिट्ठी लिखकर दी। लाहौर आने का रेल और टांगे का भाड़ा दिया। यह चिट्ठी मैंने बहिन जी को दिखाई थी। वह पढ़कर बहुत दुखी हुईं और उन्होंने मुझे लाहौर आने की छुट्टी दे दी।"

हाईकोर्ट में कुछ देर तक यह बहस हुई कि एक विवाहित स्त्री का अपने पति से सहवास करने से इन्कार करना क्या पति को अधिकार देता है कि वह उसे पीटे, घर में कैद कर दे और उससे बलात्कार करे। इस बात पर भी बहस हुई कि क्या हैबियस कार्पस एक्ट एक हिन्दू औरत को अपने खाविन्द की कैद से छुड़ाने के लिये प्रयोग में लाया जा सकता है। बिना इन विषयों पर अन्तिम निर्णय दिये जज ने, यह मानकर कि मोहिनी की जान जाने का भय है, मोहिनी को तीसरे दिन हाईकोर्ट में हाज़िर करने की आज्ञा दे दी। साथ ही सिविल सर्जन दिल्ली के नाम आज्ञा दे दी कि मोहिनी की तुरंत डाक्टरी परीक्षा की जाय और रिपोर्ट तीसरे दिन यहां पेश की जाय। दोनों हुक्म मार्फत चीफ कमिश्नर देहली (देहली गवर्नमेन्ट) तार द्वारा और विशेष दूत द्वारा भेजे जाने की आज्ञा दे दी।

तार तो उसी दिन देहली पहुँच गया और लिखा हुक्म जगन्नाथ तथा रामलाल, हाईकोर्ट के रजिस्ट्रार से नियुक्त एक आदमी साथ लेकर उसी रात चलकर दूसरे दिन दिल्ली पहुंच गये।

[१५]

सेठ रघुनन्दन की बहिन सीतादेवी को अपने भाई पर भारी रोष था। रुपये के लोभ में उसका विवाह पचपन वर्ष के बूढ़े से कर दिया गया था।

अजमेर के यह बूढ़े सेठ युवती बहू पाकर भिन्न भिन्न प्रकार की औषधियों के सेवन से अपने आपको युवा सिद्ध करने का यत्न करने लगे। परन्तु एक वर्ष के भीतर ही सीतादेवी के गले में वैधव्य का पट्टा, अठारह वर्ष की आयु में, बंध गया।

विधवा होने के समय वह अभी बालिका ही थी। लज्जा और संकोच अभी छूटा नहीं था। इससे वह भाई को कुछ कह नहीं सकी थी। विधवा होने पर वह चुपचाप भाई के घर आकर रहने लगी। जो सम्पत्ति उसे सुसराल से मिली थी वह उसके भाई ने अपने व्यापार में लगा दी थी और उसका सूद उसे मिलता था। वह सूद भी इतना अधिक था कि सीतादेवी की आवश्यकताओं को पूरा कर बहुत कुछ बच जाता था। यह भी सेठ साहब के व्यापार में लगता जाता था।

सीतादेवी को विधवा हुए बीस वर्ष हो चुके थे। वह अब सोचती थी कि उसके विवाह के समय जो इतनी बड़ी सम्पत्ति का लोभ किया गया था उसका उसे क्या लाभ हुआ। अब वह इस रुपये को क्या कर सकती है? इससे उसे अपने भाई के व्यवहार पर असन्तोष होता जा रहा था।

जब घनश्याम का विवाह हुआ तो घर भर में केवल सीतादेवी ही थी जो प्रसन्न नहीं थी। वह मन में सोचती थी कि यदि यह भ्रष्ट चरित्र वाली है तो पांच लाख क्या एक करोड़ भी दहेज में मिलता तो विवाह नहीं करना चाहिये था। उसने एक बार भाई को अपने विचार बताये भी; परन्तु इसका परिणाम क्या हो सकता था? विवाह तो हो चुका था। पश्चात् जब मोहिनी पीटी जाने लगी तो धीरे-धीरे उसकी सहानुभूति उस के लिये बढ़ने लगी। एक दिन वह उसके पास जा ही पहुँची और जो बातें उसे विदित हुईं वे उसे चकित करने के लिये पर्याप्त थीं। वह स्वयं कुछ नहीं कर सकती थी, परन्तु वह समझती थी कि इस सती के यहां प्राणान्त होने पर इस घर का सत्यानाश होगा। इस पर उसने भाई से अपना रुपया मांगना आरम्भ कर दिया। एक दिन सेठ साहब ने झुँझलाकर कहा, "तीस पैंतीस लाख एकदम तो मिल नहीं सकता। तुम्हें

जितना अभी चाहिये ले लो।"

सीतादेवी ने कहा, "मुझे सारा रुपया चाहिये। मैं उसे बैंक में जमा कराऊंगी या स्थावर सम्पत्ति खरीदूंगी।"

"बहुत लालच होगया है तुम्हें?" सेठ साहब ने माथे पर त्यौरी चढ़ाकर कहा।

"इस रुपये के लालच से ही तो बाल-विधवा बनाना स्वीकार किया था। इसे अब मैं किसी सुरक्षित स्थान पर लगाना चाहती हूँ।"

"तो मेरे पास यह धन सुरक्षित नहीं है?"

"नहीं। इस घर का सत्यानाश होने वाला है।"

"बकवास बन्द करो।"

"मेरा रुपया दे दो।"

सेठ साहब ने सिर नीचा कर कहा, "अच्छी बात। दो चार मास में प्रबन्ध कर दूंगा।"

जिस दिन अचेत मोहिनी से घनश्याम के सहवास करने का समाचार उसे मिला उसके मस्तिष्क में क्रोधानल भड़कने लगा। उसने अपनी नौकरानी को उसके पास भेजा। वह उक्त चिट्ठी लेकर आई। मोहिनी ने चिट्ठी खुली दे दी थी। उसे विश्वास था कि यदि नौकरानी बेईमानी करेगी तो क्या बन्द और क्या खुली, चिट्ठी पढ़ ली जायेगी। इस कारण बिना बन्द किये दे दी। चिट्ठी सीतादेवी ने पढ़ ली। उसने नौकरानी को तो लाहौर भेज दिया और स्वयं मोहिनी के कमरे में जा पहुंची। मोहिनी का सारा शरीर चोटों से लहूलुहान हो चुका था। इस पर भी वह रो पीट नहीं रही थी। चुपचाप पलंग पर लेटी किसी गम्भीर विचार में पड़ी थी। सीतादेवी ने पलंग के समीप जाकर बुलाया, "मोहिनी।"

मोहिनी का विचार भंग हुआ। उसने सीतादेवी की ओर देखा और पूछा, "बताइये।" उसे सीतादेवी के मन के भावों का ज्ञान नहीं था। सीतादेवी ने कहा, "मैं अब तुम्हारे कमरे में रहूँगी।"

"क्यों?"

"ताकि कल जैसी घटना फिर न हो सके।"

"तुम लोग मुझे शान्ति से मरने भी दोगे या नहीं ?" मोहिनी ने क्रोध से उबलते हुए कहा।

"मैं चाहती हूं कि तुम जियो।"

"और इस तरह प्रति दिन पीटी जाऊँ और पतित की जाऊँ।"

"नहीं अब ऐसा नहीं होगा। इसीलिये मैं अब यहां इस कमरे में रहना चाहती हूँ।"

"व्यर्थ है। मैंने मर जाने का निश्चय कर लिया है। कहीं ऐसा न हो, कि मरूं तो मैं अपने आप और फांसी लटक जाओ तुम।"

"मरने की आवश्यकता नहीं।"

"मैं जीना चाहती थी, परन्तु कल रात की घटना के पश्चात् मेरे जीने का प्रयोजन ही नष्ट होगया है। मैं किस मुख से अब कह सकती हूं कि मैं सती हूं।"

"तुम विचारों से, मन से और आत्मा से सती हो। कौन है जो तुम्हें असती कहेगा ?"

"बहिन जी, जाने दीजिये इन बातों को। मुझे मरने का दुख नहीं है। यह शरीर फटे पुराने कपड़ों की भांति रखने के अयोग्य होगया है। नये वस्त्र पहनने की प्रबल इच्छा हो रही है। अब मुझे जाने दो। यह झूठी मोह-ममता मुझ पर न डालो।"

इस समय सीतादेवी की नौकरानी एक खाट और बिस्तरा ले वहां आ पहुँची। सीतादेवी ने उसे समीप ही खाट लगाने को कह दिया। जब खाट पर बिस्तर लगाकर नौकरानी चली गयी तो सीतादेवी ने भीतर से किवाड़ बन्द कर मोहिनी को वस्त्र बदलने को कहा। मोहिनी ने फिर कहा, "प्रतीत होता है भाई ने बहिन को मुझ पर चौकीदारी करने को भेजा है। मुझे तो आपकी नौकरानी को चिट्ठी देते समय ही इस बात की आशंका हुई थी। इस पर भी मैं कहे देती हूँ कि मेरे मरने पर आप पर मुझे मार डालने का दोष लग जायेगा। व्यर्थ में आपका अपमान होगा

और आप कष्ट पायेंगी। आपको अब भगवत भजन करना चाहिये। इन झगड़ों में मत पड़िये क्योंकि मैं अब बचूँगी नहीं। यदि मार न दी गयी तो स्वयं एक दो दिन में मर जाऊँगी।"

"बेटी मोहिनी, यह सब तुम भ्रम में पड़ी हुई कह रही हो। वह नौकरानी तुम्हारा पत्र लेकर लाहौर चली गयी है। तुम्हारा भाई अब क्या करेगा मैं नहीं जानती। हां, मैं क्या करूंगी, जानती हूँ। तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार की पराकाष्ठा होगयी है। इसे अब मैं नहीं होने दूंगी। तुम मुझे धक्के देकर भी निकालना चाहो तो नहीं जाऊँगी। मैंने अपने मन में अपना कर्तव्य निश्चय कर लिया है। तुम मरने से नहीं डरतीं तो मैं फांसी लगने से भी नहीं डरती। हम हिन्दू स्त्रियां हैं। मरना-जीना तो हमारे लिये खिलवाड़ है। हम उन्हीं में से तो हैं जो चिता पर बैठकर अपने हाथ से आग लगा सकती हैं।"

मोहिनी को यद्यपि इस सब में षड़यन्त्र प्रतीत होता था तो भी वह चुप रही और इस नई परिस्थिति में अपना व्यवहार निश्चय करने लगी।

सीतादेवी ने उसे उठाया और कपड़े बदल घाव धोकर उन पर घी और हल्दी लगाई। अभी वह यह काम समाप्त करके हटी ही थी कि सेठ साहब ने बाहर से दरवाज़ा खटखटाया। सीतादेवी ने दरवाज़ा खोला तो सेठ साहब बहिन को वहां खाट-वाट लगा डटा देख कुछ घबराये। सेठ साहब ने कुछ सोचकर कहा, "बहिन, तुम यहां से चली जाओ तो।"

"क्यों?"

"मैंने बहू से कुछ कहना है।"

"तो कह दो न। मैं कोई पराई थोड़े ही हूँ।"

"नहीं। तुमसे पृथक् बात करनी है।"

"तो फिर उसकी इतनी जल्दी ही क्या है? मैं जब चली जाऊंगी तो कह लेना। अभी आज तो मैं यहां ही ठहरूंगी।"

"क्यों?"

"देखते नहीं भैया, यह बीमार है और किसी को इसके पास रहना

चाहिये।"

"उसका प्रबन्ध मैं कर दूंगा।"

"नहीं, मैंने कर दिया है। अब तुम यहां से चले जाओ, नहीं तो ठीक नहीं होगा।"

"ओह! अब तुम भी आंखें दिखाने लगी हो।"

"हां, मुझे मेरा रुपया दे दो तो मैं यहां से चली जाऊंगी।"

"तुम्हारा कितना रुपया है?"

"आज से बीस वर्ष पूर्व तीस लाख रुपये के लगभग था। अब वह कितना होगा हिसाब लगा लो।"

सेठ रघुनन्दन वहाँ से चले गये और सीतादेवी गीता की हिन्दी पुस्तक निकालकर पढ़ने लगी।

[१६]

अविनाश को विचार आया कि मोहिनी की सहायता करनी चाहिये। वह उसका वास्तविक संरक्षक है और यदि वह उसकी रक्षा नहीं करेगा तो और कौन करेगा? इस विचार के मन में उठते ही उसने सोचा कि रक्षा करने के लिये स्वस्थ हो जाना चाहिये और वह भी तुरन्त। इस धारणा के मन में आते ही वह अपने को सबल और स्वस्थ अनुभव करने लगा। सैकण्ड क्लास के डिब्बे में उसके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं था। वह सीट पर लेट गया। उसे पसीना आने लगा और लुधियाना तक पहुँचते-पहुंचते उसका ज्वर उतर गया। जब से उसे ज्वर हुआ था पसीना नहीं आया था। उस दिन पसीना आने के पश्चात् वह अपने आपको बहुत हलका अनुभव करने लगा। अम्बाला स्टेशन पर उसने दूध पिया। रेल के स्टेशनों पर दूध गरम लस्सी होती है। इसने भी उसे लाभ ही पहुँचाया। वह अपने में विशेष शक्ति का संचार होता अनुभव करने लगा था।

गाड़ी रात के आठ बजे दिल्ली पहुँची थी। यहां उसने पुनः दूध पिया और तांगा कर देहली सिविल लाइन्स, सेठ रघुनन्दनप्रसाद

की कोठी के बाहर जा पहुँचा। वह कोठी के बाहर, सड़क के किनारे, फुट-पाथ पर एक पेड़ का सहारा लेकर खड़ा होगया। इस समय रात के दस बज रहे थे। पेड़ के कारण सड़क पर की बिजली का प्रकाश वहां नहीं आ रहा था। इस प्रकार वह अन्धेरे में छुपा खड़ा था और भीतर की खबर लेने की आयोजना बना रहा था। वह सोच रहा था कि रात के बारह बजे के पश्चात् कोठी में घुसकर मोहिनी के कमरे का पता निकालेगा, और यदि वह जीवित मिल गयी तो उसे ले भागेगा। इतना सोच वह समय व्यतीत होने की प्रतीक्षा करने लगा।

एक नौकरानी कोठी से निकली। उसके साथ एक पुरुष था। वे कोठी से निकल उसी पेड़ के नीचे छुपकर बैठ गये। नौकरानी ने कहा, "जब मैंने कहला भेजा था कि आज नहीं आऊंगी तो तुम मुझे लेने क्यों आगये हो?"

"मैं जानना चाहता था कि तुम कल भी नहीं आईं, आज भी नहीं आओगी तो बच्चे को कौन सम्हालेगा? मुझसे यह काम अब नहीं हो सकता।"

"तुम दफ्तर से दो तीन दिन की छुट्टी ले लो न। यहां काम ही ऐसा आ पड़ा है कि मैं आ नहीं सकती।"

"यही तो जानने आया हूं कि कौन काम आन पड़ा है? आखिर दफ्तर से तो बहुत छुट्टियां मिल नहीं सकतीं।"

"चपरासियों को नौकरी की क्या परवाह है? यहाँ नहीं तो और कहीं मिल जायेगी।"

"फिर भी कौन ऐसी बात होगयी है कि उसके लिये नौकरी छोड़ने तक को कह रही हो?"

"बात यह है कि परसों सेठ जी ने बहू को बहुत बुरी तरह पीटा और उसे बेइज़्ज़त किया है। वह खाट पर लेटी है और उसे वेग का ज्वर हो आया है। वह रात भर बकवास करती रही है। बहिन जी और मैं उसकी सेवा में हैं। दिन को हालत कुछ अच्छी थी। अब फिर घबराहट

घट रही है।"

दूसरी नौकरानी कहां गयी है ? दिन के समय वह रह जाती तो क्या था ?"

"वह बहू की चिट्ठी लेकर लहौर गयी है।"

"सेठ साहब ने उसे जाने दिया है क्या ? पहले तो तुम कहती थीं कि सेठ साहब उसको पीटने का समाचार बाहर नहीं जाने देते थे।"

"हां, सेठ साहब तो अब भी यही चाहते हैं। वह बहू को मार डालना चाहते हैं ताकि लड़के की फिर शादी करें। सुना है कलकत्ते से उन्हें दस लाख मिलने की आशा है। नीमो तो चोरी चोरी गई है। केवल बहिन जी को और मुझे पता है। सेठ साहब तो अब भी बहू के खिलाफ़ हैं। सुबह बहिन जी ने डाक्टर को बुलाने के लिये कहा तो सेठ साहब ने मना कर दिया। कहने लगे, 'कुनीन दे दो, ठीक हो जायेगी।'

"बहिन जी ने हिन्दी में एक चिट्ठी लिखकर मुझे नील के कटरे एक वैद्य जी के पास भेजा था। वहां से मैं औषधि लाई थी और अब वह दी जारही है।"

"तुम्हारे सेठ बड़े निर्दयी हैं।"

"इन लोगों का धर्म-ईमान रुपया है। यूं तो दान-पुण्य बहुत करते हैं। मन्दिरों में चढ़ावा और ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा खूब देते हैं। परन्तु जैसे ये देते हैं वैसे लेते भी खूब हैं। किसी की ओर एक पाई भी नहीं छोड़ सकते। दस लाख के लिये तो सेठ अपनी मां का भी गला घोंटने को तैयार हो जाता, यह तो बहू ही है।"

"तो तुम आज भी नहीं आओगी। अगर कहो तो बच्चे को सुबह यहां छोड़ जाऊँ।"

"नहीं, तुम दो-तीन दिन की छुट्टी ले लो ! मुन्ना को कल ले आना। मिल लूँगी। परन्तु उसको यहां रख नहीं सकती। बहू की हालत नाज़ुक है। न जाने किस समय क्या काम पड़ जाये। हां, अगर नीमो आगयी तो घर आजाऊंगी।"

"अच्छा, भगवान भला करे। अमीरों के घर पैदा होकर भी कर्म-फल नहीं छूटता।"

वह पुरुष वहां से चला गया। स्त्री उसे कुछ दूर तक जाते देखती रही। फिर लम्बी सांस ले कोठी की ओर लौटी। अविनाश अन्धेरे में खड़ा इनकी बातें सुन रहा था। वह सब बात भली भांति समझ गया। उसने सुअवसर जान नौकरानी को पुकारा, "बहिन, ठहरो।"

नौकरानी इस अपरिचित आवाज़ को सुन एक क्षण के लिये रुकी। परन्तु रात और वीरान सड़क का विचारकर वह कोठी के फाटक की ओर लपकी। अविनाश कूदकर उसके सामने जा खड़ा हुआ और बोला, "डरो नहीं, बहिन, मैं चोर बदमाश नहीं हूँ। मैं बहूरानी से मिलना चाहता हूँ। लाहौर से आया हूँ।"

बहूरानी और लाहौर की बात सुन वह शोर मचाने से रुक गयी और क्षण भर विचारकर बोली, "तुम कौन हो?"

"मेरा नाम अविनाश है। तुम जाकर बहूरानी से कह दो। लाहौर से अविनाश आया है। मिलना चाहता है।"

"परन्तु बहूरानी को होश नहीं। वह कुछ समझती नहीं।"

"देखो बहिन, तुम जाकर कह दो। यदि वह मुझे नहीं बुलायेगी तो आकर कह जाना। मैं वापिस लौट जाऊंगा। इतना काम मेरा कर दो। तुम्हारा अहसान उमर भर नहीं भूलूँगा।"

नौकरानी ने इसमें कोई हानि नहीं समझी। उसने यह भी विचार किया कि बहिन जी से बात कर ले तो अच्छा होगा। वह अच्छा कह कर भीतर चली गयी। अविनाश फिर पेड़ के अन्धेरे में जा छुपा।

नौकरानी भीतर गयी तो सीतादेवी बहूरानी के सिर पर गरम घी की पट्टी बांध रही थी। नौकरानी ने धीरे से सीतादेवी के कान में अविनाश का संदेश सुना दिया। सीतादेवी मोहिनी की पूर्ण कथा सुन चुकी थी। वह तुरन्त समझ गयी कि कौन आया है। पूछा, "कहां खड़ा है?"

"फाटक के बाहर शहतूत के पेड़ के नीचे।"

"अच्छी बात है। तुम यह घी बहू के माथे पर लगाओ। मैं जाकर देखती हूँ।"

वह उठ खड़ी हुई। नौकरानी उसके स्थान पर बैठ गयी। मोहिनी की आंखें प्रश्न भरी दृष्टि से सीतादेवी की ओर घूम गयीं। सीतादेवी ने यह समझा कि बहू को चेतनता हो रही है। वह प्रसन्न थी। बोली, "बहू, अभी आती हूं।"

इतना कह सीतादेवी कोठी के बाहर निकल आईं। कोठी के सब लोग सो रहे थे। चौकीदार फाटक के पास स्टूल पर बैठा खुर्राटे भर रहा था। अविनाश ने समझा नौकरानी है। लपक कर उसके पास पहुँचा परन्तु किसी और को देख झिझका और पीछे लौटने लगा। सीतादेवी ने उसके मन की बात समझ ली और कहा, "तुम अविनाशचन्द्र हो?"

वह खड़ा हो गया और घूमकर बोला, "जी?"

"मोहिनी से मिलना चाहते हो?"

"जी हाँ।"

"क्यों?"

"मैंने उसकी चिट्ठी पढ़ी है। मैं उसकी सहायता के लिये आया हूँ।"

"क्या सहायता करोगे?"

"आप कौन हैं? मैं कैसे जानूँ कि वह क्या चाहती है? मिलने पर जैसा कहेगी वैसा करने के लिये आया हूँ। मैं उसे जीवित और प्रसन्न देखना चाहता हूं।"

"अच्छी बात। मेरे साथ आओ। मेरे पीछे-पीछे, बिना किसी प्रकार का खड़ाक किये चलते आओ।"

इतना कह, बिना अविनाश को कुछ कहने का अवसर दिये, वह कोठी के भीतर चली आई। अविनाश के पास कोई चारा नहीं था। वह पंजों के बल उसके पीछे-पीछे हो लिया। सीतादेवी कोठी के पिछवाड़े की तरफ गयी। वहां से वह उसे अपने कमरे में ले गयी। उसे कुर्सी पर

बैठाकर दबी आवाज़ में बोली, "शोर नहीं करना, चुपचाप बैठे रहना। अवसर मिलने पर आऊंगी और तुम्हें उसके पास ले जाऊंगी।"

अविनाश को सीतादेवी साक्षात् लक्ष्मी का अवतार प्रतीत हुई। उसने उसके चरण स्पर्श किये। सीतादेवी ने कहा, "छीः, यह क्या करते हो?"

"आप मेरी माता-तुल्य हैं।"

सीतादेवी मोहिनी के कमरे में गयी तो वह सो गयी थी। ज्वर का वेग कम होगया था। उसने मोहिनी को जगाना उचित नहीं समझा। उसने नौकरानी को कहा, "देखो वह लड़का मेरे कमरे में है। उसे कहो कि बहू सो रही है। वह भी वहां दरी पर सो जाये। समय मिलेगा तो उसे उठा लिया जायगा।"

अविनाश दिन भर के परिश्रम के पश्चात अत्यंत थका हुआ अनुभव कर रहा था। वह मन में समझ रहा था कि किस्मत उसके अनुकूल है और वह मोहिनी से मिलकर उसके लिये कुछ कर सकेगा। जब नौकरानी ने उसे कहा कि वह फर्श पर सो सकता है तो उसने इसे बहुत पसन्द किया। वह मोहिनी से मिलने से पहले स्थिर चित्त होना चाहता था। दरी पर लेटते ही सो गया।

सुबह के चार बजे नौकरानी के हिलाने से वह जगा और उसके पीछे-पीछे मोहिनी के कमरे में पहुँच गया। सीतादेवी ने मोहिनी को जान-बूझकर जगाया था। वह अविनाश को दिन निकलने से पूर्व कोठी से बाहर कर देना चाहती थी। अतएव मोहनी को जगाकर जब उसने देखा कि वह बात समझने के योग्य है तो उसने अविनाश के आने की बात कही। मोहिनी उससे मिलना उचित नहीं समझती थी, परन्तु सीतादेवी के कहने पर कि वह उसके कमरे में छिपा हुआ है, पांच मिनट के लिये मिलने को वह राज़ी हो गयी।

अविनाश ने आकर नमस्ते की और सम्मुख खड़ा हो गया। मोहिनी ने कहा, "आप यहाँ क्यों आये हैं?"

"मुझे कल सुबह तुम्हारा पत्र पढ़ने को मिला था। तुम्हें दुख में

देख मुझसे नहीं रहा गया। सायंकाल देहली पहुंच गया था। ग्यारह बजे रात तक मैं भीतर आने में सफल हुआ। उस समय तुम सो रही थीं। मैं चाहता हूं कि तुम्हें इस कष्ट से बाहर करने में तुम्हारी सहायता करूं।"

"मैं सहायता से दूर हो गयी हूँ। आप अब चले जायें। मेरे जीवित रहने की न तो आशा है और न इच्छा।"

"ऐसा मत कहो, कान्ता! मैं समझता हूं कि अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा। सुयोग्य डाक्टर तुम्हें बिलकुल ठीक कर देगा। मेरे साथ चलो। शेष मैं समझ लूंगा।"

"मुझसे तो हिला भी नहीं जाता। दो रात के बाद आज कुछ नींद आई है और फिर यह सब किस लिये? मैं अब पतित हो चुकी हूं, आपके योग्य नहीं रही।"

"यह झूठ है। शरीर कभी पतित नहीं होता। यह मैला हो जाता है जो धोने से साफ हो सकता है। पतित आत्मा होती है। तुम्हारी आत्मा को कौन पतित कर सकता है? यह तो वैसी ही कुन्दन की भाँति निर्मल है। कान्ता, जीने का यत्न करो। यदि अपने लिये नहीं तो मेरे लिये ही सही। यदि तुम अभी दुर्बल हो तो मैं प्रतीक्षा कर सकता हूं। एक बार हाँ कह दो। तब देखोगी कि किस प्रकार इस शरीर में पुनः जीवन-संचार हो जाता है।"

मोहिनी चुप थी। वह अविनाश का क्षीण मुख देख रही थी। एकाएक उसने पूछा, "आप बहुत दुर्बल हो गये प्रतीत होते हैं?"

"हाँ, कुछ ज्वर आ रहा था। परन्तु अब ठीक हूं। मैंने निश्चय कर लिया है मैं कि तुम्हें इस नरक से बाहर कर के छोड़ूंगा। इसके लिये मुझे स्वस्थ होने की आवश्यकता है। सो मैं ठीक हो गया हूं।"

मोहिनी की आँखों में आँसू छलकने लगे थे। उसने इसके उत्तर में केवल हाथ जोड़कर नमस्ते कह दी। सीतादेवी ने अविनाश के कान में कहा, "अब सेठ साहब के उठने का समय हो गया है। अब

यहां से चले जाओ। फिर रात को ग्यारह बजे के बाद उसी शहतूत के पेड़ के नीचे मिलना।"

[१७]

देहली के सिविल सर्जन को चीफ कमिश्नर से हाईकोर्ट का आदेश तो रात में ही मिल गया था, परन्तु उसने इस मामले में सुबह जांच करना उचित समझा। सुबह आठ बजे एक लेडी डाक्टर और एक पुलिस अफसर को साथ लेकर वह सेठ रघुनन्दन की कोठी पर जा पहुँचा। सेठ साहब पूजा से उठे ही थे कि नौकर ने कहा, "बड़े डाक्टर आये हैं।"

सेठ साहब ने समझा सीतादेवी ने बुलाया है। उसने नौकर को कहा, "कह दो, मैंने नहीं बुलाया।"

"हजूर, वह पुलिस साथ लाये हैं। आपसे मिलना चाहते हैं।"

सेठ साहब के मुख का रंग फीका पड़ गया। वह उठे और जल्दी २ कपड़े पहन कोठी के बाहर आये। डाक्टर को पुलिस अफसर के साथ देख बोले, "आइये। भीतर चलिये। वहीं बातचीत होगी।"

तीनों मोटर गाड़ी से उतर कोठी के गोल कमरे में जा पहुँचे। वहां बैठ इन्सपैक्टर पुलिस ने पूछा, "आप सेठ रघुनन्दन हैं?"

"हां, हजूर।"

"घनश्याम आपका लड़का है?"

"जी हां।"

"उसे फौरन बुलाओ।"

सेठ साहब का सारा शरीर कांप रहा था। घनश्याम को बुलाया गया। जब वह आगया तो इन्सपैक्टर पुलिस ने कहा, "चीफ कमिश्नर साहब का हुक्म है कि मोहिनीदेवी का डाक्टरी मुआइना (परीक्षा) किया जाये।"

सेठ साहब ने कहा, "इसकी क्या ज़रूरत है हज़ूर? बड़े घर की बहू है। वह सब प्रकार से ठीक है। आप मेरे कहने पर रिपोर्ट लिख दें। जो कहें आपकी सेवा करूंगा।"

इन्सपैक्टर के मुख में पानी भर आया। उसने डाक्टर के कान में कहा, "यह बड़े आदमी हैं। घर की औरतों को नहीं दिखा सकते। यह कहते हैं कि वह सब प्रकार से ठीक है। आप ऐसी रिपोर्ट कर दें तो यह आपकी फीस पांच हज़ार रुपया देंगे।"

डाक्टर ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "शट अप। मोहिनोदेवी की परीक्षा ज़रूर होगी। लाहौर हाईकोर्ट का हुक्म है। एक बार वह उसे यहां ले आयें फिर यह लेडी-डाक्टर उसकी परीक्षा करेंगी।"

लाहौर हाईकोर्ट का हुक्म सुन सेठ साहब की टांगे कांपने लगीं। उन्होंने समीप की कुर्सी पर बैठकर कहा, "क्या मैं हुक्म देख सकता हूं?"

"हां," इन्सपैक्टर ने कहा और चीफ कमिश्नर देहली का हुक्म दिखाया। लिखा था, 'मुताबिक हाईकोर्ट के फैसला नं०······ता०······ के मैं हुक्म देता हूँ कि मोहिनोदेवी स्त्री घनश्याम की डाक्टरी परीक्षा बिना देरी किये सिविल सर्जन देहली करें और रिपोर्ट हाईकोर्ट में परसों ता०·········तक पहुँच जाये।'

सेठ साहब विवश थे। उन्होंने कहा, "अच्छी बात। आप बैठिये मैं···मैं उसे यहां लाता हूँ।"

सेठ रघुनन्दन को एक तरकीब सूझी थी। वह अपनी स्त्री के पास गये और उसकी एक नौकरानी को, जो सबसे छोटी आयु की थी, बहू के कपड़े और हाथों में सोने की चूड़ियां पहिना, घूँघट कढ़ा ले आये। नौकरानी का नाम मालिन था। उसे मोटी मोटी सब बातें समझा दी गयी थीं। वह आकर कुर्सी पर बैठ गयी। सेठ साहब ने कहा, "हज़ूर यह है मेरी बहू।"

डाक्टर ने परीक्षा आरम्भ कर दी। अपने बक्स से काग़ज निकाल उस पर लिखने के लिये पूछा, "क्या नाम है?"

मालिन ने घूंघट के बीच में से धीरे से कहा, "मोहिनी।"

"बाप का नाम?"

"सेठ धन्नाराम लाहौर वाले।"

"तुम्हें कोई तकलीफ़ है ?"

"नहीं।"

"अच्छा जरा उठकर चलो।"

मालिन ने दो-तीन कदम चलकर दिखाया और फिर कुर्सी पर बैठ गयी। अब डाक्टर ने नाड़ी-परीक्षा की। पश्चात् लेडी डाक्टर को कहा, "इसे अलग कमरे में ले जाकर पूरी परीक्षा करो।"

लेडी डाक्टर उसे बगल के कमरे में ले गयी। एक घण्टा भर वह परीक्षा करती रही। मालिन सर्वथा स्वस्थ लड़की थी, परन्तु परीक्षा के फार्म की प्रत्येक खानापूरी करनी थी। लम्बाई, वज़न, फेफड़ों की मज़बूती, शरीर पर किसी घाव इत्यादि का निशान और फिर गुह्य अंग, पहिचान के लिये शरीर के मुख्य चिन्ह इत्यादि सब बातों को देखकर लिखना था। एक घण्टा भर लग गया। पश्चात् लेडी डाक्टर उस औरत को लेकर फिर गोल कमरे में आगयी। डाक्टर ने लेडी डाक्टर की परीक्षा पढ़ी। एक बात ने डाक्टर का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित किया। लेडी डाक्टर ने गुह्य अंगों की परीक्षा कर लिखा था, 'प्रतीत होता है कि इसके दो बच्चे हो चुके हैं।'

सिविल सर्जन पढ़ता पढ़ता यहां रुक गया। उसने घनश्याम के मुख की ओर देखकर पूछा, "तुम्हारी क्या आयु है ?"

घनश्याम ने उत्तर दिया, "सोलह वर्ष।"

"तुम्हारा विवाह कब हुआ था ?"

"आठ मास पूर्व।"

"आठ मास ?" डाक्टर ने अचम्भे में पूछा।

"जी हां," घनश्याम का कहना था।

"तो तुम्हारी औरत की यह दूसरी शादी होगी।"

"मेरी स्त्री बदकार थी और हमें धोखा देकर शादी की गयी है।"

सिविल सर्जन ने मुख लम्बा कर लेडी डाक्टर की ओर देखकर कहा, "तुम्हें इसका विश्वास है ? यह अति अपमानसूचक कथन है ?"

"हां, मैं दावे से कहती हूँ कि यह मां बन चुकी है।"

सिविल सर्जन ने कन्धों को ऊपर झटके से उठाकर रिपोर्ट के नीचे पहले अपने, लेडी डाक्टर के और पश्चात् पुलिस अफसर तथा घनश्याम और सेठ रघुनन्दन के हस्ताक्षर कराये। डाक्टर रिपोर्ट को अपने बक्स में रख रहा था कि सेठ रघुनन्दन ने पूछा, "अब यह जासकती हैं हजूर ?"

"हां, मोहिनीदेवी जी ! आप जा सकती······।"

डाक्टर के मुख से बात पूरी नहीं हुई कि रामलाल, जगन्नाथ, हाई-कोर्ट का क्लर्क और चीफ कमिश्नर का क्लर्क ड्रायंगरूम में आ पहुंचे। रामलाल ने सिविल सर्जन को घूंघट काढ़े औरत को मोहिनीदेवी कहते सुन लिया था। उसने उस औरत को उठकर जाते देख एक क्षण में समझ लिया था कि वह मोहिनी नहीं है। वह औरत नाटे कद की थी और मोहिनी लम्बे कद की थी। रामलाल ने परिस्थिति को तुरन्त समझ लिया। वह लपककर उस औरत के रास्ते में खड़ा होकर बोला, "ठहरो।"

सब लोग नये आने वालों और विशेष रूप से रामलाल को अचम्भे में देखने लगे। सेठ रघुनन्दन ने भागकर रामलाल को मालिन के मार्ग से एक तरफ करने का यत्न किया, परन्तु रामलाल ने औरत को पकड़ लिया और उसे पुलिस अफसर की ओर खींचकर ले आया। सिविल सर्जन ने हैरानी से पूछा, "यह सब क्या है ?"

जगन्नाथ, जो अब सिविल सर्जन के पास आ खड़ा हुआ था, बोला, "आपके साथ धोखा किया गया है। यह मोहिनीदेवी नहीं है।"

"क्या ?" सिविल सर्जन ने अचम्भे में खड़े होकर पूछा।

"हां, यह मोहिनी नहीं है," जगन्नाथ, जिसने मालिन के घूंघट के घबराहट में हट जाने से उसका मुख देख लिया था, गम्भीरता से बोला।

"तुम कौन हो ?" इन्सपैक्टर ने अब अपना रौब जमाते हुए पूछा।

इसका उत्तर रामलाल ने दिया, "मैं मोहिनी का भाई हूं। लाहौर से आज सुबह ही आया हूं। यह मेरे साथ लाहौर हाईकोर्ट का क्लर्क,

हाईकोर्ट का हुक्म लिये हुए है। इसके नीचे चीफ कमिश्नर देहली की पुष्टि भी है।"

हाईकोर्ट के क्लर्क ने हुक्म निकालकर इन्सपैक्टर पुलिस को दिखाया। मालिन का हाथ पकड़े, रामलाल डाक्टर के सम्मुख खड़ा था। सेठ साहब, जो रामलाल से मालिन को छुड़ाने का निष्फल यत्न कर चुके थे, अब हताश हो एक कुर्सी पर बैठ गये थे। डाक्टर ने पुनः अपने स्थान पर बैठते हुए औरत की ओर देखकर पूछा, "तुम कौन हो?"

मालिन अति भयभीत हो गयी थी। उसका घूंघट हट गया था और वह रो रही थी। उसने सिसकियां भरते हुए कहा, "मैं सेठ साहब की नौकरानी हूँ। मेरा नाम मालिन है। सेठ साहब ने मुझे एक हज़ार रुपया देने का वचन देकर मुझे यह करने को कहा था। मैं बहुत ग़रीब हूँ। हज़ूर मुझे माफी दी जाय।"

"मोहिनीदेवी कहां है?" डाक्टर का प्रश्न था।

"वह अपने कमरे में है। उठ नहीं सकती।"

"क्यों?"

"हज़ूर, उसे बहुत पीटा गया था। वह घायल खाट पर लेटी है।"

डाक्टर और दूसरे लोग मोहिनी के कमरे में गये। इन्सपैक्टर पुलिस ने टेलीफ़ून कर थाने से और पुलिस के लोग बुलाकर सेठ रघुनन्दन, घनश्याम और मालिन को हिरासत में ले लिया।

जब मोहिनी ने रामलाल को और लोगों के साथ देखा तो अचम्भे में कहा, "भैया, यह तुमने क्या किया है? मेरा चिट्ठी लिखने का यह आशय नहीं था।"

"मोहिनी, मैं पत्थर का नहीं बना हूँ। मैं भी सब लोगों की भांति हाड़-मांस का शरीर रखता हूं। कौन भाई है जो बहिन को कष्ट में देख चुप बैठा रह सकता है?"

मोहिनी की डाक्टरी परीक्षा हुई। उसका बयान हुआ। सीतादेवी का बयान हुआ। पश्चात् चोटों का ब्योरा लिखकर डाक्टर ने सेठ साहब

से कहा, "सेठ साहब, मुझे सख्त अफसोस है कि मैं आपके साथ कोई रियायत नहीं कर सकता।"

[१८]

डाक्टर परीक्षा कर बाहर ड्राइंगरूम में चला आया। इन्सपैक्टर पुलिस ने सेठ साहब के धोखा देने पर रिपोर्ट तैयार की और मालिन की परीक्षा का पर्चा, जिस पर सबके हस्ताक्षर हो चुके थे, डाक्टर से ले लिया। पश्चात् सेठ रघुनन्दन, घनश्याम और मालिन को हिरासत में कर पुलिस लारी में बैठाकर थाने रवाना कर दिया।

लेडी डाक्टर अभी मोहिनी के कमरे में थी और उसके लिये नुस्खा लिख रही थी। इस समय रामलाल ने डाक्टर का धन्यवाद किया और फिर इधर-उधर की बातें होने लगीं। इस समय अविनाश भी ड्राइंगरूम के दरवाज़े पर आ खड़ा हुआ।

अविनाश का मुख पीला था और गालें अन्दर को धसी हुई थीं। रामलाल को यह समझ पड़ा कि यह अविनाश का भूत खड़ा है। वह कई क्षण तक अवाक् मुख खड़ा रहा। आख़िर वह आगे बढ़ा, "हैलो मिस्टर अविनाश, तुम ? तुम कब आये ?" यह कह उससे हाथ मिलाया।

इस समय जगन्नाथ ने भी उसे देख लिया था। उसने आगे बढ़ अविनाश के बदन पर हाथ लगाते हुए कहा, "तुम कैसे आ सके हो ?" परन्तु उसे ज्वर से मुक्त देख चकित रह गया और बोला, "ओह ! तुम्हें अब ज्वर नहीं है।"

"नहीं," अविनाश ने, जो अभी तक छड़ी का आश्रय लिये खड़ा था, आगे बढ़ते हुए कहा। "मेरा बुख़ार रास्ते में ही उतर गया था। आप जब कल मुझे मिलकर गये तो मैंने छड़ी ली और स्टेशन का रास्ता पकड़ा। गाड़ी चलने से एक मिनट पूर्व मैं गाड़ी पर पहुँच सका था। उस समय मुझे एक सौ दो से ऊपर ज्वर था, मगर रास्ते में मुझे बहुत पसीना आया और लुधियाने पहुँचते पहुंचते ज्वर उतर गया। मैं रात यहां पहुंच गया था। केवल पांच मिनट के लिये मोहिनी से भेंट हो सकी और वह भी

बहिन जी की कृपा से। पश्चात् समीप ही एक बाग़ में मैं लेट रहा। अब जाग खुली तो फिर यहां आने की इच्छा हुई। अभी अभी सेठ साहब को और एक औरत को पुलिस की हिरासत में देख समझ गया था कि आप आ पहुँचे हैं।"

अविनाश की हालत बहुत नाजुक थी। वह अभी तक तो एक लक्ष्य की सिद्धि करने में लगा था और अब जब उसे प्रतीत हुआ कि मोहिनी के कष्ट दूर हो गये हैं तो उसकी टांगों ने जवाब दे दिया। वह समीप रखे सोफे पर बैठ गया और अर्ध-चेतनावस्था में हो गया। रामलाल और जगन्नाथ देहली स्टेशन से टैक्सी कर वहां आये थे। वह अभी तक बाहर खड़ी थी। रामलाल ने अविनाश को आश्रय दे टैक्सी में जा लेटाया और समीप ही स्विस होटल में उसे ले गये।

हाईकोर्ट के क्लर्क ने हिबस कार्पस का हुक्म सेठ रघुनन्दन की अनुपस्थिति में सीतादेवी को दे दिया।

सीतादेवी मोहिनी को एम्बुलैन्स कार में स्टेशन ले गयी और फस्ट क्लास का डिब्बा रिजर्व कराकर लाहौर जा पहुँची। रामलाल और जगन्नाथ भी अविनाश को ले उसी गाड़ी से लाहौर आगये।

हाईकोर्ट में मोहिनी स्ट्रैचर पर लेटी हुई उपस्थित हुई। वहां उसने अपने विवाह से लेकर उस दिन तक की पूरी कहानी वर्णन कर दी। सिवल सर्जन दिल्ली की रिपोर्ट भी पढ़ी गयी। सीतादेवी का बयान हुआ। पश्चात् हाईकोर्ट के जजों की बैंच ने फैसला दिया कि मोहिनी अपने भाई रामलाल के पास रह सकती है। सेठ रघुनन्दन पर मुनासिब कचहरी में कोर्ट ऑफीसर को धोखा देने का मुकदमा किया जाय और अपनी बहू को पीटने तथा उसे घर में कैद कर रखने के लिये भी मुकदमा चलाया जाय।

ये सब फौजदारी मुकदमे थे। लगभग छः मास तक मुकदमे चलते रहे और परिणाम यह हुआ कि मालिन नौकरानी को छः मास का कठोर दंड हुआ। घनश्याम नाबालिग़ होने के कारण छोड़ दिया गया। सेठ

रघुनन्दन को अदालत ने घोर दोषी समझ पांच-पांच वर्ष का तीन दोषों के लिये कठोर दंड दिया। तीनों दंड एक ही समय पर आरम्भ होने का विधान हुआ।

[१६]

घनश्याम ने अपनी स्त्री को अपने अधिकार में रखने के लिये दावा किया। इस मुक़दमे में जगन्नाथ मोहिनी के पक्ष को दुर्बल समझता था, परन्तु विमला का विश्वास था कि मोहिनी किसी प्रकार भी घनश्याम की स्त्री नहीं मानी जा सकती। मोहिनी की ओर से यह मुकदमा भी नागरिक अधिकार रक्षक समिति ने लड़ा। इसमें हिन्दू शास्त्रों की व्यवस्था पर प्रकाश डालने के लिये विमला ने अपने पिता को भी गुजरात से बुला लिया। मोहिनी की ओर से जवाबदावा यह दिया गया, "मेरा विवाह घनश्याम से जो हुआ है नाजायज़ है। मैं उसकी स्त्री नहीं हूं।" इस जवाबदावे में वह पूर्ण परिस्थिति वर्णन की गयी, जिसमें विवाह हुआ था। समस्या यह थी कि क्या एक नाबालिग़ लड़की अपने संरक्षक से किये गये विवाह में खड़ी होकर जब कह दे कि वह विवाह नहीं चाहती, तो क्या ऐसी परिस्थिति में हुआ विवाह भी विवाह है। घनश्याम का दावा था कि हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार यह भी विवाह ही है। दूसरी ओर मोहिनी का दावा था कि यह विवाह नहीं हो सकता। ऐसी अवस्था में संरक्षक को नाबालिग़ के बालिग़ हो जाने तक ठहरना चाहिये।

बड़े बड़े काशी के पंडित घनश्याम की ओर से उपस्थित हुए। उन्होंने प्रमाण दिये कि जब अग्नि-प्रदक्षिणा होगयी तो विवाह होगया। परन्तु जब जिरह में पूछा जाता कि किस शास्त्र में लिखा है कि लड़की जब ज़ोर ज़ोर से चिल्लाये कि वह विवाह नहीं चाहती तब भी बल-पूर्वक किया पाणि-ग्रहण पाणि-ग्रहण ही माना जाय। तो सब पंडित मुख देखने लगते थे।

मुकदमा अन्त में हाईकोर्ट में आकर तय हुआ। जजों की सम्मति थी कि शास्त्र ऐसी परिस्थिति में, जिसमें मोहिनी का विवाह हुआ था,

कुछ भी व्यवस्था नहीं देता। नाबालिग़ लड़की को अपने संरक्षक का कहना मानना चाहिये, परन्तु यदि जल्दी करने में कोई कारण न हो और नाबालिग़ अपने संरक्षक से कहे कि उसका विवाह अभी न किया जाय, तो यदि संरक्षक बलपूर्वक विवाह कर दे, तो यह शास्त्र के अनुकूल नहीं है। इसका निर्णय करना तो साधारण बुद्धि का काम है। संरक्षक अपने आश्रित बालक को बुरे कामों से रोक सकता है। वह, यदि विरोध न हो तो, विवाह भी कर सकता है, परन्तु विरोध होने पर, उसे बालक के बालिग़ होने की प्रतीक्षा कर लेनी चाहिये। मोहिनी की विशेष अवस्था में, जहां मोहिनी ने विवाह न करने के लिये हठ किया था, वहां किसी अन्य से विवाह करने अथवा घर से भाग जाने का हठ नहीं किया था। मोहिनी ने तो केवल यह कहा था कि उसका विवाह उसके बालिग़ होने तक न किया जाय। यह मांग ग़ैरकानूनी नहीं थी और उचित थी।

इस विषय में, कि जब एक बार अग्नि की प्रदक्षिणा हो जाये तो वह विवाह माना जाय, हाईकोर्ट की सम्मति यह थी कि प्रदक्षिणा कराने में जब बल-प्रयोग किया जाय तब वह प्रदक्षिणा विवाह की सूचक नहीं हो सकती। इस समय तो बल-प्रयोग करने वाले सम्बन्धी हैं, परन्तु कभी बल-प्रयोग करने वाले दूसरे आदमी भी हो सकते हैं। कुछ भी हो बल-प्रयोग विवाह जैसे विषय में क्षम्य नहीं। हिन्दू शास्त्र इसकी स्वीकृति नहीं देता, न्याय इसे उचित नहीं समझता। बलपूर्वक कराई गयी अग्नि की प्रदक्षिणा विवाह नहीं है।

इस मुकद्मे में सेठ घनाराम का व्यवहार मोहिनी से सहानुभूति का था। उसके भी बयान कचहरी में हुए थे। उसमें सेठ साहब ने अपनी भूल मान ली थी। जिरह करते समय घनश्याम के वकील ने धमकी दी थी, "आपने मोहिनी पर नाजायज़ दबाव डाला था?"

"हां," सेठ साहब का उत्तर था।

"नाजायज़ काम करने वालों को दण्ड दिया जाता है, आप जानते हैं?"

"हां, जानता हूं और उसको भोगने को तैयार हूं।"

[२०]

विवाह नाजायज़ होगया। जब तक मुकदमे का निर्णय हुआ तब तक मोहिनी बालिग़ होगयी। इस समय उसके विवाह का प्रश्न उपस्थित हुआ। अविनाश ने भी एम० एस सी० पास कर लिया था। मुकदमे का निर्णय होने के दूसरे दिन वह मोहिनी से, जो रामलाल की कोठी में रहती थी, मिलने आया। उसने अपना कार्ड भीतर भेजा। मोहिनी मिलने के लिये आई और नमस्ते कर सम्मुख खड़ी होगयी। अविनाश भी ड्राइङ्गरूम में खड़ा था। कुछ देर तक दोनों एक दूसरे का मुख चुपचाप देखते रहे। आखिर अविनाश ने शांति भंग की और बोला, "कान्ता, अब.....।"

एकाएक मोहिनी को याद आया कि दोनों,खड़े हैं। उसने कहा, "बैठियेगा नहीं ?"

अविनाश ने बैठते हुए कहा, "आपको मुकदमा जीतने पर बधाई देता हूँ।"

"मुकदमा तो जीत ही जाना था। यदि हम हार भी जाते तब भी मैं देहली तो कभी नहीं जाती। मैं अब बालिग़ हूँ और जहां चाहूं जा सकती हूँ।"

"मैं आज पूछने आया हूं कि तुम हमारे घर चलोगी ?"

"वहां क्या है ?"

"वहां पिता जी हैं, माता जी हैं और.....।"

"और क्या..?" मोहिनी ने मुस्कराते हुए पूछा।

"और वह घर तुम्हारा है।"

अविनाश ने बात बदल दी थी। वह कहने लगा था, "और मैं हूँ।" परन्तु उसे ऐसा कहना कुछ अभिमानयुक्त प्रतीत हुआ।

"यही तो विचारणीय बात है। आपके पिता ने मुझे अपनी पुत्र-बधू बनाना स्वीकार नहीं किया था। आपकी माता जी को मैं जानती नहीं।

क्या जाने वह कैसा व्यवहार करें ! यहाँ भाई हैं, भौजाई हैं। दोनों बहुत स्नेह करती हैं।"

"पिता जी को अब आपत्ति नहीं है। माता जी हिन्दू स्त्री हैं। पिताजी के विचारों को सदैव ठीक समझती हैं, और फिर भाई-भौजाई भी तो दूर नहीं होंगे। उनके स्नेह का प्रसाद तो कहीं चला नहीं जायेगा।"

"अब तो आपके पिताजी लेने आवेंगे तो वहां चलूंगी।"

"कठिनाई यह है कि वह आवेंगे तो बाजे-गाजे के साथ आवेंगे और तब यह सब दुख और क्लेप जो सहन किया है व्यर्थ हो जावेगा।"

"अब तो मैं भी ऐसा ही उचित समझने लगी हूँ।"

"क्या उचित समझने लगी हो ?"

"यही कि विवाह में कुछ प्रदर्शन, कुछ विज्ञापन और कुछ गायन-वादन होना ही चाहिये।"

" ओह ! यह सब क्यों ?"

"विवाह केवल किसी की निज की बात नहीं। हम उस समय ऐसा ही समझते थे, परन्तु मेरे विचार बदल गये हैं। विवाह-सम्बन्ध एक समाज की बात है। इसका नियंत्रण समाज की ओर से रहना आवश्यक है। यह ठीक है कि इस समय के रीति-रिवाज जिन्हें समाज ने स्वीकार किया हुआ है ठीक नहीं, परन्तु उनको ठीक करने का उपाय वह नहीं जिसका हमने अवलम्बन किया था। इसका उपाय है दोषपूर्ण रीति रिवाज के विपरीत कानून बनवाना, उनके विपरीत प्रचार करना और समाज में सुधार की भावना पैदा करना।"

अविनाश मोहिनी के विचारों में परिवर्तन देख चकित रह गया। उसने कहा, "यदि यही बात थी तो फिर यह मुक़दमा लड़ने की क्या आवश्यकता थी ?"

"मुक़दमा लड़ने से हमने एक नैतिक बात पर हाईकोर्ट का रूलिंग ले लिया है। यह भी कानून बनवाने के समान ही है।"

"और आपका सत्याग्रह ?"

"वह तो प्रचार-कार्य था। उससे मैंने अपने आप पर कष्टों को बुलाकर लोगों को केवल रुपये के लोभ में विवाह करने के बुरा होने को प्रकट किया था। फिर उस सत्याग्रह के साथ यदि जगन्नाथ वकील की सहायता न मिलती और सीतादेवी जैसी स्त्री उपस्थित न होती तो वह भी निष्फल जाता।"

"ये सब बातें तुम कहां से सीख गयी हो?"

"विमलादेवी ने बताई हैं।"

"तो फिर अब क्या होगा?"

"भैया से इस विषय में विचार करना चाहिये।"

अविनाश रामलाल से मिला। उसने पूछा, "आपके पिताजी का क्या विचार है?"

"वह हमारे अनुकूल हैं।"

"तो ठीक है। मैं उनसे मिलूंगा।"

"भाई साहब," अविनाश ने अचम्भा प्रकट करते हुए पूछा, "तो क्या अब हमारी इच्छा का कुछ भी मूल्य नहीं रहा?"

"रहा क्यों नहीं? मैं समझता हूँ कि जब माता-पिता वही चाहते हों जो बच्चे चाहते हैं तो उनका सहयोग प्राप्त करना ही चाहिये। जब वे अपने बच्चों की रुचि के विपरीत जायें तब दूसरे उपायों पर विचार किया जा सकता है।"

रामलाल अविनाश के पिता से मिला। उसने कहा, "जहां तक विवाह का प्रश्न है, मोहिनी तैयार है, परन्तु पिता जी ने दूसरा विवाह कर लिया है। ऐसी अवस्था में हम उनसे कुछ भी मांगना उचित नहीं समझते।"

अविनाश के पिता को रुपये-पैसे का लोभ नहीं था। वह यह चाहते थे कि मोहिनी और उनके सम्बन्धी उसकी और लड़के की आर्थिक स्थिति समझ लें। सेठ धन्नाराम और सेठ रघुनन्दन की धन-दौलत के सम्मुख वह एक कङ्गले कहे जा सकते थे। रामलाल ने उन्हें इस विषय

में केवल यह कहा, "अभ्यास से प्रत्येक बात को स्वभाव में सम्मिलित किया जा सकता है। आप भी विवाह पर कुछ व्यय न करें तो क्या अच्छा न होगा?"

एक दिन निश्चय कर विवाह होगया। प्रोफैसर साहब को अपने सम्बन्धियों को लेकर नियत स्थान पर पहुंच जाना था। शेष सब भार रामलाल ने उठाया था। विवाह में केवल दो सौ रुपये के लगभग व्यय हुआ था। विदाई के लिये पांच छः मोटर गाड़ियों का प्रबन्ध करना था। वह रामलाल के मित्रों ने कर दिया।

विवाह के अवसर पर सेठ धन्नाराम स्वयँ नहीं आये। उन्होंने केवल एक हाथी दांत की सन्दूकची मोहिनी को भेंट दी थी। सन्दूकची में एक पत्र था, एक हीरे से जड़ी अंगूठी और पांच लाख रुपये का एक चैक। चिट्ठी में लिखा था:—

प्रिय मोहिनी,

मैंने अपनी मूर्खता के कारण जो कष्ट तुम्हें दिया है, उसके लिये क्षमा चाहता हूं। वास्तव में बात यह थी कि मेरे दिमाग़ में एक पागलपन समाया हुआ था। वह यह कि धन ही सब कुछ है और जिस किस प्रकार से भी हो धन एकत्रित करना मनुष्य का मुख्य जीवन-कार्य है। यह पागलपन मेरे दिमाग़ में तब आया था जब मैं लाहौर की गलियों में आलू-कचालू की चाट का खोंचा लगाता था। दिन भर की मेहनत के बाद चार आने पैसे कमा पाता था। चार आने में मेरी और मां की रोटी, मकान का भाड़ा, कपड़े आदि का खर्चा करना पड़ता था। मेरे कारोबार की पूंजी एक रुपया थी। उस समय लाहौर की आबादी बहुत कम थी। अभी बाबू पेशा लोगों ने यहां महंगाई नहीं की थी। इस पर भी चार आने रोज़ कमाकर जीवन व्यतीत करना एक समस्या थी। तुम यह सुनकर चकित होगी कि उस समय भी एक भद्र पुरुष ने अपनी लड़की मुझे विवाह में देनी स्वीकार की। वह महानुभाव एक हलवाई की दुकान पर काम करता था। इस पर भी उसकी कमाई हमसे अधिक

थी। जब मैंने अपने होने वाले स्वसुर से कहा, 'हमारे पास तो अपने खाने को पर्याप्त नहीं,' तो उसने उत्तर दिया, 'भगवान जिसको पैदा करता है उसके खाने का प्रबन्ध भी साथ ही कर देता है।'

मैंने कहा, 'पर लाला जी आप किसी अमीर से लड़की का विवाह क्यों नहीं करते ? सुना है वह बहुत सुन्दर है।'

उसने हंसते हुए कहा, 'बड़ी दुकान और फीका पकवान की बात तुमने नहीं सुनी ? देखो लाला करोड़ीमल का लड़का तुम्हारे बराबर ही है। मालिन की मां उनके घर गयी थी तो लाला करोड़ीमल की औरत बोली, 'दहेज में क्या दोगी ?' मालिन की मां अपना सा मुख लेकर लौट आई। अब तुम ग़रीब हो तो यह तो भाग्य की बात है, परन्तु तुम्हारी मां ने दहेज तो नहीं मांगा।'

मेरा विवाह हो गया। मां ने विवाह के लिये बीस रुपये का कर्ज़ा उठाया था। मैं इस सब झगड़े से बहुत परेशान था। परन्तु जब तुम्हारी मां मेरे घर में आई तभी से पासा पलटा। बिरादरी में यह बात विख्यात हो गयी कि धन्नू आलू-कचालू वाले का विवाह होगया। जिस जिस मुहल्ले में मैं सामान बेचने जाता था औरतें बड़े चाव से पूछतीं,'धन्नू, बीवी अच्छी है ? साथ ही मेरी बिक्री बढ़ने लगी। अब आलू-कचालू तुम्हारी मां बनाती थी और उसके बनाने का ढंग ऐसा था कि औरतें बहुत पसन्द करती थीं। दो महीने में मैंने विवाह के समय का ऋण उतार दिया। एक वर्ष में मेरे पास एक सौ रुपया जमा हो गया। तीन वर्ष में मैंने कपड़ा बेचने का काम आरम्भ कर दिया।

जब मेरा विवाह हुआ था, मेरी आयु ग्यारह वर्ष की थी। तुम्हारी मां की आयु भी लगभग उतनी ही थी। मेरी मां ने जब देखा कि बहू के आने से घर का सुख और आराम बढ़ गया है तो वह उससे बहुत प्यार करती थी। मैंने बाज़ार में छोटी सी दूकान कपड़े की कर ली। देखते देखते काम इतना बढ़ गया कि दूकान बदलनी पड़ी। जब मैं बीस वर्ष का था तो कपड़े की आढ़त करता था। थान के थान इधर से उधर

जाते थे। एक थान से कम नहीं बेचता था। मेरी पूंजी चालीस-पचास हज़ार के लगभग थी। मेरी ईमानदारी की इतनी साख थी कि कारखाने वाले लाखों का माल उधार दे देते थे। इस समय मैं कई बार बम्बई, अहमदाबाद, कलकत्ता, नागपुर, और कानपुर गया। वहां कारखानों को देख मेरे मन में लाहौर में एक कपड़े की मिल खोलने का विचार हुआ। रामलाल अभी मां की गोदी में था कि एक जर्मनी के एजेन्ट ने लाहौर में कपड़े की मिल लगाने के लिये कहा। उसने तमाम मशीनरी उधार देने को कहा। जगह और इमारत मैंने लेनी थी। मैंने पहली कपड़े की मिल मुगलपुरा में खोली। मशीनरी के बिल की दस सालाना किश्तें निश्चय हुई थीं, परन्तु मैंने तीन ही साल में रुपया अदा कर दिया। इस पर जर्मन की उसी कम्पनी ने और कारखाने लगाने की योजना पेश की।

जब तुम्हारा जन्म हुआ तो तुम्हारी मां का देहान्त होगया। तब से मुझे अधिक और अधिक धन कमाने की लालसा होती गयी। पहले तो मैं धन इस कारण पैदा करता था कि उससे सुख और आराम का जीवन व्यतीत करना है परन्तु जब आवश्यकता से अधिक मिलने लगा तब धन केवलमात्र धन के लिये ही कमाने लगा। पहले मेरे विचारों को अंकुश में रखने के लिये तुम्हारी माता उपस्थित थीं। जब भी मेरे किसी काम को वह नापसन्द करतीं तो अति विनीत और मृदुल दृष्टि से मेरी ओर देखती थीं। मैं समझ जाता था। यह धन-सम्पद् उसी के आने से मिली थी। इस कारण उसे नाराज़ देखने का मेरे में साहस नहीं था। मेरा व्यवहार सर्वथा उसकी इच्छानुकूल ही होता था। परन्तु उसके देहान्त के पश्चात् वह अंकुश मेरे मन पर नहीं रहा और मैं मनमानी करने लगा। धन एकत्रित होने लगा और मेरे मस्तिष्क में पागलपन समाने लगा। मैं भूल गया कि मैं भी कभी निर्धन था।

मैंने तुम्हारे विवाह में धनवान पति ढूँढने का यत्न किया। इसी धन के मोह ने मेरी आंखों पर पट्टी और हृदय पर पत्थर बांध दिया था। मुझे यह समझ ही नहीं आया था कि मनुष्य-हृदय की भावनायें भी कुछ

कीमत रखती हैं।

मुझे अपनी भूल का भास उस समय हुआ जब तुम्हारा अपने विचार से विवाह कर तुम्हारी विदाई का प्रबन्ध कर चुका था। तुम्हारी विदाई से एक दिन पूर्व की बात है कि कारखानों में हड़ताल चल रही थी। मज़दूर भूखों मर रहे थे, पर मैं हड़ताल खोलने को राज़ी नहीं होता था। रामलाल ने हठ की। मैंने उसे ठुकरा दिया। वह नाराज़ हो बाहर चला गया। प्रेम ने उस समय मुझे ऐसी दृष्टि से देखा कि मुझे तुम्हारी माँ की वह दृष्टि स्मरण हो आई, जिससे वह मेरे व्यवहार को नापसन्द करते समय देखा करती थी। प्रेमदेवी तो रामलाल के पीछे-पीछे बाहर चली गयीं, परन्तु मेरे दिमाग़ से धन का नशा उतर गया। मुझे वह आलू-कचालू का ख़ोमचा लगाना याद हो आया। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मैं बहुत नीचे गिर गया हूं और तुम्हारी मां की आंखें मुझे उस पतित अवस्था से उठाने के लिये मेरी ओर देख रही हैं। वे आँखें, वह ज्योति, वह प्रेरणा और वह पथ-प्रदर्शन प्रेम की आँखों में मुझे मिला। मैं उसके पीछे भाग खड़ा हुआ और अंत में उसे पा गया।

अब प्रेम मेरा पथ-प्रदर्शक तारा बन गयी है। मुझे धन का लोभ और ममता नहीं रही। अब मुझे कर्तव्य-परायणता मुख्य प्रतीत होने लगी है। यह जो कुछ मैं भेज रहा हूँ, प्रेम की प्रेरणा से ही भेज रहा हूँ।

मैं तुम्हें इस अवसर पर आशीर्वाद भेजता हूँ।

तुम्हारा पिता, धन्नाराम



आठवाँ भाग

आत्म-निरूपण

प्रेम जब कभी सेठ साहब के साथ बाहर निकलती थी लोग उसे देख मुस्कराते थे। प्रेम उनके मन के भावों को समझती थी। वह जानती थी कि लोग समझते होंगे कि सेठ साहब के धन का भोग करने के लिये उसने उनकी रखेल बनना स्वीकार किया है। वह इस विचार को दूर करने के लिये किसी को कुछ कहती नहीं थी। चुपचाप आगे को देखती हुई चली जाया करती थी। वह अपने व्यवहार और सेठ साहब के व्यवहार से लोगों के विचारों में परिवर्तन पैदा करना चाहती थी।

एक रात सेठ साहब ने प्रेम से कहा भी। उसी दिन वे क्लब में गये थे और वहां सब लोग प्रेम से बहुत सहृदयता से मिले, परन्तु पीठ पीछे सेठ धन्नाराम को गधा और प्रेम को छिनार के नाम से पुकारते थे। सेठ साहब जब प्रेम कुछ लोगों के साथ बातें कर रही थी, पृथक खड़े सिगरेट पीते हुए विचार कर रहे थे कि एक साहब उसके पास आकर कहने लगा, "आप अपनी नयी साथिन को कैसा पसन्द करते हैं?"

"बहुत" सेठ साहब का उत्तर था।

"परन्तु वह ब्लाटिंग पेपर की भांति आपको चूस जावेगी।"

सेठ साहब ने हंसते हुए उत्तर दिया, "मुझे चूसते हुए उसका पेट फट जावेगा और मैं समझता हूं तब भी मैं समाप्त नहीं हूंगा।"

"परन्तु क्या आप बदनामी से नहीं डरते?"

"बदनामी? वह कैसी?"

"यही कि वह चरित्रहीन है।"

"मैं ऐसा नहीं समझता। आप लोग चरित्र के अर्थ नहीं समझते।"

बात वहीं समाप्त हो गयी, परन्तु सेठ साहब ने प्रेम से उसी रात कहा, "प्रेमजी, लोग आपकी बहुत निन्दा करते हैं और मैं समझता हूं कि इस निन्दा में मैं कारण हूं।"

"आप क्यों ?"

"मैं बूढ़ा होकर आप से प्रेम करता हूँ और धनी होकर आपको अपने धन से प्रसन्न रखना चाहता हूँ।"

"तो आप मुझे यहां से चले जाने को कहते हैं ?"

"नहीं, नहीं ! मेरा यह आशय नहीं। मेरे कहने का प्रयोजन यह है कि किसी समय ये लोग मुख पर निन्दा करने लगे तो बहुत बुरा होगा।"

"तो फिर क्या किया जाय ?"

"मैं चाहता हूँ कि हम रीति के अनुसार विवाह कर लें और मैं तुम्हारे नाम अपनी सम्पत्ति लिख दूं।"

"मैं यह कुछ नहीं चाहती। मैं तो ऐसे ही रहूंगी, जैसे रहती हूँ। मैंने निश्चय कर लिया है कि मूर्ख समाज की मूर्खतापूर्ण बातों की परवाह न करूं। लोग मेरी निन्दा करते हैं न, और मुझ पर लाञ्छन लगाते हैं न कि मैं आपको लूट रही हूं। मैं चाहती हूँ कि आपको विश्वास होना चाहिये कि मैं आपको लूट नहीं रही। मैं अपने किसी स्वार्थ के लिये आपकी पत्नी नहीं बनी। यदि आपको मेरी नीयत पर विश्वास है तो मुझे संसार क्या, संसार के भगवान की भी परवाह नहीं।"

सेठ साहब जानते थे कि प्रेम ने, जब से वह आकर उनके पास रही थी एक भी पैसा अपनी निजी आवश्यकताओं के लिये उनसे नहीं लिया था। उसे डेढ़ सौ रुपया मासिक अपने पिता की सम्पत्ति से मिलता था और रोटी कपड़ा वग़ैरह के अतिरिक्त वह अपनी आवश्यकतायें उस खर्चे से पूर्ण करती थी। वह उसमें से कुछ बचाती भी थी।

हां, एक बात वह अवश्य करती थी। वह यह कि सेठ साहब की मिलों के प्रबन्ध में अपनी राय देती थी। सबसे पहला काम जो उसने किया वह फैक्टरियों में काम करने वाले मज़दूरों के मकानों को नये सिरे से बनवाना था। पांच हज़ार मकान बनवाने के लिये करोड़ों रुपयों में से, जो रिजर्व रखा था, एक करोड़ रुपया उसने मंज़ूर करवा दिया। उसका ठेका दिलवा दिया। मकानों का नक्शा उसने स्वयं इंजीनियरों के पास बैठकर बनवाया

था। इन नये मकानों में रामलाल की योजना के अनुसार भोजनालय शिक्षणालय, क्लब, तैरने के लिये तालाब, फुटबाल व हॉकी खेलने के लिये मैदान, कपड़े की दुकानें और अन्य सुविधा के सामान प्रस्तुत किये गये थे। चौड़ी सड़कें, ढकी हुई नालियां, फ्लश से धुलने वाली टट्टियां, प्रकाश के लिये बिजली और यह सब कुछ बहुत ही मामूली खर्चे पर। कारखानों में काम करने वालों को वेतन कम से कम पचास रुपया मिलने लगा।

जब प्रेम प्रसूति-गृह में गयी तब तक उसके बनवाये मकानों में लोग रहने लग गये थे। सफाई रखने और लोगों को साफ सुथरा रहने की शिक्षा देने के लिये एक पृथक महकमा खोल दिया गया। इस महकमे के लोग मज़दूरों के घरों में जाकर यह देखा करते थे कि वे लोग मकान को गन्दा तो नहीं रखते। जहां कहीं भी वे भूल करते उन्हें बताया जाता कि यह ठीक नहीं है।

प्रेम के घर लड़का हुआ। उसके लिये यह एक और समस्या थी। वह भली भांति जानती थी कि लड़का गुलामरसूल का है और उसने इस विषय में सेठ साहब को भी बता दिया था। अब प्रश्न यह था कि इस स्पष्टवादिता के पश्चात् भी क्या वह उस लड़के को सेठ साहब के घर रखे। जब वह प्रसूति-गृह से बाहर आई तो उसने सेठ साहब से पूछा, "इस लड़के को मैं अपने पास रखना चाहती हूँ। आप इस विषय में क्या समझते हैं?"

"यह बात मेरे सोचने की नहीं है। जैसा तुम उचित समझो कर सकती हो।"

लड़का वहीं पलने लगा।

प्रेम को इस समय तक मोहिनी के विवाह का पूर्ण वृत्तान्त विदित हो चुका था और वह सेठ साहब के विचारों में परिवर्तन करने का यत्न करती रहती थी। परिणामस्वरूप सेठ साहब की शादी मोहिनी के अनुकूल हुई और तत्पश्चात् जब मोहिनी का अविनाश से विवाह हुआ तो प्रेम की इच्छा के अनुसार ही सेठ साहब ने भेंट भेजी थी।

मज़दूरों के हित की योजना बनने के पश्चात् जब कारखानों का पहला बैलेंसशीट निकला तो समाचार-पत्रों में इस पर भारी टीका-टिप्पणी हुई। हिस्सेदारों को एक प्रति शत लाभ बांटा गया। कुछ हिस्सेदारों ने हिस्से बेचने के लिये बाज़ार में भेज दिये। सेठ साहब ने हिस्से स्वयं कुछ रामलाल के नाम, कुछ प्रेम के नाम और कुछ प्रेम के लड़के प्रेममोहन के नाम खरीद लिये और इस प्रकार हिस्सों का दाम घटने नहीं दिया।

तिजारती संसार में यह पहली संस्था थी जिसने हिस्सेदारों को इतना कम लाभ बांटा था। इसके अतिरिक्त यह भी घोषित किया था कि शेष लाभ मज़दूरों को जीवनोपयोगी सुविधायें देने में व्यय होगया है और भविष्य में होता रहेगा। इस घोषणा ने व्यापार-मण्डल में हलचल मचा दी। बैंकों में सूद इससे अधिक मिलता है और बैंकों से रुपया इससे अधिक सूद पर ही मिलता है। ऐसी अवस्था में कौन सरमायादार अथवा बैंक है जो सेठ धन्नाराम के कारखानों में रुपया लगायेगा? इस विषय में पूँजीपतियों के समाज में चर्चा चल पड़ी। समाचार-पत्रों के संवाददाताओं ने सेठ साहब से मिलकर इस विषय पर उनके वक्तव्य लेने आरम्भ कर दिये।

सेठ साहब के वक्तव्यों में युक्ति यह होती थी कि पूंजी, प्राकृतिक उपज, और मनुष्य की मज़दूरी ये तीनों मिलकर बना हुआ माल निर्माण करते हैं। इनमें पहले दो साधन अर्थात पूंजी और प्राकृतिक उपज स्वयमेव गौण हैं। मुख्य साधन मनुष्य का परिश्रम है। इस कारण उपज का मुख्य फल परिश्रम करने वालों को मिलना चाहिये। पूंजी का भाग सबसे न्यून है।

संवाददाता पूछते थे, "जब तक देश में पूंजीवाद है तब तक आपको इतना सस्ता रुपया नहीं मिल सकेगा।"

"मुझे," सेठ साहब का उत्तर होता था, "मनुष्य का सर्वोत्तम परिश्रम प्राप्त हो जायेगा और यह पूँजी उत्पन्न कर देगा। मैं अब मज़दूर-बैंक खोल रहा हूँ। इस प्रकार एक ओर तो कारखानों को पूंजी

मिल सकेगी और दूसरी ओर मज़दूरों की आय वृद्धि हो सकेगी।"

"जब मज़दूरों को बाहर के बैंकों में अधिक सूद मिलेगा तो वह आपके बैंकों में क्यों जमा करायेंगे?"

"मैं समझता हूं जब उनको मालूम होगा कि यह रुपया केवल उनकी उन्नति के लिये ही प्रयोग में लाया जायगा तो वे कहीं अन्य स्थान पर जमा नहीं करायेंगे। मैं उनके मस्तिष्क में यह बात बैठा देना चाहता हूँ कि एक भी पाई जो वे बाहर के बैंकों में जमा करायेंगे वह उनके मज़दूर भाइयों के परिश्रम के फल को लूटने के लिये प्रयोग में लायी जायेगी। बात सीधी है। मज़दूरों को तीन आना सैंकड़ा सूद मिल सकेगा। परन्तु प्रत्येक तीन आना सूद देने के लिये बैंक अथवा पूंजीपति जो बैंक से रुपया उधार लेंगे मज़दूरों की मज़दूरी में से आठ या दस आना निकाल लेंगे। मज़दूर श्रेणी को उन बैंकों से व्यापार करने से लाभ नहीं होगा।"

संवाददाताओं के पूछने पर, कि शेष लाभ को वह किस प्रकार मज़दूरों के हित में प्रयोग करते हैं, सेठ साहब ने कहा, "मैं एक कारखाने का वृत्तान्त आपको बताता हूँ। कृष्णा स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल का वृत्तान्त लीजिये। पिछले वर्ष इस मिल में साढ़े बारह प्रति शत के हिसाब से लाभ बांटा गया था। इसमें कुल पूंजी बीस लाख लगी है। इस वर्ष हमने एक प्रति शत लाभ बांटा है। इसका अर्थ यह हुआ कि कारखाने के सब खर्चे निकालकर, जैसे कि पिछले वर्ष निकाले थे हमने दो लाख तीस हज़ार रुपया बचा लिया। इन दो लाख तीस हज़ार में हमने उन लोगों का, जो पांच सौ से अधिक वेतन लेते थे पांच सौ रुपया वेतन कर छत्तीस हज़ार का लाभ और लिया। जो लोग पांच और चार सौ के भीतर वेतन पाते थे उनका चार सौ वेतन कर हमने चौबीस हज़ार की और बचत कर ली है। इस प्रकार कुल बचत दो लाख नब्बे हज़ार की होती है। हमने इस बचत को इस प्रकार बांटा है। इस मिल में एक हज़ार के लगभग आदमी काम करते हैं। उनमें छः सौ के लगभग

मज़दूरों का वेतन पचास रुपया माहवार से कम था। औसत वेतन तीस रुपया है। हमने इन सबका वेतन पचास रुपया कर दिया है। इस प्रकार हमें एक लाख चौवालीस हज़ार अधिक देना पड़ा है। हमने इस मिल के मज़दूरों के लिये अस्पताल खोला है और उसका बजट चालीस हज़ार रुपये का है। बच्चों के लिये स्कूल है। उसका बजट चौबीस हज़ार रुपया है। एक बच्चों का क्लब है, उसकी सहायता के लिये सोलह हज़ार रुपया निश्चित किया है। मज़दूरों और उनकी स्त्रियों के मनोरञ्जन के लिये सहायता सोलह हज़ार निश्चित की है। मज़दूरों के क्वार्टरों में बिजली, पानी और अन्य सफाई रखने के प्रबन्ध के लिये बीस हज़ार। सांझे भोजनालयों को सहायता बीस हज़ार रुपया। इस प्रकार दो लाख नव्वे हज़ार में से हमने दो लाख अस्सी हज़ार रुपया वापिस बांट दिया है। दस हज़ार रुपया हमने मज़दूरों के किसी आपत्तिकाल के लिये सुरक्षित रख दिया है।

"बच्चों को स्कूल में उद्योग-धंधों की शिक्षा भी साथ-साथ दी जाती है और तीसरी श्रेणी के बच्चे स्कूल में फीस देने के स्थान में स्कूल से कुछ आय ही करते हैं। इस प्रकार मज़दूरों के बच्चों को दसवीं श्रेणी तक शिक्षा लेने में कुछ आय होती है।

"बच्चों के क्लब में बच्चों में संस्कृति उत्पन्न करने के साधन उपस्थित किये गये हैं। वहाँ बच्चों में संगीत, चित्रकला आदि द्वारा आत्मोन्नति करने की सुविधायें दी गई हैं।

"बड़े लोगों के मनोरञ्जन के लिये, व्यायामशालायें, फुटबाल, हॉकी ग्राउन्ड, तैरने को तालाब, सिनेमा और थियेटर-हाल बनवाये हैं। प्रत्येक स्थान पर जाने के लिये एक आना प्रति व्यक्ति प्रति दिन की फीस रखी है, जो मज़दूर स्वयं देते हैं और उनका घाटा इस मद्द के सहायता-फंड से पूरा किया जाता है।

"सांझे भोजनालयों में भोजन साफ, पौष्टिक और सस्ता दिया जाता है। भोजन मशीनों से बनता है, मशीनों से वितरण होता है। बर्तन

मशीनों से धुलते हैं। इस प्रकार दो हज़ार के लगभग मनुष्य इकट्ठे बैठ कर खा सकते हैं। एक समय के भोजन का दाम एक आना है। चाय के लिये दो पैसा देना पड़ता है। इसमें अभी जो कुछ हानि होती है वह इस मद्द के सहायता-फंड से पूरी की जाती है। मज़दूर अब घर घर में चूल्हा नहीं फूंकते। उनकी स्त्रियों के लिये दर्ज़ी-स्कूल, धोबी-स्कूल इत्यादि खोल दिये हैं और फिर उनको कपड़े सीने इत्यादि का काम दिया जाता है और साथ ही कुछ योग्य स्त्रियां कारखानों में काम करती हैं। वहां उन्हें वेतन मिलता है जिससे एक मज़दूर-परिवार की आय और भी बढ़ गयी है।

"इस प्रकार मज़दूर अति संतुष्ट हैं और काम भी पहले से अच्छा और अधिक करते हैं।"

"परन्तु जिन लोगों का वेतन आपने कम कर दिया है वे आपके कारखानों में काम कैसे करेंगे?"

"इन लोगों की संख्या बहुत कम है। केवल दस आदमी ऐसे थे जिनका वेतन पांच सौ से ऊपर था। और चालीस के लगभग ऐसे थे जिनका वेतन चार सौ और पांच सौ के भीतर था। पहले तो इन लोगों में हल-चल मची थी, परन्तु जब इन लोगों को उन सब सुविधाओं का पता चला, जो मज़दूरों को इस बचत से मिली हैं, तो वे अब पहले से अधिक संतुष्ट हैं। उदाहरण के तौर पर हमारे एक उपमैनेजर मिस्टर कपिला हैं। वह सात सौ मासिक वेतन लेते थे और प्रति मास ऋणी होते जाते थे। उनका भोजन का खर्चा अढ़ाई सौ मासिक था। घर में वह स्वयं, उनकी स्त्री और दो बच्चे हैं। अब भोजन पर उनका सोलह रुपये महीना और चाय पर आठ रुपये महीना खर्च होता है। लगभग पचास रुपया मासिक वह मक्खन, फल इत्यादि पर और अधिक खर्च करते हैं। इस प्रकार केवल एक ही मद्द में दो सौ रुपया महीना के लगभग बचा लेते हैं। पहले सिनेमा देखने के लिये शहर जाया करते थे। एक बार वहां जाने के लिये बीस रुपया के लगभग उनका खर्च हो जाता था। यदि मास में दो बार भी जायें तो चालीस रुपया खर्च होता था। अब हम प्रायः सब अच्छी-अच्छी तसवीरें

यहां मंगवाते हैं और मिस्टर कपिला को चालीस रुपये के स्थान में आठ-दस आना व्यय करना होता है। मिस्टर कपिला अब पांच सौ रुपया मासिक में लगभग दो सौ बचाते हैं।"

यह वक्तव्य जब समाचार-पत्रों में छपा तो देश भर में सेठ धन्नाराम की चर्चा होने लगी। साम्यवादी और पूंजीपति दोनों विचारों के लोग कारखानें और मज़दूरों की बस्तियां देखने के लिये आने लगे। देश भर के उन लोगों के लिये, जो देशोन्नति में योग देना चाहते थे, सेठ साहब के कारखानें तीर्थ-स्थान बन गये।

इस सब परिवर्तनों में प्रेम की प्रेरणा और रामलाल का उत्साह मुख्य अंग थे।

[२]

नरगिस के बच्चा होने वाला था। ज्यों-ज्यों उसके पेट का आकार बढ़ता जाता था उसके मन में एक भारी आशंका बैठती जाती थी। वह समझती थी कि वह कुरूप होती जाती है और उसका प्रभाव बिहारीलाल के मन से मिटता जाता है। बिहारीलाल में ज्यों-ज्यों प्रौढ़ता आती जाती थी त्यों-त्यों वह और अधिक प्रभावशाली होता जाता था। उसके शरीर का आकर्षण भी बढ़ता जाता था और उसके मुकाबिले में नरगिस का वर्ण फीका पड़ता जाता था। वह इस परिवर्तन को अनुभव कर रही थी और इसके साथ साथ वह बिहारीलाल के व्यवहार में भी परिवर्तन अनुभव कर रही थी।

बम्बई के एक विख्यात कम्यूनिस्ट मिस्टर सकलतवाला लाहौर पधारे थे और उनके स्वागत के लिये लाहौर नगर के निवासियों की ओर से एक चाय-पार्टी का प्रबन्ध किया गया था। टाउन-हाल के विशाल मैदान में लगभग पांच सौ महमानों के बैठने और चाय इत्यादि खान-पान का प्रबन्ध था। बिहारीलाल और नरगिस भी इनमें थे। प्रेम और सेठ धन्नाराम भी उपस्थित थे। नरगिस की अवस्था ऐसी थी कि वह अधिक घूम नहीं सकती थी। इस कारण उसे एक कुर्सी पर बैठा

बिहारीलाल मित्रों से मिलने के लिये इधर उधर घूम रहा था।

बिहारीलाल प्रेम से मिला और पांच मिनट के लगभग उससे बातें करता रहा। फिर वह एक और मंडली में जा पहुँचा था। मिस थापर थीं और उसके कुछ मित्र। नरगिस दूर कुर्सी पर बैठी इस मंडली को हंसते हुए देख रही थी और बिहारीलाल इस मंडली में खड़ा हंसी-मज़ाक में सम्मिलित था। यहां दस मिनट के लगभग दिल बहलाकर बिहारीलाल मिस्टर सकलतवाला से मिलने जा पहुँचा। वहां चार पांच मिनट की बातचीत के पश्चात् वह रामलाल और रज़िया से मिलने लगा। रज़िया से बातें करने जब बैठा, तो दावत लगभग समाप्त होगयी थी, तब भी वह बैठा बातें करता रहा।

नरगिस अकेली बैठी बैठी उकता गयी थी। वह अपनी विवशता और बिहारीलाल की लापरवाही से अति दुखी थी। उसके सम्मुख भी चाय आई और उसने अकेले बैठे पी ली। प्रेम का ध्यान इधर गया तो वह उसके पास बातें करने जा बैठी। उसने पहुँचते ही पूछा, "मिस्टर बिहारीलाल कहां हैं?"

"यहीं कहीं होंगे।"

प्रेम उससे उसके स्वास्थ्य के विषय में पूछने लगी। पश्चात् उसके माता-पिता के सम्बन्ध में बातचीत होने लगी। "आपके वालिद साहब अब कहां रहते हैं?" उसने पूछा।

"आजकल वे बन्नू में हैं। गुलामरसूल के ज़ख्मी होने से वालिद साहब का वज़ीर शेरगुल से झगड़ा होगया है, और वह अपना गांव छोड़कर बन्नू में आ बसे हैं। वहां पर मेरे चाचा के घर वालों के साथ भी ठीक नहीं बनती। इससे उनका इरादा अब लाहौर में आकर बसने का है।"

"कब तक यहां आजावेंगे?"

"कैनाल रोड पर एक ज़मीन का टुकड़ा उन्होंने लिया है। कोठी बनवाकर ही यहां आवेंगे।"

"यहां हिकमत करेंगे ?"

"उनका इरादा तो यही है। हिकमत करना हमारा ख़ानदानी काम है और फिर अब्बाजान को यही काम करते हुए चालीस साल से ऊपर होगये हैं।"

इस समय बिहारीलाल रज़िया के साथ टहलता हुआ दिखाई दिया। प्रेम और नरगिस दोनों ने देखा। नरगिस के माथे पर एक क्षण के लिये बल दिखाई दिया। प्रेम ने इसे देख लिया था और उसके मन के भावों को समझ गयी। उसने कहा, "मैं उनको बुलाऊं ?"

"किनको ?" नरगिस ने चौंककर पूछा।

"मिस्टर बिहारीलाल को ?"

"क्यों ?"

"उसे यहां रहना चाहिये।"

"नहीं, कोई ज़रूरत नहीं। मैं यहां अच्छी तरह से हूँ।"

बिहारीलाल लॉन में घूमता रहा। कुछ सरदी होगयी थी और नरगिस बैठी बैठी थक गयी थी। वह मन में सोच रही थी कि वह अब नीरस होगयी है जिससे उसको छोड़कर बिहारीलाल दूसरी औरतों के पीछे पीछे घूम रहा है। यह विचार उसको अत्यन्त दुख देने वाला सिद्ध हो रहा था।

मेहमान जाने आरम्भ होगये थे। बिहारीलाल और मिस थापर दोनों नरगिस के पास आये। बिहारीलाल ने कहा, "नरगिस डियर! मैंने प्रेम को अपनी मोटर-गाड़ी में तुम्हें ले जाने को कहा है। वह तुम्हें गाड़ी में गली के बाहर तक छोड़ आवेंगी। मैंने इनके साथ (मिस थापर की ओर संकेत कर कहा) क्लब एक काम से जाना है।

नरगिस ने एक लम्बी सांस खींची और कहा, "अच्छी बात है।"

बिहारीलाल उसे प्रेम के पास ले गया। प्रेम ने नरगिस की बांह में बांह डालकर कहा, "चलो, हम चल रहे हैं।"

नरगिस और प्रेम गाड़ी के पीछे बैठ गयीं और सेठ साहब आगे

ड्राइवर के पास। जब गाड़ी चल पड़ी तो प्रेम ने पूछा, "आप कहां रहती हैं ?"

"वहीं उनके अपने मकान में।"

"विमला ?"

"वह, सुधा और बा० रामलाल आजकल फिरोजपुर रोड वाली कोठी में रहते हैं। विमला के पिता पं० विलासराय भी आजकल यहां आये हुए हैं।"

"कुछ काम है ?"

"हां, सुना था कि एक मुकदमे के लिये यहां ठहरे हैं। सियालकोट में एक लड़की को भगा ले जाने का मुकदमा था। उसमें पुलिस वालों ने कुछ अनियमित बातें की थीं और नागरिक अधिकार रक्षक संस्था इस मुकदमें को लड़ रही है। पण्डित जी इस मुकदमे के सिलसिले में आये हैं।"

"विमला से आपका मेलजोल है क्या ?"

"जब वह मोहल्ले में रहती थी तो प्रायः नित्य मैं उससे मिलने जाती थी। सुधा बहिन बहुत ही प्रेममयी हैं। उससे जिस किसी का भी परिचय होता है वही उस पर मोहित हो जाता है।"

"विमला आपको कैसी जंची हैं ?"

"वह अज़ीबो ग़रीब औरत है। अब मैं उसका पूरा किस्सा जान गयी हूँ। मुझे उसकी फयाजदिली पर रश्क़ होता है।"

प्रेम ने मुस्कराते हुए कहा, "मैं उसे दकियानूसी (पुराने गले सड़े) खयालात रखने वाली औरत समझती थी। वह सब हिन्दू औरतों की तरह भगवान की भक्ति, ठाकुर पूजा, व्रत, नियम, धर्म, रीति-रिवाज, पति व्रत धर्म इत्यादि बातों को मानने वाली है। इस पर भी वह कभी कभी ऐसी बातें करती है जो नवयुग की शिक्षित और उन्नत स्त्रियों के भी कान कतरने वाली होती हैं। मैं तो उससे एक बार मिलकर उसके मन का रहस्य जानना चाहती हूं। क्या वह अच्छे काम लोगों में बदनामी

के डर से करती है या अपने ज़मीर (आत्मा) की आवाज़ से।"

[३]

इस समय मोटर नरगिस की गली के बाहर जा पहुंची थी। प्रेम की संगति से नरगिस का मन प्रसन्न था। अब वह अकेली रह गयी थी। घर में बैठी २ बहुत उदासी अनुभव कर रही थी। उसके मन में यह बात भली भांति अंकित हो गयी थी कि बिहारीलाल का मन उससे उचाट होगया है। विमला ने उसे अपनी पूर्ण कथा बताई थी। उसने बताया था कि कैसे वह प्रेम से मित्रता कर उसे भूलने लगा था और अंत में उसे अकेली छोड़ प्रेम के पास जाकर रहने लगा था। यही बात अब उसे अपने साथ होती प्रतीत होती थी। वह सोचती थी कि यदि उसके साथ भी वही व्यवहार हुआ जो विमला के साथ हुआ है तो वह तो उनकी जान ले लेगी। उससे यह सहन नहीं हो सकेगा कि वह विमला की भांति त्याग दी जाय। फिर वह सोचती थी क्या विमला को उन पर क्रोध नहीं आता। यदि आता है, जो सर्वथा स्वभाविक बात है, तो वह चुपचाप सहन क्यों करती है? क्या वह बिहारीलाल से प्रेम नहीं करती थी। शायद नहीं करती होगी। उसका विवाह तो कोई प्रेम-विवाह नहीं था। माता-पिता ने कर दिया और होगया। मेरा विवाह तो उनसे प्रेम हो जाने का परिणाम है।

परन्तु प्रेम के व्यवहार से वह चकित थी। बिहारीलाल जैसे सुन्दर युवक को छोड़ कर एक बूढ़े से विवाह कर बैठी है। यह भी किसी दूसरे की प्रेरणा से नहीं, प्रत्युत स्वेच्छा से।

इन्हीं विचारों में वह रात भर बैठी बिहारीलाल की प्रतीक्षा करती रही। प्रभात हो गया। सूर्य की लालिमा आकाश पर दिखाई देने लगी। नरगिस को अब क्रोध के स्थान चिन्ता सताने लगी थी। मिस थापर लाहौर के एक उच्च परिवार की लड़की थी और इंगलैण्ड से शिक्षा प्राप्त कर आई थी। वह नगर के एक हाईस्कूल की मुख्याध्यापिका थी। ऐसी परिस्थिति में नरगिस यह समझती थी कि मिस थापर रात भर क्लब में

नहीं बैठी रह सकती। तो वे कहां रहे हैं ?

इतने में मकान का दरवाज़ा किसी ने खटखटाया। वह उठी और नीचे जा दरवाज़ा खोला। बिहारीलाल खड़ा था। वह अति प्रसन्न-वदन था। नरगिस ने उसे भीतर आजाने के लिये मार्ग छोड़ दिया। बिहारीलाल भीतर आ सीधा ऊपर चढ़ गया। नरगिस ने भी दरवाज़ा बन्द किया और पीछे पीछे ऊपर पहुँची। बिहारीलाल ने उसे देख कहा, "नरगिस ज़रा चाय बना दो। फिर मैं सोना चाहता हूँ।"

नरगिस ने माथे पर त्योरी चढ़ा कर कहा, "रात भर इन्तज़ार करती करती थक गयी हूँ। अब मैं सोना चाहती हूँ। ज़रूरत हो तो अपने आप बना लीजिये।"

वह अपने बिस्तर पर जाकर लेट गयी और मुख कपड़े से ढांप लिया। बिहारीलाल समझ गया कि वह नाराज़ होगयी है। वह कुछ देर तक तो उसे देख मुस्कराता रहा फिर धीरे धीरे उसके पास पहुंचा और मुख से कपड़ा उतार दिया। नरगिस रो रही थी। बिहारीलाल ने अचम्भा प्रकट करते हुए पूछा, "नरगिस रो रही हो ?"

नरगिस चुप रही और करवट बदलकर मुख दूसरी ओर करने लगी। बिहारीलाल ने बांह गले में डाल उसे करवट बदलने नहीं दी। "नहीं बोलोगी मेरी रानी ?" उसने फिर पूछा।

"नहीं बोलना चाहती। मुझे छोड़ दीजिये।"

"पर आखिर क्यों ?"

"आप रात भर कहां रहे हैं ?"

"मिस थापर के यहां ब्रिज खेलने लगे थे। मेरा विचार था रात के ग्यारह बजे तक लौट आऊंगा, परन्तु आज रविवार है। दफ़्तर तो जाना नहीं था और खेल इतना दिलचस्प होता गया कि खेलते खेलते दिन होगया। अब वहां से सीधा ही चला आ रहा हूं।"

"अच्छा छोड़ो मुझे। मैं आपसे नहीं बोलूंगी। जानते हैं मैंने रात खिड़की में बैठे बैठे गुज़ार दी है।"

"तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिये।"

"और आपको रात-रात भर घर से बाहर रहना चाहिये ?"

"मेरी छोड़ो। यदि कोई तकलीफ़ होगयी तो लेने के देने पड़ जायेंगे।"

"अब मैं आपके पास नहीं रहूँगी।"

"क्यों ?"

"आप बेदर्द हैं, बेरहम हैं...।" नरगिस का क्रोध अब उबल रहा था और वह उसे अपने में छिपाकर नहीं रख सकी।"

"यह मेरे विषय में नई बात है, जो झूठ है।"

"नई और झूठ ? नहीं। मुझे आपका विमला के साथ सलूक मालूम हो चुका है। आपने उसे घर से निकल जाने की आज्ञा दे दी थी।"

"वह अपने बाप के घर जा सकती थी। मुझे उसके चरित्र पर सन्देह होगया था।"

"जो बेबुनियाद था।"

"उस समय वह ठीक ही मालूम होता था।"

"परन्तु जब अपनी ग़लती मालूम होगयी थी, तब आपने मुआफी मांगी थी क्या, और उसे घर लाने की कोशिश की है क्या ?"

"वह अब मुझसे कई गुणा अधिक धनी होगयी है और फिर तुम्हारे साथ उसे कैसे ला रखता ?"

"कितनी फिज़ूल की बात है। वह तो अपने गुज़र के लिये अभी भी नौकरी करती है और मुझसे आपने कभी पूछा ही नहीं।"

"तो अगर मेरी रानी यही चाहती हैं तो मैं अभी जाकर उसे ले आता हूँ। मैं मिन्नत समाजत कर उसे मना लाऊंगा।"

"जी नहीं। बस रहने दीजिये। अब आपको मिस थापर मिल गयी हैं। अब आपको हम लोगों की ज़रूरत ही क्या है ?"

"नरगिस !" बिहारीलाल ने कुछ क्रोध में कहा।

"क्रोध करने से कुछ नहीं बनेगा। मैं जो कहती हूँ ठीक कहती हूँ।

मेरा कहने का मतलब है कि आपको दिल बहलाने को मिल गयी हैं और हम औरतें गुनहगार हैं कि ज़रा सा शक हो जाने पर भी घर से निकाल दी जाती हैं।"

बिहारीलाल ने सफाई देते हुए कहा, "नरगिस, तुम उस वक्त की मेरे दिल की हालत को नहीं जानतीं। इससे कहती हो। बात यह थी कि प्रेम से मेरा बहुत प्रेम था और मुझे शक होगया था कि उसका ताल्लुक गुलामरसूल से है। इधर विमला पर भी शक होने लगा तो मैंने प्रेम के दिल पर यह नक़्श करने के लिये कि मैं गुलामरसूल से सख्त नफरत करता हूँ विमला पर गुस्सा ज़ाहिर किया था।"

"खूब। बहुत अक्लमन्दी की आपने। 'घोड़े की बला तवेले पर'। यही तो इन्साफ है। कसूर किया प्रेम ने और डाटने लगे विमला को। छोड़िये इन बातों को। मैं अब यहां रहना नहीं चाहती। मुझे बन्नू पहुँचा दें।"

"वहीं यूसुफ के पास?"

"आपसे तो वह बदरजा बेहतर है।"

"ओह!" बिहारीलाल गम्भीर विचार में तल्लीन होगया। कई मिनट तक वह नरगिस की खाट पर बैठा इन्तजार करता रहा। आख़िर वह खड़ा होगया और पूछने लगा, "नरगिस, तो अब तुम किसी प्रकार भी यहां नहीं रह सकतीं?"

"मैं यहां अकेली महसूस करती हूँ। इस तकलीफ़ के वक्त में मुझे आपकी मदद का भरोसा नहीं रहा। मैं अपने वालिद साहब की निगरानी में रहना चाहती हूँ।"

"अगरचे मैं यह नहीं चाहता, इस पर भी तुम्हारी ख़्वाहिश मेरे लिये हुक्म का दर्जा रखती है।"

इतना कह बिहारीलाल ने बिजली का स्टोव जला लिया और चाय बनाने लगा।

[४]

इस पर भी नरगिस बन्नू नहीं जा सकी। नरगिस के माता-पिता को जब मालूम हुआ कि वह उनके पास आकर रहना चाहती है तो वे स्वयं लाहौर आगये। बन्नू में यूसुफ के माता-पिता के घर वह नरगिस को रखना नहीं चाहते थे। साथ ही गुलामरसूल का भय लाहौर से बन्नू में अधिक था।

नरगिस लाहौर से जाने की तैयारी ही कर रही थी कि हकीम साहब वहां आ पहुँचे। हकीम साहब ने बीडन रोड पर एक बहुत खुला मकान भाड़े पर ले लिया और नरगिस को ले वहाँ रहने लगे। हकीम साहब को बिहारीलाल का अपनी पहली बीवियों से व्यवहार का पता मिला तो वह उससे मिले और पूछने लगे कि उसका नरगिस के सम्बन्ध में क्या विचार है?

बिहारीलाल ने अपनी सफाई उपस्थित कर दी, "जहां तक नरगिस का सम्बन्ध है, मैं उससे नाराज़ नहीं हूं। उसकी नाराज़गी की वजह सिर्फ हसद है। मैं लोगों से मेल-जोल छोड़ नहीं सकता। मेरे मिलने वालों में पुरुष भी हैं और स्त्रियां भी।"

हकीम साहब इस प्रकार की सफाई से संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने कहा, "देखिये मिस्टर बिहारीलाल! जब आप रात-रात भर ऐसी औरतों के घर रहते हैं जो शादीशुदा नहीं हैं और अकेली रहती हैं, तब आपका उन औरतों से नाजायज़ ताल्लुक होना माना ही जायेगा।"

"नाजायज़ के मायने मैं नहीं समझा," बिहारीलाल ने विवाद करने के भाव से कहा।

"आदमी औरत का ताल्लुक बिना शादी किये हो तो वह नाजायज़ कहाता है।"

"मैं समझता हूँ यह बात गलत है। शादी की रसम का होना या न होना ज़रूरी नहीं है। आदमी और औरत का ताल्लुक जब भी हो, जैसे भी हो, जहां भी हो, कुदरती है। इसमें जितनी भी पाबन्दियां

सोसायटी ने लगाई हैं वह इन्सान की फितरत (स्वभाव) पर जबर किया गया है।"

इस कहने का अर्थ हकीम साहब समझते थे और यदि वे वज़ीरस्तान में होते तो बिहारीलाल को कत्ल कर नरगिस की शादी किसी और से कर देते। इस समय उन्होंने चुप रहना ही उचित समझा। नरगिस नौवे महीने में जा रही थी।

हकीम साहब प्रेम से मिले। विमला तो नरगिस से प्रायः मिलने आती थी। प्रेम के विचार यद्यपि बिहारीलाल की तरह ही थे, परन्तु उसका व्यवहार कुछ भिन्न था। हकीम साहब को सेठ धन्नाराम के भी दर्शन हुए थे, और उन्होंने प्रेम से कहा, "देखो बेटी प्रेम, जब भी कोई आदमी बिना शादी किये तुम्हे इन बूढे सेठ साहब के पास रहते देखेगा वह तो फौरन यह कहेगा कि तुम इनकी जायदाद हज़म करने के लिये ऐसा कर रही हो। बूढ़ा जल्दी-जल्दी अपनी कब्र की ओर भागा जा रहा है, इसमें भी तुम्हारा उसके पास रहना एक भारी वजह है।"

"लोग क्या समझने हैं, और क्या नही समझते," प्रेम ने गम्भीर हो उत्तर दिया, "मैं यह जानना नहीं चाहती और न ही इससे डरती हू। दुनिया में, अक्सर, लोग बिना विचार किये सिर्फ रस्मो-रिवाज से अन्दाज लगाकर ही अपनी अपनी राय कायम करते हैं। ऐसे नासमझ लोगो की राय से अक्लमन्दो को अपने कामो का फैसला नही करना चाहिये। मैं जानती हूँ और सेठ साहब भी जानते हैं कि मैंने उनसे कभी कुछ नहीं मागा। सेठ साहब की वसीयत में मेरा नाम तक नही है।"

"तो फिर क्या बात है कि तुमने बिहारीलाल को छोड़ सेठ साहब की बीवी बनना मंजूर किया है?"

"मैं सेठ साहब से मुहब्बत करती हूं।"

"ओह! यह अजीब मुहब्बत है।"

"हा! मुहब्बत किसी के खास वस्फ़ (गुण) की वजह से की जाती है। यह नहीं कि जिसमानी सेहत ही एक वस्फ़ है। और भी कई बातें

हो सकती हैं जिनकी वजह से कोई किसी को मुहब्बत कर सकता है।"

विमला के विचार दूसरे ही थे। एक दिन प्रेम नरगिस से मिलने आई तो विमला भी वहां बैठी थी। विमला को जब से पता चला था कि वह अपने आपको अकेली अनुभव करती है तो वह प्रायः रविवार को, जब खद्दर भण्डार बन्द होता था, नरगिस से मिलने आजाया करती थी। प्रेम ने पूछा, "बिहारीलाल कभी यहां आता है या नहीं?"

"नहीं," नरगिस का उत्तर था, "उन्हें मिस थापर से अवकाश ही नहीं मिलता।"

प्रेम हंस पड़ी। विमला ने कहा, "नरगिस बहिन, इन बातों को मन से निकाल दो, क्योंकि मन में गुस्सा रखने से उन्हें तो हानि होगी नहीं। तुम अपनी सेहत बिगाड़ लोगी।"

"पर बहिन, मुझसे तो यह बात मन से निकाली नहीं जा सकती। मैं इन्सान हूँ, हैवान नहीं हूँ। मुझे अपने साथ की गयी बेइन्साफी कभी भी भूल नहीं सकती।"

"परमात्मा से प्रार्थना की जाय तो कोई भी बात मन से निकाली जा सकती है। हम दूसरों के लिये मन में नाराज़गी रखकर अपने मन को दुखी रखते हैं। दूसरे किसी का कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते। ऐसी अपने को नुकसान पहुंचाने की बात करनी ही क्यों चाहिये?"

"मैं लाचार हूं," नरगिस ने कहा। "मैंने गुलामरसूल के पेट में छुरी घोंप दी थी, सिर्फ इसलिये कि वह मेरी इस्मत बिगाड़ना चाहता था और इस शरीफ आदमी ने तो मेरी इस्मत बिगाड़ ही दी है। इसके लिये मैं उसे कैसे भूल सकती हूँ?"

"देखो नरगिस बहिन, यह तो केवल विचार-भेद के कारण ही है। प्रेम करने वालों को तो प्रेम इसलिये करना है कि ऐसा करने से उन्हें सुख मिलता है, न कि ऐसा करने से उनसे प्रेमी प्रेम करने लगेगा। जब प्रेम किसी बदले के लिये किया जाय तो वह व्यापार हो जाता है। प्रेम व्यापार से बहुत ऊंची वस्तु है।"

इस पर प्रेम ने पूछ लिया, "विमला, नाराज़ न होना। मैं एक बात पूछती हूँ। क्या तुमने कभी किसी से प्रेम किया भी है? मैं तो तुम्हें उन ठाकुरों की भांति पत्थर की बनी पाती हूँ जिनकी तुम पूजा करती हो।"

"उन अर्थों में, जिनमें तुम समझती हो, मैंने कभी प्रेम नहीं किया। मैं अपने विचार से तो एक से अधिक लोगों और वस्तुओं से प्रेम करती हूं।"

"ओह!" प्रेम हंस पड़ी और पूछने लगी, "भला सुनूं कि तुम किन किन से प्रेम करती हो?"

"सबसे प्रथम अपने पिताजी से। दूसरे दर्जे पर मेरी माता है। दोनों से अगाध प्रेम रखती हूँ और मुझे अपने पूज्यदेव भगवान की मूर्ति में भी तो अपने पूज्य पिता के ही दर्शन होते हैं। बाबू बिहारीलाल से मेरा प्रेम, जब से हुआ है कम नहीं हुआ। मैं सदैव उनका हित-चिन्तन करती रहती हूं। भैया मोहनलाल हैं। वह मुझसे बहुत स्नेह करते हैं और मैं समझती हूं कि वह बहुत ही भद्र पुरुष हैं। मेरा कोई भाई नहीं था। इस कमी को उन्होंने पूरा कर दिया है। अब मेरा प्रेम 'नागरिक अधिकार रक्षक संस्था' से भी होगया है।"

प्रेम ने अभी भी मुस्कराते हुए कहा, "तुम्हारी प्रेम की व्याख्या अनोखी प्रतीत होती है।"

"हां, मैं समझती हूँ, जब हम किसी में कोई गुण देखते हैं और वह गुण हमें इतना अच्छा प्रतीत होता है कि वह हमारी आत्मा को तृप्त करता है, और उस गुण को हम अपने इतना समीप करना चाहते हैं कि उसे अपने गुणों का अंश बना लेना चाहते हैं तब हम गुणी से प्रेम करते हैं। इसमें गुणी के करने की कोई बात नहीं, जिज्ञासु के स्वयं ही करने की बात है। यह वासना से सर्वथा पृथक और भिन्न वस्तु है। वासना में तो सदैव कुछ प्राप्त करने की इच्छा बनी रहती है। इससे सम्बन्ध रखने वाली किसी बात को प्रेम कहना, प्रेम के मूल्य को बहुत कम कर देना है।"

प्रेम ने अब गम्भीर होकर कहा, "मैं प्रेम को तुम्हारे अर्थों में ही समझती हूँ। केवल इतना भेद मानती हूँ कि वासना और फिर सम्भोग

प्रेम की उग्रतम अवस्था का नाम है। जब हम वास्तव में किसी से प्रेम करते हैं तो उसके किसी गुण पर मुग्ध होकर ही करते है, परन्तु सम्भोग उस चढ़ते हुए प्रेम की अन्तिम अवस्था है।"

"मैं इसे प्रेम से भिन्न बात समझती हूँ। सम्भोग एक ऐसा कार्य है जिस पर समाज और विज्ञान का आधिपत्य होना चाहिये। परन्तु प्रेम तो केवल एक मनुष्य के मन की बात है। इस पर किसी दूसरे को अधिकार देना निजी स्वतन्त्रता का गला घोटना है। मैं जिससे चाहूँ प्रेम करूं, जिस का चाहूँ उसका अनुकरण करूं, जैसे गुण मुझे पसन्द आयें अपने में धारण करूं और जिन विचारों को चाहूं मानूं, परन्तु सम्भोग में दो व्यक्ति परस्पर व्यवहार करते हैं और उस व्यवहार का परिणाम भावी समाज के अंग बनते हैं। प्रत्येक ऐसे काम में, जिनमें एक से अधिक लोगों का परस्पर वास्ता पड़े, समाज नियम अर्थात् कानून बनाता है। यदि ये कानून न बनाये जायें तो भारी उपद्रव हो जाने का भय है। जिसकी लाठी उसकी भैंस, वाली बात हो जायेगी। समाज की भलाई इस बात में है कि विवाह स्वस्थ, सबल, सुन्दर, और बुद्धिशील जोड़ों का हो। इसके अतिरिक्त लोगों को विवाह कर सन्तान उत्पन्न करने की स्वीकृति न दी जाय। ऐसे लोगों के भोग-विलास को सीमित कर दिया जाय। समाज की भलाई से ही व्यक्तिगत भलाई की आशा हो सकती है।"

"यह नियम तो अति कठोर और अन्यायपूर्ण होगा। भोग-विलास पर प्रतिबन्ध लगाने से लोगों में कामुकता और भी अधिक बढ़ेगी।"

"नहीं, यदि नियम को चलाने वाले मनुष्यों की दुर्बलता का ध्यान रखकर इसे चलायेंगे तो किसी उपद्रव की आशंका नहीं है। सौन्दर्य, बुद्धिमत्ता और शक्तिमान होने का मान ऐसा रखा जाये कि नव्वे प्रतिशत लोग योग्य लोगों में माने जायें तो दस प्रतिशत वे जो प्रायः रोगी होंगे सन्तानोत्पत्ति नहीं कर सकेंगे। सबसे अधिक आवश्यक बात तो यह है कि विवाह सम्बन्ध जहां तक सम्भव हो, स्थायी होना चाहिये। केवल विशेष परिस्थिति में ही इसको तोड़ने की स्वीकृति होनी चाहिये।"

मलाई
के लिये
इच्छा पर छोड़

ता हो परन्तु प्रेम
होना चाहिये। हिन्दू
कर दिया है। हम प्रत्येक पुरुष को
उसे, जिससे विवाह हुआ है, सम्भोग की
स्थायी वस्तु है और वह समाज से नियत

तो क्या किया जाय ?"
के दोषपूर्ण को
व्यक्ति को र अप र
समाज-नियमों के नहीं ।
की प्रवृत्ति ऐसी होनी
बातों को अपना ले और दूर

प्रेम इस बात को सम
वह व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की
इस स्वतन्त्रता के लिये
विवाह भूल था। यदि वह
विवाह करते तो शायद
अपनी दुर्घटना से कोई

पुराने रीति-रिवाज से

विवाह असफल रहा। उसने रीति-रिवाज तोड़कर बिहारीलाल से विवाह किया। वह भी असफल रहा। फिर नरगिस का विवाह उससे हुआ। वह भी असफल होता प्रतीत हो रहा है। प्रेम जब इस इतिहास पर मनन करती थी तो एक ही परिणाम पर पहुंचती थी कि बिहारीलाल के विचार ठीक नहीं हैं। उनमें क्या ख़राबी है? जब इस प्रश्न पर सोचती थी तो उसे ऐसा प्रतीत होता था कि बिहारीलाल वासना के पीछे जाने को अपना अधिकार मानता है। वह स्वयं भी किसी समय ऐसा ही समझती थी। उस समय वह वासना को प्रेम समझती थी और वासना की तृप्ति को प्रेम की पराकाष्ठा समझती थी। विमला से वार्तालाप कर उसे इस धारणा पर सन्देह होने लगा था। विमला का कहना था कि वासना प्रेम नहीं है। वासना की तृप्ति को समाज के और आयुर्वेद के नियमों के अधीन रखना चाहिये। वासना की तृप्ति को पूर्ण स्वतन्त्रता देना जहां समाज में उच्छृङ्खलता उत्पन्न कर सकता है, जैसे गुलामरसूल के नरगिस के साथ व्यवहार ने किया, वहां यह व्यक्तिगत हानि करने वाला भी है।

वह अपने व्यवहार पर भी विचार करती थी। जब तक वह प्रेम और वासना में भेद नहीं मानती रही तब तक वह भी निष्फल जीवन व्यतीत करती रही है। उसने भी अपने जीवन में सार्थकता का अनुभव तब ही किया था जब वह प्रेम को वासना से पृथक कर सकी थी।

[५]

नरगिस के प्रसव के दिन समीप होने पर हकीम साहब को कुछ चिन्ता होने लगी थी। वह अति दुर्बल होती जाती थी। हकीम साहब स्वयं औषधि देते थे, एक लेडी डाक्टर का प्रबन्ध भी था। इस सब देख-भाल का कुछ भी परिणाम नहीं हो रहा था। समय से पूर्व ही लेडी डाक्टर ने कह दिया कि बच्चा टेढ़ा है और बिना ऑपरेशन के बाहर आ नहीं सकेगा। ऑपरेशन के लिये अस्पताल का स्थान ही उचित समझा गया।

नरगिस ऑपरेशन से बहुत डरती थी। उसने विमला और सुधा को बुलाकर एक बार बिहारीलाल से मिलने की इच्छा प्रकट की। उसने

कहा, "मैं नहीं जानती कि ज़िन्दा लौटूंगी या नहीं। इसलिये उनसे अपने कसूर की माफी मांगना चाहती हूँ।"

राय करके मोहनलाल को बिहारीलाल के पास भेजा गया।

जब मोहनलाल बिहारीलाल के पास पहुँचा तो वह बिजली के स्टोव पर अपने लिये चाय बना रहा था। समीप ही एक तिपाई पर चाय के बर्तन साफ कर रखे थे। मक्खन और टोस्ट एक प्लेट पर रखे थे। मोहनलाल को देख बिहारीलाल ने उठकर उसका आदरपूर्वक सत्कार किया।

"आइये बा० मोहनलाल! आइये, कैसे आना हुआ?"

मोहनलाल ने नरगिस की अवस्था बताई और कहा, "आपको चलना चाहिये।"

बिहारीलाल ने केटली को, जिसमें पानी उबलने लगा था, चूल्हे से नीचे उतारकर मेज़ पर रख दिया। पश्चात् उसने मोहनलाल से पूछा, "आप चाय पीजियेगा?"

"नहीं, धन्यवाद। आप शीघ्रता करें। यदि ऑपरेशन के पहले आप पहुँच सकें तो बहुत अच्छा होगा।"

बिहारीलाल ने चायदानी में पानी डाल कुछ चाय की पत्ती डाल दीं और उसमें एक टुकड़ा मिश्री का डालकर हिलाने लगा। अब उसने टोस्टों को मक्खन लगाना आरम्भ कर दिया। इस सब समय में वह अपने मन में कुछ मनन कर रहा था। एकाएक उसने मोहनलाल की आंखों में देखते हुए पूछा, "आप इस मामले में इतनी दिलचस्पी क्यों ले रहे हैं?"

"विमला के कहने को मैं टाल नहीं सका। इस कारण चला आया हूं। और फिर आपसे भी तो कुछ मेल-मुलाकात है।"

"मेरी बात छोड़ो। मैं यही पूछ रहा हूं कि विमला के कहने को आप टाल क्यों नहीं सकते?"

"वह मेरी बहिन है।"

"लाहौर में लाखों औरतें और भी रहती हैं। विमला ही आपकी बहिन क्यों हुई? आप साफ क्यों नहीं कहते कि विमला सुन्दर है और

आपको उसका सौन्दर्य देखना पसन्द है ?"

मोहनलाल ने विहारीलाल की विकृत बुद्धि पर अचम्भा प्रकट करते हुए कहा, "अगर मैं कहूँ कि आपका कहना ठीक है तो क्या आप नरगिस को देखने। नहीं जाइयेगा ?"

विहारीलाल अब सरूकी लगा लगाकर चाय पी रहा था। उसने प्याले को मेज़ पर रखते हुए कहा, "मैं नहीं जाऊंगा। मैं तो केवल आपकी दिलचस्पी का कारण जानना चाहता था। सो मेरा अनुमान ठीक है कि इस लोक-सेवा में भी एक सुन्दरी के सौन्दर्य का हाथ है।"

"मिस्टर विहारीलाल, मैं तुम्हारे आशय को समझता हूँ। परन्तु तुम हम लोगों के रहन-सहन की फिलासफी को नहीं समझ सकते। जानना चाहते हो, तो लो सुनो। पुरुष और स्त्री में लैंगिक आकर्षण (Sexual attraction) सदैव होता है; परन्तु लैंगिक सम्बन्ध एक पुरुष का एक ही स्त्री के साथ रखने में समाज को लाभ प्रतीत होता है। हमारा समाज विज्ञान के इस नियम को भली भांति समझ चुका है। इस कारण उसने कुछ ऐसे विचार और आदर्श बना रखे हैं जिससे यह लैंगिक सम्बन्ध एक ही पुरुष अथवा स्त्री तक सीमित रहे। विवाहित स्त्री के अतिरिक्त प्रत्येक स्त्री को मां अथवा बहिन मान लेना लैंगिक आकर्षण को पवित्र कर देता है, क्यों कि तब उनसे हमें लैंगिक सम्बन्ध रखने में मन में ग्लानि पैदा होती है। इस ग्लानि को तुम भले ही नकली, कृत्रिम कहो, भले ही समाज की ओर से धोखा समझो; पर है यह हम लोगों के मन में धंसी हुई। इससे समाज में विराट शान्ति और सुख स्थापित है। तुमने अपने कुसंस्कारों और कुशिक्षा के कारण समाज की प्रत्येक बात को ग़लत समझ लिया है। तुम अपने नये नियम बनाना चाहते हो और छोटी बुद्धि के कारण पग-पग पर ठोकर खाते हो।"

इतना कहते-कहते मोहनलाल उठ खड़ा हुआ। उसने जाने से पूर्व एक और यत्न किया, "मैं जाता हूँ। नरगिस मैटर्निटी हास्पिटल में गयी है। यदि तुम मिलना चाहो तो वहां आजाना।"

बिहारीलाल नहीं गया, परन्तु प्रकृति के नियम उसकी इच्छा अनिच्छा की प्रतीक्षा नहीं कर सकते थे। नरगिस के ऑपरेशन हुआ और लड़का उत्पन्न हुआ।

दूसरे दिन नरगिस को पूर्ण चेतना हो गयी थी। उसे अस्पताल में स्पेशल वार्ड के एक कमरे में रखा हुआ था। उसके समीप ही एक खटोले में शिशु चुपचाप लेटा था। विमला नरगिस की सेवा-सुश्रूषा के के लिये वहां उपस्थित थी। प्रेम और सुधा भी दिन में दो तीन चक्कर काट जाती थीं।

विमला नरगिस को पीने को दूध दे रही थी। नरगिस मुस्कराई। विमला ने प्रश्नभरी दृष्टि से उसकी ओर देखा। नरगिस ने शिशु के खटोले की ओर देखा। "ओह," विमला ने कहा, "कितना सुन्दर मालूम होता है।"

"हां," नरगिस ने कहा। फिर एकाएक माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा, "वे आये थे।"

"नहीं ?"

"शुक्र है खुदा का।"

"क्यों ?" विमला ने चिन्तित भाव में पूछा।

"ऐसों की किस्मत में पुत्र देखने का सुख नहीं बदा। हम औरतें ही इस सुख की कीमत लगा सकती हैं। उफ ! कल की तकलीफ़ याद कर मेरा पसीना छूटने लगता है, लेकिन नतीजा जो हुआ है वह उस तकलीफ को भी भुला देने की ताकत रखता है।"

"क्या पुत्र का मुख देखना इतना सुखप्रद है कि कल की वेदना भी भूल गयी हो ?"

"हां !" नरगिस ने प्रेम भरी दृष्टि से बालक के गोल-गोल बड़े मुख को देखते हुए कहा। "क्यों मन खुशी से भर जाता है कह नहीं सकती।"

[६]

प्रेम ने चिकित्सा का काम आरम्भ कर दिया था। सेठ साहब उसे

मना करते थे। परन्तु वह कहती थी, "मैं आपसे एक पाई भी लेकर खर्च नहीं करना चाहती। मैं देख रही हूं कि मेरा डेढ़ सौ रुपये महीने में अब गुज़र नहीं होता। सबसे अच्छी बात मुझे प्रैक्टिस करनी लगी है।"

निसबत रोड पर एक स्थान भाड़े पर लेकर कार्य आरम्भ कर दिया और यह काम कुछ ही महीनों में चलने लगा था। रात को सेठ साहब के बंगले में रहती थी। उसका लड़का अब अढ़ाई वर्ष का हो गया था और उसके लिये उसने एक आया (नौकरानी) रख दी थी। जहां वह मज़दूरों की भलाई के लिये सेठ साहब से नित्य नये प्रबन्ध करवाती थी वहां अपने चिकित्सा-कार्य में भी उनका ध्यान दिलाती थी।

यद्यपि अब भी वह मज़दूरों की भलाई करना अपना मुख्य कार्य मानती थी, इस पर भी वह कम्यूनिस्ट पार्टी की सदस्य नहीं रही थी। उसके विचारों में परिवर्तन हो रहा था। वह विनाशात्मक कार्य के स्थान में रचनात्मक कार्य को मुख्य मानने लगी थी। साथ ही विमला के आचार व्यवहार ने उसके मस्तिष्क पर गहरी छाप लगाई थी। वह अब हिन्दू फिलासफी का अध्ययन करने लगी थी। विमला की प्रत्येक बात को तो वह मानने के लिये तैयार नहीं थी, इस पर भी गीता और उपनिषदों की बातों को समझ वह चकाचौंध रह गयी थी। कभी २ वह अपने सन्देहों को विमला के सम्मुख रखती और उसकी सीधी-सादी युक्तियों को सुन हैरान हुआ करती थी। एक दिन उसने कहा, "विमला बहिन! माना कि ईश्वर है, और वह सृष्टि को एक नियम में रखता है, परन्तु प्रश्न तो यह है कि उन नियमों का पालन करने के पश्चात् उसकी पूजा करने की क्या आवश्यकता है?"

"प्रकृति के नियमों का पालन करना ही परमात्मा की पूजा करना है," विमला का उत्तर था।

"तो यह ठाकुर जी की पूजा तुम क्यों करती हो?"

"मैं पूजा नहीं करती। मैं उपासना करती हूँ। पूजा और उपासना में भेद है। उपासना के अर्थ हैं समीप बैठना। मैं यत्न करती हूं कि

भगवान के समीप बैठूं, अर्थात मन से उसके गुणों का चिन्तन करूं। अच्छे गुणों के चिन्तन से अपने में अच्छे गुण उत्पन्न होते हैं। जब मैं कहती हूं, 'हे भगवन, तुम दयालु हो' तो मैं स्वयं दया करने का अभ्यास अपने में डालती हूं। जब मैं कहती हूं, 'प्रभु तुम न्यायकर्ता हो' तो मैं न्याय-युक्त व्यवहार करने में यत्नशील होती हूँ।"

इस प्रकार धीरे धीरे प्रेम के मन में परिवर्तन हो रहा था। इस परिवर्तन के साथ साथ वह बिहारीलाल से दूर और दूर होती जाती थी। जब से उसने निसबत रोड पर चिकित्सा-कार्य आरम्भ किया था बिहारीलाल उससे मिलने का यत्न करता रहता था। उसके मन में प्रेम के व्यवहार का अर्थ यह समझ आया था कि उसकी सेठ साहब से अनबन होने लगी है। एक दिन उसके मन में विचार आया कि प्रेम को पुनः अपने पास आने का निमन्त्रण देना चाहिये। यदि वह सेठ साहब से ऊब गयी होगी तो उसके पास आने पर राज़ी हो जायेगी। वह प्रेम के पास अपना विचार प्रकट करने के लिये जा पहुँचा।

बिहारीलाल को आया देख प्रेम ने पूछा, "बताइये, क्या काम है?"

"मेरी इच्छा है, आज मेरे साथ खाना खाओ। बताओ मंजूर है?"

"एक शर्त पर," प्रेम का उत्तर था। "वह यह कि सेठ साहब के यहां आप आजाइये। वहां खाना हो।"

"मैं सेठ साहब से अलहदा कुछ बातचीत करना चाहता हूँ।"

"इसकी कोई ज़रूरत नहीं है। उनसे मेरी कोई बात छिपी नहीं है।"

"मेरा अनुमान था और अभी भी है कि तुम अब तक सेठ साहब से थक गयी होगी।"

"आपका अनुमान ग़लत है।"

"तुमने यह दुकानदारी जो कर ली है।"

"मिस्टर बिहारीलाल। आप एक बात नहीं समझते। वह यह कि संसार में मन और पुरुष-स्त्री के लैंगिक सम्बन्ध के अतिरिक्त कुछ और भी है। मैं सेठ साहब से एक पाई न लेती हुई भी उनकी स्त्री बनकर रहती हूं।

समझा आपने ?"

बिहारीलाल अपना सा मुख लेकर चला आया और पुनः उससे मिलने नहीं गया। बिहारीलाल को अकेले रहते हुए दो वर्ष के लगभग हो गये थे। उसके लिये मिस थापर जैसी किसी सोसायटी-गर्ल से अपनी वासना पूरी करने में कुछ अधिक कठिनाई नहीं पड़ती थी। इस पर भी वह अपने आपको अकेला अनुभव करता था। दो वर्ष के ऐसे जीवन से थककर वह पुनः गृहस्थ-जीवन में रहने की इच्छा रखने लगा था। सुख और शान्ति के जो दिन उसने विमला के साथ गुज़ारे थे, वह उसे रह रह कर याद आते थे और वह अपनी वर्तमान अवस्था पर शोक करता था। नरगिस तो शराब का नशा थी। उतरने पर फिर उसे पीने की इच्छा हुई। जैसे शराबी नशे की अवस्था में शराब को कोसता है, परन्तु शराब की दुकान के सामने जाते ही उसके पाव उसे दुकान के अन्दर ले जाते हैं। इसी प्रकार बिहारीलाल जब कभी नरगिस को देख लेता, उतावला हो उठता था। एक दिन उसने नरगिस को लारेंस गार्डन में बच्चे को बच्चा-गाड़ी में बैठाये घूमते देखा। वह उसके पास पहुंचकर बोला, "नरगिस!"

नरगिस ने घूमकर देखा और बोली, "आप हैं ? सुनाइये।"

"यह तुम्हारा लड़का है ? क्या नाम रखा है ?"

"अकबर।"

"ओह! बहुत सुन्दर है।"

मां का हृदय पुत्र की प्रशंसा सुनकर फूल उठा, परन्तु अपने उल्लास को रोककर वह बोली, "सुन्दर है या कुरूप, इससे आपको क्या ? मेरा है। जैसा भी है मेरा है।"

"क्या कभी कभी इसे देखने घर पर आ सकता हूँ ?"

"वालिद साहब कहते थे कि अगर आपने कभी वहां कदम भी रखा तो आपके पेट में छुरा घोंप देंगे।"

"अरे! यह क्यों ?"

"आपने उनकी लड़की की इस्मतदरी की है। उसे बेइज़्ज़त किया है।"

"नरगिस, मैंने तुम्हें घर से नहीं निकाला।"

"यहां निकालने की बात नहीं है। आपने और आपकी सूरत-शक्ल ने उन्हें और मुझे धोखा दिया है। हमने समझा आप शरीफ आदमी हैं। मगर आप निकले कुछ और ही।"

"तो फिर कैसे साबित करूं कि मैं शरीफ आदमी हूँ?"

"वैसे तो आप हैं नहीं। जिस आदमी को तीन-तीन बीवियों से भी सब्र नहीं उसकी बाबत क्या कहा जा सकता है?"

"तो फिर कुछ उम्मीद न रखूं?"

"आप विमला को मना लें न। जब वह मान जायेगी तो समझूंगी।"

"विमला को क्यों मनाऊं?"

"इसलिये कि उससे आपकी शादी हुई है?"

"शादी हुई है या गुलामी का पट्टा लिखा गया है। मैं उससे मुहब्बत नहीं करता।"

"आप किसी से मुहब्बत करते भी हैं?"

"हाँ! तुमसे।"

"झूठ।" नरगिस और बिहारीलाल सड़क के किनारे किनारे चले जा रहे थे। नरगिस गाड़ी ढकेल रही थी। बिहारीलाल आगे की ओर देखता हुआ चला जा रहा था। 'झूठ' का शब्द सुनकर खड़ा हो नरगिस को बहुत ही विनीत भाव से देखने लगा। नरगिस भी खड़ी होगयी थी। बिहारीलाल ने कहा, "झूठ नहीं नरगिस। बिलकुल ठीक कहता हूँ। मैं तुमसे अज़हद मुहब्बत करता हूँ।"

"मैं अभी भी कहती हूँ कि आपकी मुहब्बत मुझसे सच्ची नहीं है। क्या खाविन्द की वफ़ादारी मुहब्बत का एक लाज़मी जुज़ नहीं है?"

"वफ़ादारी किन मायनों (अर्थों) में?"

"दूसरी औरतों को अपनी मां-बहिन समझकर।"

"यह कैसे हो सकता है ? अगर संसार भर की युवा स्त्रियों को मैं अपनी बहिन बना लूं तो भारी मुसीबत खड़ी हो जायेगी।"

"कुछ भी हो। ऐसा होना निहायत ज़रूरी है वरना आपसे मेरी आख़िरी आदावर्ज़ है।"

बिहारीलाल चुप कर गया। अब फिर दोनों चल पड़े थे। नरगिस चलती चलती वापिस माल पर पहुँच गयी थी। उसने कहा, "आप मेरे साथ न चलें। अगरचे मैं आपसे नफरत करती हूं इस पर भी मैं आप का कत्ल किया जाना ठीक नहीं समझती।"

"क्यों।"

"इसका जवाब फिर कभी दूंगी। आइन्दा मुझे कहीं देखकर बुलाइयेगा नहीं, वरना गुलामरसूल वाला अंजाम होगा। शायद् उससे भी बुरा हो।"

बिहारीलाल यहां से भी निराश हो विमला के पास पहुँचा। इस बार उसने पं० विलासराय की सहायता मांगी। वह गुजरात गया। वहां पंडित जी से मिला और पिता की लड़की के लिये हित करने की भावना को जगाने का यत्न किया। पंडित जी बहुत ही सीधे और पुराने विचार के आदमी थे। उन्हें बिहारीलाल पश्चाताप करता हुआ प्रतीत हुआ। इस पर उन्होंने पूछा, "दूसरी स्त्रियों का क्या करोगे ?"

"वे मेरे पास आकर रहने के लिये तैयार नहीं।"

इस उत्तर ने पंडित विलासराय को सचेत कर दिया। वह कहने लगे, "देखो बेटा बिहारीलाल, मुझे अपनी लड़की को सुखी देखकर सुख ही हो सकता है। परन्तु विमला तुम्हारे साथ रहकर सुख अनुभव करेगी अथवा तुमसे पृथक रहकर, यह वही बता सकती है। मेरा, बिना उसकी इच्छा जाने, अपनी ओर से उसके दुख की औषधि निश्चित कर देना उचित नहीं जान पड़ता। मैं चाहता हूँ कि आप दोनों में हेल-मेल बना रहे, परन्तु यह तुम्हारा और विमला का काम है, मेरा नहीं।

इस पर भी पंडित जी ने बिहारीलाल को विमला के नाम एक चिट्ठी लिखकर दे दी। इसमें उन्होंने लिखा, "प्रिय बेटी विमला,

बिहारीलाल आज मेरे पास आया है और वह चाहता है कि तुम पुनः उसके घर जाकर रहो। मैं इसमें उसकी सफारिश नहीं कर रहा, परन्तु प्रकृति के नियमानुकूल ही कह रहा हूं कि स्त्री अपने पति के घर ही शोभा पाती है।"

बिहारीलाल इस चिट्ठी को लेकर विमला से मिला। विमला ने चिट्ठी पढ़ी और अचम्भे में पूछने लगी, "आप पिताजी से मिलने क्यों गये थे? मैंने उनको अपना और आपका पूर्ण वृत्तान्त नहीं बताया। उनको केवल यह विदित है कि आपने दो विवाह और कर लिये थे और इसके अतिरिक्त कुछ नहीं।"

"और है भी क्या?"

"विवाह कर लेना कोई बात नहीं, परन्तु जिन विचारों के आधीन आपने विवाह किये हैं और जिन विचारों के अनुसार आप पिछले ढ़ाई वर्ष से जीवन व्यतीत कर रहे हैं, वह है वास्तविक बात। क्या ऐसी परिस्थिति में और ऐसे विचारों के आपके मस्तिष्क में रहते हुए कोई स्त्री आपके पास रह सकती है? एक मुसलमान औरत, जो अपनी तीन सौतनों को सहन कर सकती है, वह भी आपकी उच्छृङ्खलता पसन्द नहीं करेगी। मैं आपकी स्त्री हूँ। मेरा धर्म आपका आदर-सम्मान करना है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि जो बात मुझे पसन्द नहीं, वह मैं पसन्द करने लगूं। मैं, चाहे जीवन कितना भी नीरस क्यों न हो, सत्य, धर्म और समाज के रीति-रिवाज के अनुकूल उसे रखना चाहती हूँ।"

"तो क्या तुम यह चाहती हो कि मैं अपने जीवन भर के उन सभी विचारों को, जिन्हें मैं मनुष्य-समाज की उन्नति का कारण समझता हूँ, छोड़ दूं। मैं यह वचन दे सकता हूँ कि जब तक तुम्हारे साथ रहूँगा एक स्त्री-व्रत पर दृढ़ रहूंगा, परन्तु मैं अपने विचारों को गलत समझकर छोड़ नहीं सकता।"

"यही तो बात है। मेरा आपके पास गुजर नहीं हो सकता। एक बार आपके छोड़ दिये जाने पर मुझे अति दुःख हुआ था। मैं पुनः वही

बात फिर दुहराना नहीं चाहती। मैं आपकी सत्यवादिता पर अति प्रसन्न हूँ, परन्तु इसके साथ ही मैं भी अपने मन की अवस्था सत्य-सत्य ही बता देना चाहती हूं।"

बिहारीलाल अपने आपको अपने विचारों की वेदी पर बलि समझता हुआ अपना सा मुख लेकर चला गया।

[७]

बिहारीलाल ने नौकरी छोड़ दी। रामलाल ने जब कारण पूछा तो बोला, "मेरे अकेले के लिये बहुत लम्बे-चौड़े खर्चे की आवश्यकता नहीं। मैं एक दो घण्टे ट्यूशन कर अपने लिये पर्याप्त कमा लूंगा।" यथार्थ बात यह थी कि बिहारीलाल का चित्त इतना उदास रहता था कि वह किसी काम में चित्त लगा नहीं सकता था। वह सोचता था कि उसने कोई खराबी की बात नहीं की, किन्तु फिर भी नरगिस उससे नफरत करती है। विमला उसकी परवाह नहीं करती और प्रेम? प्रेम के विषय में उसे सन्देह होता था कि वह उसकी परवाह करती है अथवा नहीं। उसने कई बार प्रेम से बातचीत करने के लिये यत्न किया। परन्तु एक ठंडी सांस के अतिरिक्त उसे कुछ उत्तर नहीं मिला। जब बिहारीलाल ने नौकरी छोड़ी तो रामलाल ने 'नागरिक अधिकार रक्षक संस्था' की बैठक में इसका उल्लेख किया। विमला को इस बात से सबसे अधिक दुःख हुआ। वह समझती थी कि उसने यह भूल की है। वह यह जानती थी कि बिहारीलाल अपने मन की वर्तमान अवस्था में लड़के पढ़ाने का काम नहीं कर सकता। इससे उसने समझा कि वह भूखों मरेगा। बिहारीलाल होटल में खाना खाता था और नौकर से घर का काम-काज करवाता था। यह एक भारी खर्चा था जो उसने बांध रखा था। यह सब विमला को विदित था। इससे उसे भारी चिन्ता लग गयी। अगले दिन वह बिहारीलाल से मिलने घर गयी। दिन के आठ बज चुके थे, परन्तु वह अभी सो रहा था। बहुत दरवाज़ा खटखटाने पर उसकी नींद खुली। उसने दरवाज़ा खोला तो विमला को वहां खड़ा देख

चकित रह गया। विमला घर के भीतर नहीं गयी। दरवाज़े के बाहर खड़ी रही। आखिर बिहारीलाल ने पूछा, "क्या है विमला ?"

"आपसे मिलने आई हूँ।"

"क्यों ?"

"यहीं खड़े-खड़े बताऊं या भीतर आने की आज्ञा देंगे ?"

"ओह ! चली आओ, ऊपर आजाओ।"

"जैसी आज्ञा।"

बिहारीलाल ने बिजली के चूल्हे का स्विच खोल दिया और पानी की केटली उसके ऊपर रख दी। फिर बोला, "विमला बैठ जाओ न। चाय तो पियोगी ?"

"नहीं," विमला ने बैठते हुए कहा, "मैं चाय पीने नहीं आई।"

"तो किस लिये आई हो ?"

"आपने नौकरी से त्याग-पत्र क्यों दे दिया है ?"

"मुझे नौकरी करने की जरूरत नहीं।"

"तो खाना-पीना कैसे चलेगा ?"

"अभी तो मेरे पास खाने को पर्याप्त है। घर पर आभूषण हैं, मकान भी है। यदि इसे बेचकर समझदारी से खाऊंगा तो जीवन निकल जायेगा। और फिर कुछ थोड़ा काम भी, जब कोई ट्यूशन मिलेगी, कर लूंगा।"

"बिना काम के आप कैसे जियेंगे ?"

"विमला ! मैंने जीने के लिये नौकरी नहीं छोड़ी। मैं जीवन के अंत तक शांत मे शांत पहुंचना चाहता हूँ।"

"इससे लाभ ही क्या होगा ?"

"जीने से ही क्या लाभ है ? मैं नहीं जानता कि मैं किस प्रयोजन से जिऊँ ? मेरा कोई नहीं और मैं किसी का नहीं। मालिक का काम किया और [illegible] उसने [illegible] देकर समझ लिया कि बदला चुक गया। अब [illegible] लिये जीना मुझे [illegible] नहीं होता।"

देश के श्रमजीवियों के जीवन में एक नया अध्याय आरम्भ किया गया है, परन्तु इसका श्रेय मुझे नहीं है। इसको करने वाली मेरी धर्म-पत्नी श्रीमती प्रेमदेवी जी हैं। मैं तो केवल हाथ की भांति कार्य करता रहा हूँ, वह इन सब योजनाओं के चलाने में मस्तिष्क का काम करती रही हैं। यदि इनके लिये कोई मान की भागी हैं तो वह हैं।"

ट्रेड यूनियन कांग्रेस का डैपुटेशन प्रेमदेवी के पास पहुँचा। वह उस समय अपने चिकित्सालय में थी। जब उसने इस मान-पत्र का प्रस्ताव सुना तो हंस पड़ी। कहने लगी, "मैंने यदि कुछ किया है तो आप लोगों से मान-पत्र पाने तथा आप लोगों की क्षणिक तालियां सुनने के लिये नहीं किया। यह सब कुछ करने के लिये मैंने अपने आप को संसार की दृष्टि में नीच, पतित, ठग और छिनार बनना स्वीकार किया है। यह इसलिये नहीं कि ब्रेडला-हॉल में खड़े होकर आप लोगों की जो करते धरते कुछ नहीं, दो मिनट की वाह वाह सुन सकूं। अन्तरात्मा की तुष्टि ही इस सब के लिये कारण बनी है। गरीब मज़दूरों को वह सुख, आनन्द और जीवन-सुविधायें प्राप्त करते देख, जो किसी समय बड़े बड़े धनिकों को भी ढूंढने से मिलती थीं, मुझे परमानन्द मिल रहा है।"

ने हड़ताल की हुई है।"

मोहिनी अपने पिता का नाम सुनकर चौंकी। फिर यह सोच कर कि प्रेम को उसका पूर्ण परिचय नहीं है वह गम्भीर हो बोली, "नहीं।"

"ओह ! तुम्हें यह विदित नहीं है कि लाहौर में एक भारी हड़ताल चल रही है और हड़तालियों के भूखों मर जाने की आशंका है।"

"यह तो समाचार-पत्रों में पढ़ा है कि हड़ताल चल रही है, परन्तु वे लोग भूखों मर रहे हैं नहीं जानती थी।"

"यह सत्य है। यदि उनके लिये काफी धन एकत्रित न हो सका तो आने वाले महीने की पहिली तारीख के बाद उनके पास एक पैसा नहीं रह जायेगा और उनके बाल-बच्चों के लिये जीना कठिन हो जायेगा।"

"तो क्या किया जाय ?"

"हम लोग उनके खाने-पीने का प्रबन्ध कर रहे हैं। मैं कुछ लोगों से चन्दा इकट्ठा करने जा रही हूँ। ये बहिनें मेरे साथ हैं। तुम भी इसमें कुछ दोगी ?"

"हां, यदि आप यह बता दें कि वे अपने आप भूखों नहीं मर रहे।"

"अपने आप भी भला कोई भूखों मरता है ?"

"हां, यदि कोई बिना कारण नौकरी छोड़ दे तो दूसरे उसके लिये क्या कर सकते हैं ?"

प्रेम ने उत्तेजित होकर उत्तर दिया, "मोहिनी, तुम बहुत समझदार लड़की हो। मैंने तुम्हें एक बार पहले भी बताया था। प्रायः बातें समीप से देखने से टेढ़ी-मेढ़ी और विकृत दिखाई देती हैं। कारण यह कि वे अपने उचित वातावरण में नहीं देखी जातीं। प्रत्येक बात का मूल्य आंकने के लिये यह जानना आवश्यक है कि वह कैसी परिस्थिति में चल रही है। इस समय तुम देखती हो कि धनी लोग, बिना प्रयत्न किये, केवल धन के आश्रय, लाखों रुपये हड़प कर लेते हैं, जो यथार्थ में मजदूरों के सुख और आराम के लिये प्रयोग में लाये जाने चाहियें। ऐसी अवस्था में इस हड़ताल का प्रकट कारण चाहे ठीक न भी हो तो

भी स्थायी कारण तो है ही। उस स्थायी कारण को मिटाना प्रत्येक श्रमजीवी का मुख्य धर्म है। एक बार पहिले भी मैंने यह बात समझाई थी कि कई बार एक सिद्धान्त के प्रतिपादन के लिये व्यर्थ सी बात पर झगड़ा खड़ा कर लोगों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित किया जाता है। कम से कम ये मजदूर हड़ताल कर, भारी हानि सहते हुए और अपने बाल-बच्चों को भूखा रहने के खतरे में डालकर, क्या यह विचार लोगों के मन में उत्पन्न नहीं कर रहे कि पूंजीवाद अभीष्ट नहीं और इससे सुख और शांति स्थापित नहीं हो सकती ?"

मोहिनी के मन में रामलाल की बातें आ रही थीं। बिना महनत के धन पैदा नहीं हो सकता। धनी लोग श्रमजीवियों का भाग चालाकी से छीन लेते हैं। यह संसार में एक उलटी प्रथा के चल जाने से है। अब वह सोचती थी कि क्या इस हड़ताल का प्रयोजन इतना विशाल है ? क्या इससे इतनी बड़ी बात, सरमायादारी का नाश, की सिद्धि हो सकेगी ? इस संशय के निवारण के लिये उसने पूछा, "परन्तु बहिन जी, क्या इस हड़ताल से पूंजीवाद का नाश हो जायेगा ?"

"सर्वनाश करने के लिये तो देश-व्यापी हड़ताल और शायद एक भारी विप्लव खड़ा करना होगा। यह तो केवल विचार-प्रसार के अर्थ है।"

इस दिन जब मोहिनी प्रेम इत्यादि को घुमाकर वापिस ला रही थी तो उसने पूछा, "आज कितना रुपया इकट्ठा हुआ है ?"

"केवल पांच सौ बीस रुपया।"

"तो इसमें दो सौ मेरा शामिल कर लें।"

"धन्यवाद," प्रेम ने कहा, "परन्तु मैं तो समझती हूं कि तुम जैसी लड़की को तो इस काम में हमारा हाथ बंटाना चाहिये। क्या ही अच्छा हो यदि तुम स्वयं चन्दा मांगने के लिये अपनी सेवायें हमारी संस्था को दे दो ?"

मोहिनी यह बात सुन गम्भीर विचार में पड़ गयी। वह मोटर चलाती गयी। प्रेम ने उसे चुप देख फिर पूछा, "क्या विचार है मोहिनी ?

यह काम कर सकोगी ?"

"मैंने कभी चन्दा मांगा नहीं है," मोहिनी ने अपनी कठिनाई प्रकट करते हुए कहा।

"अभ्यास से सब काम हो सकते हैं।"

"अच्छी बात। परन्तु एक बात है। वह यह कि मैं धनी आदमियों की कोठियों में चन्दा करने नहीं जाऊँगी। मैं गुमनाम काम करूंगी।"

"तुम्हें अपने घर वालों का डर है ?"

"हां। अगर पिताजी को पता चल गया तो मेरी जान निकाल देंगे।"

प्रेम ने कुछ सोचकर कहा, "अच्छी बात है। मैं तुम्हें दो और लड़कियों के साथ कर दूंगी, जो कॉलेजों में चन्दा करने जाती हैं।"

इस प्रकार प्रेम बड़े उत्साह से चन्दा एकत्रित करने का काम कर रही थी।

[१३]

एक दिन प्रेम अपनी साथिनों के साथ फ़िरोज़पुर रोड की कोठियों में गयी। वहां जब चौधरी सलीमुल्लाखां की कोठी में पहुँची तो चौधरी साहब की लड़की, रज़िया बीबी, कोठी के लॉन में एक खद्दरपोश युवक के साथ टहल रही थी। प्रेम के साथ तीन लड़कियां और थीं। वे सब रज़िया के पास जा पहुंची। युवक, जो खद्दर का पायजामा, कुर्ता और उस पर ऊनी कोटी पहने हुए था, इनको आते देख एक तरफ खड़ा हो गया। प्रेम ने रज़िया को सम्बोधन कर कहा, "हड़तालियों की इमदाद के लिये कुछ दें।" इतना कह उसने रज़िया के हाथ में एक छपी हुई अपील दे दी। रज़िया ने अपील पढ़ी और प्रेम तथा उसकी साथिनों को सिर से पांव तक देखकर मुस्कराते हुए पूछा, "आप मज़दूर मालूम नहीं होतीं।"

"नहीं, हम हड़तालियों में से नहीं हैं। मगर उनके साथ हमदर्दी रखती हैं।"

"आप अपनी जेब से कितना दे चुकी हैं ?"

"ग्यारह सौ रुपया," प्रेम का उत्तर था।

"तब तो आप बहुत अमीर मालूम होती हैं।"

"यह मैंने अपने जेब-खर्च में से दिया है। इसके अलावा मेरे वालिद साहब ने पांच सौ और दिया है। आप भी इन लोगों के बच्चों को खाने-पहनने को कुछ दीजिये।"

इस पर वह खद्दरपोश युवक आगे आकर कहने लगा, "अगर हमारी इन लोगों से हमदर्दी न हो तो।"

"भला एक ग़रीब, भूखे, नंगे और बेकार से किसकी हमदर्दी नहीं होगी?"

"परन्तु जब ग़रीब अपनी मूर्खता से ग़रीब हो तो।"

"एक ग़रीब की अपनी मूर्खता भी तो सामाजिक कुरीतियों के कारण हो सकती है। इसमें उसका अपना कम दोष हो सकता है।"

रज़िया ने अचम्भा प्रकट करते हुए पूछा, "यह कैसे हो सकता है? क्या हर एक आदमी की मुसीबत की ज़िम्मेदारी मुआयटी पर है?"

"हां बहिन," प्रेम की वाणी में मन-मोहिनी मिठास थी, "आप ही बतायें कि आपने किस स्कूल में तालीम हासिल की है?"

"मैंने? कान्वैन्ट आफ जीसिज़ स्कूल में।"

"वहां पहले दर्जे में पढ़ने के लिये आपको क्या देना पड़ता था?"

"बीस रुपया माहवार।"

"आपने तो इस बढ़िया स्कूल की बढ़िया तालीम पाई है। यह क्या इसका एक सौवां हिस्सा भी ग़रीब मज़दूरों के बाल-बच्चों के नसीब में है? फिर आप उनसे अपने जितनी अक्लमन्दी की बात की क्यों उम्मीद करती हैं?"

"तो इसमें सुसायटी का क्या कसूर है?"

"यह कि उसने ऐसे कायदे बनाये हुए हैं कि एक ग़रीब के लड़के को तरक्की करने की वे सब सहूलियतें प्राप्त नहीं, जो एक अमीर के लड़के को हैं।"

"जो इतनी बड़ी फीस नहीं दे सकते उनके लड़कों को इतनी मंहगी तालीम कैसे दी जा सकती है ?"

"यही तो मैं कह रही हूं। मगर सवाल यह है कि क्यों नहीं दी जा सकती ? सिरफ इसलिये कि ग़रीबों के पास रुपया नहीं। रुपया क्यों नहीं ? इसलिये कि वे मूर्ख हैं। क्या आपका फरमाना यह है कि इस गोरखधंधे से निकलने का उपाय ही नहीं। कुछ भी हो ये लोग मूर्ख इस कारण है कि इनको शिक्षा अच्छी नहीं मिल सकी। यदि एक ग़रीब का लड़का कम अकल है तो फिर उसका क्या दोष है ?"

"तो फिर हम क्या कर सकते हैं ?" उस खद्दरपोश ने पूछा।

रज़िया ने खिलखिलाकर हंसते हुए कहा, "दे दो न दो-चार हज़ार रुपया ताकि सेठ साहब की नाक में दम करने में आपका भी हाथ हो जाये।"

इस पर खद्दरपोश ने मुस्कराते हुए कहा, "दो-चार हज़ार में नाक में दम नहीं हो सकता।"

"तो और अधिक दे दीजिये," प्रेम का कहना था।

"तो क्या सेठ साहब की नाक में दम कर देना निहायत जरूरी है ? क्या इसके बिना काम नहीं चल सकता ?"

"चल क्यों नहीं सकता ? परन्तु ऐसा करना सेठ साहब के अपने हाथ में है। वह सीधे मार्ग पर आजायें तो सब ठीक है।"

"सीधा मार्ग कौनसा है ?"

"मज़दूरों की मांगे मान जायें।"

"मज़दूरों की मांगें ठीक हैं क्या ?"

"इसमें भी भला सन्देह हो सकता है ?"

"सेठ साहब को सन्देह है। तभी तो वह मानते नहीं।"

"वह तो झक्की स्वभाव के हैं। उनके संस्कार उनको ठीक को ग़लत और ग़लत को ठीक बताते हैं।"

"आपके विचार से न। उनके विचार से तो वह ठीक कर रहे हैं।"

"तो फिर सालस क्यों न डाल लिये जायें ?" रज़िया ने पूछा।

"मगर सेठ साहब मान जायेंगे क्या ?" प्रेम ने कहा।

"न मानेंगे तो लोगों में बदनाम होंगे। आपका पक्ष प्रबल रहेगा और फिर आपको चन्दा आसानी से मिल सकेगा।"

प्रेम हार गयी थी। उसे इस बहस से बाहर निकलने का कोई मार्ग नहीं सूझता था। प्रेम को चुप देख उसकी एक साथिन ने कहा, "यह तो ठीक है। परन्तु पहले आप इन ग़रीबों के साथ अपनी हमदर्दी का सबूत तो दें। सेठ साहब से तो पीछे निपट लेंगे।"

इस पर खद्दरपोश ने अपनी कोटी की अन्दर की जेब में से बटुआ निकालकर उसमें से सौ सौ के नोटों का एक बंडल निकाल प्रेम के हाथ में रख दिया। प्रेम ने नोट गिने। कुल चालीस थे। "चार हज़ार ?" प्रेम ने अचम्भे में पूछा।

"इस समय और ज़्यादा नहीं है," रामलाल ने नम्र स्वर में कहा।

प्रेम और उसकी साथी लड़कियां अचम्भे में उस युवक को सिर से पांव तक देखती रह गयीं। खद्दरपोश ने बात को पुनः बदल कर कहा, "तो क्या आप सालसों वाली बात स्वीकार कर लेंगी ?"

"यूनियन की कार्यकारिणी इस बात का निर्णय कर सकती है। परन्तु सेठ साहब को कौन मनायेगा ? वह तो हम लोगों को गालियां देते हैं।"

"उनको मनाने का भार इन पर छोड़ दीजिये," खद्दरपोश ने रज़िया की ओर संकेत कर कहा।

"इन पर ?" प्रेम ने रज़िया को ध्यान से देखते हुए पूछा, "आप सेठ साहब को मना लेंगी ?"

रज़िया ने मुस्कराते हुए कहा, "उम्मीद तो है।"

"आप सेठ साहब की क्या लगती हैं ?"

"लड़की।"

प्रेम ने अचम्भे से उसे देखा। रज़िया और वह खद्दरपोश मुस्करा

रहे थे। प्रेम ने समझा कोई सम्बन्धी होंगे। उसने कहा, "अच्छी बात है। आप सेट साहब को मनाइये। कब तक पता लूँ?"

अब खद्दरपोश युवक ने कहा, "आप आज यूनियन में सालस डालने का प्रस्ताव कर एक दो प्रतिनिधि चुन कल हमें यहां मिलियेगा। हम उन प्रतिनिधियों को लेकर सेठ साहब से मिलाकर सालस चुन देंगे।"

प्रेम चन्दे की रकम और सालसों का प्रस्ताव लेकर कोठी से बाहर निकली तो विस्मय में पड़ी हुई थी। वह नही जानती थी कि यह लड़की और खद्दरपोश युवक कौन हैं। उनके बात करने का ढंग अत्यन्त अधिकारपूर्ण था, मानों वे सेठ साहब के कोई सम्बन्धी हों। वह जानती थी कि सेठ साहब के एक लड़का और लड़की है। तो क्या यह रामलाल और उसकी बहिन हैं? परन्तु यह कोठी तो बैरिस्टर सलीमुल्लाखां की है। ये दोनों यहां कैसे आगये?

हड़तालियों की हालत बहुत नाज़ुक थी। दूसरे महीने का आरम्भ हो चुका था और जितना रुपया कम्यूनिस्ट पार्टी ने एकत्रित किया था पहले तीन चार दिन में ही समाप्त हो गया था। यूनियन के पास कुछ अपना फंड भी था। वह भी ख़तम हो जाने वाला था। इस पर हड़तालियों में बेकार रहने के कारण असंतोष बढ़ रहा था। सब लोग समझ रहे थे कि हड़ताल से कुछ लाभ नहीं हो रहा, और वे इकट्ठे मिलकर हड़ताल खोलने का प्रस्ताव करने का विचार कर रहे थे। प्रेम इस असन्तोष को लोगों के मुख पर अंकित देख रही थी। इससे उसे सन्देह हो रहा था कि लोग कम्यूनिस्ट पार्टी का नेतृत्व अस्वीकार कर देंगे।

यद्यपि इस लड़की और लड़के की बातों पर उसे कुछ भारी आशा नहीं थी तो भी मज़दूरों की ओर से हड़ताल बन्द करने की आशंका से डर रही थी। वह समझती थी कि यदि हड़ताल तोड़नी ही है तो सालस डालकर तोड़नी अधिक लाभप्रद होगी। अतएव उसने यूनियन के प्रधान से राय कर यूनियन की कार्यकारिणी की बैठक बुला ली और

उसके निर्णय के अनुसार वह और झंडासिंह दूसरे दिन फिर चौधरी सलीमुल्लाखां की कोठी पहुँचे।

[१४]

जब प्रेम और उसकी साथी लड़कियां चन्दे की रकम और सालसों के प्रस्ताव पर विस्मय करती हुई कोठी से बाहर निकल गयीं तो खद्दर-पोश युवक ने रज़िया से पूछा, "ये आपको जानती नहीं और न ही इन्होंने आपका नाम पूछा है। तो ये कल किसने आकर मिलेंगी ?"

"शायद आपको जानती हों।"

"मेरा विचार है कि नहीं जानतीं। अन्यथा रुपया लेते समय अवश्य कुछ कहतीं।"

"तो मैं समझती हूं कि सालस टालने की बात न तो इनके अधिकार में होगी और न ही इनकी इच्छा होगी कि ऐसा हो जाये।"

"नहीं, ये दोनों बातें नहीं। तुम उसे नहीं जानती। वह है प्रेम, डाक्टर खन्ना की लड़की। हड़तालियों में उसकी खूब चलती है। यदि वह चाहे तो बिना किसी शर्त के हड़ताल बन्द हो सकती है। मैं समझता हूँ कि वह चाहती भी यही है और वह कल यहां सालसों का प्रस्ताव लेकर अवश्य आवेगी।"

"आप ऐसा क्यों समझते हैं ?"

"हड़तालियों की हालत बहुत नाज़ुक हो चुकी है और यदि सुलह जल्दी न हो गयी तो हड़ताली यूनियन को तोड़ काम पर आजावेंगे।"

"यदि ऐसा है तब तो सालसों के प्रस्ताव की आवश्यकता नहीं थी। आपको यह प्रस्ताव नहीं मानना चाहिये।"

"नहीं रज़िया, यह ठीक नहीं। हक़ीक़त में मेरी हमदर्दी इन लोगों के साथ है। मैं चाहता हूँ कि इन लोगों को कम से कम नुकसान सहकर हड़ताल तोड़नी पड़े। यह प्रश्न केवल हड़ताल का नहीं, प्रत्युत सरमायादारी और समाजवाद का है। इन यूनियन के मूर्ख सदस्यों के कारण समाजवाद के विरुद्ध जो वातावरण उत्पन्न हो रहा है मैं उसे नहीं

होने देना चाहता।"

अगले दिन वे दोनों लॉन में खड़े प्रेम की प्रतीक्षा कर रहे थे। खद्दरपोश युवक को विश्वास था कि वह आयेगी। जब प्रेम झंडासिंह को लिये हुए मोटर से उतरी तो युवक ने रज़िया की ओर संतोष की दृष्टि से देखा। रजिया ने पूछा, "यह साथ कौन है ?"

"हमारे कारखाने का एक फोरमैन है। यह मुझे पहचान लेगा।"

"फिर ?"

"फिर क्या ? मैं कुछ चोरी बात तो कर नहीं रहा। मैंने सेठ साहब से रात बात की थी। उन्हें आशा नहीं कि ये लोग सालस डालने के लिये राज़ी हो जायेंगे इससे वह कुछ कुछ राजी हो गये थे।"

इस समय प्रेम और झंडासिंह समीप पहुंच गये थे। झंडासिंह ने ज्योंही खद्दरपोश युवक को पहचाना वह भीगी बिल्ली बन गया। वह डरता था कि कहीं उसका अपमान न हो। उसने हाथ जोड़कर नमस्ते की और कहा, "हजूर, मुझे मालूम नहीं था....।" इतना कह वह चुप कर गया।

प्रेम अचम्भे में झंडासिंह का मुख देख रही थी। युवक ने पूछा, "झंडासिंह, क्या मालूम नहीं था ?"

"कि हजूर ने बुलाया है।"

"और मालूम होता तो न आते क्या ?"

झंडासिंह ने बात बदल दी, "नहीं हजूर, किसी और को भेज देता। मैं आपसे झगड़ा नहीं कर सकता और बात झगड़े वाली है।"

प्रेम को जो सन्देह था वह सत्य प्रतीत होने लगा। उसने निश्चय करने के लिये पूछा, "क्या मैं आपका परिचय प्राप्त कर सकती हूँ ?"

रज़िया ने मुस्कराते हुए कहा, "आप इनको नहीं जानतीं ? यह सेठ साहब के साहबज़ादे हैं।"

"ओह ! और आपने चार हजार रुपया दिया है। इसका अर्थ मैं नहीं समझी।"

"इसके अर्थ तो सर्वथा स्पष्ट हैं। मेरी सहानुभूति मजदूरों के साथ है। यद्यपि मैं हड़ताल को पसन्द नहीं करता, इस पर भी मैं मजदूरों की भलाई होती देखना चाहता हूँ। अब सालस डालकर हड़ताल बन्द कराने का प्रस्ताव भी इसी विचार से है।"

इस समय रजिया कोठी के भीतर कुर्सियां लिवाने चली गयी थी। प्रेम ने पूछा, "और यह कौन हैं?"

रामलाल ने उत्तर में केवल यह कहा, "मेरी मित्र हैं। बैरिस्टर साहब की पुत्री हैं।"

जब सब लोग आराम से कुर्सियों पर बैठ गये तो रामलाल ने पूछा; "आपकी यूनियन ने सालस डालने का प्रस्ताव कर लिया है?"

"जी हां," झण्डासिंह ने कहा। सालसों के नाम तो सेठ साहब के सम्मुख निश्चय होंगे। यह निश्चय करने का अधिकार हमारी ओर से प्रेमदेवी जी को दे दिया गया है।"

इस पर रजिया ने पूछा, "यदि सालसों के नामों पर समझौता न हो सका तो?"

"तब मैं एक और राय दूंगा। आप लोग हड़ताल बन्द कर दें और सब के सब लोग एकदम काम पर आजावें तो मैं आप लोगों की प्रायः सब मांगें स्वीकार करा दूंगा।"

"क्षमा करें बाबू रामलाल। आप लोगों के वायदों का कैसे भरोसा किया जा सकता है।" प्रेम का कहना था।

रजिया के माथे पर त्योरी चढ़ गयी, परन्तु रामलाल ने उसे हाथ से चुप रहने का संकेत कर कहा, "तो न सही। आप सेठ साहब के पास चलें और वहां सालसनामा लिख दिया जाये।"

प्रेम, रामलाल और झण्डासिंह कैनाल रोड पर पहुंचे। सेठ साहब कहीं बाहर गये हुए थे और इनको उनके आने की प्रतीक्षा करनी पड़ी। मोटर में जब रामलाल के साथ प्रेम यहां आरही थी और यहां पर ड्राइङ्ग-रूम में रामलाल से बातचीत करने पर प्रेम को हड़ताल की निरर्थकता पर

विश्वास हो गया। रामलाल ने अपनी आयोजना प्रेम को बताई और उसको कार्यरूप में लाने के लिये जो भी कार्यवाई वह कर चुका था वह भी बताई। अपने कथन के समर्थन में उसने कागज़ात दिखाये। प्रेम को हड़ताल करने का शोक होने लगा। उसे बिहारीलाल के कहने पर अब विश्वास हो गया कि रामलाल मजदूरों का हितचिन्तक है।

जब सेठ साहब आये तो प्रेम हड़ताल बन्द कर देने के लिये उतावली हो उठी थी। वह चाहती थी कि रामलाल को शीघ्र ही अवसर मिलना चाहिये कि वह अपने विचारों को कार्यरूप मे बदल सके। रामलाल सेठ साहब के स्वभाव से जानकारी रखता था। इस कारण उसने प्रेम से चुप रहने का संकेत कर स्वयं बातचीत आरम्भ की। उसने कहा, "पिता जी, ये लोग चाहते हैं कि सालस डालकर फैसला कर लिया जाय।"

"क्यों? सालसों से फैसला तो तब करना होता है जब इस बात में सन्देह हो कि कौन झूठा और कौन सच्चा है।"

"तो क्या मजदूरों का पक्ष बिलकुल झूठा है?" झण्डासिंह ने बहुत ही नम्रता से पूछा।

"हां झूठा है," सेठ साहब ने कहा, "मैंने तुम लोगों को हड़ताल करने को नहीं कहा। यदि तुम्हें कुछ कष्ट था तो उसके लिये तुमने अर्जी क्यों नहीं दी। जो लोग निकाले गये हैं वे फोरमैनों के कहने पर ही तो निकाले गये थे। सुनो मिस्त्री साहब, कल चुपचाप सब मिलकर कारखानों में चले आओ। यदि सब इकट्ठे आओगे तो कारखाने खोल दिये जायेंगे।"

प्रेम और झण्डासिंह इस फटकार से अत्यन्त निराश हुए। परन्तु रामलाल ने कहा, "पिता जी, ये लोग कहते हैं कि इन्होंने कोई ग़लती नहीं की। इनकी मांगें सब की सब उचित हैं। आप कहते हैं कि इनकी मांगें उचित नहीं। इस मतभेद में ही तो सालसों की आवश्यकता हुई है। यदि हमारा पक्ष सत्य का है तो सालस हमें ही ठीक बतायेंगे। फिर इससे डरना और इस प्रस्ताव को अस्वीकार करना ठीक नहीं जंचता।"

"तुम तो गधे हो। देखते नहीं कि अब इन लोगों की नाक में दम आ चुका है। यदि एक दो दिन तक और चुप रहा जाये तो इनकी हड़ताल स्वयं टूट जायेगी। क्या मैं देख नहीं रहा कि कल इनके रसोईघर के लिये आटा भी नहीं है?"

"पर पिता जी, इनके पक्ष के सत्य और झूठ होने में, उनके पास रुपया है या नहीं, इसका क्या सम्बन्ध है? क्या गरीब कभी भी सचाई पर नहीं हो सकते?"

"मैं यह नहीं कहता। मैं कहता हूं कि यह सालसी वगैरह का झगड़ा करने की क्या आवश्यकता है?"

"जब दो पार्टियों में झगड़ा हो और दोनों अपने अपने को सत्य मानें तो सालस ही निर्णय दे सकते हैं कि कौन ठीक है। जज भी एक प्रकार का सालस होता है। अन्तर केवल यह है कि वह सरकार की ओर से नियत किया जाता और उसकी नियुक्ति में दोनों का सहमत होना आवश्यक नहीं।"

सेठ साहब ने कहा, "अच्छी बात, मैं सोचूंगा और इस प्रस्ताव का उत्तर कल तक दूंगा।"

सेठ साहब को यह ज्ञात नहीं था कि रामलाल ने हड़तालियों को चार हज़ार रुपया देकर उनकी हड़ताल में कुछ दिन के लिये पुनः जीवन डाल दिया है।

प्रेम और झंडासिंह अति निराश थे। रामलाल ने उन्हें उदास देखकर कहा, "देखिये, आप घबराइये नहीं। आपके रसोईघर का नित्य कितना खर्चा बैठता है?"

"लगभग एक हज़ार रुपया," प्रेम का उत्तर था।

"मेरा नाम बताइयेगा नहीं। मैं आपको इतनी रकम नित्य, जब तक हड़ताल मान से समाप्त न हो जाये, दे दिया करूंगा। मैं सालस डलवाने की बात मनवा लूंगा।"

रामलाल की बातों से प्रेम का साहस फिर बंध गया और उसने

मोटर में सवार होते समय कहा, "बाबू रामलाल, आपका हम अत्यन्त धन्यवाद करते हैं। तो मैं कल आकर खबर लूं ?"

"अवश्य," रामलाल ने विदा करते हुए कहा।



चौथा भाग

प्रेम और विवाह

जिन दिनों मज़दूरों की हड़ताल हो रही थी और नगर में उन लोगों के लिये चन्दा एकत्रित हो रहा था, मोहनलाल रोड पर एक मकान में रात के साढ़े बारह बजे के लगभग झगड़ा हो रहा था। झगड़ने वाले थे पिता और पुत्र। पिता थे पं० विशम्भरदयाल गर्ग, ओरियैन्टल कॉलेज में संस्कृत साहित्य के प्रोफैसर। पुत्र था अविनाश गर्ग, गवर्मेन्ट कॉलेज की बी० एस सी० श्रेणी का विद्यार्थी।

पिता पहनता था बन्द गले का कोट, चूड़ीदार पायजामा, काली ऊनी टोपी, अर्थात् अपनी पदवी के अनुकूल, परन्तु बहुत ही सादा पोशाक। पुत्र था पूरा फैशनेबल नवयुवक। उसके पास पांच प्रकार के टोप थे, दो दर्जन कालर, एक दर्जन नकटाई, आधी दर्जन डबल स्लीव कमीजें, कई कोट और पतलूनें। बूटों और सलीपरों के कई जोड़े थे। भांति भांति की डिज़ाईन की जुर्राबें, टेनिस सूट, वाकिंग सूट, कॉलेज सूट, मिडनाइट सूट, लैबोरेटरी ओवर-ऑल, इत्यादि कई प्रकार की पोशाकें सदैव तैयार रहती थीं। साबुन, टूथपेस्ट, तेल, इतर, पाउडर, क्रीम इत्यादि टायलैट की सामग्री से एक अलमारी भरी हुई थी।

यह नहीं कि अविनाश गर्ग पढ़ता न हो। पढ़ता भी बहुत था। केवल एक बात थी। वह उपन्यास पढ़ता था। अंग्रेज़ी के उपन्यासों की उसके पास एक अलमारी भरी पड़ी थी और नित्य नये खरीदे जा रहे थे। इस पर भी वह कॉलेज की पढ़ाई में पिछड़ा हुआ नहीं था। मैट्रिक में उसने वज़ीफा लिया था। एफ० एस सी० में वह प्रान्त के प्रथम दस विद्यार्थियों में था। अब बी०एस सी० की परीक्षा में भी वह प्रान्त में प्रथम आने की आशा रखता था। ईश्वर ने कुछ ऐसी बुद्धि दी थी कि जब कोई बात एक बार सुन लेता था तो उसे भूलता नहीं था। कॉलेज में जब वह प्रोफैसर से पाठ सुनकर आता था तो वह उसके मस्तिष्क में ऐसे

लिखा जाता था, मानों पत्थर पर खुद गया हो।

पिता और पुत्र में भारी अन्तर था। पिता का इतना खर्च रोटी-कपड़े के अतिरिक्त पांच रुपये मासिक भी नहीं था। उसे किसी भी प्रकार का व्यसन नहीं था। सुबह खाना खाकर कॉलेज जाता था और शाम को घर आकर भोजन कर लेता था। जेब में कभी एक रुपया रखा हो तो वह वहां पड़ा रह जाता था और प्रायः प्रोफेसर साहब को भूल ही जाता था कि उन्होंने जेब में कुछ रखा है। लड़का जीवन के उत्थान में विश्वास रखता था। सिनेमा-रैस्टोरेंट में चाय-पानी, दोस्तों से दावतें, सिगार इत्यादि प्रत्येक प्रकार से जीवन-निर्वाह को खर्चीला बनाने में लगा रहता था।

इस रात पं० विशम्भरदयाल अपने पुत्र के रहन-सहन से कुछ खिन्न हो गये थे। उन्हें पाच सौ रुपया वेतन मिलता था। इसमें से अपने बीमे के लिये पचास रुपये प्रति मास दे देते। एक सौ रुपया घर अन्न-दाने के लिये। एक सौ रुपया अपनी स्त्री के जेब खर्च के लिये। पचास रुपया पुत्र की फीस इत्यादि के लिये और सौ रुपया उसके जेब-खर्च के लिये। शेष एक सौ के लगभग बैंक में आपत्तिकाल के लिये भेज देते थे। यह उनका सौभाग्य था कि उनकी और कोई सन्तान नहीं थी। परन्तु जो कुछ उनकी स्थिति के लोग पांच बच्चों पर व्यय करते थे वह अविनाश अकेले पर ही खर्च कर डालते थे।

पं० विशम्भरदयाल को अविनाश का खर्चा कभी अखरा नहीं था। उनकी चिन्ता का कारण यह था कि वह इन दिनों जब कॉलेज जाता था तो रात को बहुत देर कर घर लौटता था। कई दिन से उसने रात का खाना भी घर पर नहीं खाया था। और पढ़ाई, जैसी कैसी भी वह करता था, आजकल बन्द थी। उसकी पढ़ने की मेज पर, कई दिन से, एक किताब खुली रखी थी। कई दिन से उसका वही एक पन्ना खुला हुआ दिखाई दे रहा था। इन दिनों अविनाश जब आता था तो पिता प्रायः सो गया होता था। कभी कभी तो रात के ग्यारह बज जाते थे।

पं० विशम्भरदयाल ने आज निश्चय किया था कि पुत्र से इस अनियमित-पन का कारण पूछेंगे। वह लड़के के आने की प्रतीक्षा करते रहे। रात के साढ़े बारह बजे अविनाश आया। उसने दरवाज़ा खटखटाया। नौकर ने खोल दिया। वह अपने कमरे में पहुँचा तो अपने माता-पिता को वहां बैठे देख कुछ झिझका, परन्तु तुरन्त संभल कर पूछने लगा, "पिताजी, आप सोये नहीं ?"

"तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं," माता का उत्तर था।

"क्यों ?"

"यह जानने के लिये कि तुम घर इतनी देरी से क्यों आते हो ?"

"आजकल एक विशेष काम में लगा हुआ हूँ।"

पिता ने कहा, "बेटा, बैठ जाओ।" पुत्र बैठ गया। पिता ने कहना जारी रखा, "मैं जानना चाहता हूं कि यह विशेष काम क्या है ?"

"पिताजी, छुपाने की बात नहीं है। व्यर्थ में आपने इतना कष्ट किया। आप इतनी देर जागकर प्रातः चार बजे स्वाध्याय के लिये कैसे जाग सकेंगे ?"

"मेरी बात छोड़ो। इस समय तुम्हारी बात हो रही है। मेरा स्वाध्याय तो एक दिन के लिये रुक भी सकता है। यहां तुम्हारा स्वाध्याय तो आठ दस दिन से रुका पड़ा है। इस पुस्तक का एक सौ पचपन पृष्ठ तुम समाप्त ही नहीं कर पाते। इसके अतिरिक्त कुछ कॉलेज का काम-धाम भी होता है या नहीं ?"

"पिताजी, कुछ दिन का काम और है। इसके समाप्त होते ही सब काम फिर नियम से चल निकलेगा।"

"यही जानना चाहता हूं कि वह क्या काम है ?"

"हड़तालियों के लिये चन्दा एकत्रित कर रहा हूं।"

"हड़ताल ! कैसी हड़ताल ?" पंडित विशम्भरदयाल संस्कृत साहित्य में इतने लीन थे कि दैनिक समाचार-पत्र देखते तक नहीं थे उन्हें कालीदास पढ़ते पढ़ते सामयिक समाचार जानने को अवकाश ही नहीं रह

जाता था। अविनाश यह जानता था। इस कारण उसने पंडित जी को बताया, "सेठ धन्नाराम के कारखानों में मजदूरों ने हड़ताल की हुई है। उनके और उनके बाल-बच्चों के खाने-पहरने के लिये चीजों की आवश्यकता है। इसलिये हम लोग चन्दा एकत्रित कर रहे हैं।"

"तुम्हारा उन कारखानों के मजदूरों से क्या सम्बन्ध है?"

"मनुष्यता का।"

"मैं समझता हूँ कि तुम अपना समय व्यर्थ खो रहे हो।"

"मैं भी कुछ समझ रखता हूं, पिता जी। मेरे विचार से परोपकार में समय व्यतीत किया हुआ व्यर्थ नहीं जाता।"

"तुम्हें विश्वास है कि तुम मजदूरों का उपकार कर रहे हो। हड़ताल करने में प्रोत्साहन देना उपकार करना है या अपकार करना?"

"हडताल किसी लक्ष्य-सिद्धि के लिये की गयी है।"

"नौकर जब मालिक की नौकरी करने जाता है तो उसे विदित होना है कि उसे क्या मिलेगा। जब नौकरी कर लेता है तो फिर झगड़ा करने की क्या जरूरत है? वह किसी भी समय नोटिस दे नौकरी छोड़ सकता है। इसमें तुम्हें और तुम जैसे लोगों को हस्ताक्षेप करने की क्या आवश्यकता है। देखो अवि, ये बेहूदा बातें हैं। तुम्हारा काम है कॉलेज की पढ़ाई करना। जानते हो घर भर में तुम पर सबसे अधिक खर्चा हो रहा है। मैं तुम्हें खर्चा कम करने को नहीं कहता। हां, यह तो अवश्य चाहता हूं कि इस खर्चे का उपयोग हो।"

अविनाश जानता था कि उसके पिता सामयिक, राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं को नहीं समझ सकते। अतएव उनसे इस विषय पर विवाद करना नहीं चाहता था। साथ ही चन्दा इकट्ठा करने के काम को छोड़ भी नहीं सकता था। इस कारण बहुत नम्रता से कहने लगा, "पिता जी, कुछ दिन तक ही तो यह काम चलेगा। पश्चात् नियम से पढ़ने और रहने लगूंगा।"

"एक दिन भी व्यर्थ खोना उचित नहीं।"

"मैं अभी इस काम को छोड़ नहीं सकता।"

"क्यों?"

"मेरा एक मित्र है। मैं उसका साथ देना चाहता हूँ।"

"वह मित्र कौन है? तुम्हारा सहपाठी है क्या?"

"नहीं। उसने इसी वर्ष में मैट्रिक किया है और हिन्दी प्रभाकर की परीक्षा दे रहा है।"

"यह तो ठीक नहीं। तुम्हारी मैत्री तो अपने जैसों से होनी चाहिये। वह तो तुम से आयु में भी कम होगा।"

"जी हां। उसकी आयु पन्द्रह वर्ष के लगभग है।"

"तुम्हें उससे मैत्री रखते लज्जा नहीं आती?"

"लज्जा की कौन बात है पिता जी?"

"वह यह है कि वह तुम से आयु में, शिक्षा में और अनुभव में कम है। तुम उसके पीछे लगकर अपना अमूल्य समय व्यर्थ खो रहे हो। तुम्हारे लिये अपने कॉलेज की पढ़ाई अधिक आवश्यक है।"

"मैं उससे मैत्री नहीं छोड़ सकता।"

"तुम अपना काम छोड़ सकते हो?"

"जब तक हड़ताल है।"

"मैं तुम्हें हड़तालियों की सहायता करने के लिये खर्चा नहीं देता।"

"मैं जानता हूँ।"

"परन्तु तुम मेरी कमाई उसी में व्यय कर रहे हो।"

"जानता हूँ पिता जी।"

"तो जब तक तुम यह काम करते हो तुम्हारा खर्चा बन्द।"

"जी।"

"वह सब सामान, जो जीवन चलाने के लिये आवश्यक सामान से अधिक है, तुमको नहीं मिलेगा।"

"जी।"

"अच्छी बात।" इतना कहकर पंडित जी कमरे से बाहर चले आये।

[२]

अविनाशचन्द्र पिता के हठी स्वभाव से परिचित था। वह यह भी जानता था कि प्रायः सब संस्कृत पढ़े विद्वानों की भांति उनके पिता भी केवल एक ही विचारधारा में चल सकते हैं। उससे बाहर नहीं निकल सकते। पं० विशम्भरदयाल का जीवन-सिद्धान्त था, मेहनत कर धन कमाना और उसे अपने लिये अथवा अपनी सन्तान के लिये व्यय करना। जिस समय, मास के आरम्भ में वह अपने पुत्र को जेब-खर्च के लिये एक सौ रुपया मासिक देते थे तो उनका हृदय बल्लियों उछलता था। जितना वह अपने पुत्र को बना-ठना देखकर प्रसन्न होते थे उतना ही आज वह अपने धन का दुरुपयोग होता देख निराश हुए थे। यदि अविनाश कह देता कि उसे सिनेमा देखने के लिये अथवा एक दर्जन कालर खरीदने के लिये कुछ अधिक रुपया चाहिये तो वह प्रसन्नता से दे देते। परन्तु अब तो अवस्था दूसरी थी। उनके पुत्र ने खर्चा नहीं मांगा था, प्रत्युत एक ऐसे मित्र के कहने के अनुसार चलने का हठ किया था, जिसे वह उससे छोटे दर्जे का समझते थे। लड़के ने हठ किया तो पिता भी हठ पर उतर आया।

इस पर भी पुत्र को आशा नहीं थी कि पिता कुछ अधिक समय तक हठ रख सकेगा। अतएव वह बिना इस विषय पर अधिक विचार किये, कपड़े उतार सोगया।

प्रातः उठ जब वह शौचादि के लिये गुसलखाने में गया तो पिता उसके कमरे में आया। उसका एक साधारण सा सूट, एक पुराना सा जूता, और पढ़ने का सामान बाहर के कमरे में ले आया। पश्चात् उसके कमरे को बन्द कर ताला लगा दिया।

अविनाश जब स्नान कर अपने कमरे में जाने लगा तो कमरे को ताला लगा देख चकित रह गया। धोती-कुर्ता पहने, हाथ में तौलिया और तेल की शीशी लिये खड़ा सोचने लगा कि ताले का अभिप्राय क्या है। वह बाहर के कमरे में आया। पिता को अपनी किताबें मेज पर सजाते

देख चकित रह गया। पिता ने पुत्र की ओर ध्यान नहीं दिया। नौकर से पुत्र की वस्तुएं बाहर के कमरे में सजवाता रहा। आखिर पुत्र ने पूछ ही लिया, "पिता जी, मेरे कमरे को ताला.........।"

"हां, मैंने लगवाया है। मैं समझता हूं कि तुम्हारे मस्तिष्क में अमीरी घुस गयी है। मैं वह निकालना चाहता हूं। तुम अब ऐसे ढंग से रहोगे जैसे रहते हुए मैंने एम० ओ० एल० किया था। मैं अपने पिता जी के कमरे में उनकी दृष्टि के नीचे रहता था। बहुत साधारण कपड़े पहनता था। मेरे पास उपन्यास खरीदने को दाम नहीं होते थे। बहुत कठिनाई से कॉलेज की पुस्तकें खरीद सकता था। दो समय रोटी खाता था और दो आना रोज जेब खर्च को मिलता था, जिसमें से पेन्सिल इत्यादि भी खरीदता था।"

"दो आना रोज?" पुत्र ने अचम्भे में पूछा।

"हां, दो आना रोज। सप्ताह में एक बार धुले हुए कपड़े मिलते थे। इस कारण मुझे अपने कपड़ों को बहुत सावधानी से रखना होता था।"

अविनाश ने कहा, "पिता जी, दो आने में तो गुज़र नहीं हो सकता। भला है आप यह भी न दीजिये।"

अविनाश ने चुपचाप कपड़े पहने। यह सूट उसके अपने विचार से 'आउट आफ फैशन' हो चुका था। वह इसे कबाड़िये के पास बेच देने का विचार रखता था। आज उसे यही पहनने को मिला।

जब कपड़े पहन चुका तो मां थाली में रोटी ले आई। पिता-पुत्र दोनों ने इकट्ठे बैठकर खाई। अब पिता ने दो आने के पैसे, मेज पर, उसकी पुस्तकों के समीप रख दिये। अविनाश ने किताबें ले लीं। दो आने नहीं उठाये और कॉलेज चला गया।

सायंकाल प्रयोगशाला का काम समाप्त कर वह 'नीले गुम्बज़' की ओर चल पड़ा। वहां उसकी भेंट एक लड़की से हुई। उसके हाथ में चन्दा इकट्ठा करने की कापी थी। वह अविनाश को आया देख नमस्ते कर बोली, "आप आगये! अब बताइये किधर चलना है?"

"आज 'कमर्शल बिल्डिङ्ग्ज़' में चलना है।" दोनों उधर ही चल पड़े। मार्ग में लड़की ने कहा, "यह कोट फिर पहन आये हैं। आप तो कहते थे कि किसी भिखारी को दे देंगे।"

अविनाश ने उत्तर में केवल 'हूँ' कह दी और चलता गया। कई दूकानदारों ने चार-चार आना, आठ-आठ आना दिया और बहुतों ने इनकार कर दिया। इनको 'न' सुनने का अभ्यास हो गया था, अतएव बिना इस बात का विचार किये वे चन्दा एकत्रित करते गये। दो घण्टे घूमने के पश्चात लगभग पन्द्रह रुपये एकत्रित हो गये। पश्चात वे यूनियन के दफ्तर में रुपये जमा कराने चले गये। जब वहां से निकले तो लारेंस गार्डन की ओर चल पड़े।

अविनाश आज विशेष रूप से चुप था। पहले दोनों में बहुत सहिष्णुता से बातें हुआ करती थीं। आज अविनाश बातों का उत्तर 'हां-ना' में ही दे रहा था। इससे लड़की खीझ गयी थी। आखिर उससे नहीं रहा गया। पूछने लगी, "क्या बात है आज?"

"कुछ नहीं।"

"आप बोलते क्यों नहीं हैं?"

"कान्ता," यह लड़की का नाम था, "हम कितने दिन से काम कर रहे हैं?"

"आज नौवां दिन है।"

"हां, तो हमने कितना रुपया जमा किया है?"

"आज तक एक सौ बीस रुपया जमा करा चुकी हूँ।"

"क्या तुम समझती हो कि इस छोटी सी रकम के लिये मैं भागा भागा आता हूं?"

"मैं जानती हूँ। क्या मैं आपसे पहले दिन की भेंट भूल सकती हूं? उस समय आप कितने हास्यप्रद प्रतीत होते थे। मेरे मस्तिष्क में उस समय का चित्र स्पष्ट रूप में अभी भी विद्यमान है। उस दिन मेरी सहेली चन्दा करने मेरे साथ नहीं थी। उसे उसके घर वालों ने मना

कर दिया था। मैं अकेली ही चल पड़ी थी। जब आपकी प्रयोगशाला में पहुँची तो केवल आपने ही पांच रुपये दिये थे। आपके एक साथी ने मुझे देख बहुत ही अश्लील भाव बनाये, जिस पर आपको लज्जा आगयी। आप मुझे प्रयोगशाला से बाहर ले आये और कहने लगे, 'आपको अकेले चन्दा करने कॉलेजों में नहीं आना चाहिये।'

"मैंने पूछा, 'क्यों'। तो आपने कहा था, 'इसके बताने की आवश्यकता नहीं। क्या मैं आपके साथ साथ चल सकता हूं?'

"मैंने फिर पूछा, 'क्यों?' तो आप बोले, 'यह प्रकृति का नियम है कि पुरुष स्त्रियों की रक्षा करें।'

"मैं अभी उत्तर सोच ही रही थी कि आपने मेरे साथ साथ चन्दा एकत्रित करने पर हठ करते हुए कहा, 'चलो, चलो। तुम अभी बहुत छोटी हो। तुम्हें संसार का ज्ञान नहीं है।'

"मैं चल पड़ी और तब से हम दोनों इकट्ठे चन्दा करते हैं। फिर एक दिन तुमने मुझे प्रेम करने की बात कही और पश्चात् हमने विवाह कर लिया है।"

"तुम्हारी स्मरणशक्ति बहुत अच्छी है। मेरा कहने का अभिप्राय यह है कि मैं तुम्हारे प्रेम में फँसा हुआ चला आता हूँ। इस चन्दे के लिये नहीं। परन्तु तुम्हें प्रेम करते हुए और तुमसे प्रेम किये जाते हुए भी मैं यह नहीं जानता कि तुम कौन हो?"

"ओह! केवल इतनी सी बात के लिये आप दिल मसोसकर बैठे हैं? तो लो मैं अपना परिचय देती हूं। मेरा नाम कान्ता है। मैं अपने माता-पिता की लड़की हूँ। मेरे सब अंग पूर्ण हैं और आपके कहने के अनुसार मैं अति सुन्दर भी हूं। मैं मैट्रिक तक पढ़ी हूँ और आगे हिन्दी प्रभाकर पास करने का विचार रखती हूँ। बताइये, मेरा परिचय पूर्ण हुआ या नहीं?"

"तुम कहां रहती हो?"

"अपने माता-पिता के पास।"

"और वे कौन हैं ?"

"यह तो फिर मेरे माता-पिता का परिचय हो गया। उनका परिचय आपने क्या करना है ? विवाह तो मेरा आपसे हुआ है। मेरे माता-पिता का नहीं।"

"कान्ता, तुम नहीं समझती। कल रात एक घटना हुई है। वह यह कि मेरे पिता ने मेरा खर्चा बन्द कर दिया है।"

"क्यों ?"

"इसलिये कि मैं तुम्हारे साथ घूमता हूँ।"

"तो उन्होंने हमें घूमते हुए देख लिया है ?"

"नहीं। मैंने कहा था कि एक मित्र की, चन्दा एकत्रित करने में, सहायता करता हूं। इस पर उन्होंने पूछा कि वह मित्र कौन है। मैंने बताने से इनकार कर दिया और उन्होंने खर्चा बन्द कर दिया।"

"तो आपने बताया क्यों नहीं ?"

"क्या बताता ? बताने लायक कुछ मालूम ही नहीं था।"

"था क्यों नहीं ? आप मेरा नाम जानते थे और कह सकते थे कि मैं आपकी विवाहिता हूं।"

"इसी का तो विश्वास करना था।"

"तो क्या उस दिन लारेंस गार्डन में जो परस्पर वचन हुए थे उन पर विश्वास नहीं है ? अथवा वह भूल गये हैं आप ?"

"भूला नहीं कान्ता ! मुझे स्मरण है कि मैंने कहा था, 'कितना ही अच्छा हो यदि हमारा विवाह हो जाये।' तो तुमने कहा था, 'वाह ! यह तो अभी हो सकता है।' इस पर हमने परस्पर वचन दिये थे कि हम आपस में पति-पत्नी हैं और आजन्म रहेंगे।"

"तो क्या अब सम्बन्ध तोड़ना चाहते हो ?"

"नहीं। इसको जी नहीं चाहता। तुम बहुत अच्छी हो, परन्तु तुम अपना पूर्ण परिचय तो देती नहीं।"

"अपना परिचय तो दे दिया है। हां, अपने माता-पिता का परिचय

नहीं दिया। मैं वह परिचय देने का अधिकार नहीं रखती।"

"तो फिर यह कैसे होगा?"

"क्या कैसे होगा?"

"मानो तुमको मैं अपने घर ले जाना चाहूं तो कहां लेने आऊँगा?"

"जब आपका अपना घर होगा मैं अपने आप चली आऊँगी।"

"तो तुम्हारे माता-पिता आपत्ति न उठायेंगे?"

"वह क्या करेंगे और क्या नहीं करेंगे मैं नहीं जानती। न ही मुझे जानने की इच्छा है। यह उनका काम है, वह समय पर सोच लेंगे। हाँ, जब तक मैं बालिग नहीं हो जाती मैं आपके घर नहीं आऊँगी।"

"मेरे पिता इसको नहीं मानेंगे।"

"मेरा उनसे क्या सम्बन्ध है? मैं जानना चाहती हूँ कि आप मुझे स्वीकार करते हैं या नहीं?"

"मैं? मैं तो तुम्हारा पति हूँ। भला तुम्हें अस्वीकार कैसे कर सकता हूँ?"

"तो बस ठीक है। मुझे किसी दूसरे से कोई सरोकार नहीं। प्रिय अवि," कान्ता ने प्रेम भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा, "छोड़ो, इन बातों को। आज कहीं नाश्ता नहीं होगा?"

"बहुत भूख लगी है?"

"हां।"

"आज पिता जी ने मेरे जेब खाली कर दिये हैं। वह कहते थे कि उनको विद्यार्थी-जीवन में जेब-खर्च के लिये दो आने रोज़ मिलते थे और मुझे भी अब यही मिलेंगे। मैंने दो आने लेना अपना अपमान समझा और बिना कुछ लिये चला आया हूँ।"

"आपने बहुत अच्छा किया है। मेरे पास जेब में काफ़ी रुपये हैं। चलिये 'एलफिन्सटन' में चलें।"

"भूख तो बहुत लगी है। आज 'रिसैस पीरियड' में भी मैंने कुछ नहीं खाया। जेब खाली थी। परन्तु मुझे तुम्हारे दाम से खाते लज्जा

लगती है।"

"छीः! आप कैसी बातें करते हैं? हम पति-पत्नी हैं। हमारी सम्पत्ति में भेद नहीं है।"

[३]

अविनाशचन्द्र कान्ता के विश्वास भरे शब्दों से उत्साहित घर पहुँचा। रात के साढ़े आठ बज चुके थे। उसके पिता खाना खाने बैठे ही थे कि वह पहुँच गया। पिता ने देखते ही कहा, "अवि आगये। आओ बेटा! खाना तैयार है।" वह हाथ धो खाने पर बैठ गया।

पंडित जी खाने के समय कोई कलह-क्लेश की बात करना पसन्द नहीं करते थे। अविनाश यह जानता था। वह भी चुपचाप खाना खाता रहा।

खाना खाने के पश्चात् पिता-पुत्र दोनों बाहर बैठक में चले आये। पिता भारतीय नाट्यकला पर एक पुस्तक लिख रहा था। वह उसे लिखने बैठ गया। अविनाश खड़ा रहा। पिता ने कहा, "बैठो और कुछ पढ़ो-लिखो।"

"मैं यहां बैठकर पढ़ नहीं सकता।"

"क्यों?"

"यहां मेरा चित्त एकाग्र नहीं होगा।"

"जानते हो, जब मैं पढ़ता था तो घर में मेरे तीन छोटे भाई थे, जो सदा मेरी मेज़ पर कूदा करते थे। सौभाग्य अथवा दुर्भाग्य से यहां तो शोर मचाने वाला कोई नहीं है।"

"मुझसे यहां नहीं पढ़ा जायगा, पिता जी।"

"तो अब तुम्हारा कमरा तो तब खुलेगा जब तुम नियम से रहना आरम्भ कर दोगे।"

"नियम का अभिप्राय आप बता दें न।"

"देखो, चार बजे कॉलेज बन्द होता है। साढ़े चार बजे तुम्हें यहां आजाना चाहिये। जल-पान कर फिर जिमनेज़ियम इत्यादि में अथवा घूमने जाना चाहिये। साढ़े छः बजे घर पर आजाना चाहिये और

पश्चात अपना स्वाध्याय आरम्भ कर देना चाहिये। साढ़े आठ बजे भोजन करना और फिर रात के ग्यारह बजे सो जाना; प्रातः पांच बजे उठकर तीन घण्टे फिर स्वाध्याय करना, यह है नियम।"

"पिता जी, कुछ दिन और ऐसा नहीं हो सकता। मैं अपने मित्र को अकेला नहीं छोड़ सकता। वह चन्दा एकत्रित करने का काम कर रहा है और मैं समझता हूं मुझे उसके साथ रहना चाहिये।"

"वह कौन है और तुम्हें क्यों उसके साथ रहना चाहिये?"

"मैं अभी आपको बताना नहीं चाहता था। परन्तु आप यदि आज्ञा देते हैं तो मैं बताता हूँ।"

"हां हां, बताओ।"

"वह मित्र एक लड़की है। मेरा उससे विवाह हो चुका है।"

"विवाह?" पण्डित जी अचम्भे में कुर्सी से कूदकर खड़े हो गये और भौंचक्के हो, अवाक, पुत्र का मुख देखने लगे।

पुत्र ने खांसकर गला साफ करते हुए कहा, "हां पिता जी। नौ दिन के लगभग हुए वह हमारे कॉलेज में चन्दा इकट्ठा करने आई थी। मैं उसे देख............।"

"उसे देखकर उस पर मोहित हो गये?"

अविनाश ने खांसकर फिर गला साफ कर कहा, "मैं उससे प्रेम करने लगा। वह मुझे चाहने लगी। हम दोनों चन्दा एकत्रित करने जाते थे। मैंने उसे अकेले जाने से मना किया। उसने मुझे साथ ले लिया। फिर एक दिन हमने विवाह कर लिया।"

पंडित जी का सारा शरीर क्रोध से कांपने लगा और उन्होंने अविनाश की मां को आवाज दी, "अजी ओ! अविनाश की मां! जरा आना।"

मां पिता-पुत्र में झगड़ा सुन रसोईघर से बाहर चली आई। उसे देख पंडित जी ने कहा, "सुना है कुछ? तुम्हारे पुत्र ने विवाह कर लिया है। मैं जानना चाहता हूँ कि वह कौन सी मूर्ख लड़की है जो इससे विवाह कर बैठी है और किस पण्डित ने इन बच्चों का विवाह किया है?"

अविनाश ने मां को बोलने का अवसर ही नहीं दिया। वह चाहता था कि एक २ की बात का उत्तर दे। उसने आंखें नीची किये हुए कहा, "पंडित की आवश्यकता नहीं पड़ी, पिता जी। एक दिन हम दोनों लारेन्स गार्डन में बैठे थे। मैंने उससे कहा, 'कान्ता! कितना अच्छा हो जो हमारा परस्पर विवाह हो जाये।' उसने कहा, 'भला इसमें क्या कठिनाई है। अभी हो सकता है।' मैंने पूछा, 'कैसे?' उसने उत्तर दिया, 'बहुत साधारण बात है। आप कह दो कि मुझे पत्नी बनाते हो। मैं कह दूंगी मैं आपको पति बनाती हूँ।' इस पर मैंने पूछा, 'बिना साक्षी के और वेद मन्त्र पढ़े?' उसने उत्तर दिया, 'यह साक्षी और रीति-रिवाज उन लोगों ने बनाये हैं जो मनुष्य के दिये वचन पर विश्वास नहीं करते। मुझे तो आप पर विश्वास है।'

"पिता जी, मैं कैसे कह सकता था कि मुझे उस पर विश्वास नहीं है? अतएव हमने एक दूसरे को पति-पत्नी कह दिया और हमारा विवाह हो गया।"

"तुम दोनों गधे हो। वह किस की लड़की है? मैं उसके पिता को सचेत कर देना चाहता हूँ। तुम्हारे साथ हम मूर्ख नहीं बन सकते।"

इस पर अविनाश की मां ने पूछा, "परन्तु विवाह के पश्चात...।"

यह बात तो पंडित जी क्रोधवश भूल ही गये थे। माता यह जानना चाहती थी कि इनकी मूर्खता किस सीमा तक पहुँच चुकी है। उसे लड़की के भविष्य की अधिक चिन्ता थी। इस कारण उसने फिर पूछा, "तुमने उसका धर्म बिगाड़ा है या नहीं?"

अविनाश के कान लाल हो गये। उसने आंखें नीची किये हुए कहा, "हम अपने आपको पति-पत्नी कहने के पश्चात् खूब हंसे और तब हम अपने अपने घर लौट आये।"

"फिर तुम परस्पर मिलते हो?"

"रोज़ चन्दा एकत्रित करने के लिये जाते हैं।"

"अरे गधे," पिता ने बात बीच में ही काटकर कहा, "तुम्हारी मां

जानना चाहती हैं कि तुमने विवाह ज़बानी-ज़बानी ही किया है या... ।" पिता आगे जो कुछ कहना चाहता था नहीं कह सका। इस विषय पर उसने अपने मित्रों से भी वार्तालाप नहीं की थी। पुत्र से कहने में उसे संकोच हो आया। परन्तु पुत्र नवयुग का जीव था। उसने मुस्कराते हुए कहा, "पिता जी, अभी तो विवाह हुआ है। गौना नहीं हुआ।"

"ओह!" सुख का श्वास लेते हुए पिता ने कहा, "सत्य कहते हो अवि?"

"मैंने आज तक आपसे कभी झूट नहीं बोला और इसकी आवश्यकता भी नहीं।"

"हूँ। तो वह लड़की कौन है?"

"उसका नाम कान्ता है।"

"किस की लड़की है?"

"यह तो नहीं जानता।"

"तो क्या नाम जानना पर्याप्त है?"

"नहीं जी। वह बहुत चतुर, बुद्धिमान और सुन्दर भी है।"

"तुम्हारा सिर है। अबे! वह रहती कहां है?"

"मुझे मालूम नहीं।"

"मालूम होता है वह तुम्हें उल्लू बना रही है।"

"मैं ऐसा नहीं समझता।"

"तुम खाक समझते हो। अच्छा सुनो, मैं कहता हूँ, कि तुम्हारा विवाह नहीं हुआ और कल से तुम उसे मिलने नहीं जाओगे।"

"परन्तु पिता जी, मैं कहता हूँ कि मेरा विवाह हो गया है।"

"बस रहने दो। अब अपना काम करो। मूर्ख कहीं का। अपना समय व्यर्थ खो रहा है और मेरा दिमाग़ चाट रहा है।"

[४]

अविनाश ने कहने को तो कह दिया कि कान्ता उसे उल्लू नहीं बना रही, परन्तु वह अपने मन में अपनी दुर्बल स्थिति को समझता था।

जिस दिन उसने अपना परिचय कान्ता को दिया था उसी दिन उसे भी अपना परिचय दे देना चाहिये था, परन्तु वह अभी तक उसे टालती आती थी। इससे उसके मन में भी सन्देह हो रहा था। वह अपने पिता के कहने का ठीक होना सम्भव समझने लगा था। अतएव उसने मन में निश्चय कर लिया कि वह अगले दिन अवश्य पता कर लेगा।

अगले दिन निश्चयानुसार यूनिवर्सिटी हॉल के बाहर दोनों की भेंट हुई। अविनाश ने हाथ जोड़ कान्ता को नमस्ते कही और कहा, "ईश्वर का धन्यवाद है कि तुम आगयी हो।"

"तो आपको मेरे आने में सन्देह था?"

"मुझे तो नहीं, परन्तु पिता जी को था। रात मैंने सब बातें उन्हें बता दी हैं।"

"और वह क्या कहते थे?"

"कहते थे कि तुम मुझे उल्लू बना रही हो।"

कान्ता खिलखिलाकर हँस पड़ी। अविनाश गम्भीरता से उसका मुख देखता रहा। जब वह हँस चुकी तो उसने पूछा, "किस बात पर उन्होंने ऐसा कहा था?"

"जब मैंने कहा कि मैं नहीं जानता तुम किसकी लड़की हो, तब उन्होंने भी हँस कर कह दिया।"

"इस पर आपको भी मुझ पर सन्देह हो गया है। ठीक है न?"

"मैंने तो कहा था कि मुझे तुम पर विश्वास है।"

"झूठ।"

"नहीं, सत्य कहता हूं। मुझे झूठ बोलने का स्वभाव नहीं।"

"अच्छा मानलो कि मैं आपको अपना पता नहीं बताती तो आप क्या करेंगे?"

"तुम्हारे बताने की प्रतीक्षा करूंगा।"

"अवि डियर! तुम बड़े अच्छे हो। चलो चन्दा करने के लिये चलें।"

"मैं समझता हूं कि यह काम हमने बहुत कर लिया है। अब इसे बन्द कर दें।"

"तो फिर हमारी भेंट कैसे हो सकेगी?"

"तो क्या यह भेंट हड़ताल के दिनों तक ही रहेगी?"

"नहीं, पीछे फिर कोई और साधन ढूँढ़ना पड़ेगा।"

"क्या इस बहानेबाज़ी के बिना भेंट नहीं हो सकेगी?"

"यह तो केवल तब हो सकेगा जब मेरे और आपके पिता दोनों हमारा विवाह स्वीकार कर लें, अथवा जब हम बालिग़ हो जायेंगे।"

"मैं तो इस बहानेबाज़ी से ऊब गया हूं। चन्दा एकत्रित करने में मेरा विश्वास नहीं रहा।"

"तो आप सायंकाल कम्यूनिस्ट पार्टी के दफ़्तर में मुझे मिल सकते हैं। मैं तो चन्दा करने जा रही हूँ।"

"कहां?"

"कल माल पर की कुछ दूकानें रह गयी थीं।"

अविनाश ने निराश हो सिर नीचे किये कह दिया, "परन्तु मैं तुम्हें अकेले नहीं जाने देना चाहता।"

"तो आप भी चलें।"

"नहीं! पहले मेरी बात सुनो।" पं० विशम्भरदयाल की आवाज़ उन दोनों के कान में पड़ी। दोनों घूमकर खड़े हो गये। अविनाश ने कान्ता को बताने के लिये कह दिया, "पिता जी।"

कान्ता समझ गयी और उसने हाथ जोड़कर नमस्ते कह दी। पंडित जी ने कान्ता को सिर से पावों तक देखा। बाहिरी रूप-रेखा का प्रभाव अच्छा रहा, परन्तु वह तो क्रोध के घोड़े पर सवार होकर आये थे। तुरन्त बोले, "मैं तुम दोनों को कुछ कहना चाहता हूं।"

"परन्तु पिता जी!" अविनाश ने नम्रता से कहा, "यहां सड़क पर तो लोग तमाशा देखेंगे।"

"तो चलो घर पर चलो।"

अविनाश ने कान्ता की ओर घूमकर प्रश्नभरी दृष्टि से देखा। कान्ता ने सिर हिलाकर इनकार करते हुए कहा, "घर पर ले जाने के लिये निमंत्रण का यह ढंग कुछ अच्छा नहीं है।"

"मैं निमंत्रण नहीं दे रहा। यदि तुम लोगों को मेरी बात सरे बाज़ार नहीं सुननी तो चले चलो।"

"मैं आपकी बात सुनूँ ही क्यों?" इतना कह वह बाप-बेटे दोनों को छोड़ आगे चल पड़ी। अविनाश पिता को छोड़ उसके पीछे पीछे चल पड़ा। पंडित जी ने भी कदम बढ़ाकर कहा, "अरे भाई, सुनो तो।"

अविनाश ने कान्ता को आवाज़ दी, "कान्ता, ठहरो।" कान्ता ठहर गयी। "मेरे पिता जी हैं। इनकी बात सुनकर मेरा मान करोगी न।"

इस समय पंडित जी भी आकर साथ साथ चलने लगे थे। कान्ता ने उनकी ओर देखकर कहा, "आप इनके पिता हैं। इस कारण सुनने को तैयार हूं। परन्तु यह कह देती हूँ कि डांट फटकार अथवा गालियों से काम नहीं चलेगा।"

विवश पंडित जी को शान्त होना पड़ा। बोले, "नहीं, मैं गाली नहीं दूंगा। मैं गंवार-अपढ़ नहीं हूँ। मैं पहले यह जानना चाहता हूँ कि तुम कौन हो?"

"मैं श्रीयुत अविनाशचन्द्र जी की स्त्री हूँ।"

"तुम्हारा विवाह कब हुआ है?"

"आज चार दिन हो चुके हैं।"

"विवाह में साक्षी कौन है? किस रसम के अनुसार विवाह हुआ है?"

"साक्षी की आवश्यकता नहीं है। समय पर साक्षी तो दो रुपये में मिल जाते हैं।"

"परन्तु विवाह किसी रीति-रिवाज के अनुकूल तो होना चाहिये। आर्यसमाज, हिन्दूधर्म अथवा अन्य किसी मज़हब के अनुसार। कुछ तो हो।"

"ये सब वहम और दासता की बातें हैं। रीति-रिवाज की गुलामी

हमें पसन्द नहीं।"

"परन्तु तुम दोनों की आयु अभी छोटी है।"

"यह दोष दो वर्ष में ठीक हो जायेगा।"

"तब तक तो यह विवाह नहीं माना जा सकता।"

"कौन नहीं मानेगा?"

"मैं और तुम्हारे पिता।"

"आपको मनाने का यत्न ही किसने किया है? मैं तो यह आप जैसे लोगों को बताना भी नहीं चाहती थी। आप जान गये हैं तो अच्छी बात है।"

"परन्तु तुम अभी अनुभवहीन हो। तुम्हें हमारी राय तो ले लेनी चाहिये।"

"मैं ऐसा नहीं समझती। पचास वर्ष के गले-सड़े संस्कार आपको सीधी सी बात भी समझने नहीं देते कि विवाह में पति-पत्नी की स्वीकृति ही मुख्य है।"

"देखो बेटी," पं० विशम्भरदयाल ने अंतिम यत्न करते हुए कहा, "मैं समझता हूँ कि तुम्हें इस विषय में अभी दूसरों से राय ले लेनी चाहिये। यह विवाह का विषय अति गम्भीर है। जीवन भर की समस्यायें इसमें उलझी हुई हैं। पीछे पछताने के स्थान पहले ही सोच-विचारकर चलना बुद्धिमानी है।"

"अच्छी बात, आपकी बात मान लेती हूँ। आप यही कहते हैं न कि आपका अनुभव हमसे अधिक है। इस कारण आपकी अनुमति प्राप्त कर लेनी चाहिये। आप अब अपनी सम्मति देने की कृपा करें। वह मानने योग्य तो तभी होगी जब आप हमें समझा सकेंगे। कहिये।"

"तुम्हारा विवाह होना चाहिये, यह मैं तब ही बता सकता हूँ जब तुम अपने पिता का नाम-धाम बताओगी।"

"इसके बताने में मुझे भारी आपत्ति है।"

"क्यों?"

"इसलिये कि मैं अपने गुण-दोषों से अपनी कीमत लगवाना चाहती हूँ। अपने माता-पिता के गुण-दोषों से नहीं।"

"फिर भी उनके गुण-दोषों का प्रभाव तुम पर भी तो हुआ होगा।"

"जो कुछ होना है सो हो गया है। अब वर्तमान और भविष्य में तो माता-पिता से अधिक संसार के अन्य लोगों का प्रभाव बढ़ रहा है। देखिये, मैं अपने पिता के पास तो दिन में केवल आधा घंटा बैठती हूँ। शेष समय में मैं मित्रों से मिलती हूं, पुस्तकें और समाचार-पत्र पढ़ती हूं और देश-विदेश की घटनाओं को पढ़ती हूँ। जो कुछ मैं हूँ अथवा बन रही हूँ वह अधिकतर घर से बाहर के वातावरण से हूं और होऊंगी। युवा लड़के-लड़कियां तो प्रायः उड़ने वाले पंछियों की भांति होते हैं। घर उनके लिये रात भर बसेरा करने वाले घौंसले के अतिरिक्त कुछ नहीं होता।"

"मैं परिवार, जाति, और माता-पिता के काम-धन्धे का सन्तान पर गहरा प्रभाव पड़ने के सिद्धान्त को मानता हूँ। एक ब्राह्मण का लड़का प्रायः सात्विक गुण रखने वाला होता है। एक क्षत्रिय रजोगुण रखने वाला। एक बनिये की सन्तान अवश्य कृपण और तमोगुणी होगी।"

"आप महाराज मनु के काल की बातें करते हैं। संसार में इन प्राचीन रूढ़ियों का थोथापन सिद्ध हो चुका है। किसानों के लड़के राज्य-संचालन कर रहे हैं। मज़दूर फौजों के जनरल बन गये हैं। शूद्रों के पुत्र कॉलेजों में प्रोफैसर बन गये हैं। आपका सिद्धान्त जहां झूठा है वहां मनुष्य समाज की उन्नति के मार्ग पर प्रतिबन्ध लगाता है।"

"कुछ भी हो। तुम बताती क्यों नहीं? इससे तो यही सिद्ध होता है कि अवश्य कोई छिद्र है, जो तुम छुपाना चाहती हो।"

"मान लो कि मेरे पिता में कोई दोष है। इससे आपका अथवा आपके पुत्र का क्या सम्बन्ध है? विवाह तो मैंने किया है। मेरे पिता ने नहीं किया।"

"मैं अपनी पुत्र-वधू की भली भांति जांच किये बिना स्वीकृति नहीं

दे सकता।"

"आपकी स्वीकृति मांगी ही किसने है?"

"अच्छी बात, तो जाओ," पं० विशम्भरदयाल ने निराश हो क्रोध में कहा। वे इस समय मलका के बुत के समीप जा पहुँचे थे। पंडित जी वहीं चुपचाप खड़े हो गये। कान्ता ने अविनाश की ओर देखकर पूछा, "अवि, तुम भी आ रहे हो या नहीं?"

अविनाश ने तुरन्त कहा, "मैं आ रहा हूं।"

दोनों सड़क पार कर चिड़ियाघर की ओर चल पड़े। जब वे कुछ दूर चले गये तो कान्ता ने कहा, "यह आज आपने क्या किया है? मुझे पहले क्यों नहीं बताया कि आपके पिता जी पीछे पीछे आ रहे थे?"

"कान्ता, मैं सत्य कहता हूँ मुझे मालूम नहीं था। प्रतीत होता है कि उन्होंने मेरा कॉलेज से ही पीछा किया है।"

"ओह, समझ गयी। प्रोफैसर साहब जासूसी का अभ्यास कर रहे हैं। मालूम होता है कि वह मेरे पिता का नाम जाने बिना नहीं रहेंगे।"

"तुम स्वयं ही बता देती तो क्या हानि थी?"

"मैं तो एक सिद्धान्त की बात कह रही थी। इन पुराने विचार के लोगों ने संसार को उन्नति करने से रोक रखा है। मैं इन पुरानी जर्जरीभूत रीति-रिवाज की सांकलों को तोड़ देना चाहती हूँ।"

"मान लो तुम्हारे पिता जी भी आपत्ति करें तो?"

"फिर वही बात। हमें इन बूढ़े, पुराने विचारों के लोगों के मानने अथवा न मानने की चिन्ता नहीं करनी चाहिये। छोड़ो इन बातों को। मुझे आपके पिता को वाक्-युद्ध में परास्त करने में भूख लग आई है। चलो 'एलफिन्स्टन' में लौट चलें।"

"भूख तो मुझे भी लगी है। मैंने आज भी दो आने स्वीकार नहीं किये।"

दोनों लौट पड़े और एलफिन्स्टन रैस्टोरेंट में चले आये। कान्ता ने बैठते हुए कहा, "आपके पिता में एक गुण तो है।"

"वह क्या ?" अविनाश ने पूछा।

"वह बात ऐसे ढंग से करते थे जो अतिरोचक प्रतीत होती थी।"

"तभी फट फट उत्तर दे रही थी।"

कान्ता हंस पड़ी और 'स्टिक्स' खाने लगी। रैस्टोरैंट से जब पेट पूजा कर निकले तो फिर वे लारेन्स गार्डन की ओर चल पड़े। इस समय बत्तियां जल गयी थीं।

[५]

आज जब अविनाश घर पहुँचा तो उसका पिता अभी घर नहीं आया था। उसने खाना कुछ दिखाने के लिये खा लिया और पुस्तक सामने रख पढ़ने का बहाना करने लगा। यथार्थ में वह विचार कर रहा था कि कान्ता की बातचीत का उसके पिता पर क्या प्रभाव हुआ होगा। जहां तक बात करने के ढंग का सम्बन्ध था वह कान्ता की जीत समझता था। परन्तु क्या पिता जी के विचारों में परिवर्तन हो गया होगा ? क्या वह उसे अपनी पुत्र-वधू बनाने को तैयार हो जायेंगे ? इन्हीं प्रश्नों के पक्ष-विपक्ष में वह सोच रहा था। विचार करते करते उसे नींद आ गयी। धीरे धीरे उसका मस्तक झुककर पुस्तक पर टिक गया। उसकी नींद खुली तो पिता के शब्द उसके कान में पड़े। पहले तो उसे ये स्वप्न में सुनाई देते प्रतीत हुए। धीरे धीरे उसे चेतनता होती गयी और उसे पिता के वाक्य अधिक और अधिक स्पष्ट सुनाई देने लगे। उसके मन में आया कि वह सोने का बहाना करता रहे ताकि पिता जी जो कुछ माता जी को बता रहे थे सुन ले। अतएव वह आंखें मूंदे सुनता रहा। पंडित जी अविनाश की माता को कह रहे थे, "बहुत चालाक लड़की है। यद्यपि आयु में अभी सोलह-सत्रह वर्ष की प्रतीत होती है, पर जानकारी में बहुत बड़ी आयु वालों के बराबर ही समझना चाहिये। हमारा अवि तो उसके सम्मुख सर्वथा बुद्धू प्रतीत होता है। एक बात जो मुझे उसकी पसन्द है वह उसका दृढ़ चरित्र है। उस छोकरी ने मुझे निरुत्तर कर दिया। मैं जो कुछ भी कहता था उसका तुरन्त ऐसा उत्तर

देती थी कि मेरा मुख बन्द हो जाता था।"

"तो तुम उसे पसन्द कर आये हो?"

"उसकी चतुराई के अतिरिक्त कई और बातें भी तो देखनी हैं। उसने अपने बाप का नाम बताने से इनकार कर दिया। इस पर मैंने सोचा नीति से काम लेना चाहिये। मैंने इनको जाने दिया।

"दोनों पहले तो चिड़ियाघर की ओर चले गये, पश्चात् लौटकर एलफिन्स्टन रैस्टोरेंट में चले आये। वहां खाना खाया। दाम लड़की ने दिये। मैं छुपकर उनका पीछा करता रहा। होटल से वे फिर बाग़ में जा बैठे। मैं छुपे छुपे उन्हें देखता रहा। वहां से दोनों पृथक पृथक हो गये। मैंने लड़की का पीछा किया। वह पञ्जाब जीमखाना क्लब में चली गयी। मैं बाहर एक पेड़ के पीछे छुपकर खड़ा रहा। चार पांच मिनट के पश्चात्, वह एक मोटरकार में बैठी हुई बाहर आई। गाड़ी वह स्वयं चला रही थी। प्रतीत होता है कि अवि से मिलने के लिये गाड़ी वह क्लब में छोड़ गयी थी। मैंने गाड़ी का नम्बर पढ़ अपनी पाकेट-बुक में लिख लिया है। कल पुलिस-दफ़्तर से मालूम हो जायेगा कि गाड़ी किसके नाम पर रजिस्टर्ड है।"

"तो इसका अर्थ यह हुआ कि किसी धनी की लड़की है।"

"यही तो बुरी बात है। एक धनी की लड़की को अपना नाम-धाम बताने में क्यों आपत्ति है? अवश्य दाल में कुछ काला है। मुझे तो कुछ षड़यन्त्र प्रतीत होता है।"

"तो शीघ्र ही इस षड़यन्त्र को प्रत्यक्ष कर देना चाहिये।"

"मैं कल इस रहस्य को खोल दूंगा।"

इस समय अविनाश ने नींद से जागने का बहाना किया। पिता उसे जागा देख चुप कर गया। जब पुत्र एक दो अंगड़ाइयां ले चुका तो पिता ने कहा, "अवि!"

"जी हां।" अवि ने चौंककर उत्तर दिया। वह यह प्रकट करना चाहता था कि उसने पिता की बातें नहीं सुनीं।